सत्यार्थप्रकाश

स्वामी दयानन्द सरस्वती निर्मित ।

[illegible]

[illegible] कर्त्ता [illegible]

[illegible] शास्त्री महोपदेशक [illegible]

[illegible] में मुद्रित कराया ।

[illegible]

55 D 27[illegible]

LAL CHAND
D.A.V. COLL.
ACC. No. 3668
Date

गुरु विरजानन्द
सन्दर्भ
परिग्रहण

साक्षी समुदाय

... LAHORE

श्रीयुत पं० कालूरामजी शास्त्री नमस्कार ।

मैने आरम्भ से समाप्ति तक इस सत्यार्थप्रकाश को मिलाया जो कि छपी हुई कापी के ऊपर छापा गया है मुझे एक भी अक्षर ऐसा नहीं मिला जो आपने घटाया या बढ़ाया हो ये दोनों एक हैं, इसमें कोई किसी प्रकार का भी धोखा नहीं ।

(१) यह चिट्ठी पं० प्यारेलाल जी शास्त्री प्रोफेसर कामस्तव कालिज मेरठ की है ।

२१।२।२६

प्यारेलाल

धर्म प्रेस, मेरठ ।

श्रीहरिः ।

हमने सन् १८७५ का सत्यार्थप्रकाश और पं० कालूरामजी का छपवाया सत्यार्थप्रकाश दोनों को मिलाया तो उसमें का [illegible] मिला पं० कालूरामजी ने अपनी तरफ से इसमें कुछ भी नहीं मिलाया ।

(२) यह चिट्ठी महोदय विद्यारत्न पं० गोकुलचन्द्रजी संशोधक सनातनधर्म मेरठ की है ।

ह० गोकुलचन्द्र विद्यारत्न महोपदेशक ।

सत्यार्थप्रकाश ।

जिसको श्रीमान् पं० कालूरामजी शास्त्री ने सन् १८७५ के सत्यार्थप्रकाश को कि जिसमें आर्यसमाज की असलियत का इज़हार होता है दुबारा बहुत रुपया लगाकर छपवाया है पर आर्य इस सत्यार्थप्रकाश को आर्य लोग बहुत पोशीदा रखते हैं क्योंकि मौजूदा आर्यसमाज और स्वामी दयानन्द की बनाई हुई सत्यार्थप्रकाश में ज़मीन आसमान का फर्क है और मौजूदा सत्यार्थप्रकाश में [illegible] कुल बहुत सी बातों को बदल दिया है इसलिये सन् १८७५ ईस्वी के सत्यार्थप्रकाश को ज़रूर मँगाकर पढ़ना चाहिये ताकि आर्यसमाज की असलियत मालूम हो जावे कि मौजूदा आर्यसमाज किस तरह हर साल नई [illegible]

(३) यह पत्र महोदय स्वामी लक्ष्मणप्रसादजी [illegible] महाराज, [illegible] फिरोजपुर (पंजाब) का है ।

कालूरामजी शास्त्री ने इसको दुबारा छपवा कर हिन्दू धर्म और आर्यसमाज पर बहुत उपकार किया है लेकिन एक खास खिदमत यह है कि इसको ज्यों का त्यों नकल किया गया है और इसमें मिलावट एक लफ्ज़ की भी नहीं की है।

सनातनधर्म का सेवक—

सूफी लक्ष्मणप्रसाद,

एडीटर मस्ताना योगी, शहर फिरोजपुर।

—०—

सत्यार्थप्रकाश।

(४) यह चिट्ठी पं० हरिनारायणजी सहसंपादक तथा एडीटर सनातनधर्म प्रचारक अमृतसर की है—

स्वामी दयानन्द सरस्वती बानी आर्यसमाज ने जो किताब तसनीफ़ की थी और जिस किताब की बिना पर आर्यसमाज का मत क़ायम किया गया था स्वामी साहब मौसूफ़ के होशियार चेलों ने जिसको किसी ऐसे तौर खयाल से छिपा रक्खा कि जो किताब बेकार तलाश करने से भी नहीं मिलता था वही सत्यार्थप्रकाश पं० कालूरामजी शास्त्री ने हर्फ़ बहर्फ़ देवनागरी शाया करवाया है इसके मज़मून में कहीं पर भी कमी बेशी नहीं की गई कालूराम जी [illegible] की किताब [illegible] और [illegible] सफ़े हैं इसमें एक खास [illegible] है कि किसी एक सफ़े का मज़मून दूसरे सफ़े में नहीं गया इसी तरह एक [illegible] का मज़मून दूसरी सतर में नहीं आया यह किताब सनातनधर्मी और आर्यसमाजी दोनों को खरीदना चाहिए।

भवानीशंकर जोशी
असिस्टेंट एडीटर
सनातनधर्म प्रचारक, अमृतसर।

१३। २। १४

हरिनारायण शर्मा
एडीटर, सनातनधर्म प्रचारक,
अमृतसर।

—०—

(५) यह चिट्ठी पं० गिरिधर शर्मा जी चतुर्वेदी प्रोफेसर गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार की है जो सनातन उपदेशक समिति के उप—मंत्री और ब्रह्मचारी के सम्पादक तथा अखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के [illegible] हैं—

मेरे पास सन् १८७५ ईस्वी का छपा हुआ राजा जयकृष्णदास बहादुर सी० एस० आई० की आज्ञानुसार मुन्शी हरिवंशलाल के अधिकार से स्टार प्रेस महल्ला रामपुर बनारस में पहली बार छपा हुआ सत्यार्थप्रकाश और पं० कालूरामजी महोपदेशक का धर्म प्रेस मेरठ सिटी सन् १९१३ में छपवाया हुआ सत्यार्थप्रकाश है। कई स्थानों को मिला कर पढ़ा भी। मैंने इन दोनों में कोई भेद [illegible] नहीं पाया। दूसरा सत्यार्थप्रकाश पहले की [illegible] कापी है [illegible]

दयानन्द के बनाए पहले सत्यार्थप्रकाश की तलाश बहुत लोगों को थी वह इस समय दुर्लभ था सो उसकी असली कापी छाप कर पं० कालूरामजी महाशय ने लोगों का बहुत उपकार किया है इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।

गिरधर शर्मा चतुर्वेदी।

—o—

(६) यह लेख श्रीमान् विद्यारत्न महोपदेशक पं० कन्हैयालालजी का है—

मैंने सन् १८७५ ईस्वी के स्टार प्रेस में छपे हुए स्वामी दयानन्दजी के असली सत्यार्थप्रकाश से पं० कालूरामजी शास्त्री के छपाए हुए सत्यार्थप्रकाश से मिलान किया दोनों कापी एक सी हैं यहाँ तक कि "मक्षिका स्थाने मक्षिका" की कहावत को चरितार्थ कर दिया है अपनी ओर से एक शब्द भी नहीं घटाया बढ़ाया।

ह० कन्हैयालाल महोपदेशक
यू० पी० मण्डल, मेरठ।

—o—

(७) यह चिट्ठी बा० अवधबिहारीलालजी बी० ए०, एल. एल. बी. महा मन्त्री सनातनधर्म युक्त प्रदेश मण्डल मेरठ की है—

हमने सन् १८७५ ई० के सत्यार्थप्रकाश को और पं० कालूरामजी के छपाए सत्यार्थप्रकाश को जो मिलाया तो ज्यों का त्यों मिला पं० कालूरामजी ने अपनी तरफ से कुछ न्यूनाधिक नहीं किया।

AWADH BEHARI LALL B. A., LL.B.
Vakil High Court,
General Secretary, Sanatan Dharm Mandal, U. P.

—o—

(८) यह चिट्ठी श्रीमान् पं० श्रवणलालजी महोपदेशक झालरापाटन की है—

मैंने सन् १८७५ का छपा सत्यार्थप्रकाश और पं० कालूराम शास्त्री का छपाया प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश दोनों के पाठ को मिलाया तो ज्यों का त्यों मिला शास्त्री कालूरामजी ने कुछ न्यूनाधिकता नहीं की है।

मुलतान १० । ३ । १६

पं० श्रवणलाल महोपदेशक,
झालरापाटन (राजपूताना)

—o—

(९) यह पत्र महा महोपदेशक विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्र मुरादाबाद का है—

रामगौरा निवासी पं० कालूराम शास्त्री द्वारा प्रकाशित की हुई सन् १८७५ के छपे सत्यार्थप्रकाश की प्रति लिपि मैंने असली सत्यार्थप्रकाश से जहाँ तहाँ सावधानी के साथ मिलाई तो सर्वथा इस प्रति लिपि को उस असली

छपे सत्यार्थप्रकाश के सर्वांश में सादृश्य पाया इतनाही नहीं जितनी पंक्ति असली सत्यार्थप्रकाश के जिस पृष्ठ में है उतनी ही इसमें हैं जितने उसके पृष्ठ हैं उतने ही इसके हैं जैसा ढंग उसके स्वरूप का है वैसाही इसका है इसमें कालूरामजी शास्त्री की तरफ से एक अक्षर बढ़ाया घटाया नहीं गया है इसको सन् ७५ के सत्यार्थप्रकाश का दर्पण कहूं तो अत्युक्ति न होगी पाठकों को सर्वथा यह असली के समान विश्वास करने योग्य है।

ज्वालाप्रसाद मिश्र।

(१०) यह चिट्ठी बाबू मुरारीलाल साहब मन्त्री सनातनधर्म मण्डल पंजाब की है—

श्री स्वामी दयानन्दजी सरस्वती बानी आर्यसमाज ने अपनी ज़िन्दगी में अपना मशहूर सिद्धान्त ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश बज़बान हिन्दी पबलिक के सामने पेश किया था लेकिन चूंकि अब जो सत्यार्थप्रकाश बज़बान हिन्दी या उर्दू वगैरः आर्यसमाज की तरफ से छपवाये हुये दस्तयाब होते हैं उनमें बहुत कुछ तब्दीली देखने में आती है लिहाज़ा स्वामी साहब के असली ख़यालात मालूम करने के लिये अशद ज़रूरत थी कि इस असली सत्यार्थप्रकाश की हूबहू नकल फ़ायदा पबलिक के लिए शाया की जाय इस अहम्कार को सरअंजाम देने का बीड़ा हमारे सनातनधर्म के प्रसिद्ध महोपदेशक और श्रीस्वामी दयानन्दजी के सिद्धान्तों के मुतअल्लिक पूरी पूरी वाकफ़ियत रखने वाले विद्वान् श्रीमान् पं० कालूरामजी महाराज शास्त्री ज़िला कानपुर निवासी ने उठाया और निहायत मिहनत और जांफिशानी से इन्होंने इस सत्यार्थप्रकाश को निहायत उम्दा बड़े साइज़ में और नफ़ीस चिकने कागज़ पर छपवाया है यह उस सत्यार्थप्रकाश की जो श्री स्वामी दयानन्दजी महाराज की ज़िन्दगी में सन् १८७५ ई० में राजा जयकृष्णदास साहब के एहतमाम से छपवाया गया हूबहू नकल है मैंने खूब गौर से मिलाया कहीं पर भी कमी बेशी नहीं पाई।

मुरारीलाल आनरेरी एक्जिक्यूटिव सेक्रेटरी,

सनातनधर्म मण्डल पंजाब, फिरोज़पुर —३।२।२८।

क्या समाजी अब भी न्यूनाधिक कहते हैं ऐसे मनुष्यों को नीचे की चिट्ठी पढ़नी चाहिये —

ओ३म्

श्रीमन्महाशय नमस्ते।

(११) यह चिट्ठी पं० तुलसीराम स्वामी मेरठ की है—

आपका भेजा सत्यार्थप्रकाश पुराना सन् १८७५ का छपा जैसा उसकी नकल मिली पाठ मिलाने से ज्ञात हुआ कि पाठ ज्यों का त्यों है परन्तु न जाने आपने इससे क्या लाभ सोचा है जब कि ग्रन्थकार स्वयं उसे अमान्य कर दुबारा छपा गये। इसका विशेष उत्तर वेदप्रकाश में होगा।

मेरठ ता० २६।२।१९२६

आपका सुहृद्

तुलसीराम स्वामी।

श्री

सूचना

पाठकों से प्रार्थना है कि वे इस बात का ध्यान रक्खें कि जिस समय यह सत्यार्थप्रकाश आर्यसमाजियों को दिखलाया जावेगा उस समय आर्यसमाजी फौरन कह देंगे कि यह इबारत पं० कालूराम ने अपनी तरफ से मिला दी होगी कारण इस का यह है कि आर्यसमाज सत्यासत्य का निर्णय करना नहीं चाहता किन्तु प्रत्येक मुबाहिसे में चालबाजियों से काम लेता है यहां तक कि दिल्ली के शास्त्रार्थ में वेद के प्रमाण सुनकर यह कह दिया था कि हम वेद के मन्त्र सुनने नहीं आये हैं जब यह वेदों को भी कुटकियों से उड़ाता है तब स्वामी दयानन्द के लेख को उड़ाते कितनी देर लगती है किन्तु उड़ाने का कोई रास्ता मिलना चाहिए इस सत्यार्थप्रकाश में यह रास्ता मिलता है कि जो लेख स्वामी दयानन्द का अयोग्य समझेंगे उस को कह देंगे कि यह तो कालूराम ने मिला दिया है इस चाल का उपाय सनातनधर्मियों को यह है कि इस कथन के ऊपर यह कहें कि जबतक कोई आर्यसमाजी ऐसा साबित करके प्रति शब्द १०) इनाम न ले लेगा तब तक यह नहीं माना जा सकता कि कालूराम ने इसमें मिलाया है यदि मिलाया है तो तुम अभी सबूत दो इतना कह कर चुप हो जाना चाहिए इसके पश्चात् आर्यसमाजी कुछ न कुछ बोलेगा किन्तु मिलाने का सबूत नहीं दे सकेगा एक आर्यसमाजी तो क्या दो लाख आर्यसमाजी भी सारे लाख जन्म परिश्रम करें तब भी मिलाना सिद्ध नहीं कर सकते इसकारण आर्यसमाजी कुछ और ही कहेगा उसको कहो कि यह हम सुनना नहीं चाहते तुम मिलाने का सबूत दो इसी बात पर अड़ जाना चाहिए चाहे वह कितनी ही कोशिश करे कुछ भी कहे किन्तु तुम यही कहो कि मिलाने का सबूत दो बस कुछ भी नहीं दे सकेगा।

इसको छोड़कर दूसरा प्रश्न उठावेगा कि हम इस सत्यार्थप्रकाश को ही नहीं मानते इसके ऊपर यह उत्तर देना चाहिए कि इससे हमको कोई मतलब नहीं है तुम मानो या न मानो किन्तु स्वामी दयानन्दजी इसी को मानते थे इसके ऊपर यदि विचार चले जावें तो विचार नामक लेख को विचार कर उसकी बातों को प्रमाण में दो, समाजी की बोलती बन्द हो जावेगी और उसको यह सत्यार्थप्रकाश मानना होगा।

कालूराम शास्त्री,
अमनौरा (कानपुर)

॥ श्री ॥

विज्ञापन

यह सत्यार्थप्रकाश प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश की असली पुस्तक विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्र महोपदेशक सनातनधर्म के यहां से मंगवाकर उस असली पुस्तक की हूबहू नकल छापा गया है यदि कोई पुरुष यह सिद्ध कर दे कि यह सत्यार्थप्रकाश असली सत्यार्थप्रकाश की नकल नहीं है इसमें न्यूनाधिक किया है उसको प्रति शब्द हम १०) इनाम देंगे।

कालूराम शास्त्री,
अमरौधा (कानपुर)

ओ३म्

नक़ल

यह सत्यार्थप्रकाश असली प्रथमावृत्ति की हूबहू नक़ल है। जिस की यह नक़ल है वह सत्यार्थप्रकाश खास स्वामी दयानन्दजी ने बनाया था और सन् १८७५ में "स्टार प्रेस बनारस" में छपा था। इस सत्यार्थप्रकाश में जो आपके हाथ में है और सन् १८७५ ई० के सत्यार्थप्रकाश में कुछ भी फर्क नहीं बल्कि जहां जो छपा था वहां वही इसमें छपा है यहां तक कि इसके पृष्ठ और पंक्ति वैसे के वैसे ही हैं जितना लेख एक पृष्ठ में था उतना ही लेख इसके एक पृष्ठ में है एक पंक्ति का कोई भी अक्षर दूसरी पंक्ति में नहीं गया। सन् १८७५ के सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ४० तक ऊपर "सत्यार्थप्रकाश" और "समुल्लास" शीर्षक लेख नहीं हम ने भी नहीं लगाया। षष्ठ समुल्लास के स्थान में शीर्षक में षष्ठम् समुल्लास छपा है और सप्तम समुल्लास के स्थान में सप्तम् समुल्लास छपा है ऐसे ही नवम और दशम में भी प्रकार स्वर हीन है इसमें भी वैसा ही रक्खा है अभिप्राय हमारा यह है कि न तो इसमें हमने कुछ घटाया बढ़ाया है और न शुद्ध किया है शुद्ध का शुद्ध और अशुद्ध का अशुद्ध छाप दिया है जो कुछ उसमें था वही इसमें है पूरी नक़ल है मक्खी के स्थान में मक्खी मारी गई है।

कालूराम शास्त्री,
अमरौधा (कानपुर)

श्रीहरिः

भूमिका

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने एक "सत्यार्थप्रकाश" नामक पुस्तक लिखा है उसको श्रीराजा जयकृष्णदास बहादुर ने सन् १८७५ ईसवी में स्टार प्रेस बनारस में मुद्रित करवाया था यह सत्यार्थप्रकाश राजा साहब बहादुर के ही व्यय से बना और राजा साहब के ही व्यय से मुद्रित हुआ कई एक सज्जनों का विचार होगा कि राजा साहब आर्यसमाजी होंगे किन्तु राजा साहब के लेख से विदित होता है कि वे आर्यसमाजी नहीं थे किन्तु सनातनधर्मी थे और उन्हों ने जो इतना रुपया खर्च किया उसका अभिप्राय यह था कि सत्यार्थप्रकाश के विषयों पर विचार होकर विचार किया जावे कि शास्त्रार्थ में सत्य क्या है. इसी बात को राजा साहब ने निवेदन पत्र में लिखा है। आप लिखते हैं कि "इस पुस्तक के पाठकों से मेरी यह विनय पूर्वक प्रार्थना है कि इस ग्रन्थ के छपवाने से मेरा अभिप्राय किसी विशेष मत के खंडन मंडन करने का नहीं किन्तु इसका मुख्य प्रयोजन यह है कि सज्जन और विद्वान् लोग इसको पक्षपात रहित होकर पढ़ें और विचारें और जिन विषयों में उनको दयानन्द स्वामी के सिद्धान्तों से सम्मति न हो उन विषयों पर अपनी अनुमति प्रबल प्रमाण युक्त लिखें क्योंकि धर्म का निर्णय और सत्यासत्य की विवेचना ही मुख से शास्त्रार्थ करने में किसी बात का निर्णय नहीं होता परन्तु लिखने से दोनों पक्षों के सिद्धान्त ज्ञात हो जाते हैं और सत्य विषय का निर्णय हो जाता है इसलिये आशा है कि सब पंडित और महात्मा पुरुष इसकी यथावत् समालोचना करेंगे और यह न समझेंगे कि मुझको किसी विशेष मत की निन्दा अभिप्रेत हो छापने में शीघ्रता के कारण इस ग्रन्थ में बहुत अशुद्धता रह गई है आशा है पाठक गण इस अपराध को क्षमा करेंगे" राजा साहब बहादुर के इस लेख से विदित होता है कि उन्होंने किसी के पक्षपात से नहीं किन्तु सत्यासत्य के निर्णय के हित अपना इतना रुपया व्यय किया था।

स्वामी दयानन्द के मरने के पश्चात् समाज ने जो सम्वत् १९४१ में सत्यार्थ प्रकाश छपवाया उसमें स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों को बदलकर अपने मन के सिद्धान्त नियत किए विचार की दृष्टि से जान पड़ता है कि समाज को स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों में हेर फेर करने का कोई अधिकार नहीं था किन्तु अधिकार

न रहने पर भी समाजियों ने सत्यार्थप्रकाश की काट छांट कर उसका दूसरा कलेवर बना डाला। समाज को जब इतने पर भी संतोष न हुआ तब प्रत्येक आवृत्ति में काट छांट करना आरम्भ कर दिया। आजतक सत्यार्थप्रकाश की ११ आवृत्ति हो चुकी हैं ऐसी एक भी आवृत्ति नहीं कि जिसमें समाज ने अपनी तरफ से कुछ लेख न मिलाया हो और स्वामी दयानन्द के कुछ न कुछ लेख को न निकाल डाला हो। बार बार के लेख मिलाने और लेख के निकालने से आज पबलिक को यह भी ज्ञात नहीं हो सकता कि स्वामी दयानन्द के असली सिद्धान्त क्या थे। जिस समय समाज के सत्यार्थप्रकाश को देखा जाता है तब यही मालूम होता है कि वास्तव में स्वामीजीके यही सिद्धान्त हैं किन्तु जब हम प्रथमावृत्ति को देखते हैं तब ज़मीन आसमान का फर्क मालूम पड़ता है। स्वामी दयानन्दजी सायं प्रातः मांस से हवन करना बतलाते हैं और पितरों को मांस के पिंड देना हल आदि पर पशुओं का मारना तथा गौ हत्या करना स्वर्ग और स्वर्गवासी देवताओंका मानना अपना सिद्धान्त लिखते हैं किन्तु समाज के सत्यार्थप्रकाश में इनका विरोध है इस कारण स्वामी दयानन्दके सिद्धान्तों का जानना आज कठिन होगया है और पबलिकमें इस बातकी कुछ थोड़ी सी खलबली भी मच रही है कि वास्तव में स्वामी दयानन्द के सिद्धान्त क्या हैं।

जब तक प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश न मिले तब तक कोई भी सज्जन सत्यासत्य का निर्णय नहीं कर सकता और राजा साहब बहादुर के यहां एक बार सत्यार्थप्रकाश छपकर फिर दुबारा छपा नहीं और आगे को छपने की आशा नहीं इस हालत में स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों से पबलिक को किस प्रकार जानकारी हो स्वामी दयानन्द के सिद्धान्त पबलिक को दर्शाने के लिए लोकोपकारक की दृष्टि से आज हम प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश को छपवाकर पबलिक के सन्मुख रखते हैं कि वह सत्यासत्य का निर्णय करें। इस सत्यार्थप्रकाश के छपाने का मतलब लाभ उठाना नहीं किन्तु पबलिक को फायदा पहुंचाना है॥ इतिशम्॥

कालूराम शास्त्री,
भगौंआ (कानपुर)

विचार

प्रार्थना है कि आज कल आर्यसमाज जो सत्यार्थप्रकाश छापता है वे सत्यार्थप्रकाश स्वामी दयानन्द के बनाए नहीं हैं किन्तु स्वामी दयानन्द के मरने पर आर्यसमाज ने स्वामी दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश की काट छांट कर नए बनाकर छपवाए हैं। इनमें यहां तक न्यूनाधिकता की जाती है कि एक आवृत्ति दूसरी आवृत्ति से नहीं मिलती किन्तु समाज इतने पर भी इन सत्यार्थप्रकाशों को स्वामी दयानन्दकृत ही लिखता है। जिस समय विचार किया जाता है उस समय नीचे लिखे हेतुओं से यह विदित हो जाता है कि ये सत्यार्थप्रकाश स्वामी दयानन्दकृत नहीं हैं इनकी तो कौन कहे द्वितीयावृत्ति भी स्वामी दयानन्द कृत नहीं है इसके न होने के कारण हम नीचे देते हैं—

(१) आर्यसमाज लाहौर के सेक्रेटरी महात्मा धर्मपाल अपने उर्दू में छपवाए हुए सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में यह लेख देते हैं कि स्वामी दयानन्द का बनाया हुआ सत्यार्थप्रकाश तो प्रथमावृत्ति ही है और द्वितीयावृत्ति स्वामी दयानन्द का बनाया नहीं किन्तु आर्यसमाज का बनाया है जब एक आर्यसमाजी अपने मुख से कहता है और अपनी लेखनी से लिखता है इससे अधिक और क्या प्रमाण होगा फिर आर्यसमाजी भी कैसा कोई साधारण पुरुष नहीं किन्तु लाहौर समाज का मंत्री, केवल मंत्री ही नहीं किन्तु जिसने दो लाख आर्यसमाजियों से महात्मा होने की डिगरी पाई है ऐसे प्रतिष्ठित पुरुष की साक्षी ही बहुत है जब समाज का एक मान्य प्रतिष्ठित पुरुष इस बात को अपने लेख में लिखता है तब फिर दूसरे साक्षी की कोई भी आवश्यकता नहीं।

कई एक साधारण आर्यसमाजी यह कहते और लिखते हैं कि धर्मपाल तो आर्यसमाज का शत्रु है हम मानते हैं कि इस समय में धर्मपाल आर्यसमाज का शत्रु है क्योंकि जो मनुष्य जिस दिन से आर्यसमाज छोड़ता है समाज उसको उसी दिन शत्रु की डिगरी दे देता है यह डिगरी केवल धर्मपाल को ही नहीं मिली किन्तु आत्मानन्द सरस्वती और वेद व्याख्याता पं० भीमसेन शर्माजी को भी मिल चुकी है किन्तु यह डिगरी तो समाज छोड़ने पर मिलती है इसी नियम से समाज छोड़ने पर ही अब मिली है किन्तु हम उस समय का लेख पेश करते हैं जब कि धर्मपाल

वनाने के समय इसको भी अशुद्धि पत्र में दे जाते जब कि कम्पोज होने के पश्चात् तैयार होने तक स्वामी दयानन्दजी सत्यार्थप्रकाश को दो बार देख चुके तब प्रेस वालों की मिलावट बतलाना संसार को धोखा देना नहीं तो और क्या है ?

(३) स्वामी दयानन्दजी का देहान्त सम्वत् १९४० में हुआ और यह भूमिका सम्वत् १९४१ में छपकर प्रेस में छपने को आई इससे सिद्ध है कि स्वामीजी के जीवन समय में सत्यार्थप्रकाश सत्यार्थप्रकाश को नए सांचे में न ढाल सका और उन के मरने के पश्चात् कोरा ही फाड़ छांट करके सत्यार्थप्रकाश का नया कलेवर तैयार कर दिया जब कि स्वामी दयानन्दजी सम्वत् १९४० में मर चुके फिर सम्वत् १९४१ में स्वामी दयानन्दजी भूमिका किस प्रकार लिख सकते हैं ।

यहां पर आर्यसमाजी केवल यह शंका कर सकते हैं कि भूमिका बनाने का स्थान उदयपुर और सम्वत् १९३९ भूमिका में पड़ा है फिर यह भूमिका सम्वत् १९४१ की किस प्रकार मानी जावे इसके ऊपर हमारा उत्तर यह है कि आर्यसमाजी यह अपने आप ही कर लिया करते हैं जब कि यह लोग स्वामी दयानन्द के नाम से सत्यार्थप्रकाश में लिख मारा देते हैं और बढ़ा देते हैं तब फिर सम्वत् १९३९ स्थान उदयपुर लिख देना कितनी बड़ी भारी बात है उदाहरण के लिए आप देख सकते हैं कि चतुर्थ समुल्लास में "या वेदबाह्याः" एक द्वितीयावृत्ति में था अब उसके स्थान में आर्यसमाजियों ने "या वेदबाह्याः स्मृतयः" कर दिया यदि कोई यह कहे कि यह बात मिथ्या है लिखा नहीं है ११ वीं आवृत्ति में भी अर्थ "या वेदबाह्याः" का ही लिखा है अर्थात् श्लोक का पाठ तो बदल दिया किन्तु अर्थ नहीं बदला अब यह देखेंगे तब अर्थ को भी बदलेंगे इसके अलावा इसी श्लोक के अर्थ में स्वामी दयानन्दजी ने "पुनर्विवाह न करना चाहिए" यह लिखा था सन् १८८४ में उस के स्थान में "पुनर्विवाह होना चाहिए" यह पाठ कर दिया है यहां पर स्वामी दयानन्दजी का सिद्धान्त ही बदल दिया इस बात को सब कोई जानता है कि स्वामी दयानन्दजी सन् १८८३ में स्वर्गवास कर गए थे उनकी मृत्यु के १५ वर्ष बाद पाठ का बदलना आर्यसमाजियों की करतूत कहा जावेगा । (२) चतुर्थसमुल्लास में नियोग प्रकरण में स्वामी दयानन्द ने लिखा था कि "गर्भवती स्त्री से एक वर्ष समागम न करने के समय में पुरुष वा स्त्री से न रहा जाए तो किसी से नियोग करके उसके लिए पुत्रोत्पत्ति कर दे" सन् १८८७ में इसके स्थान में "गर्भवती स्त्री से एक वर्ष समागम न करने के समय में पुरुष से वा दीर्घरोगी पुरुष की स्त्री से

न रहा आव तो किसी से नियोग करके उसके लिए पुत्रोत्पत्ति कर दे" यहां पर "वीर्य रोगी पुरुष को" इतना पाठ और मिलाकर जो स्वामीजी के सिद्धान्त को रसातल को पहुंचाया है निःसंदेह यह काम वाहियात है क्या स्वामी दयानन्दजी सन् १८८७ में फिर पुरू देखने आए थे और श्री स्वामी दयानन्दजी ने पृष्ठ २२५ पं० २६ में "आर्य्य वाचो म्लेच्छवाचः" लिखा था सन् १८८७ में उसके स्थान में "म्लेच्छवाचस्त्वार्यवाचः" पाठ कर दिया सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ३३४ पंक्ति १२ में स्वामी दयानन्द जी ने "रथेन वायु वेगेन जगाम गोकुलं प्रति" लिखा था उसके स्थान में "रथेन वायु वेगेन भाग० स्कं० १० अध्या० ३९ श्लो० ३८" "जगाम गोकुलं प्रति भा० स्कं० १० अ० ३८ श्लो० २४" ऐसा पाठ कर दिया आधुनिक समाजियों को स्वामी दयानन्द के पाठ बदलने का कोई अधिकार नहीं था यदि कोई कहे कि हमने श्रीमद्भागवत देख कर बदला है यह बात गलत है क्योंकि भागवत में "जगाम गोकुलं प्रति" पाठ है ही नहीं चाहे ढूंढ लो इस आर्यसमाजी ५९ वर्ष तक खोजें सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ६५ पंक्ति ११ में स्वामी दयानन्दजी ने "ऋतुकालाभिगामी स्यात्स्वदारनिरतः सदा । ब्रह्मचर्य्येव भवति यत्र तत्राश्रमे वसन्" इसके स्थान में समाजियों ने "ऋतुकालाभिगामी स्यात्स्वदारनिरतः सदा । पर्ववर्जं व्रजेच्चैनां तद्व्रतो रतिकाम्यया ॥ निन्द्यास्वष्टासु चान्यासु स्त्रियो रात्रिषु वर्जयन् । ब्रह्मचर्य्येव भवति यत्रतत्राश्रमे वसन्" बना दिया सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ २२३ पंक्ति ७ में स्वामी दयानन्द ने लिखा था कि "मनुष्या ऋषयश्च ये ततो मनुष्या अजायन्त । यह यजुर्वेद में लिखा है" इसके स्थान में आज कल १९वीं आवृत्ति में "मनुष्या ऋषयश्च ये ततो मनुष्या अजायन्त यह यजुर्वेद और उसके ब्राह्मण में लिखा है" ऐसा पाठ कर दिया । अब यह कौन मान लेगा कि प्रत्येक आवृत्ति छपने के समय स्वामी दयानन्दजी आ जाते हैं और शुद्ध कर जाते हैं समाज तो पुनर्योनि को भी नहीं मानता इससे भिन्न स्वामी दयानन्दजी ने सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ३३८ पंक्ति २६ में "[illegible]" यह सिद्धान्त शिरोमणि का वचन ऐसा पाठ स्वामी दयानन्दजी ने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है किन्तु सन् १८८७ में जो सत्यार्थप्रकाश छपा उसमें "[illegible]" यह "भट्टाचार्य के चौथे अध्याय का चौथा श्लोक है" ऐसा पाठ कर दिया बदलने वाले का पता नहीं चलता इसका श्रेय भी समाज ने स्वामीजी को पता दिया । [illegible] में अवकाश ही नहीं किन्तु अधिकार है इस अशुद्धता के जिम्मेदार स्वामी दयानन्द ही थे ऐसे पाप को पता लगा बतलाया है इसी प्रकार सत्यार्थप्रकाश में

बीसियों जगह पाठ बदला है और बदाया बढ़ाया है और अब भी बढ़ाते बढ़ाते हैं और आगे को भी बढ़ाते बढ़ाते आवेंगे किन्तु हम घटा बढ़ी में जब हम यह पूछते हैं कि यह पाठ किसका तब आर्यसमाजी यही कहते हैं कि स्वामीजी का लिखा है जो मनुष्य या जो सुसाइटी अपने लिखे हुए पाठ श्लोक को स्वामी दयानन्द का बतला दे क्या वह सुसाइटी अपनी लिखी भूमिका को स्वामी दयानन्द की बनाई नहीं कह सकती बस हमारा यह तीसरा सबूत है कि जिस प्रकार समाजियों का बनाया सत्यार्थप्रकाश का पाठ स्वामी दयानन्द के नाम से प्रसिद्ध है इसी प्रकार यह समाजियों की बनाई हुई भूमिका स्वामी दयानन्द के नाम से प्रख्यात की जाती है और समाज के पास ऐसा कोई सबूत नहीं कि जिस से भूमिका को स्वामी दयानन्दकृत सिद्ध कर दे ।

(४) स्वामी दयानन्दजी प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश को ही अपने सिद्धान्त समझते थे तीन वर्ष तक स्वामी दयानन्द के यही सिद्धान्त रहे तीसरे वर्ष सम्वत् १९३५ में केवल एक सिद्धान्त बदला वह यह कि स्वामी दयानन्द पहले मृतकों का श्राद्ध मानते थे सम्वत् १९३५ से वह जीवितों का ही मानने लगे थे जब उनके सिद्धान्त में यह फेर आया तब उन्होंने फौरन एक नोटिस निकाला जरा उसको भी पढ़ने की कृपा करें ।

विज्ञापन !

सब को विदित हो कि जो जो बातें वेदों की और उनके अनुकूल हैं उनको मैं मानता हूं विरुद्ध बातों को नहीं इससे जो जो मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश व संस्कारविधि आदि ग्रन्थों में गृह्यसूत्रों मनुस्मृति आदि पुस्तकों के वचन बहुत से लिखे हैं वे उन उन ग्रन्थों के मतों को जताने के लिये लिखे हैं उन में से वेदार्थ के अनुकूल का साक्षिवत प्रमाण और विरुद्ध का अप्रमाण करता हूं जो जो बातें वेदार्थ से निकलती हैं उन सब को प्रमाण करता हूं क्योंकि वेद ईश्वर वाक्य होने से सर्वथा मुझको मान्य है और जो ब्रह्माजी से लेकर जैमिनी मुनि पर्यन्त महात्माओं के बनाये वेदार्थ अनुकूल ग्रन्थ हैं उनको भी मैं साक्षी के समान मानता हूं और जो सत्यार्थप्रकाश के ४५ पृष्ठ और २६ पंक्ति पितर आदिकों में से जो कोई जीता हो उसका तर्पण न करे और जितने मर गये हैं उनका तो अवश्य करें तथा पृष्ठ ४७ पंक्ति २१ मरे भये पितर आदिकों का तर्पण और श्राद्ध करना है इत्यादि तर्पण

और श्राद्ध के विषय में जो लिखा गया है सो लिखने और शोधने वालों की भूल से छपगया है इसके स्थान में ऐसा समझना चाहिए कि जीवितों की श्राद्ध से सेवा करके नित्य तृप्त करते रहना यह पुत्र आदि का परम धर्म है और जो जो मर गये हों उनका नहीं करना क्योंकि न तो कोई मनुष्य मरे हुए जीवों के पास किसी पदार्थ को पहुंचा सकता है और न मरा हुआ जीव पुत्र आदि के दिये पदार्थों को ग्रहण कर सकता है इसलिये यह सिद्ध है कि जीते पिता आदि की प्रीति से सेवा करने का नाम तर्पण और श्राद्ध है अन्य नहीं इस विषय में वेद मन्त्र आदि का प्रमाण भूमिका के ११ अङ्क के पृष्ठ २५१ से ले के १२ अङ्क के पृष्ठ २६८ तक छपा है वहां देख लेना।

इस विज्ञापन में श्राद्ध तर्पण को छोड़ अन्य कोई लेख सत्यार्थप्रकाश का अशुद्ध नहीं बतलाया बस श्राद्ध तर्पण को छोड़ कर स्वामीजी शेष प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश को शुद्ध मानते हैं।

(५) सम्वत् १९४० तक अर्थात् मृत्यु काल पर्यन्त स्वामी दयानन्द के यही सिद्धान्त रहे श्राद्ध तर्पण को छोड़ कर शेष समस्त प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश स्वामी दयानन्द का सिद्धान्त था इसमें सबूत यह है कि स्वामी दयानन्द के जब सिद्धान्त बदलते थे तब ही स्वामीजी संसार के जतलाने के लिये विज्ञापन निकाला किया करते थे पहले वे सनातनधर्मी थे फिर किसी कृपा से सनातनधर्म में कुछ संदेह हो गया था किन्तु दूसरे सिद्धान्त नहीं हुए थे जब उनके सिद्धान्त बदले तब उन्होंने अपने सिद्धान्तों को शोलेतूर के विज्ञापन में प्रकाश कर दिया। सम्वत् १९३२ में जब श्राद्ध तर्पण पर सिद्धान्त बदला तब उसका भी विज्ञापन निकाला इसके बाद स्वामीजी ने कोई विज्ञापन नहीं छपवाया इससे सिद्ध है कि जो सिद्धान्त स्वामीजी के सम्वत् १९३५ में थे वे ही सम्वत् १९४० में थे उनके जीवित समय में सम्वत् १९३५ वाले सिद्धान्त रहे इससे सिद्ध है कि द्वितीयावृत्ति सत्यार्थप्रकाश जिस में स्वामीजी के सिद्धान्तों का परिवर्तन किया गया है स्वामीजी के मरने के बाद समाज ने छपवाया है।

(६) आर्यसमाज स्वामी दयानन्द के समस्त ही ग्रन्थों को बदल डाल कर रहा है। स्वामी दयानन्द ने संस्कारविधि में भी दो जगह मांस खाना लिखा था उसको समाज ने निकाल डाला और भी कई एक जगह संस्कारविधि में लेख का फेर किया है और यह स्वामी दयानन्द के मरने के बाद हुआ है जैसा यहां स्वामी

दयानन्द के नाम की कोई भूमिका भी नहीं लगाई जिस प्रकार संस्कारविधि आदि की काट छांट करके स्वामी दयानन्द के नाम से नये ग्रन्थ तैयार किये हैं और हो रहे हैं ऐसे ही द्वितीयावृत्ति सत्यार्थप्रकाश भी तैयार किया है फर्क इतना है कि सत्यार्थप्रकाश में भूमिका लगा दी और इन में नहीं लगाई।

इन ६ प्रमाणों से सिद्ध हो गया कि द्वितीयावृत्ति सत्यार्थप्रकाश स्वामी दयानन्द का बनाया नहीं किन्तु उनके मरने के बाद आर्यसमाजियों ने बनाया है।

कई एक सज्जन कह उठावेंगे कि आज आप को हो क्या गया आप तो सर्वदा स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों को वेद विरुद्ध ईसाइयों के सिद्धान्त कहते और लिखते हैं और बार बार यह कहा करते हैं कि स्वामी दयानन्द के जाल से बचना इन का मत वेद मत नहीं है फिर आज आप स्वामी दयानन्द का पक्ष क्यों लेते हैं हम पक्ष नहीं लेते परन्तु हम संसार को वेद सिद्धान्त और दयानन्द सिद्धान्त दोनों को मिला कर दिखलाते हैं कि स्वामी दयानन्द के सिद्धान्त वेद विरोधी सिद्धान्त हैं बेशक किसी के सिद्धान्तों की समालोचना करना या उनके स्वतः प्रमाण पुस्तक से मिलाकर फर्क (अन्तर) को दिखलाना पाप नहीं किन्तु धर्म है क्योंकि इससे वेद धर्म की रक्षा होती है यदि ऐसा न किया जावे तो कितने ही साधारण मनुष्य स्वामी दयानन्द के मत को वेद धर्म समझ कर वैदिक धर्म का नाश कर देंगे यदि आर्यसमाजी ऐसा करें तो हम उनको कभी बुरा नहीं कह सकते किन्तु ये तो स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों को ही बदलते हैं कि स्वामी दयानन्द के ये सिद्धान्त नहीं थे किन्तु ये हैं ऐसा कथन अन्याय और मनुष्य के अधिकार से बाहर है कोई मनुष्य किसी मनुष्य के लेख में न्यूनाधिक करने का अधिकार नहीं रखता मनुष्य अधिकार से बाहर निकल कर जब स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों का चकनाचूर किया जाता है तब हम को भी यह सूझा कि हम इस विषय को संसार के सम्मुख रक्खें।

कालूराम शास्त्री,
अमरौधा (कानपुर)

वक्तव्य

जो सज्जन इस पुस्तक को खरीदें वे हमारे यहां की मुहर और हमारे हस्ताक्षर को देख कर खरीदें जिस पुस्तक पर मेरे हस्ताक्षर और मुहर नहीं उसको चोरीकी समझें हस्ताक्षर और मुहर रहित एक पुस्तक जो सज्जन हमारे पास भेजेगा उसको १०) इनाम दिया जावेगा ।

मुहर

हस्ताक्षर कालूराम शास्त्री

अथ सत्यार्थप्रकाशस्य सूचीपत्रप्रारम्भः प्रथम समुल्लास

समुल्लासः	पृष्ठ	पृष्ठ २६
१	१	ओङ्कारादिक १०८ सौ परमेश्वर के नामों के अर्थ
		और वेदों के प्रकरण विचार
१	२३	मङ्गलाचरणशास्त्रविचार प्रथमः समुल्लासः समाप्तः
२	२६	बालकों की शिक्षा विचार द्वितीयः समुल्लासः समाप्तः पृष्ठ १०
३	३९	पढ़ने पढ़ाने की विधि गायत्री अर्थ तृतीय समुल्लास पृष्ठ ४७
३	४०	वेदी यज्ञपात्र रचना विधिः
३	५०	ब्रह्मचर्याश्रम का विचार
३	६१	सत्यादिक आठ वर्णों का विचार
३	७५	वेद आदि सत्य शास्त्रों का पठन पाठन विचार
३	८२	गुरु और शिष्यों का व्यवहार
३ (?)	८९	विद्या पठन की परीक्षा
३ (?)	९१	शिक्षा विचार
३ (?)	९२	परीक्षापूर्वक पठन पाठन विचार विद्या पठन की मर्यादा तृतीयः समुल्लासः समाप्तः
४	९४	विवाह गृहाश्रम विधि विवाह ... चतुर्थ समुल्लास पृष्ठ ६२
४	९७	ब्राह्मणादि वर्ण व्यवस्था
४	९९	विवाह व्यवस्था
४	१०२	ब्राह्म्यादिक आठ विवाहों के लक्षण और रीति
४ (?)		कथन
४	११२	स्त्री पुरुष का परस्पर नियम विचार
४	१२७	गृहाश्रम में कर्त्तव्य विचारः चतुर्थः समुल्लासः समाप्तः

५ १५४ वानप्रस्थ विधिः पंचम समुल्लास पृष्ठ
५ १५९ चारप्रकारकाधर्म धर्मका लक्षणपंच-
मः समुल्लासः समाप्तः
६ १७५ राजा प्रजा का धर्म वर्णन षष्ठसमुल्लासपृष्ठ १८६
६ २८० राजाकी शिक्षा और प्रजाकी शिक्षाराजा
का लक्षण राजाको अवश्य करना तथा अक
र्त्तव्यता ईश्वरको प्रथम सिद्धि लाभ का विचार
६ २१५ प्रतिमापूजन निषेधषष्ठः समुल्लासःसमाप्तः
७ २२१ अथईश्वरवेदविषय काव्याख्याईश्वरविषय
सेवंहन का मंडन और वेदों के कांडों का वर्ण
सप्तमः समुल्लासः समाप्तः पृष्ठः ३१
८ २४३ जगतकी उत्पत्तिस्थिति और प्रलयविषयों
कावर्णन अष्टमः समुल्लासः समाप्तः पृष्ठ १४
९ २६६ विद्या अविद्या बंधऔर मोक्ष इनचारपदा
र्थों कावर्णनवमः समुल्लासः समाप्तः पृष्ठ ३१
१० २८८ आचार अनाचार भक्ष्यऔरअभक्ष्यइन
चार पदार्थों का वर्णनदशमः समुल्लासः स-
माप्तः पृष्ठ १८

यहां पूर्वार्ध का सूचीपत्र समाप्त हुआ इस
केआगे उत्तरार्द्ध का सूचीपत्र किया जाता है
११ ३०८ इस अध्यायमें आर्यावर्त्तदेशके विषयका
वर्णन है एकादश समुल्लासः समाप्तः
१२ ३६६ इस अध्यायमें जैनऔरबौद्धकाऔरचार्वाक
के विषय का वर्णनहै द्वादश समुल्लासःसमा-
प्तः पृष्ठ ८७

शुद्धपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	१२	मिद्ध	मिरुद्ध
४	२३	साम	नाम
२६	१६	श्रष्ट	श्रेष्ठ
५२	२४	यर्थाज्ञान हित्वयं	यथार्थज्ञानादितत्त्वोंमुख्येनयादि सत्ये
७९	१५	भगवदीशी	भागवदीशी
८७	६	शत्रुओं	शत्रुओंसे
११८	०	वेश्या	तेश्या
१३५	७	गृस्थ	गृहस्थ
१५३	५	गार्गी	गार्गी
१५५	२१	अपनेमें	अपने
१६५	१७	अस्पाकाय बहुसकाज थेजूरनाये मुक्त राहीयें श्रोनेमीखा है	अक्नायभोननकाहसधानसे यासइन्द्रीसेनिपयोसे वर्ज्जभई इन्द्रियोंकानिवर्त्तकरज्
१६७	२	अहिंसायें	अहिंसायें
१७०	१४	अहिंसा	हिंसा
१७९	१९	शीसुखय	सीरुध
२१२	१७	शिष्योंकि कीका	शिष्यविशेषोंका
२२४	१३	अथइनाया	[illegible]
२२३	२	धीभीमार्गे	पृथकर्पीवेदोमार्गे
२३३	१५	परमेश्वरके	सदापरमेश्वरके
२३५	१५	जनकसभा	जनककीसभा

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२३६	३	अभिपा	अणिमा
२३६	२७	दोषण	दोष
२३९	२७	सरीरसे	सरीरीसे
,,४४	२	धर्त	धूतर्द
,,४४	२	पसे	पसेऊ
,,४८	२४	पस्या	[illegible]
,,५०	२१	नविस	नवनीत
,,५१	२४	सुपर	सूप
,,७२	१५	नही	नहीहोना
,,७३	३३	लिंगक	लिंगके
,,७४	२०	भयसा	भयअंसा
२८०	१०	अवेगा	आवेगा
२८०	१७	सुख	सुखदा
२८५	१४	साकिल्य	साकल्ये
२८५	२६	मतिपन	मतिपं
,,८६	१२	होवै उत्तम	होवै उत्तम से उत्तम
२८८	२१	कुस्तु	कुरथी
२८८	२६	रा	राजा
२८८	२७	होवेहै	होतेहैं
२८९	३	चयो	अच्छे
२९१	७	पागा	पागो
२९२	२७	अकाश	आकाश
२९३	२१	पड़ले	पहिले
,,९५	१०	जवदे	जादमे
१९४	१६	मायाका	[illegible]
३७२	३	होसकीहै	होसक्तीहै

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२०३	६	वैला	वैलादिक
३०३	१६	होतीन	होतीनहीं
३०४	१०	मलि	मेलि
३०५	६	कान्या	काम्य
३०५	१५	आचारण	आचरण
३०८	१२	विध्येस्पाय	विभाल्पाय:
३१२	१२	करणेलगे	करनेलगे
३१४	२०	वेदादिकौक	वेदादिकोंके
३२२	७	दशमे	देशमे
३२२	८	दरिद्रमे	दरिद्रसे
३२३	८	वरतमता	वर्त्तकेमतमें
३३२	१	मानककन्या	यानककन्या
३३६	५	भयकेरहनेसे	भयकेकरनेसे
३३६	२०	स्कंदनहीं	क्योंकिस्कंदनहीं
३३७	१०	निकला	निकलेगा
३४१	६	येकवक्र	एकवक्र
३४२	११	संस्कारा:	संस्कारा:
३४४	१३	शागी	योगी
३४६	१६	यावज्जयावति	यावत्पवति
३४६	१६	झंपा	फलमा
३४८	२२	क्षुद्रादिक	शुद्रादिक
३५२	२५	दर्शी	दर्शन
३५५	२६	हिलनेका	हलनेका
३६२	२७	किरीकी	किसीकी
३६३	६	पुराणादिक केशास्त्रका	

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
		सोलिखाहैशुद्ध	
		पंक्तीमें	औरसबसंग
३६४	४	फरपेसा	फरऐसा
३६४	२५	पुपना	पूछना
३७०	१४	लिख	लिखेगा
३७३	८	देशजोक	देवलोक
३८५	२५	और	औरखुपायाकरैं
३८५	२६	थणेदिन	थोथेदिन
३९२	१०	सवगएथे	सवदोगयेथे
०	१९	सासदा	सोसदा
३९४	१६	परपुसं	बनसे
४०१	११	कसी	ऐसी
४०२	१७	अन्यामहै	अन्यायहै
०	१९	मतलके	मतलबके
४०३	६	मन:	तत:

भाजप के रूप में

में शुण्ठ्यादिकों के भी लिखे हैं और वे परमेश्वर के भी नाम हैं इन नामों में आप किन का ग्रहण करते हैं जो आप कहें कि हम तो देवों का ग्रहण करते हैं अच्छा तो आपके ग्रहण करने में क्या प्रमाण है देव सब प्रसिद्ध हैं और वे उत्तम भी हैं इससे मैं उन का ग्रहण करता हूं मैं आप से पूछता हूं कि परमेश्वर क्या अप्रसिद्ध है और परमेश्वर से कोई उत्तम भी है जो आप इस प्रमाण से उन का ग्रहण करते हैं और परमेश्वर तो कभी अप्रसिद्ध नहीं होता है उस के तुल्य कोई नहीं है तो उत्तम कैसे कोई होगा इससे यह आप का कहना मिथ्या ही है आप के कहने में बहुत से दोष भी आवेंगे जैसे कि भोजन के लिये भोजन करने का पदार्थ किसी ने किसी के पास प्रीति से रखके कहा कि आप भोजन करें और वह उस को त्यागके अप्राप्त भोजन के लिये जहां तहां भ्रमण करे उसको बुद्धिमान न जानना चाहिए क्योंकि वह उपस्थित नाम समीप आया जो पदार्थ उसको छोड़ के अनुपस्थित नाम अप्राप्त जो पदार्थ उस की प्राप्ति के लिये श्रम करता है इसी से वह पुरुष बुद्धिमान नहीं है ॥ किञ्च । उपस्थितं परित्यज्य अनुपस्थितं याचत इति बाधितन्यायः । वैसा ही आप का कथन हुआ क्योंकि उन नामों के जो उपस्थित अर्थ मनुष्य शुण्ठ्यादिक औषधियों का परित्याग आप करते हैं अनुपस्थित जो देव उन के ग्रहण में आप श्रम करते हैं इसमें कुछ भी प्रमाण वा युक्ति नहीं है और जो आप ऐसा कहें कि जहां जिस का प्रकरण है वहां उसी का ग्रहण करना योग्य है जैसे किसी ने कहा कि सैन्धवमानय सैन्धव को तू ले आ तब उस को समय का विचार करना अवश्य है क्योंकि सैन्धव दो ही अर्थों का नाम है घोड़े का और लवण का भी है गमन समय में सैन्धव शब्द सुन के घोड़े को ले आवेगा और भोजन समय में लवण को ही ले आवेगा तब तो ठीक ठीक होना और

जो गमन समय में लवण को ले आवै और भोजन समय में घोड़े को ले आवै तब उसका स्वामी उसपर क्रुद्ध होके कहेगा कि तू निर्बुद्धि पुरुष है क्योंकि गमन समय में लवण का क्या प्रयोजन है और भोजन समय में घोड़े का क्या प्रयोजन है जहां जिस को ले आना चाहिये वहां उस को क्यों तू नहीं ले आया इससे तू मूर्ख है मेरे पास से चला जा इससे क्या आया कि जहां जिस का ग्रहण करना उचित होय वहां उसी का ग्रहण करना योग्य है यह बात तो आपने अच्छी कही कि ऐसा ही जानना चाहिए और करना भी चाहिए हम लोगों को जहां जिसका ग्रहण करना उचित है वहां उसी का ग्रहण करना चाहिए कि । ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत । यह छान्दोग्य उपनिषद् का वचन है और ॥ ओमित्येतदक्षरमिदं सर्वं तस्योपव्याख्यानम् । यह माण्डूक्य उपनिषद् का वचन है ॥ ओं खम्ब्रह्म । यह यजुर्वेद की संहिता का वचन है ॥ ब्रवीम्यो मेतत् । यह कठोपनिषद् का वचन है प्रशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि । रुक्माभं स्वप्नधीगम्यं विद्यात्तं पुरुषं परम् ॥ एतमेके वदन्त्यग्निं मनुमन्ये प्रजापतिम् । इन्द्रमेके परे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम् ॥ ये दोनों मनुस्मृति के श्लोक हैं । स ब्रह्मा स विष्णुः स रुद्रस्स शिवस्सोऽक्षरः स परमः स्वराट् स इन्द्रः स कालाग्निस्स चन्द्रमाः इत्यादिक कैवल्योपनिषद् के वचन हैं । अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥ यह ऋग्वेद की संहिता का मन्त्र है । भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री । पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृंह पृथिवीं मा हिंसीः पुरुषं जगत् यह यजुर्वेद की संहिता का मन्त्र है । अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये ॥ नि होता सत्सि बर्हिषि । यह सामवेद की संहिता का मन्त्र है ॥ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥ यह अथर्ववेद की संहिता का

मन्त्र हैं इत्यादिक प्रकरणों में इन वचनों से और इन के ठीक ठीक अर्थों के जानने से परमेश्वर ही का ग्रहण होता है क्योंकि ओंकार और अग्न्यादिक नामों के मुख्य अर्थ से परमेश्वर का ही ग्रहण होता है निरुक्त व्याकरण और कल्प सूत्रादिक ऋषि मुनियों के किये व्याख्यानों से वैसेही ब्रह्मादिकों के किये संहिताओं के शतपथादिक ब्राह्मण ग्रन्थों के व्याख्यान से भी और छः शास्त्रों में भी परमेश्वर का ग्रहण देखने में आता है उन नामों के अर्थों से और उसी तरह के विशेषणों से भी परमेश्वर का ग्रहण होता है और का नहीं होता इससे क्या आया कि जहां जहां प्रार्थना स्तुति सर्वज्ञादि विशेषण और उपासना लिखी हैं वहां वहां परमेश्वर का ही ग्रहण होता है यह सिद्ध हुआ और जहां २ ऐसे प्रकरण हैं कि ॥ ततो विराडजायत विराजो अधिपूरुषः श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत । तस्मादेवाऽ अजायन्त पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ ये सब वचन यजुर्वेद की संहिता के हैं ॥ तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः आकाशाद्वायुः वायोरग्निः अग्नेरापः अद्भ्यः पृथिवी पृथिव्या ओषधयः ओषधिभ्यो अन्नम् अन्नाद्रेतः रेतसः पुरुषः स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः । यह तैत्तिरीयोपनिषद् का वचन है ॥ इत्यादिक प्रकरणों में विराट् इत्यादिक नामों से परमेश्वर का ग्रहण किसी प्रकार से भी नहीं होता क्योंकि परमेश्वर का जन्म और मरण कभी नहीं होता है । इससे इसी प्रकार के प्रकरणों में विराट् इत्यादिक नामों से और जन्मादिक विशेषणों से भी परमेश्वर का ग्रहण शिष्टजनों को कभी न करना चाहिये विराट् इत्यादिक नामों का अर्थ करता हूं जिससे इन नामों से परमेश्वर का ग्रहण हो ॥ राजृ दीप्तौ इस धातु से विराट् शब्द सिद्ध होता है । विविधंनाम चराचरंजगद् राजते नाम प्रकाशते स विराट् विविध अर्थात् बहु प्रकार के जगत् को जो प्रकाश करै उसका नाम विराट् है

अञ्चु गतिपूजनयोः । इस धातु से अग्नि शब्द सिद्ध होता है ॥ गतेस्त्रयोऽर्थाः ज्ञानं गमनं प्राप्तिश्चेति । पूजनं नाम सत्कारः । योऽञ्चति अच्यतेऽसोऽयमग्निः । जो ज्ञान स्वरूप सर्वज्ञ जानने प्राप्त होने और पूजा के योग्य है उस का नाम अग्नि है ॥ विश प्रवेशने इस धातु से विश्व शब्द सिद्ध होता है ॥ विशन्ति प्रविष्टानि सर्वाणि भूतानि आकाशादीनि यस्मिन्स विश्वः । प्रवेश करते हैं सब आकाशादिक भूत जिस में उस का नाम विश्व है इत्यादिक नाम अकार से लिये जाते हैं ॥ हिरण्यन्तेजसो नाम हिरण्यानि सूर्यादीनि तेजांसि गर्भे यस्य सहिरण्यगर्भः । अथवा हिरण्यानां सूर्यादीनां तेजसां गर्भः हिरण्यगर्भः । हिरण्यगर्भ शब्द का यह अर्थ है कि जिससे सूर्यादिक तेज वाले पदार्थ उत्पन्न होके जिस के आधार रहते हैं उसका नाम हिरण्यगर्भ है अथवा सूर्यादिक तेजों का जो गर्भ नाम निवास स्थान उस का नाम हिरण्यगर्भ है इस में यह यजुर्वेद का मन्त्र प्रमाण है ॥ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ इत्यादिक मन्त्रों से परमेश्वर का ही ग्रहण होता है ॥ वा गतिगन्धनयोः । इस धातु से वायु शब्द सिद्ध होता है ॥ गन्धनं हिंसनं प्राणिनोऽयं वायुः चराचरं जगद्धारयति बलिनां बलिष्ठः । जो चराचर जगत् का प्रलय करै अथवा धारण करै और जो बलवानों से बलवान होय उसी का नाम वायु है ॥ तिज निशाने इस धातु से तेजस् शब्द सिद्ध होता है जो अपने से आप ही प्रकाशित होय और सूर्यादिक तेजों का प्रकाश करने वाला होय उस का नाम तेजस है इत्यादिक नामों का उकार से ग्रहण होता है ॥ ईश ऐश्वर्ये इस धातु से ईश्वर शब्द सिद्ध होता है ईष्टे सर्वैश्वर्यवान् योऽस्ति सईश्वरः । जो सत्य विचारशील ज्ञान सत्य जिस का ज्ञान है अथवा जिस का ऐश्वर्य है उस का नाम ईश्वर है ॥ दो अवखण्डने । इस धातु से दिति शब्द

सिद्ध होता है अवखण्डनमविनाशः । इस्से क्तिन् प्रत्यय करने से दिति शब्द सिद्ध होता है दिति किस का नाम है कि जिस का विनाश होता है उस्से नञ्तत्- समास हुआ तब अदिति शब्द हुवा अदिति नाम जिस का कभी नाश न होय । जो अदिति है वही आदित्य है ज्ञा अव बोधने धातु है उस्से प्राज्ञ शब्द सिद्ध हुआ प्रकृष्टश्चासौज्ञश्चप्रज्ञः प्रज्ञएवप्राज्ञः जो ज्ञानी और सब ज्ञानियों से उत्तम ज्ञानवान् है उसका नाम प्राज्ञ है प्रजानाति वा चराचरञ्जगत् सप्रज्ञः प्रज्ञएवप्राज्ञः सब पदार्थों को यथावत् जो जानता है उस का नाम प्राज्ञ है जैसा कि परमेश्वर का ओंकार उत्तम नाम है वैसा कोई भी नहीं इस का बहुत थोड़ा अर्थ किया गया है क्योंकि ओंकार की व्याख्या से और बहुत से अर्थ किये जाते हैं यह ओंकार का सब नामों से अर्थ तो किया गया है सब नाम परमेश्वर के ही हैं और इस मन्त्र में जितने मित्रादिक नाम हैं उनका अर्थ अब आगे किया जाता है क्योंकि जो प्रार्थना स्तुति और उपासना होती है सो श्रेष्ठ ही की होती है श्रेष्ठ जो अपने से गुणों में और उत्तम सत्य व्यव- हारों में अधिक है सोई श्रेष्ठ होता है उन सब श्रेष्ठों में भी परमेश्वर अत्यन्त श्रेष्ठ है क्योंकि परमेश्वर के तुल्य कोई भी न हुआ न है और न होगा जो तुल्य नहीं तो अधिक कैसे होगा कभी न होगा क्योंकि परमेश्वर के न्याय दया सर्वसामर्थ्य और सर्वज्ञान इत्यादिक अनन्त गुण हैं और वे सर्वदा सत्य ही हैं इस्से सब मनुष्य लोगों को प्रार्थना स्तुति और उपासना परमेश्वर ही की करनी चाहिये परमेश्वर से भिन्न किसी की कभी न करनी चाहिये ब्रह्मा विष्णु महादेवादिक देव और दैत्य दानवादिक भी परमेश्वर ही में विश्वास करते हैं उसी की प्रा- र्थना स्तुति और उपासना करते हैं और किसी की भी नहीं करते इसका विचार अच्छी रीति से उपासना और भक्ति की

विषय में लिखा जायगा पूर्वपक्ष मित्रादिक नामों से सखा और इन्द्रादिक देवों के प्रसिद्ध व्यवहार देखने से उन का ग्रहण करना चाहिये उत्तरपक्ष उन का ग्रहण करना योग्य नहीं क्योंकि जो किसी का मित्र है वही और का शत्रु भी है और किसी से उदासीन भी वह देखने में आता है परमेश्वर तो सब जगत् का मित्र ही है और कोई से उदासीन भी नहीं इस से जो व्यवहार में किसी का मित्र होने किसी का शत्रु होने और किसी से उदासीन होने से उस का ग्रहण करना योग्य नहीं इस में महाभाष्य के वचन का प्रमाण भी है । प्रधानाप्रधानयोः प्रधाने कार्य्ये सम्प्रत्ययः गौणमुख्ययोर्मुख्ये कार्य्ये सम्प्रत्ययः । इसका अर्थ यह है कि प्रधान और अप्रधान गौण और मुख्य के बीच में से प्र-धान और मुख्य ही का ग्रहण होता है जैसे कि किसी से किसी ने पूछा कि यह कौन जाता है उसने उससे कहा कि राजा जाता है इस में विचार करना चाहिये कि राजा के साथ बहुत से भृत्य हाथी घोड़े और रथ भी जाते थे परन्तु राजा के सामने उन का ग्रहण नहीं भया न होता है न होगा किन्तु राजा ही का हुआ क्योंकि प्रधान और मुख्य के सामने अप्रधान और गौणों का ग्रहण नहीं होता वैसे ही जो परमेश्वर सभों में प्रधान और सभों में मुख्य ही है मित्र शत्रु और उदासीन किसी का भी नहीं इसी से परमेश्वर ही का मित्रादिक शब्दों से ग्रहण करना उचित है । वृञ् वरणे वर ईप्सायाम् ॥ इन दो धातुओं से वरुण शब्द सिद्ध होता है वृणोति सर्वान् शिष्टान् मुमुक्षून् मुक्तान् धर्मात्मनो वरुणः । अथवा व्रियते शिष्टैः मुमुक्षुभिः मुक्तैः धर्मात्म-भिः यः स वरुणः परमेश्वरः अथवा सर्वान् शिष्टादीन् वृणोति वा शिष्टादिभिः स वरुणः परमेश्वरः जो वृणोति नाम स्वीकार करता है शिष्ट मुमुक्षु और धर्मात्माओं को उसका नाम वरुण है सो वरुण नाम परमेश्वर का है । व्रियते नाम शिष्टादिक जिसका

स्वीकार करें है उसका नाम वरुण है अथवा वरयति नाम जो सब को प्राप्त हो रहा है उसका नाम वरुण है विशेष नाम और जो सब श्रेष्ठ लोगों को प्राप्त होने के योग्य होय उसका नाम वरुण है और यह भी अर्थ होता है कि वरुणो नाम वरः वरो नाम श्रेष्ठः जो सभों से श्रेष्ठ होय उसका नाम वरः सो परमेश्वरही है और दूसरा कोई भी नहीं। ऋगतिप्रापणयोः इस धातु से अर्यमा शब्द सिद्ध होता है जो सभों के कर्मों की यथावत् व्यवस्था को जाने और पाप पुण्य करने वालों को यथावत् पाप और पुण्यों की प्राप्ति का सत्य सत्य नियम करै उसी का नाम अर्यमा है इदि परमैश्वर्ये इस धातु से इन्द्र शब्द की सिद्धि होती है इन्दति परमैश्वर्यवान् भवति स इन्द्रः जिसका परम ऐश्वर्य होय उससे अधिक किसी का भी ऐश्वर्य न होवै उसका नाम इन्द्र है बृहत् शब्द है इसके आगे पति शब्द का समास है। बृहतामाकाशादीनां पतिः बृहस्पतिः। जो बड़ों से भी बड़ा और सब आकाशादिक और ब्रह्मादिकों का जो स्वामी है उसका नाम बृहस्पति है। विष्लृ व्याप्तौ इस धातु से विष्णु शब्द सिद्ध हुआ है। वेवेष्टि व्याप्नोति चराचरं जगत्स विष्णुः उरु नाम महत् क्रमः पराक्रमोऽस्य स उरुक्रमः जो सब जगत् में व्यापक होय उसका नाम अनन्त पराक्रम जिस का है उसका नाम उरुक्रम वही विष्णु है उरुक्रमविष्णुः। इन धातुओं से ब्रह्म शब्द सिद्ध होता है जो सबके ऊपर विराजमान होय और सब से बड़ा होय उसका नाम ब्रह्म है वायु जो पहिले जो ओंकार के अर्थ से लिया है यहां अर्थ होना चाहिये शम् नाम है सुख का और कल्याण का भी नाम यह पद से हम सब लोगों का ग्रहण होता है हे परमेश्वर ओंकारादिक जितने नाम हैं वे आपही के हैं आप प्रत्यक्ष ब्रह्म हैं त्वामेव प्रत्यक्ष ब्रह्म वदिष्यामि। आपही को मैं प्रत्यक्ष ब्रह्म कहूंगा ऋतं सत्य

सब जगत् में आप निश्चही प्राप्त हो । ऋतंवदिष्यामि । आप की जो यथार्थ आज्ञा है उसी को मैं कहूंगा और उसी को ही मैं करूंगा । सत्यंवदिष्यामि । और सत्यही कहूंगा और करूंगा भी तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु । ऐसा जो मैं आपकी आज्ञा को कहने वाला और करने वाला मेरी आप रक्षा करें और उस आज्ञा से मेरी बुद्धि विरुद्ध न होय । उसी आज्ञा को मैं जो कहने वाला उसी आज्ञा से मैं विरुद्ध कभी न कहूं क्योंकि जो आप की आज्ञा है धर्म रूपीही है जो उससे विरुद्ध सो अधर्म है उसी आज्ञा को कहूं और करूं भी ऐसी आप कृपा करें जब मैं उस आज्ञा को यथावत कहूंगा और करूंगा भी तब उस का मुख्य फल यही है कि आप की प्राप्ति का होना अवतुमाम-वतुवक्तारम् । यह फिर जो दूसरी बार पाठ है मन्त्र में वह आदर के वास्ते है जैसे कि किसी ने किसी से कहा त्वंग्रामङ्ग-च्छगच्छ । यह कहने से क्या जाना जाता है कि तू ग्राम को शीघ्रही जा वैसेही दूसरी बार पाठ से आप मेरी अवश्यही रक्षा करें और ओ३म्शान्तिश्शान्तिश्शान्तिः । यह जो तीन बार पाठ है उसका अभिप्राय यह है कि आध्यात्मिकताप जो शरीर में रोगा-दिकों से होता है दूसरा शत्रु व्याघ्र और सर्पादिकों से जो होता है उसका नाम आधि भौतिक है तीसरा ताप यह है कि वृष्टि का अत्यन्त होना और कुछ भी वृष्टि का न होना अति शीत वा उष्णता का होना उसका नाम आधि दैविक ताप है हम लोगों की यह प्रार्थना है कि जगत के तीनों तापों की निवृत्ति आप की कृपा से होजावे भवानश्शंयोभवतु । आप हम लोगों के कल्याण तथा संसार के कल्याण करने वाले हो आप से भिन्न कोई भी कल्याण कारक अथवा कल्याण स्वरूप नहीं है इससे आप सेही प्रार्थना है कि सब जीवों के हृदय में आपही आप प्रकाशित होवें इस मन्त्र का संक्षेप से अर्थ पूर्ण होगया और

आगे अन्य नामों के भी अर्थ लिखे जाते हैं॥ सूर्य आत्माजगतस्तस्थुषश्च। यह वचन यजुर्वेद का है जगत नाम प्राणियों का जो कि चलते फिरते हैं तस्थुष अर्थात् नाम स्थावर जो कि पर्वत इत्यादिक हैं उन सभों का जो आत्मा होय उसका नाम सूर्य है॥ अत सातत्यगमने। धातु है इससे आत्म शब्द सिद्ध हुआ अततिसर्वं व्याप्नोतीत्यात्मा। जो सब जगत में व्यापक होय उसका नाम आत्मा है और परश्चासावात्माचपरमात्मा। जो सब जीवात्माओं से श्रेष्ठ होय उसका नाम परमात्मा है ईश्वर नाम सामर्थ्य वाले का है जो सब ईश्वरों में परम श्रेष्ठ होय उसका नाम परमेश्वर है ब्रह्मादिक देवों में एक से एक ऐश्वर्यवाला है जैसा कि मनुष्यों में एक से एक ऐश्वर्यवाला है वैसेही ब्रह्मादिक देवों में जो सब से श्रेष्ठ होय और चक्रवर्त्यादिक राजाओं से परम नाम श्रेष्ठ होय उसका नाम परमेश्वर है जो सब ईश्वरों का ईश्वर होय और जिसके तुल्य ऐश्वर्यवाला कोई भी न होय उसी का नाम परमेश्वर है॥ षुञ् अभिषवे षूङ् प्राणिगर्भविमोचने। इन दो धातुओं से सविता शब्द सिद्ध होता है॥ अभिषवःउत्पादनम् प्राणिगर्भविमोचनञ्च। सुनोति सूते वा उत्पादयति चराचरं जगत्सविता। जो सब जगत् की उत्पत्ति करै उसका नाम सविता है॥ दिवुक्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु। इस धातु से देव शब्द की सिद्धि होती है। दीव्यतीतिदेवः॥ दीव्यति नाम स्वयं जो प्रकाशस्वरूप होय और जो सब जगत को प्रकाश करै है इससे परमेश्वर का नाम देव है॥ क्रीडतीतिदेवः क्रीडते नाम अपने आनन्द से अपने स्वरूप में आपही जो क्रीडा को करै अथवा क्रीडा मात्र से अन्य की सहायता के बिना जगत् को क्रीडा की नाईं जो रचै वा सब जगत् के क्रीडाओं का आधार जो होय इससे परमेश्वर का नाम देव है॥ विजिगीषतेपरेण: विजिगीषते

नाम सब का जीतने वाला और आप तो सदा अजेय है जिसको कोई भी न जीत सकै इससे परमेश्वर का नाम देव है व्यवहारयति सदेवः व्यवहारयति नाम न्याय और अन्याय व्यवहारों का जो ज्ञापकनाम उपदेष्टा और सब व्यवहारों का जो आधार भी है इससे परमेश्वर का नाम देव है द्योतयतिनाम सब प्रकाशों का आधार जो अधिकरण है इससे परमेश्वर का नाम देव है ॥ स्तूयतेसदेवः। स्तूयते नाम सब लोगों को स्तुति करने के योग्य होय और निन्दा के योग्य कभी न होय इससे परमेश्वर का नाम देव है ॥ मोदयतिसदेवः। मोदयति नाम आप तो आनन्द स्वरूप ही है औरों को भी आनन्द करावै जिसको दुःख का लेश कभी न होय इससे भी परमेश्वर का नाम देव है ॥ माद्यतिस-देवः। माद्यति नाम आप तो हर्ष स्वरूप होय जिस को शोक का लेश कभी न होय औरों को भी हर्ष करावै इससे भी परमेश्वर का नाम देव है ॥ स्वापयतिसदेवः। स्वापयति नाम प्रलय में सभों को शयन अव्यक्त में जो करावै इससे परमेश्वर का नाम देव है ॥ कामयते काम्यतेवासदेवः। कामयते काम्यते नाम जिसके सब काम सिद्ध होंय और जिस की प्राप्ति की कामना सब शिष्ट लोग करैं इससे भी परमेश्वर का नाम देव है ॥ गच्छतिगम्यतेवासदेवः। गच्छति गम्यते नाम जो सभों में गत होवे प्राप्त होय जानने के योग्य होय उसको कहते हैं देव देव नाम परमेश्वर का है देव शब्द के एकादश अर्थ हैं ॥ कुबिआच्छादने। इस धातु से कुबेर शब्द सिद्ध होता है जो आकाशादिकों का आच्छादक है उसका नाम कुबेर है इससे परमेश्वर का नाम कुबेर है ॥ पृथुविस्तारे। इस धातु से पृथिवी शब्द सिद्ध हुआ जो सब आकाशादिकों से विस्तृत है उस का नाम पृथिवी है इससे परमेश्वर का नाम पृथिवी है ॥ जलघातने। इस धातु से जल शब्द सिद्ध होता है ॥ जलतिघातयतिदुष्टान्संघातयत्यव्यक्तपरमाण्वादीन्

ईश्वरं तज्जलम् । जो अव्यक्त से व्यक्त को और एक परमाणु से दूसरे परमाणु को अन्योन्य संयोग और वियोग के कारण जो हनन और प्रतिहनन करने वाला होय उसका नाम जल है इससे परमेश्वर का नाम जल है हनन नाम एक से एक को मिलाना प्रतिहनन नाम दूसरे से तीसरे को मिलाना तीसरे को चौथे से मिलाना जगत् की उत्पत्ति समय में सभों को संयोग करने वाला और प्रलय समय में वियोग का करने वाला ऐसा परमेश्वर ही है दूसरा कोई भी नहीं ॥ जलघातने । जलजाड्ये इन धातुओं से भी जल शब्द सिद्ध होता है जलपति नाम उत्पाद्यति सर्वं जगत् तज्जलम् जलति घातयति चराचरं जगत् तद्ब्रह्म जलम् ॥ क शब्द से सभों का जनक और ल शब्द से सभों का धारण करने वाला उसका नाम कल, कल नाम परमेश्वर का है काशृदीप्तौ । इससे आ-काश शब्द सिद्ध होता है ॥ यः सर्वतः सर्वंजगत्प्रकाश-यति स आकाशः । जो परमेश्वर सर्व जगत् में और सर्व प्रकार से सभों को प्रकाशता है इससे परमेश्वर का नाम आकाश है ॥ अदभक्षणे । इससे अन्न शब्द सिद्ध होता है ॥ अद्यतेऽत्ति च-राचरंजगत्तदन्नम् । जो चराचर जगत् का भक्षक है और काल को भी खा के पचा लेता है उसका नाम अन्न है इस में प्रमाण है ॥ अन्नेऽस्मिन्भूतानि तस्मादन्नं तदुच्यते । यह तैत्तिरीयोप-निषद् का वचन है ॥ अहमन्नमहमन्नमहमन्नम् अहमन्नादोऽहमन्नादोऽहमन्नादः । यह भी उसी उपनिषद् में है ॥ अन्नं अत्तीत्यन्नादः । अन्न शब्द से चराचर जगत् का जो ग्राहक उसका नाम अन्नाद है यह वचन परमेश्वर ही का है क्योंकि मैं अन्न हूं मैं ही अन्नाद हूं तीन बार इस श्रुति में पाठ आदर के वास्ते है जैसे कि ग्रामङ्गच्छग्रामङ्गच्छ । इससे क्या लिया जाता है कि शीघ्र ही तू ग्राम को जा और कहीं भी ठहर न

नहीं इस प्रकार के व्यवहारों में भी बहुत सार का कहना है सो जैसे अनर्थक नहीं वैसे इस में भी अनर्थक नहीं इस विषय में व्यास जी का सूत्र भी प्रमाण है ॥ अत्ता चराचरग्रहणात् । अत्ता नाम खाने वाले का है उसी का नाम अन्नाद है चराचर नाम जड़ और चेतन सब जगत उस के ग्रहण करने से परमेश्वर का नाम अत्ता और अन्नाद है जैसे कि गूलर के फल में कृमि उत्पन्न हो के उसी में रहते हैं और उसी में नाश हो जाते हैं इससे परमेश्वर का नाम अत्ता अन्न और अन्नाद है वसनिवासे इस धातु से वसु शब्द सिद्ध होता है ॥ वसन्ति सर्वाणि भूतानि यस्मिन्स वसुः । अथवा सर्वेषु भूतेषु योवसति स वसुः । सब आकाशादिक भूत जिस में रहते हैं उस का नाम वसु है अथवा सब भूतों में जो वास करता है उस का नाम वसु है इससे वसु परमेश्वर का नाम है ॥ रुदिर्अश्रुविमोचने । रुदेर्णिलोपश्च इस धातु से और इस सूत्र से रुद्र शब्द सिद्ध होता है ॥ रोदयत्यन्यायकारिणोजनान्सरुद्रः । रोवाता है दुष्ट कर्म करने वाले जीवों को जो उस का नाम रुद्र है इस में यह श्रुति का भी प्रमाण है । यन्मनसाध्यायति तद्वाचावदति यद्वाचावदति तत्कर्म्मणाकरोति यत्कर्म्मणाकरोति तदभिसम्पद्यते । यह यजुर्वेद के ब्राह्मण की श्रुति है इस का यह अर्थ है कि जो जीव मन से विचारता है वही वचन से कहता है उसी को कर्त्ता है और जैसा करता है उसी का ही भाग होता है ऐसी परमेश्वर की आज्ञा है कि जो जैसा कर्म करे सो वैसा ही फल पावै इसी [illegible] को कहने वाला परमेश्वर है उस की आज्ञा सत्य ही है [illegible] जैसा करता है सो वैसा ही भाग होता है इससे कहा [illegible] कि दुष्ट कर्मकारी जितने पुरुष हैं वे सब दुष्ट कर्मों के फल [illegible] रोदन करते हैं इस कारण से परमेश्वर का नाम [illegible] है नारायण भी नाम परमेश्वर का है ॥ आपो नारा इति

का॰ आपो वै नरसूनवः । तायदस्यायनंपूर्वंतेननारायणःस्मृतः ॥ यह श्लोक मनुस्मृति का है आप नाम जल का है और नरसंज्ञा भी जल की है और वे प्राण जलसंज्ञक हैं वे सब प्राण जिसका अयन नाम निवासस्थान है इससे परमेश्वर का नाम नारायण है पूर्व का अर्थ जो कर दिया है ॥ चदि आह्लादे । इस धातु से चन्द्र शब्द सिद्ध होता है ॥ चन्दतीति चन्द्रः । जो आह्लाद नाम आनन्द स्वरूप होय और जो मुक्त पुरुष जिस को प्राप्त हों के सदा आनन्द स्वरूप ही रहें उनको दुःख का लेश कभी न होय इससे परमेश्वर का नाम चन्द्र है ॥ मगि गत्यर्थः । मङ्गेरलच् इससे मङ्गल शब्द सिद्ध हुआ ॥ मङ्गतीति मङ्गलः । जो आप ही मङ्गल स्वरूप ही हैं और सब जीवों के मङ्गल का वही कारण है इससे परमेश्वर का नाम मङ्गल है ॥ बुध अवगमने । इस धातु से बुध शब्द सिद्ध होता है ॥ बुध्यते सो बुधः । जो आप तो बोध स्वरूप होय और सब जीवों के बोधों का कारण होय इससे परमेश्वर का नाम बुध है बृहस्पति का अर्थ प्रथम कर दिया है ॥ ईशुचिर् पूतीभावे । इस धातु से शुक्र शब्द सिद्ध होता है शुचिर् नाम । अत्यन्त पवित्र का जो आप तो अत्यन्त पवित्र होय औरों के पवित्रता का कारण होय इससे परमेश्वर का नाम शुक्र है चर गति भक्षणयोः । इस धातु से शनैस् अव्यय पूर्व पद से शनैश्चर शब्द सिद्ध होता है जो अत्यन्त धैर्यवान् होय और सब संसार के धैर्य का कारण होय इससे परमेश्वर का नाम शनैश्चर है रह त्यागे । इस धातु से राहु शब्द सिद्ध होता है जो सब से एकान्त स्वरूप होय जिस में कोई भी मिला न होय और सब त्यागियों के त्याग का हेतु होय इससे परमेश्वर का नाम राहु है ॥ कित निवासे रोगापनयने च । इससे केतु शब्द सिद्ध होता है जो सब जगत् का निवासस्थान होय और सब रोगों से रहित होय मुमुक्षुओं के जन्म मरणादिक रोगों के नाश का हेतु होय

इससे परमेश्वर का नाम केतु है ॥ यजदेवपूजासंगतिकरणदानेषु इस धातु से यज्ञ शब्द सिद्ध होता है ॥ इज्यतेसर्वैर्ब्रह्मादिभिर्विद्वद्भिर्यज्ञः । सब ब्रह्मादिक जिसकी पूजा करते हैं उसका नाम यज्ञ है ॥ यज्ञोवैविष्णुरितिश्रुतेः । यज्ञ का नाम विष्णु है और विष्णु नाम है व्यापक का इस श्रुति से भी परमेश्वर का नाम यज्ञ है ॥ हुदानादनयोः । इस धातु से होम शब्द सिद्ध होता है ॥ हूयतेसोयंहोमः । जो दान नाम देने के योग्य है और अदन नाम ग्रहण करने के योग्य है उसका नाम होम है सब दानों में परमेश्वर का जो दान नाम उपदेश का करना और सब ग्रहणों में जो परमेश्वर का ग्रहण नाम परमेश्वर में दृढ़ निश्चय का करना इस दान से वा ग्रहण से कोई भी उत्तमदान का ग्रहण नहीं है इससे परमेश्वर का नाम होम है ॥ बन्धबन्धने इस धातु से बन्धु शब्द सिद्ध होता है जिसने सब लोक लोकांतर अपने २ स्थान में प्रबन्ध करके यथावत् रक्खे हैं और अपने २ परिधि के ऊपर सब लोक भ्रमण करें इस प्रबन्ध के करने से किसी से किसी का मिलना न होय जैसे कि बन्धु बन्धु का सहाय कारी होता है वैसे ही सब पृथिव्यादिकों का धारण करना और सब पदार्थों का रचन करना इससे परमेश्वर का नाम बन्धु है पा पाने पारक्षणे । इन दो धातुओं से पिता शब्द सिद्ध होता है जैसे कि पिता अपनी प्रजा के ऊपर कृपा और प्रीति को करता है वैसे परमेश्वर भी सब जगत के ऊपर कृपा और प्रीति कर्ता है इससे परमेश्वर का नाम सब जगत का पिता है पितॄणांपितापितामहः । जितने जगत में पिता लोग हैं उन सभों का पिता होने से परमेश्वर का नाम पितामह है ॥ पितामहानांपिताप्रपितामहः । जगत में जितने पितामहों के पिता हैं उन सभों के पिता के होने से परमेश्वर का नाम प्रपितामह है ॥ मा माने माङ्माने शब्देच । इन दो धातुओं से माता शब्द

सिद्ध होता है जैसे कि माता अपनी प्रजा का मान करती है और लाड़न करती है वैसेही सब जगत का मान और लाड़न अत्यन्त कृपा और प्रीति करने से परमेश्वर का नाम माता है ॥ श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो मनो यद्वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणः। चक्षुषश्चक्षुरतिमुच्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥ यह केनोपनिषद का वचन है इसका यह अभिप्राय है कि जैसे श्रोत्रादिक अपने २ विषय को ग्रहण करते हैं तथा सब श्रोत्रादिकों का और श्रोत्रादिक विषयों को उनकी क्रिया को भी यथावत् जानता है इससे परमेश्वर का नाम श्रोत्रका श्रोत्र है तथा मन का मन वाणी की वाणी प्राण का प्राण और चक्षु का चक्षु इससे परमेश्वर के नाम श्रोत्र मन वाणी प्राण और चक्षु ये सब हैं चेतयन् बुद्धिर्भवति चेतयन्त्यनेन चित्तमपि भवति । नाम सब को चेताने वाले हैं इससे परमेश्वर का नाम चित्त और बुद्धि है ॥ अहङ्करोति अहङ्कारयति । नाम अहङ्करोतीत्यहङ्कारः जो अन्याकृतादिक सब जगत् को वही कर्त्ता है ऐसा जो ज्ञान का होना इससे परमेश्वर का नाम अहङ्कार है ॥ जीवप्राणधारणे । इस धातु से जीव शब्द सिद्ध होता है ॥ योऽपतिसमवेतप्राणान्‌स जीवः । जो सब जीव और प्राणों का जीवन धारण करने वाला है इससे परमेश्वर का नाम जीव है ॥ अजू व्याप्तौ । इस धातु से अज शब्द सिद्ध होता है सब जगत में व्यापक होने से परमेश्वर का नाम अज है ॥ न जायते इत्यजः इससे अज शब्द सिद्ध होता है ॥ न जायतइत्यजः । जिसका जन्म कभी न हुआ न है और न होगा इससे परमेश्वर का नाम अज है ॥ सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म । यह तैत्तिरीयोपनिषद का वचन है ॥ सत्तीतिसत् अस्तीतिसत्यम् जो सब दिन रहे जिसका नाश कभी न होय इससे परमेश्वर का नाम सत्य स्वरूप है और ज्ञान स्वरूप होने से परमेश्वर का नाम ज्ञान है जिसका अन्त नाश सीमा कभी नहीं अर्थात्

देश काल और वस्तु का परिच्छेद नहीं। जैसे कि मध्यदेश में दक्षिण देश नहीं दक्षिण देश में मध्यदेश नहीं भूतकाल में भविष्यत्काल नहीं और दोनों में वर्तमान काल नहीं ऐसेही पृथिवी आकाश नहीं और आकाश पृथिवी नहीं ऐसा भेद परमेश्वर में नहीं है ऐसा अखण्डी है किन्तु सब देशों सब कालों और सब वस्तुओं में अखण्ड एक रस के होने से और कोई भी जिसका अन्त न लेसके इससे परमेश्वर का नाम अनन्त है॥ टुनदि समृद्धौ। इससे आनन्द शब्द सिद्ध होता है जो सब समृद्धिमान् सदा आनन्द स्वरूप और मुमुक्षु मुक्तों को जिस की प्राप्ति से सब समृद्धि और नित्यानन्द के होने से परमेश्वर का नाम आनन्द है॥ सत् शब्द का अर्थ सत्य शब्द के व्याख्यान में जान लेना और ज्ञान शब्द के व्याख्यान से चित् शब्द का अर्थ जान लेना इससे परमेश्वर को सच्चिदानन्द स्वरूप कहते हैं॥ शुन्ध शुद्धौ। इससे शुद्ध शब्द सिद्ध होता है जो आपभी शुद्ध होय जिसको कुछ मलीनता के संयोग का लेश कभी न होय और सब शुद्धियों के हेतु के होने से परमेश्वर का नाम शुद्ध है॥ बुध अवगमने। इस धातु से बुद्ध शब्द सिद्ध होता है जो सब बोधों का परमावधि ज्ञान परम सीमा के होने से परमेश्वर का नाम बुद्ध है॥ मुच्लृ मोचने। इस धातु से मुक्त शब्द सिद्ध होता है जो आप तो सदा मुक्त स्वरूप होय और सब मुक्त होने वालों के मुक्ति के साक्षात् हेतु होने से परमेश्वर का नाम मुक्त है॥ सदकारणवन्नित्यम्। जो सत् स्वरूप होय और कारण जिसका कोई भी नहीं इससे परमेश्वर का नाम नित्य है ये सब जिसके ऐसा एक नाम हो जायगा॥ नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभावः। जो स्वभाव ही से नित्य शुद्ध बुद्ध और मुक्त के होने से परमेश्वर का नाम नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव है॥ डुकृञ् करणे। इस धातु से निराकार शब्द सिद्ध होता है॥ निर्गतः आकारोयस्मात्

निराकारः। जिसका आकार कोई भी नहीं इससे परमेश्वर का नाम निराकार है॥ अञ्जनं मायाऽविद्ययोर्नाम निर्गतमञ्जनं-यस्मात् स निरञ्जनः। माया नाम छल और कपट का है क्योंकि यह पुरुष मायावी है इससे क्या जाना जाता है कि यह छली और कपटी है अविद्या अज्ञान का नाम है जिसको माया और अविद्या का लेश मात्र सम्बन्ध कभी न हुआ न है और न होगा इससे परमेश्वर का नाम निरञ्जन है॥ गणसंख्याने। इस धातु से गण शब्द सिद्ध होता है इसके आगे ईश शब्द रखने से गणेश शब्द सिद्ध होता है॥ गणानांसमूहानांजगतामीशःस्वामी-दाः। जो सब गणों का नाथ संघातों का अर्थात सब जगतों का ईश नाम स्वामी होने से परमेश्वर का नाम गणेश है॥ वि-श्वस्येश्वरः विश्वेश्वरः। विश्वनाम सब जगत का ईश्वर होने से परमेश्वर का नाम विश्वेश्वर है॥ कूटेतिष्ठतीतिकूटस्थः। जिसमें सब व्यवहार होय और सब व्यवहारों में व्याप्त होय और सब व्यवहार का आधार भी होय परन्तु जिसके स्वरूप में व्यवहार का लेश मात्र भी विकार न होनेसे परमेश्वर का नाम कूटस्थ है जितने देव शब्द के अर्थ लिखे हैं वेही अर्थ देवी शब्द के जान लेने चाहियें॥ शक्लृशक्तौ। शक्नोतिसर्वस्माच्छक्तिः जो सब पदार्थों को रचने का सामर्थ्य जिसमें है इससे परमेश्वर का नाम शक्ति है॥ लक्षदर्शनाङ्कनयोः। इससे लक्ष्मी शब्द सिद्ध होता है लक्षयति पश्यति चराचरंजगत् सलक्ष्मीः जो सब जगत् को लक्ष करके देखता है उसका नाम लक्ष्मी है॥ लक्षयति चिह्नयति वा चराचरंजगत्सलक्ष्मीः। जो सब जगत के चिह्नों को अर्थात नेत्र नासिकादिक और पुष्प पत्र मूलादिक वृक्ष से एक विलक्षण जितने चिह्न हैं उनके रचने और प्रकाशक के होने से परमेश्वर का नाम लक्ष्मी है॥ लक्ष्यतेवेदादिभिः शा-स्त्रैर्ज्ञानिभिर्योगिभिश्चापिसलक्ष्मीः। वेदादिक शास्त्र और ज्ञानियों

का शब्दप्रकाश दर्शन के योग्य होने से परमेश्वर का नाम वाणी है ॥ सृगतौ । इससे सरस् शब्द से मतुप् और ङीप् प्रत्यय के करने से सरस्वती शब्द सिद्ध होता है सरोनाम विज्ञानम् विज्ञानंनाम विविधंशब्दज्ञानम् ननुविज्ञानम् सरस् शब्द विज्ञान का वाचक है विविधनाम नानाप्रकार शब्द शब्दों का प्रयोग और शब्दार्थ सम्बन्धों का यथावत् जो ज्ञान उसका नाम विज्ञान है ॥ सरोनाम विज्ञानंविद्यतेयस्याः सासरस्वती । सर नाम विज्ञान सो अखण्डित विद्यमान है जिसको उसका नाम सरस्वती है वैसा परमेश्वरही है इससे सरस्वती नाम परमेश्वर का है ॥ सर्वाःशक्तयोविद्यन्तेयस्यससर्वशक्तिमान् । जिसको सब शक्ति नाम सब सामर्थ्य विद्यमान होय उसका नाम सर्व शक्तिमान् है अर्थात जो किसी का लेशमात्र सामर्थ्य का आश्रय न लेवै और सब जगत उसका आश्रय करता है इससे परमेश्वरका नाम सर्व शक्तिमान् है यहां न्याय और दयालु का स्मरण ये तीन नाम एक अर्थ के वाचक हैं ॥ प्रमाणैरर्थपरीक्षणंन्यायः । यह न्यायशास्त्र सूत्रों के ऊपर वात्स्यायन मुनिकृत भाष्य का वचन है जो प्रत्यक्षादिक प्रमाणों से सत्य सत्य सिद्ध होय उसका नाम न्याय है ॥ न्यायकर्तुंशीलमस्यसोऽयंन्यायकारी । जिसका न्याय करने ही का स्वभाव होय और अन्याय करने का लेश कोई सम्बन्ध कभी न होय ऐसा परमेश्वर ही है इससे परमेश्वर का नाम न्यायकारी है ॥ दय दान गति रक्षण हिंसादानेषु । इस धातु से दया शब्द सिद्ध होता है ॥ दयतेददातिसादया । दान नाम अभय का देना गतिनाम यथावत् गुण दोषों का विज्ञान रक्षण नाम है सब जगत की रक्षा का करना हिंसा नाम दुष्ट कर्मकारियों को दण्ड का होना आदान नाम सब जगत के ऊपर सामर्थ्य से कृपा का करना इसका नाम दया है ॥ दयाविद्यतेयस्यसदयालुः । उस दया के नित्य विद्यमान होने से

परमेश्वर का नाम दयालु है ॥ सदेवसोम्येदमग्रआसीदेकमेवा-
द्वितीयम् । यह छांदोग्योपनिषद् का वचन है इसका अभिप्राय
यह है कि हे सोम्य हे श्वेतकेतो श्वेतकेतु के जो पिता उद्दालक
वे उससे कहते हैं अग्रे नाम सृष्टि जब उत्पन्न नहीं भई थी तब
एक अद्वितीय ब्रह्म परमेश्वर ही था और कोई भी नहीं था वैसा
कोई परमेश्वर से भिन्न न हुआ न है और न होगा सदेव नाम
जिसका नाश किसी काल में कभी न होय ॥ इससे श्रुति में
सदेव यह वचन का पाठ है ॥ एकम् एव और अद्वितीयम् ये
तीनों शब्दों से यह अर्थ जाना जाता है कि ॥ सजातीयविजाती-
यस्वगतभेदशून्यंब्रह्मास्तीति । सजातीय भेद यह है कि मनुष्य से
भिन्न दूसरे मनुष्यों का होना विजातीय भेद यह है कि मनुष्य
से भिन्न विजातीय पाषाण और स्वगत भेद यह है कि जैसे
मनुष्य में नाक कान सिर पांव एक से एक भिन्न अवयव हैं
वैसे ही परमेश्वर में तीन प्रकार के भेद नहीं जब सजातीय
परमेश्वर से भिन्न कोई दूसरा वैसा ही परमेश्वर होय तब तो
सजातीय भेद होय ऐसा दूसरा कोई परमेश्वर नहीं है इससे
परमेश्वर में सजातीय भेद नहीं है जैसे परमेश्वर का न्याय-
कारित्वादि गुण स्वाभाविक हैं वैसा ही परमेश्वर से भिन्न अ-
न्यायकारित्वादि विशिष्ट गुणवान् दूसरा विरुद्ध स्वभाव परमे-
श्वर होय तब तो परमेश्वर में विजातीय भेद आसके जैसा कि
खुदा के विरुद्ध शैतान ऐसा कभी नहीं इससे परमेश्वर में वि-
जातीय परिच्छेद नहीं परमेश्वर निराकार और निरवयव है
वैसे ही कोई प्रकार का भेद नहीं है इससे परमेश्वर में स्वगत
परिच्छेद नहीं इससे परमेश्वर का नाम अद्वितीय है यही अद्वैत
शब्द का अर्थ है ॥ द्वयोर्भावोद्विताद्वितैवद्वैतम् नविद्यतेद्वैतंयस्मि
न्नस्त्यसावद्वैतम् । दोनों विद्यमान ईश्वरों का जो होना उसका
नाम द्विता है द्विता जिसको कहते हैं उसी का नाम द्वैत है

नहीं है विद्यमान द्वैत जिसमें जिसको वा उसका नाम अद्वैत है अद्वितीय और अद्वैत परमेश्वरही का नाम है ॥ निर्गताः ज-न्मादयः अविद्यादयः सत्त्वादयो गुणाः यस्मात् स निर्गुणः परमे-श्वरः । जगत् के जन्मादिक अविद्यादिक और सत्वादिक गुणों से भिन्न है अर्थात् जगत के जितने गुण हैं परमेश्वर में लेश मात्र सम्बन्ध भी नहीं रखते इससे परमेश्वर का नाम निर्गुण है सच्चिदानन्दादिगुणैः सहवर्तमानत्वात्सगुणः । अपने नित्य स्वाभा-विक सच्चिदानन्दादिक गुणों से सदा सहवर्तमान होने से परमे-श्वर का नाम सगुण है कोई भी संसार में ऐसा वस्तु नहीं है जो कि केवल निर्गुण अथवा सगुण होय जैसे कि पृथिवी में गन्धा-दिक गुणों के संग होने से सगुण है और वही पृथिवी चेतन और आकाशादिकों के गुणों से रहित होने से निर्गुण भी है वैसे ही अपने सर्वज्ञादिक गुणों से सदा सहित होने से परमेश्वर का नाम सगुण है और उत्पत्ति स्थिति नाश जड़त्वादिक जगत के गुणों से रहित होने से परमेश्वर निर्गुण भी है वैसे सब जगहों में विचार कर लेना ॥ सर्वजगतोन्तर्यन्तुं शीलमस्यसो-ऽन्तर्यामी । जो सब जगत के भीतर बाहर और मध्य में सर्वत्र व्याप्त होके सब को जानते हैं और सब जगत को नियम में रखने से परमेश्वर का नाम अन्तर्यामी है न्यायकारी नाम के अर्थ में धर्म शब्द की व्याख्या कर दी है उससे जानलेना धर्मेण प्रकाशते स धर्मराजः । अथवाधर्मंराजयतिप्रकाशयति सधर्मराजः । धर्म न्याय का और न्याय पक्षपात के त्याग का नाम है जिस धर्म से सदा प्रकाशमान होय अथवा सदा धर्म का प्रकाश करने से परमेश्वर का नाम धर्मराज है ॥ सर्वञ्जगत्कर्तास्तीतिसर्वजगत् कर्ता जो सब जगत् का करने वाला होने से परमेश्वर का नाम सर्व जगत् कर्ता है ॥ निर्गतंभयंयस्मात्सनिर्भयः । जिसको किसी भी किसी प्रकार का भय नहीं होता है इससे परमेश्वर का नाम

निर्भय है ॥ नविद्यतेऽस्यादिःकारणंसस्वरःअनादिः । जिसका कारण कोई भी नहीं और अपने जो सब जगत् का आदि कारण है इससे परमेश्वर का नाम अनादि है ॥ अणोरणीयान्महतोमहीयान् । यह मुण्डकोपनिषद् का वचन है जो सब सूक्ष्म पदार्थों से अत्यन्त सूक्ष्म के होने से परमेश्वर का नाम सूक्ष्म है और जो सब बड़ों से अत्यन्त बड़ा है इससे परमेश्वर का नाम महान् है सब कल्याण गुणों से सदा युक्त रहने से परमेश्वर का नाम शिव है ॥ भगोविद्यतेयस्यसभगवान् । जो अनन्त ज्ञान अनन्त वैराग्यादिक नित्य गुणों से युक्त होने से परमेश्वर का नाम भगवान् है ॥ मान्यतिचराचरञ्जगत् । अथवा सर्ववेदादिभिरशास्त्रैः शिष्टैश्चमन्यतेयः समनुः । जो सब जगत् का मान करै अथवा सब वेदादिक शास्त्र और शिष्टलोक जिसको अत्यन्त मानें इससे परमेश्वर का नाम मनु है ॥ चिन्तितुंयोग्यविषयिभिःनचिन्त्यो ऽचिन्त्यः । जो विषयासक्त पुरुषों से चिन्तने में ठीक सम्यक् जानने में नहीं आते इससे परमेश्वर का नाम अचिन्त्य है परन्तु ऐसा ज्ञान ज्ञानियों को होता है कि सर्वव्यापक जो परमेश्वर सो हृदय देश में भी है उस हृदयस्थ व्यापक परमेश्वर को जानने से सब अनन्त जो परमेश्वर उसका ज्ञान निश्चित होता है जैसा मेरे हृदय में परमेश्वर है वैसाही सर्वत्र है जैसे कि समुद्र के जल का एक बिन्दु जीभ के ऊपर रखने से उसके स्वादादिक गुणों के जानने से सब समुद्र के जल का ज्ञान हो जाता है वैसेही परमेश्वर का दृढ़ ज्ञान ज्ञानियों को हो जाता है ॥ प्रमातुंयोग्यः प्रमेयः नप्रमेयः अप्रमेयः । जो परिमाणों से जिसका परिमाण परिज्ञान नहीं होता इतनाही परमेश्वर में सामर्थ्य है ऐसा कोई भी नहीं कह सका और न जान सकता है इससे परमेश्वर का नाम अप्रमेय है ॥ सर्वादिषुनाम उत्पत्तिषु ओंकार-रूपसङ्गमोऽहीं नपर्सर्वा अवस्थाहीं । जिसको सदाइ सत्य उत्पत्ति

भी करेंगे वा नहीं ऐसा हम को करना योग्य नहीं क्योंकि यह बात मिथ्या है आदि मध्य और अन्त में जो मङ्गल करेगा सो आदि और मध्य के बीच में अन्त और मध्य के बीच में अमङ्गल ही को लिखेगा इससे यह बात मिथ्या है किन्तु शिष्टों को तो सदा मङ्गल ही का आचरण करना चाहिये और अमङ्गल का कभी नहीं इस में कपिल ऋषि का प्रमाण भी है ॥ मङ्गलाचरणं शिष्टाचारात् फलदर्शनाच्छ्रुतितश्चेति । इस सूत्र का यह अभिप्राय है कि मङ्गल नाम सत्य सत्य धर्म जो ईश्वर की आज्ञा उसका यथावत् आचरण उस को नाम मङ्गलाचरण है उस मङ्गलाचरण के करने वाले उन का नाम शिष्ट है उस शिष्टाचार के हेतु से मङ्गल ही का आचरण करना चाहिये और जो मङ्गल को आचरण करने वाले हैं उन को मङ्गल रूप ही फल होता है अमङ्गल कभी नहीं और श्रुति से भी यही आता है कि मङ्गल ही का आचरण करना चाहिये ॥ यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि नो इतराणीति । इस का यह अभिप्राय है कि अनवद्य नाम श्रेष्ठ ही का है धर्म रूप ही मङ्गलकर्म करना चाहिये अधर्म रूप अमङ्गल कर्म कभी न करना चाहिये इससे क्या आया कि आदि अन्त और मध्य ही में मङ्गलाचरण करना चाहिये यह बात मिथ्या आती गई कि सदा मङ्गलाचरण ही करना चाहिये अमङ्गल का कभी नहीं और आज काल के पण्डित लोक जो कि मिथ्या ग्रन्थ रचते हैं सत्यशास्त्रों के ऊपर मिथ्या टीका रचते हैं उन के आदि में जो श्रीगणेशाय नमः शिवाय नमः सीतारामाभ्यां नमः दुर्गायै नमः राधाकृष्णाभ्यां नमः वटुकाय नमः श्रीगुरुचरणारविन्दाभ्यां नमः हनुमते नमः । भैरवाय नमः ॥ इत्यादिक लेख देखने में आते हैं इनको बुद्धिमान् मिथ्या ही जान लेवें क्योंकि वेदों में और ऋषि मुनियों के किये ग्रन्थों में किसी स्थान में भी ऐसे लेख देखने में नहीं आते हैं

गुरु विरजानन्द दण्डी
सन्दर्भ पुस्तकालय
परिग्रहण संख्या ......7818...

ऋषि लोग अथ शब्द का और ओंकार शब्द का पाठ आदि में करते हैं सो अधिकारार्थ अधिकारार्थ नाम इतनी क्रिया होने से इस शास्त्र पढ़ने का अधिकारी होता है वा आनन्तर्यार्थ आनन्तर्यार्थ नाम एक शास्त्र को करके उसके पीछे दूसरे का जो रचना अथवा एक कर्म करके दूसरे कर्म को करना इस वास्ते ओंकार और अथ शब्द का पाठ ऋषि मुनि लोग करते हैं. ओंकारश्चेदु अथकारश्चेतु यह कात्यायन मुनिकृत प्रातिशाख्य का वचन है वैसे ही मैं दिखाता हूं अथ शब्दानुशासनम् अथेत्ययं शब्दोऽधिकारार्थः प्रयुज्यते यह व्याकरण महाभाष्य के आरम्भ का वचन है॥ अथातो धर्मजिज्ञासा। यह भी मीमांसा शास्त्र के आरम्भ का वचन है॥ अथातो धर्मं व्याख्यास्यामः। यह वैशेषिक दर्शन शास्त्र का प्रथम सूत्र है॥ प्रमाणप्रमेयेत्यादि॥ यह न्यायदर्शन शास्त्र के आरम्भ का वचन है॥ अथ योगानुशासनम् यह पातञ्जलदर्शन के आरम्भ का वचन है॥ अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थः। यह सांख्यदर्शन शास्त्र के आरम्भ का वचन है॥ अथातो ब्रह्मजिज्ञासा। यह वेदान्तशास्त्र के आरम्भ का वचन है॥ ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत। यह छान्दोग्य उपनिषद् के आरम्भ का वचन है॥ ओमित्येतदक्षरमिदं सर्वं तस्योपव्याख्यानम्। यह माण्डूक्योपनिषद् का वचन है इत्यादिक और भी जानलेने. देखना चाहिये कि ऋषि लोगोंने और वेदों में भी अथ और ओंकार आरम्भादिक भी चारों वेदों के आरम्भ में अग्नि तथा इट् और शम् ये शब्द देखने में आते हैं परन्तु श्रीगणेशाय नमः इत्यादिक वचन किसी वेद में और ऋषियों के ग्रन्थों में भी नहीं देखने में आते हैं इससे यह जाना जाता है कि वेदादिक शास्त्रों से और ऋषि मुनियों के किये ग्रन्थों से भी यह नवीन लोगों का प्रमाद ही है ऐसा ही शिष्ट लोगों को जानना चाहिये और वैदिक लोग आरम्भ में इस

शब्द का पठन पाठन के आरम्भ में उच्चारण करते हैं यह शास्त्र है वा नहीं। यह भी मिथ्या ही है क्योंकि ओंकार का तो ऋषि ग्रन्थों के आरम्भ में पाठ देखने में आता है परन्तु हरिः शब्द का पाठ नहीं देखने में नहीं आता है इससे हरिः शब्द का पाठ तो मिथ्याही है पूर्वोक्त प्रातिशाख्य के प्रमाण से ओंकार तो उचित ही है यह प्रकरण तो पूर्ण होगया इससे आगे शिक्षा के विषय में लिखा जायगा॥ इति श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थप्रकाशे सुभाषाविरचिते प्रथमः समुल्लासः सम्पूर्णः॥ १॥

अथशिक्षांव्याख्यास्यामः। मातृमान्पितृमानाचार्यवान्पुरुषोवेद इतिश्रुतिः। प्रथम तो सब जनों को माता की शिक्षा होनी उचित है जन्म से लेके तीन वर्ष अथवा पांचवर्ष पर्यन्त अपने सन्तानों को सुशिक्षा अवश्य करै प्रथम तो सुश्रुत और चरक जो वैद्यक शास्त्र ग्रन्थ हैं उनकी रीति से शरीर के स्वभाव के अनुकूल दुग्धादिकों में औषधों को मिला के वा संस्कार करके पुत्रों को और कन्याओं को पिलावे अथवा जो स्त्री उनको बालकों दूध पिलावैं और वो उन श्रेष्ठ पदार्थों का भोजन करें जिससे कि उसीके दूध में उनका अंश आजायगा जिससे बालकों के भी शरीर की पुष्टि बल और बुद्धि वृद्धि होय और शुद्ध स्थान में उनको रखना चाहिये शुद्ध सुगन्ध देश में बालकों को भ्रमण कराना चाहिये जब उनका जन्म होय उसी दिन अथवा दूसरे तीसरे दिन धनाढ्य लोग और राजा लोग दाई वा अन्य स्त्री की परीक्षा करके कि उसके शरीर में रोग न होय और दूध में भी रोग न होय उसके पास बालक को रख देवें और वही स्त्री उनका पालन करै परन्तु माता उस स्त्री के और बालकों के भी शिक्षा के ऊपर दृष्टि रक्खै और जो असमर्थ लोग हैं जिनको दासी वा अन्यस्त्री रखने का सामर्थ्य न होय तो औरी

अथवा गाय वा भैंसों के दूध से बालकों का पोषण करैं जहां छेरी आदिकों का अभाव होए वहां जैसा होसके वैसा करैं और अञ्जनादिकों से नेत्रादिकों कोभी शुद्धि रोग निवारणार्थ करें परन्तु बालकों की जो माता है सो उन्हों को दूध कभी नहिं देवै क्योंके दूध देने से स्त्रीका शरीर निर्बल और क्षीण होजायगा जो स्त्री प्रसूत हुई है वह भी अपने शरीर की रक्षा के लिये श्रेष्ठ भोजनादिक करै जो कि औषधवत् होय जिससे फिर भी युवा-वस्था की नाईं उसका शरीर होजाय और दूध के रक्षा के वास्ते उक्त वैद्यकशास्त्र में जैसा यह औषध सो यथावत् संपादन करके स्तन के ऊपर लेपन करके उस मार्ग को रोकदेवै जिससे कि दूध न निकल जाय इससे स्त्रीका शरीर फिरभी पूर्ण बलवान् होजाय जैसे कि युवती का शरीर उसके तुल्य उसका भी शरीर होजायगा इससे जो सन्तान होगा सो वैसाही फिर बलवान् और निरोग होगा जो उक्त वैद्यकशास्त्र में जैसी कि रीति लिखी है उसी प्रकार के लेपन से योनि का संकोच और योनि का शोधन भी स्त्री लोग करें इससे अपने पति का भी बल क्षीण न होगा जब कुछ बालक लोग समर्थ होंय तब उनको उठने बैठने मलमूत्र के त्याग और शौच नाम पवित्रता की शिक्षा करैं और इसके बाद शुभ नेत्रादिकों की सुचेष्टा की शिक्षा करैं जिससे कि किसी अङ्ग से वे बालक लोग कुचेष्टा न करें और खाने पीने की भी यथावत् शिक्षा करें बालक को जिह्वा का शोधन करावै क्योंकि कोमल जिह्वा के होने से अक्षरों का उच्चारण शुद्ध होगा औषधों से और दन्तधावन से फिर बालक को बोलने की शिक्षा करैं तब माता श्रेष्ठ वाणी से स्थान और प्रयत्न के साथ भाषण करैं जैसे कि प इसका ओष्ठ तो स्थान है और दोनों ओष्ठों का मिलना सो स्पृष्ट प्रयत्न है ओष्ठ स्थान के और स्पृष्ट प्रयत्न के बिना पकार का शुद्ध उच्चारण कभी न होगा

ऐसेही सब वर्णों का स्थान और प्रयत्न ह्रस्व और दीर्घ विचार के माता उच्चारण करै वैसाही बालकों को करावै जिससे कि वे बालक शुद्ध उच्चारण करैं गमन, आसन, सोना, बैठना, इसकी भी शिक्षा माता करै जिससे कि सब कर्म युक्त युक्तही करैं और यह भी उपदेश उनको माता करै कि माता पिता तथा ज्येष्ठ बन्ध्वादिक मान्य लोगों को नमस्कार बालक लोग करैं रोदन हास्य और क्रीडासक्त भी वे न होवैं बहुत हर्ष शोक भी न करैं उपस्थ इन्द्रिय को हस्तसे नेत्र नासिकादिकों के बिना प्रयोजन से मर्दन अथवा स्पर्श न करैं क्योंकि निमित्त से बिना उपस्थेन्द्रिय का मर्दन और बारम्बार स्पर्श के करने से वीर्य की क्षीणता होगी और हस्त दुर्गन्ध युक्त भी होगा इससे व्यर्थ कर्म करना न चाहिये इतनी शिक्षा बालकों को पांचवर्ष तक करना चाहिये उसके पीछे माता और पिता अक्षर लिखने की और पढ़ने की शिक्षा करैं देवनागराक्षर और अन्यदेशों के भाषाक्षरों का लिखने पढ़ने का अभ्यास ठीक २ करावैं स्पष्ट लिखने पढ़ने का अभ्यास होजाय इससे यह भी अवश्य शिक्षा करना चाहिये और भूत प्रेतादिक हैं ऐसा विश्वास बालक लोग कभी न करैं क्योंकि यह बात मिथ्याही है जब भूत प्रेतादिकों की बात सुनते उनके हृदय में मिथ्या भय होजाता है तब किसी समय में अन्धकार होनेसे श्यगालादिक पशु पक्षि और मूषक मार्जारादिक अथवा चोर वा अपने शरीर की छाया देखने से श्यगालादिकों के बोलने का शब्द सुनके उसके हृदय में पूर्व सुनने के संस्कार के होने से अत्यन्त भूत प्रेतादिकों का विश्वास होने से भयभीत होके कम्प और ज्वरादिक होते हैं इससे बहुत दुःख से पीड़ित होते हैं इससे यह शङ्का बहुत रीति से निवारण करना चाहिये जिससे कि उनको कभी भूत प्रेतादिकों के होने में निश्चय न होय वैद्यक शास्त्र में बहुत से मानस

रोग जितने हैं वे भी होते हैं, तब उन्मत्त होके अन्यथा चेष्टा मनुष्य करता है तब निर्बुद्धि लोग जानते हैं और कहते हैं कि इसके शरीर में भूत वा प्रेत आगया है फिर वे मिल के बहुत से पाखण्ड करते हैं कि मैं मन्त्र से झाड़ फूंक के पांच रुपैया मुझ को दे तो अभी निकाल दूं, फिर उन के सम्बन्धी लोग उन पाखण्डियों से कहते हैं कि हम पांच रुपैया देंगे परन्तु इसके भूत को जल्दी आप लोग निकाल देव फिर वे मिल के मृदङ्ग झांझ इत्यादिकों को लेके उसके पास आके बजाते गाते हैं फिर एक कोई पाखण्ड से उन्मत्त होके नाचता कूदता है कि इसके शरीर में बड़ा भूत प्रविष्ट हुआ है वह भूत कहता है कि मैं न निकलूंगा इसका प्राण लेही के निकलूंगा वह नाचने कूदने वाला कहता है कि मैं देवी वा भैरव हूं मुझ को एक बकरा और मिठाई, वस्त्र देओ तो मैं इस भूत को निकाल देऊं तब उनके सम्बन्धी कहते हैं कि जो तुम चाहो सो लेओ परन्तु इस भूत को आप निकाल देवें सब लोग उस उन्मत्त के गोड़ पै गिर पड़ते हैं तब तो उन्मत्त बहुत नाचता कूदता है परन्तु कोई बुद्धिमान उसको एक थपेड़ा वा एक जूता मार देवे तब शीघ्रही उसको देवी वा भैरव भाग जाते हैं क्योंकि वह केवल धूर्त धनादिक हरण करने के लिये पाखण्ड करता है ऐसे नाम मात्र तो पण्डित हैं ज्योतिश्शास्त्र का अभिमान करके कहते हैं कि सूर्यादि ग्रह क्रूर इनके ऊपर आये हैं इससे यह पुरुष पीड़ित है परन्तु इसके ग्रहों की शान्तिके लिये दान पाठ और पूजा जो करावे तो ग्रहों की शान्ति हो जाय अन्यथा शान्ति न होगी उनको बहुत पीड़ा होगी और इसका मरण होजाय तो आश्चर्य नहीं इनसे कोई पूछे कि सूर्यादिक ग्रह सब आकाश में रहते हैं वे सब लोक हैं जैसा कि पृथिवी लोक है वे पीड़ा कर सकते हैं और जो तारादिक उनके तेज हैं सूर्य के [illegible]

समान ही प्रकाश है कैसे एक के ऊपर क्रूर होके दुःख दे और दूसरे को शान्त होके सुख दे यह बात कभी नहीं हो सकती है जितने धनाढ्य और राजा लोग हैं उन के ऊपर सब मिल के आप के ऊपर क्रूर ग्रह आये हैं ऐसा कहते हैं क्यों कि दरिद्रों से तो इतना धन नहीं मिल सकता है इससे उन धनाढ्यों के पास जाके बारम्बार ग्रहों की कथा से भय देखा के बहुत धन का हरण कर लेते हैं जो कोई बुद्धिमान् उन से ऐसा कहे कि आप पण्डित लोग अपने घर में ग्रहों की शांति के लिये पूजा पाठ दान वा द्रव्य क्यों नहीं कराते हैं तब वे सब पुरोहित पण्डितादिक मिलके कहते हैं कि तू नास्तिक हो गया इस रीति से भय देखा के उनको उपदेशादिक बहुत प्रकार कह के उसी मार्ग में ले आते हैं परन्तु कोई बुद्धिमान् होता है सो उन के जाल में नहीं आता है वैसे ही मुहूर्त विषय अथवा यात्रा में जाल रचते हैं धन लेने के लिये तथा जन्मपत्र का जो रचन होता है सो भी मिथ्या है वह जन्मपत्र नहीं है किंतु शोक पत्र है ऐसा जानना चाहिये क्यों कि जन्म पत्र रचके पण्डित उसका फल उनके पास जाके कहते हैं इस बालकको १० वां वर्ष अथवा २० वां वर्ष जब आवेगा तब इस के ऊपर बहुत से क्रूर ग्रह आवेंगे यह बहुत सी पीड़ा पावेगा वा मर जावे तो भी आश्चर्य नहीं इस बात को सुन के बालक के माता अथवा पितादिक शोकातुर हो जाते हैं इससे इस पत्र का नाम शोकपत्र ही रखना चाहिये कभी इस के ऊपर विश्वास न करना चाहिये इस को बुद्धिमान् मिथ्या ही जानें रोग निवृत्ति के लिये औषधादिक अवश्य करें इस रीति से बालकों को प्रथम ही माता वा पिता को विचार का निश्चय करना वा कराना उचित है मारण मोहन उच्चाटन वशीकरणादिक विषय में परस्पर अभिचारादि कहते हैं सो भी मिथ्या जानना चाहिये और होवे का होना कहां है

है क्योंकि जो वे ताड़न से श्रेष्ठ शिक्षा को और सुशिक्षा को ग्रहण करेंगे तब उनको प्रतिष्ठा सुख और ज्ञान सर्वत्र प्राप्त होगा उससे धन और आजीविका भी उन को सर्वत्र होगी वे बहुत सुखी होंगे सामृतैः पाणिभिर्घ्नन्ति नाम सदा गुरु लोक ताड़ना करते हैं न विषोक्षितैः नाम विष से युक्त जो हाथ उससे जो स्पर्श वह दुःख हो का हेतु होता है वैसा अभिप्राय उन का नहीं है किन्तु हृदय में तो कृपा परन्तु केवल गुण ग्रहण कराने के लिये माता पिता तथा गुर्वादिक ताड़न करते हैं क्योंकि लालनाः श्रयिणोदोषाः नाम जो अपने सन्तानों का लाड़न करेंगे तो वे मूर्ख रहजायेंगे पीछे जो कुछ उनके अधिकार में धन वा राज्य रहेगा उसका वे न पालन करेंगे न अधिक वृद्धि होगी उन पदार्थों का नाशही करेंगे फिर वे अत्यन्त दुःखी होजायेंगे और दूसरे के आधीन रहेंगे यह दोष माता पिता तथा गुर्वादिकों का गिना जायगा इससे क्या आया कि उनको लाड़न क्या किया किन्तु उनको मारही डाला ताड़नाश्रयि-णोगुणाः नाम अवश्य सन्तानों को गुण ग्रहण कराने के लिए सदा ताड़नही करना चाहिये क्योंकि ताड़न के बिना वे श्रेष्ठ स्वभाव और श्रेष्ठ गुणों को कभी ग्रहण न करेंगे इससे वैसाही करना चाहिये जिससे अपने सन्तान उत्तम होंय उनको विद्या और श्रेष्ठ गुणों काही आभूषण धारण कराना चाहिये और सुवर्णादिकों का कभी नहीं क्योंकि विद्यादिक गुण का जो आ-भूषण धारना है सोई आभूषण उत्तम है और सुवर्णादिकों का आभूषण का जो धारण है उसमें गुण तो नहीं है किन्तु दोषही बहुत से हैं क्योंकि चोरादिक भी उनको मारके आभू-षणों को लेजाते हैं और आभूषणों को धारण करने वालों को बहुत अभिमान रहता है जो कोई उसके सामने विद्यावान् भी पुरुष होय तो भी वह गुण के सामने उसकी अवज्ञा करेगा

और अभिमान से गुण ग्रहण भी न करेगा और जब वे सोते हैं तब चोर आके इन को मार डालते हैं अथवा अङ्ग भङ्ग करके आभूषण लेजाते हैं इससे सुवर्णादिकों का आभूषण धारना उचित नहीं और कभी चोरी न करें किसी का पदार्थ उस की आज्ञा के बिना एक तृण वा पुष्प भी ग्रहण न करें क्योंकि जो तृण की चोरी करेगा सो सब की चोरी करेगा फिर उस को राजगृह में दण्ड होगा अप्रतिष्ठा भी होगी और निन्दा होगी उस का विश्वास कोई भी न करेगा इससे मन से भी कभी चोरी करने की इच्छा न करनी चाहिये और मिथ्या भाषण भी करना न चाहिये क्योंकि मिथ्या भाषण जो करेगा सो सब पाप कर्मों को भी करेगा और उस का विश्वास कोई भी न करेगा प्रतिज्ञा भी मिथ्या न करनी चाहिये प्रथम तो विचार करके प्रतिज्ञा करनी चाहिये जब प्रतिज्ञा की तब उस का पालन यथावत् करना चाहिये प्रतिज्ञा क्या होती है कि नियम से जो कहना उस वक्त मैं आप के पास आऊंगा या आप मेरे पास आवें इस पदार्थ को मैं देऊंगा वा लेऊंगा जो जैसा कहै वैसा ही प्रतिज्ञा पालन करै अन्यथा कभी न करै प्रतिज्ञा की जो हानि है सो मनुष्य का महा दोष है इससे प्रतिज्ञा की हानि कभी न करनी चाहिये अभिमान कभी न करना चाहिये अभिमान नाम अहङ्कार का है मैं बड़ा हूं मेरे सामने कोई कुछ भी नहीं इससे क्या होता कि कभी वह गुण ग्रहण तो न करेगा परन्तु मूर्ख ही रहजायगा छल कपट वा कृतघ्नता कभी न करनी चाहिये- क्यों कि छल, कपट, और कृतघ्नता से, अपना ही हृदय दुःखित होता है तो दूसरे की क्या कथा और उस का उपकार कोई भी न करेगा छल कपट और कृतघ्न तो उस को कहते हैं कि हृदय में तो और बात बाहर और बात कृतघ्नता नाम कोई उपकार करै उस उपकार को न मानना सो कृतघ्नता कहाती है क्रोध

भी कभी न करना क्रोध से अपने आपकी ही हानि कर देवें और की भी हानि करले इससे क्रोध भी न करना चाहिये किसी से कटुक बचन न कहैं किन्तु मधुर बचन ही सदा कहैं बिना बोलाये किसी से बोले नहीं और बहुत बकवाद कभी न करें जितना कहना चाहिये इतना ही कहे जिससे कहना वा सुनना सो नम्रता से ही करें अभिमान से कभी नहीं किसी से वाद विवाद न करें नेम नास्तिकादिकों से चपलता कभी न करें जहां किसी के पास जाय वहां उस को पहिले ही नमस्कार करें और नीच आसन में बैठे न किसी की आड़ होय न किसी को दुःख होय न कोई उस को उठावे जिससे गुण ग्रहण करे उस को, पूर्व नमस्कार करें उससे विरोध कभी न करें उस को प्रसन्न कर के जैसे गुण मिले वैसाही करें पीछे भी मरण तक उस के गुण को माने जिस गुण को ग्रहण करें उस गुण को आच्छादन कभी न करें किन्तु उस गुण का प्रकाश ही करना उचित है किसी पाखण्डी का विश्वास कभी न करे सदा सज्जनों का सङ्ग करें दुष्टों का कभी नहीं अपने माता और पिता वा आचार्य की आज्ञा पालन सदा करें परन्तु जो आज्ञा सत्य धर्म सम्बन्धी होय तो करें और जो धर्म विरुद्ध आज्ञा होय तो कभी न करें परन्तु सेवा के लिये जो माता पिता और आचार्य आज्ञा देवें उसको अपने सामर्थ्य के योग्य जरूर करें और माता पिता धर्म सम्बन्धी श्लोकों को अथवा निघंटु वा अष्टाध्यायी को कण्ठस्थ करा देवें परन्तु सत्य सत्य धर्म के विषय दें और परमेश्वर के विषय में दृढ़ निश्चय करा देवें जैसे कि पहिले प्रकरण में परमेश्वर के विषय में लिखा है वैसा. उसी की उपासना में दृढ़ निश्चय करा देवें और वस्त्र धारने की यथावत् शिक्षा कर देवें जैसा कि धारना चाहिये भोजन करें भी जितनी क्षुधा होय उससे कुछ न्यून भोजन करें जिससे कि उन के शरीर में रोग न होय मद्य अन्त में कभी

उसको पश्चात्ताप ही होगा और सुख न होगा इससे जो कुछ करना चाहिये सो विचार के करना चाहिये इस रीति से आठ वर्ष तक बालकों की शिक्षा होनी चाहिये जो कुछ और शिक्षा लिखी है सत्य भाषणादिक सो तो सब को करना उचित है जिनके सन्तान सुशिक्षित होंगे वेही सुख पावेंगे और जिन के सन्तान सुशिक्षित न होंगे वे कभी सुख न पावेंगे यह बाल शिक्षा तो कुछ कुछ शास्त्रों के आशयों से लिख दी परन्तु सब शिक्षा का ज्ञान जब वेदादिक सत्य शास्त्रों को पढ़ेंगे और विचारेंगे तब होगा इसके आगे ब्रह्मचर्याश्रम और गुरु शिष्य की शिक्षा लिखी जायगी इसी के भीतर पढ़ने पढ़ाने की शिक्षा भी लिखी जायगी ॥ इति श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थप्रकाशे सुभाषाविरचिते द्वितीयःसमुल्लासः सम्पूर्णः ॥२॥

अथाध्ययनाध्यापनविधिं व्याख्यास्यामः । आठ वर्ष का पुत्र और कन्याओं को पाठशाला में पढ़ने के लिये आचार्य के पास भेज देवें अथवा पांचवें वर्ष भेज देवें घर में कभी न रक्खें परंतु ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य इन के बालकों का यज्ञोपवीत घर में होना चाहिये पिता यथावत् यज्ञोपवीत करै पिता ही उनको गायत्री मन्त्र का उपदेश करै गायत्री मन्त्र का अर्थ भी यथावत् जना देवें गायत्री मन्त्र में जो प्रथम ओंकार है उस का अर्थ प्रथम समुल्लास में लिखा है वैसा ही जान लेना ॥ भूरिति वै प्राणः भुवरित्यपानः स्वरिति व्यानः । यही तैत्तिरीयोपनिषद् का वचन है ॥ प्राणयति चराचरं जगत् स प्राणः । जो सब जगत् के प्राणों का जीवन कराता है और प्राण से भी जो प्रिय है इससे परमेश्वर का नाम प्राण है सो भूः शब्द प्राण का वाचक है और भुवः शब्द से अपान अर्थ लिया जाता है ॥ अपानयति सर्वंदुःखं सोऽपानः । जो मुमुक्षुओं को और मुक्तों को सब दुःखों से छोड़ा के आनन्द स्वरूप रक्खे इससे परमेश्वर का नाम अपान

को धर्म विद्या मुक्ति और आप की प्राप्ति में अत्यही प्रेरणा करें कि बुद्धि सहित हम लोग उसी उक्त अर्थ में तत्पर और अत्यन्त पुरुषार्थ करने वाले होंव इस प्रकार की हम लोगों की प्रार्थना आप से है सो आप इस प्रार्थना को स्वीकार करें यह संक्षेप से गायत्री मन्त्र का अर्थ लिख दिया परन्तु उस गायत्री मन्त्र का वेद में इस प्रकार का पाठ है ॥ ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । इस मन्त्र को पुत्रों को और कन्याओं को भी कण्ठस्थ करा देवें और इसका अर्थ भी हृदयस्थ करा देवें परंतु कन्या लोगों को यज्ञोपवीत कभी न कराना चाहिये और संस्कार तो सब करना चाहिये योगशास्त्र की रीति से प्राणों के और इन्द्रियों के जीतने के लिये उपाय का उपदेश करें सो यह योगशास्त्र का सूत्र है ॥ प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य । इसका यह अर्थ है कि छर्दन नाम वमन का है जैसे कि मक्खी वा और कुछ पदार्थ खाने से उदर से मुख द्वारा अन्न बाहर निकल जाता है और प्रकृष्टच्छर्दनम् प्रच्छर्दनम् अत्यन्त जो बल से वमन का होना उसका नाम प्रच्छर्दन है ॥ विधारणं नाम विशेषेणतद्धारणम् विधारणम् । जैसे कि उस अन्न का धारण पृथिवी में होता है उसको देख के घृणा होती है तो ग्रहण की इच्छा होती है कैसे होगी कभी न होगी यह दृष्टान्त हुआ परन्तु दृष्टान्त इस का यह है कि नाभि के नीचे से अर्थात् मूलेन्द्रिय से लेके ऊर्ध्व से अपान वायु को नाभि में ले आना नाभि से अपान को और समान को हृदय में ले आना हृदय में दोनों के और तीसरा प्राण इन तीनों को बल से नासिका द्वार से बाहर आकाश में फेंक देना अर्थात् जो वायु इस नासिका से निकलता है और भीतर जाता है इन सब का नाम प्राण है उसको मूलेन्द्रिय नाभि और उदर को ऊपर उठा के जब तक वायु न निकले पीछे हृदय में इकट्ठा करके

जैसे कि वमन में अन्न बाहर फेंका जाता है वैसे सब भीतर के वायु को बाहर फेंक दे फिर उसको ग्रहण न करे जितना सामर्थ्य होय तब तक बाहर ही वायु को रोक रक्खे जब चित्त में कुछ क्लेश होय तब बाहर की वायु को धीरे धीरे भीतर लेजाय फिर उसको वैसाही बारम्बार २० बार भी करेगा तो उसका प्राण वायु स्थिर हो जायगा और उसके साथ चित्त भी स्थिर होगा बुद्धि और ज्ञान बढ़ेगा बुद्धि इस प्रकार की तीव्र होगी कि बहुत कठिन विषय को भी शीघ्र जान लेगी शरीर में भी बल पराक्रम होगा और वीर्य भी स्थिर होगा तथा जितेन्द्रियता होगी सब शास्त्रों को बहुत थोड़े काल में पढ़लेगा इससे यह दोनों उपदेशों को यथावत् अपने सन्तानों को करदे फिर उनको आचमन का उपदेश करै हाथ में जल लेके गायत्री मन्त्र मन से पढ़के तीनवार आचमन करै ॥ अंगुष्ठमूलस्यतले ब्राह्मन्तीर्थं प्रचक्षते । कायङ्कनिष्ठमूलेऽग्रे दैवंपित्र्यं तयोरधः ॥ अंगुष्ठ मूल के नीचे तल नाम हथेली का जो मध्य है उसका नाम ब्राह्मतीर्थ है कनिष्ठिका के मूल में जो रेखा है उसका नाम प्राजापत्य तीर्थ है अंगुलियों का जो अग्रभाग है उसका नाम देव तीर्थ है तर्जनी और अंगुष्ठ इन दोनों के मूल जो बीच है उसका नाम पितृतीर्थ है आचमन समय में ब्राह्मतीर्थ से आचमन करै इतने जल से आचमन करै कि हृदय के नीचे पर्यन्त वह जल जाय उससे क्या होता है कि कण्ठ में कफ और पित्त कुछ शान्त होगा फिर गायत्री मन्त्र को तो पढ़ता जाय और अंगुली से जल का छींटा शिर और नेत्रादिकों के ऊपर देवे इससे यह होगा कि निद्रा और आलस्य न आवेगा जैसे कि कोई पुरुष को निद्रा और आलस्य आवत होय तो जल के छींटा से निवृत्त हो जाता है वैसे यहां भी होगा पीछे गायत्री मन्त्र से उपस्थान करै उपस्थान नाम परमेश्वर की प्रार्थना और अघमर्षण करै

अघमर्षण उसका नाम है कि पाप करने की इच्छा भी न करना चांद्रेय संयोग से संध्योपासन कह दिया परन्तु यह दोनों बात एकान्त में जाके करना चाहिये क्योंकि एकान्त में चित्त की एकाग्रता होती है और परमेश्वर की उपासना भी यथावत् होती है इसमें मनुस्मृति का प्रमाण भी है ॥ अपांसमीपेनियतो नैत्यकंविधिमास्थितः । सावित्रीमप्यधीयीत गत्वाऽरण्यंसमाहितः ॥ इसका यह अभिप्राय है कि जल के समीप जाके और जितनी आचमन प्राणायामादिक क्रिया उनको करके उनके शून्य देश में बैठके गायत्री को मनसे यथावदुच्चारण करके एक एक पद का अर्थ चिन्तन करके और प्राणायाम से शान्त चित्त और इन्द्रियों को स्थिरता करके परमेश्वर की प्रार्थना और स्वरूप विचार से उक्त रीति से उसमें मग्न होजाय वाष समाविष्ट होजाय ऐसे ही नित्य दो बार द्विज लोग प्रातःकाल और सायङ्काल करें एक घण्टा तक तो अवश्य ही करें इससे बहुत सा सुख और लाभ भी होगा फिर वह पुत्रों को अग्निहोत्र का आधार सिखावें एक चतुष्कोण मिट्टी की वा तांबे की वेदि रचे [] ऊपर चौड़ी नीचे छोटी ऊपर तो १२ अंगुल नीचे चार ४ अंगुल रहें ऐसी रचके चन्दन वा पलाश आम्रादिक श्रेष्ठ काष्ठों को लेके उस वेदि के परिमाण से खण्ड खण्ड कर लेवे वेदी अच्छी शुद्ध करके उस वेदी में काष्ठों को यथावत् स्थापें उसके बीच मे अग्नि रखदे उसके ऊपर फिर काष्ठ रख दे रख कर अग्नि प्रदीप्त करें और एक चमसा रक्खे हाथ की कोहनी से कनिष्ठिका के अग्रपर्यन्त परिमाण से और इस प्रकार की प्रोक्षणीपात्र रक्खे । उससे दूर प्रणीता पात्र रक्खो—[] एक घृत पात्र रक्खे ० प्रणीता में तो जल रक्खे पीछे उसमें से जब जब कार्य होय तब तब प्रोक्षणी में प्रणीता से जल लेके चमसाः धरे और घृत के पात्र को निरन्तर शुद्ध करे

उसका यह अर्थ है स्वम् आह सा स्वाहा अथवा स्वां नाम स्वकीया वाक् आह सा स्वाहा स्वम् नाम अपना जो हृदय सो सत्यही है जैसा जो कर्म है वैसाही सो जानता है आह नाम कहने का है जैसा कि हृदय में होय वैसाही वाणी से कहै ऐसहि परमेश्वर की आज्ञा है संध्योपासन अग्निहोत्र तर्पण बलि वैश्वदेव और अतिथि सेवा पंच महा यज्ञों के प्रयोजन पीछे लिखेंगे अग्निहोत्र के आगे तर्पण करे ॥ नित्यं स्नात्वा शुचिः कुर्याद्देवर्षिपितृतर्पणम् । यह मनुस्मृति का वचन है ॥ अथदेवतर्पणम् ॐ ब्रह्मादयोदेवास्तृप्यन्ताम् १ ॐ ब्रह्मादिदेवपत्न्यस्तृप्यन्ताम् ॥ १ ॥ ॐ ब्रह्मादिदेवसुतास्तृप्यन्ताम् १ ॐ ब्रह्मादिदेवगणास्तृप्यन्ताम् १ इतिदेवतर्पणम् । अथर्षितर्पणम् । ॐ मरीच्यादयऋषयस्तृप्यन्ताम् २ ॐ मरीच्याद्यृषिपत्न्यस्तृप्यन्ताम् २ ॐ मरीच्याद्यृषिसुतास्तृप्यन्ताम् २ ॐ मरीच्याद्यृषिगणास्तृप्यन्ताम् २ इत्यृषितर्पणम् । अथ पितृतर्पणम् । ॐ सोमसदः पितरस्तृप्यन्ताम् ३ ॐ अग्निष्वात्ताः पितरस्तृप्यन्ताम् ३ ॐ बर्हिषदः पितरस्तृप्यन्ताम् ३ ॐ सोमपाः पितरस्तृप्यन्ताम् ३ ॐ हविर्भुजः पितरस्तृप्यन्ताम् ३ ॐ आज्यपाः पितरस्तृप्यन्ताम् ३ ॐ सुकालिनः पितरस्तृप्यन्ताम् ३ ॐ यमादिभ्योनमः यमादींस्तर्पयामि ३ ॐ पित्रे स्वधानमः पितरंतर्पयामि ३ ॐ पितामहाय स्वधानमः पितामहंतर्पयामि ३ ॐ प्रपितामहाय स्वधानमः प्रपितामहंतर्पयामि ३ ॐ मात्रे स्वधानमः मातरंतर्पयामि ३ ॐ पितामह्यै स्वधानमः पितामहींतर्पयामि ३ ॐ प्रपितामह्यै स्वधानमः प्रपितामहींतर्पयामि ३ ॐ स्वपत्न्यै स्वधानमः स्वपत्नींतर्पयामि ३ ॐ सम्बन्धिभ्यो मृतेभ्यः स्वधानमः सम्बन्धीन्मृतांस्तर्पयामि ३ ॐ सगोत्रेभ्यो मृतेभ्यः स्वधानमः सगोत्रान्मृतांस्तर्पयामि ३ इतितर्पणविधिः । पितृआदिकों में जो कोई जीता होय उसका तर्पण न करै और जितने मृतक होंय उनका तो अवश्य करै । दक्षोऽक्षिपेशणा तुपरीत्युच्यते

द्विज । सव्ये प्राचीनआवीति निवीती कण्ठसज्जने ॥ यह मनुस्मृति का श्लोक है इसका यह अर्थ है कि जैसे वामस्कन्ध के ऊपर यज्ञोपवीत सदा रहताही है परन्तु उस यज्ञोपवीत को दाहिने हाथ के अंगुष्ठ में लगाले इस क्रिया के करने से द्विजों का नाम उपवीती होता है सो सब देव कर्मों को उपवीती होके करै पूर्वाभिमुख होके देवतर्पण करै और देवतीर्थ से कण्ठ में शेष यज्ञोपवीत रक्खै और दोनों हाथ के अंगुष्ठ में यज्ञोपवीत को लगाने से द्विजों की निवीति संज्ञा होती है कायतीर्थ से उत्तराभिमुख होके ऋषि तर्पण करना चाहिये और दक्षिण-स्कन्ध में यज्ञोपवीत रक्खै और वाम अंगुष्ठ में यज्ञोपवीत लगाने से द्विजों का नाम प्राचीनावीती होता है दक्षिणाभिमुख प्राचीनावीति और पितृतीर्थ से पितृकर्म तर्पण और श्राद्ध करना चाहिये देवतर्पण में एक बार मन्त्र पढ़के एक अंजलि देवें ऋषि तर्पण में दो बार मन्त्र पढ़के दो अंजलि देवें दूसरी बार मन्त्र पढ़के दूसरी अंजलि देवे और पितृतर्पण में एक बार मन्त्र पढ़ के एक अंजलि देवे दूसरी बार मन्त्र पढ़के दूसरी अंजलि देवे और तीसरी बार मन्त्र पढ़के तीसरी अंजलि देवे ॥ अथ बलिवैश्वदेवम् । वैश्वदेवस्य सिद्धस्य गृह्येऽग्नौ विधिपूर्वकम् । आभ्यः कुर्याद्देवताभ्यो ब्राह्मणो होममन्वहम् ॥ ओं अग्नये स्वाहा ओं सोमाय स्वाहा ओं अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ओं धन्वन्तरये स्वाहा ओं कुह्वै स्वाहा । ओं अनुमत्यै स्वाहा ओं प्रजापतये स्वाहा ओं सह द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा । मृत्तिका की चतुष्कोण वेदी या तांबे की रचके [illegible] को छोड़के जो कि भोजन के लिये पदार्थ बना होय उसमें से सब [illegible] देवें [illegible] पांच उस प्रकार की रेखाओं से कोष्ठ रचके यथा क्रम से उन २ दिशाओं में भागों को रक्खे अपनी २ जगह में ओं सानुगायेन्द्राय नमः इससे पूर्वदिशा में भाग देना ओं सानुगाय यमाय नमः । दक्षिण[illegible]

दिशा में भाग रक्खै। ॐ सानुगाय वरुणाय नमः। इस मन्त्र से पश्चिम दिशा में भाग रक्खै। ॐ सानुगाय सोमाय नमः। इस मन्त्र से उत्तर दिशा में भाग रक्खै। ॐ मरुद्भ्यो नमः। इस मन्त्र से द्वार में भाग रक्खै। ॐ अद्भ्यो नमः। इस मन्त्र से वायव्य कोण में भाग रक्खै। ॐ वनस्पतिभ्यो नमः। इस मन्त्र से अग्निकोण में भाग रक्खै। ॐ श्रियै नमः। इस मन्त्र से ऐशान्य कोण में भाग रक्खै। ॐ भद्रकाल्यै नमः। इस मन्त्र से नैर्ऋत्य कोण में भाग रक्खै। ॐ ब्रह्मपतये नमः। ॐ वास्तुपतये नमः॥ इन दो मन्त्रों से कोठा के बीच में भाग रक्खै। ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ॐ दिवाचरेभ्यो भूतेभ्यो नमः। ॐ नक्तंचारिभ्यो भूतेभ्यो नमः। इन मन्त्रों से ऊपर हाथ करके कोठ के बीच में तीनों भाग रख देवै। ॐ सर्वात्मभूतये नमः। इस मन्त्र से कोठे के पीछे भाग रक्खै। अपसव्य करके ॐ पितृभ्यः स्वधा नमः इस मन्त्र से कोठ के भीतर दक्षिण दिशा में भाग रक्खै इन सोलहों भागों को इकट्ठा करके अग्नि में डाल दे। ॐ श्वभ्यो नमः। ॐ पतितेभ्यो नमः। ॐ श्वपग्भ्यो नमः। ॐ पापरोगिभ्यो नमः। ॐ वायसेभ्यो नमः। ॐ कृमिभ्यो नमः। इन छः मन्त्रों से शाक दाल इत्यादिक सब अन्न मिला के भूमि में छः भाग को रख के कुत्ता वा मनुष्यादिकों को देवै॥ इति बलिवैश्वदेवम्॥

इसके पीछे अतिथि की सेवा करनी चाहिये अतिथि दो प्रकार के हैं एक तो विद्याभ्यास करने वाले दूसरे पूर्ण विद्यावाले वा संन्यासी लोग जो कि पूर्ण विद्यावाले पूर्ण वैराग्य और पूर्णज्ञान सत्यवादी जितेन्द्रिय भोजन के समय पर जो आवैं उनका सत्कार अन्न जल और आसनादिकों से करै पीछे गृहस्थ लोग भोजन करैं वा साथ में भोजन करावै अथवा भोजन के पीछे भी आवैं तो भी सत्कार करना चाहिये नित्य पंच महायज्ञ करना चाहिये इनके करने में क्या प्रयोजन है इसका यह उत्तर है कि जिससे इनको करना चाहिये प्रथम तो जितना

कुछ लोगों के मलमें जितना दुर्गन्ध होगा उतना सब जो हम उसी सुगन्धादिक द्रव्यों का अग्नि में होम करेंगे उस दुर्गन्ध का निवृत्त करके वायु को शुद्ध करदेगा इससे मनुष्यों का बहुत उपकार होगा रोगों के न होने से फिर वे सुगन्धादिकों के परमाणु मेघमण्डल और जलमें जाके मिलेंगे उनके मिलने से सबको शुद्ध करदेंगे क्योंकि सूर्य की उष्णता का सुगन्ध दुर्गन्ध जल तथा रस के संयोग होने से सब अवयवों को भिन्न २ कर देता है जब अवयव भिन्न २ होते हैं तब लघु होजाते हैं लघु होने से वायु के साथ ऊपर चढ़ जाते हैं जहां पृथ्वी से ऊपर ५८ कोश तक वायु अधिक है इससे ऊपर वायु थोड़ा है उन दोनों के सन्धि में वे सब परमाणु रहते हैं उससे नीचे भी कुछ रहते हैं जब कि सुगन्ध दुर्गन्ध जल और रस को अग्नि मिलाते हैं तब वह पदार्थ मध्यस्थ होता है वैसाही वह जल मध्यस्थ होता है जब सुगन्धादिक गुणयुक्त जो धूम है उसके परमाणु में अधिक तो जल है तथा अग्नि कुछ पृथ्वी वायु और ये चार मिले हैं परन्तु वेभी वैसे सुगन्धादिक गुण युक्त हैं वे जब मध्यस्थ जल के परमाणु में जाके मिलते हैं तब उसको सुगन्धादिक गुणयुक्त कर देते हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं और जो कोई इस विषय में ऐसी शंका करे कि वह जल तो बहुत है होम के परमाणु थोड़े हैं कैसे उस सब जल को वे शुद्ध करेंगे उसका यह उत्तर है कि जैसे बहुत से शाक में अथवा बहुत सी दाल में थोड़ी भी सुगन्धित इलायची इत्यादिक और थोड़ा सा घी कड़छुल में वा पात्र में रखके अग्नि में तपाने से जब वह जलता है तब धूम उठता है फिर उसको दाल के पात्र में मिला के मुख बन्द करदे और छोंक देदे वह सब धूम जल होके सब अंशों में मिल जाता है फिर वह सुगन्ध और स्वादयुक्त होता है वैसेही थोड़े भी होम के परमाणु उस मध्यस्थ जल के पर-

भाग को शुद्ध करदेंगे फिर जब उसी जल की वृष्टि होगी और वही जल भूमि पर आवेगा तब उस जल के पीने से वा स्नान करने से रोग की निवृत्ति होजायगी और बुद्धि बल पराक्रम नैरोग्य बढ़ेंगे वैसेही उसी जल से अन्न घास वृक्ष और फल दूध घी इत्यादिक जितने पदार्थ होंगे वे सब अच्छेही होंगे उनके सेवने से भी जितने जीव हैं वे सब अत्यन्त सुखी होंगे और जो प्राप्त करने वाले हैं वे भी अत्यन्त सुख पावेंगे इस लोक में अथवा परलोक में क्योंकि अग्नियुक्त सुगन्ध के परमाणु को नासिका द्वार से जब भीतर मनुष्य ग्रहण करता है तब मूत्र स्थान अथवा में दुर्गंध युक्त जितने परमाणु मस्तक में प्राप्त हुवे थे उन को निकाल देंगे वा सुगंधित करदेंगे तब उस मनुष्य के शरीर में सर्दी और आलस्य न होंगे उससे फूर्ति और पुरुषार्थ बढ़ेंगे पुष्प वा अतर के सुगन्ध से यह फल न होगा क्योंकि इस सुगन्ध में अग्नि के परमाणु मिले नहीं वे सब जगत् के उपकारक हैं इससे उन को भी अवश्य सुखरूप उपकार होगा उसगुण से और जब अश्वमेधादिक यज्ञ होय तब तो असंख्य सब जीवों को सुख होय इससे सब राजा धनाढ्य और विद्वान् लोग इस का आचरण अवश्य करें तर्पण और श्राद्ध में क्या फल होगा इस का यह समाधान है कि ॥ तृप तीणने प्रीणनं तृप्तिः ॥ तर्पण किसका नाम है कि तृप्ति का और श्राद्ध किसका नाम है जो श्रद्धा से किया जाता है मरे भये पित्रादिकों का तर्पण और श्राद्ध करता है उससे क्या आता है कि जीते भये को अन्न और जलादिकों से सेवा अवश्य करनी चाहिये यह जाना गया दूसरा गुण जिसके ऊपर प्रीति है उस का नाम लेके तर्पण और श्राद्ध करेगा तब उसके चित्त में ज्ञान का संभव है कि जैसे वे मरगये वैसे मुझको भी मरना है मरण के स्मरण से अधर्म करने में भय होगा धर्म करने में प्रीति होगी

तीसरा गुण यह है कि दायभाग बांटने में सन्देह न होगा क्योंकि इस का यह पिता है इस का यह पितामह है इस का यह प्रपितामह है ऐसे ही छः पीढ़ी तक सभों का नाम कण्ठस्थ रहेगा वैसे ही इस का यह पुत्र है इस का यह पौत्र है इस का यह प्रपौत्र है इससे दायभाग में कभी भ्रम न होगा चौथा गुण यह है कि विद्वानों का श्रेष्ठ धर्मात्माओं ही को निमन्त्रण भोजन दान देना चाहिये मूर्खों को भी नहीं इससे क्या आता है कि विद्वान् लोग आजीविका के विना कभी दुःखी न होंगे निश्चिन्त हो के सब शास्त्रों को पढ़ावेंगे और विचारेंगे सत्य २ उपदेश करेंगे और मूर्खों का अपमान होने से मूर्खों को भी विद्या के पढ़ने में और गुण ग्रहण में प्रीति होगी पांचवां गुण यह है कि वेदपद्धति पितृ संज्ञा श्रेष्ठों की है देव संज्ञा दिव्य कर्म करने वालों की है पठन पाठन करने वालों की तो ऋषि संज्ञा है और यथार्थ ज्ञानियों की पितृ संज्ञा है उन को निमन्त्रण देगा सब उन से बात भी सुनेगा प्रश्न भी करेगा उससे उनको ज्ञान का लाभ होगा छठवां प्रयोजन यह है कि श्राद्ध तर्पण सब कर्मों में वेदों के मन्त्रों को अर्थ करने के लिये अवश्य रक्खेंगे इससे उस पुस्तक का नाश कभी न होगा फिर कोई उस विद्या का विचार करेगा तब पदार्थ विद्या प्रकट होगी उससे मनुष्यों को बहुत लाभ होगा सातवां प्रयोजन यह है कि ॥ वसून्वदन्ति वै पितॄन् रुद्रांश्चैव पितामहान् । प्रपितामहांस्तथादित्यान् श्रुतिरेषा सनातनी ॥ यह मनुस्मृति का श्लोक है इस का यह अभिप्राय है कि वसु जो है कोई पिता है जो रुद्र है कोई पितामह है जो आदित्य है कोई प्रपितामह है ऐसे भी नाम परमेश्वर ही के हैं इससे परमेश्वर ही की उपासना तर्पण से और श्राद्ध से आई पितृ कर्म में स्वधा जो शब्द है उस का यह अर्थ है कि स्वं दधातीति स्वधा अपने जनों को अन्नादिकों से धारण करे अथवा पोषण करे उस का

गुरु विरजानन्द दण्डी
सन्दर्भ पुस्तकालय
परिग्रहण क्रमांक 511
[illegible]

लोगों की कन्या भी कन्याओं के पाठशालाओं में पढ़ें शूद्रों के बालक यज्ञोपवीत के बिना सब शास्त्रों को पढ़ें परन्तु वेद की संहिता को छोड़ के इनके जो अध्यापक हैं वे प्रतिज्ञा पूर्वक नियम बांधें प्रथम तो काल का नियम करें ॥ षट्त्रिंशदाब्दिकं चर्यं गुरौ त्रैवेदिकं व्रतम् । तदर्धिकं पादिकं वा ग्रहणान्तिकमेव वा ॥ ब्रह्मचर्याश्रम का नियम २५।३०।४०।४४।४८ वर्ष तक है अथवा उसका अर्द्ध १८ अथवा ९ नववर्ष अथवा जबतक पूर्ण विद्या न होवे तब तक यह मनुस्मृति का श्लोक है पूर्वोक्त सुश्रुत में शरीर की अवस्था धातुओं के नियम से ४ प्रकार की लिखी है ॥ वृद्धिर्यौवनं संपूर्णता किञ्चित्परिहाणिश्चेति । षोड़श वर्ष से २५ वर्ष तक धातुओं की वृद्धि होती है और २५ वर्ष से आगे युवावस्था का आरम्भ होता है अर्थात् सब धातु क्रम से बल को ग्रहण करते हैं उन के बल की अवधि ४० वें वर्ष सम्पूर्ण होती है उत्तम पुरुष के ब्रह्मचर्य का नियम ४० वर्ष तक होता है और छान्दोग्य उपनिषद् में ४४ वा ४८ वर्ष तक ब्रह्मचर्य जो रक्खा है वह पुरुष विद्या पराक्रम और सब श्रेष्ठ गुणों में उत्तमों में भी उत्तम होगा और ३० से ३६ वर्ष तक मध्यम ब्रह्मचर्य का नियम है और २५ से ३० वर्ष तक न्यून से न्यून ब्रह्मचर्य का नियम है इससे न्यून ब्रह्मचर्य का नियम कभी न होना चाहिये जो कोई इससे न्यून ब्रह्मचर्याश्रम करेगा अथवा कुछ भी न करेगा उस को वैदिक श्रेष्ठ गुण कभी न होंगे सदा रोगी, भ्रष्टबुद्धि, विद्याहीन, कुत्सित, कर्मकारी ही होगा क्योंकि जिस के धातुओं की क्षीणता और विषमता शरीर में होगी उस मनुष्य को किसी रीति से सुख न होगा और कन्याओं का २० से २४ वर्ष तक उत्तम ब्रह्मचर्याश्रम है १६ वर्ष से आगे २० वर्ष तक मध्यम ब्रह्मचर्याश्रम का काल है १६ वें वर्ष से १७ वा १८ वर्ष तक अधम ब्रह्मचर्य का काल है १६ वर्ष से न्यून कन्याओं का विवा-

वर्षे कभी न होना चाहिये जो कोई कन्या १६ वर्ष से न्यून ब्रह्मचर्याश्रम को करेगी वह विद्या, बुद्धि, बल, पराक्रम, धैर्यादिक गुणों से रहित और रोगादिक दोषों से युक्त होगी सदा दुःखी ही रहेगी इससे ब्रह्मचर्याश्रम पुरुषों को वा कन्याओं को न्यून कभी न करना चाहिये॥ पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान्नारी तु षोडशे। समत्वागतवीर्यौ तौ जानीयात्कुशलो भिषक्॥ यह सुश्रुत का वचन है इसका यह अर्थ है कि १६ वर्ष से न्यून कन्या का विवाह कभी न करना चाहिये और २५ वर्ष से न्यून पुरुषों का भी न करना चाहिये और जो कोई इस बात का व्यतिक्रम करे कि १६ वर्ष से पहिले कन्याओं का विवाह करे और २५ वर्ष से पहिले पुत्रों का विवाह करे उसको राजा दंड दे उनके माता पिता को भी और जो कोई अपने सन्तानों को पाठशाला में पढ़ने के लिये न भेजे उसको भी राजा दण्ड देवे क्योंकि सब लोगों का सत्य व्यवहार और धर्म व्यवहार की व्यवस्था राजा ही के आधीन है जिस देश का जो राजा होय उसी को इस व्यवस्था को प्रीति से पालन करना चाहिये सो गुरु जो आचार्य वह प्रथम तो उक्त नियम को करावें आप और शिष्यों को भी।

ऋतंच स्वाध्याय प्रवचनेच। सत्यंच स्वाध्याय प्रवचनेच। तपश्च स्वाध्याय प्रवचनेच दमश्च स्वाध्याय प्रवचनेच शमश्च स्वाध्याय प्रवचनेच अग्नयश्च स्वाध्याय प्रवचनेच अग्निहोत्रञ्च स्वाध्याय प्रवचनेच अतिथयश्च स्वाध्याय प्रवचनेच मानुषञ्च स्वाध्याय प्रवचनेच प्रजाश्च स्वाध्याय प्रवचनेच प्रजनश्च स्वाध्याय प्रवचनेच प्रजातिश्च स्वाध्याय प्रवचनेच॥ यह तैत्तिरीयोपनिषद् का वचन है इसका अर्थ है यथार्थ और सत्य २ ज्ञान को ब्रह्मचारी लोग और अध्यापक लोग सत्य २ बात की प्रतिज्ञा करें कि सत्य २ ही को मानेंगे मिथ्या को कभी नहीं और कभी असत्य को न सुनेंगे न और स्वाध्याय नाम पढ़ना प्रवचन नाम पढ़ाना सत्य २ पढ़ेंगे

और सत्य २ पढ़ावेंगे सत्यही कर्म करेंगे और करावेंगे सब प्रकार धर्मानुष्ठान का है सदा धर्मही करेंगे और अधर्म कभी नहीं हम लोग जितेन्द्रिय होंगे किसी इन्द्रिय से कभी पर पदार्थ और पर स्त्री ग्रहण न करेंगे इसका नाम दम है मन वाणी अधर्म की मनसे इच्छा भी न करनी अग्नयश्च नाम अग्नि में जगत् के उपकार के लिये सदा हम लोग होम करेंगे अग्नि-होत्रञ्च नाम अग्निहोत्र का नियम सब दिन पालेंगे अतिथियों की सेवा सब दिन करेंगे मानुषञ्च नाम मनुष्यों में जैसा जिससे व्यवहार करना चाहिये वैसाही करेंगे बड़ा छोटा और तुल्य इनको जैसा मानना चाहिये वैसा उनको मानेंगे और जिस रीति से प्रजा की उत्पत्ति करनी चाहिये प्रजा का व्यवहार और पालन जैसा करना चाहिये धर्म से वैसाही करेंगे प्रजनश्च नाम वीर्य प्रदान जो करेंगे सो धर्मही से करेंगे प्रजातिश्च नाम जैसा कि गर्भ का पालन करना चाहिये और जन्म के पीछे भी जैसा पालन करना चाहिये वैसाही पालन उसका करेंगे परन्तु ऋतादिक करेंगे स्वाध्याय प्रवचन का त्याग कभी नहीं करेंगे स्वाध्याय पढ़ना प्रवचन नाम पढ़ाना ऋतादिकों का श्रद्धादि पूर्वक स्वाध्याय और प्रवचन को सदा करना चाहिये इसका विचार सब दिन करेंगे इसके छोड़ने से संसार की बहुत सी हानि होजाती है इस प्रकार से शिष्यों के प्रति गुरुजन कन्याओं को स्त्री और पुरुषों को पुरुष शिक्षा करें। वेदमनूच्याचार्योऽन्ते-वासिनमनुशास्ति सत्यंवद धर्मंचर स्वाध्यायान्माप्रमदः आचा-र्याय प्रियंधनमाहृत्य प्रजातन्तुंमाव्यवच्छेत्सीः सत्यान्नप्रमदित-व्यम् धर्मान्नप्रमदितव्यम् कुशलान्नप्रमदितव्यम् स्वाध्यायप्रवचना-भ्यांनप्रमदितव्यम् १ देवपितृकार्याभ्यांनप्रमदितव्यम् मातृदेवो-भव पितृदेवोभव आचार्यदेवोभव अतिथिदेवोभव यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि नोइतराणि यान्यस्माकंसुचरितानि

तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि ये के चास्मच्छ्रेयांसो ब्राह्मणास्ते-
षां त्वयासनेन प्रश्वसितव्यम् श्रद्धया देयम् अश्रद्धयादेयम् श्रिया दे-
यम् ह्रिया देयम् भिया देयम् संविदा देयम् अथ यदि ते कर्म विचि-
कित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात् ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः
युक्ता आयुक्ताः अलूक्षा धर्मकामाः स्युः यथा ते तत्र वर्तेरन् तथा तत्र
वर्तेथाः एष आदेशः एष उपदेशः एषा वेदोपनिषत् एतदनुशासनम्
एवमुपासितव्यम् एवमु चैतदुपास्यम् ११ यह तैत्तिरीयोपनिषद्
का वचन है इसी प्रकार से गुरु लोग शिष्यों को उपदेश करैं
कि शिष्य तू सब दिन सत्यही बोल और धर्मही को कर स्वाध्याय
नाम पढ़ने में जैसे तुमको विद्या आवे वैसेही कर जब तक
विद्या तुमको पूर्ण न होय तब तक ब्रह्मचर्य का त्याग न करना
फिर जब विद्या और ब्रह्मचर्य भी पूर्ण होजाय तब जैसा
तुम्हारा सामर्थ्य होय वैसा उत्तम पदार्थ आचार्य को दे
के प्रसन्न करना चाहिये और आचार्य भी उनको शीघ्र विद्या
होय वैसाही करैं केवल अपनी सेवा के लिये सब दिन भ्रम में
न रक्खैं कृपा करके विद्या पढ़ावैं छल कपट आचार्य लोग कभी
न करैं क्योंकि सत्यगुणों का प्रकाशही करना उचित है सब
शिष्य लोगों को जब ब्रह्मचर्य और पूर्ण विद्या भी हो जाय
तब उनको विवाह करना उचित है प्रजा का छेदन करना
उचित नहीं और सत्य से प्रमाद न करना चाहिये अर्थात सत्य
को छोड़ के असत्य से कोई व्यवहार न करना चाहिये धर्म ही
से सब व्यवहारों को करना चाहिये धर्म से विरुद्ध कोई कर्म न
करना चाहिये कुशलता को सब दिन ग्रहण करना चाहिये
और दुराग्रह अभिमान को कभी न करना चाहिये नम्रता
परमात्मा से सदा सुख ग्रहण करना चाहिये भूति नाम सिद्धि
इसकी प्राप्ति में पुरुषार्थ सदा करना चाहिये और पढ़ने पढ़ाने
से रहित कभी न होना चाहिये सब दिन पढ़ने पढ़ाने का पुरु

कार्य्यही करना चाहिये देवकार्य नाम अग्नि होत्रादिक पितृकार्य्य नाम श्राद्ध तर्पणादिक इनको कभी न छोड़ना चाहिये माता पिता अतिथि और आचार्य इनकी सेवा कभी न छोड़नी चाहिये क्योंकि उनोंने जो पालन किया है वा शिक्षा दी है अथवा सत्य जो उपदेश करते हैं इस प्रकार को कभी न भूलना चाहिये इनको अवश्य मानना चाहिये और जितने धर्म युक्त कर्म हैं उनको करना चाहिये और पाप कर्मों को कभी न करना चाहिये माता पिता आचार्य और अतिथि भी शास्त्र प्रमाण से धर्म विरुद्ध जो उपदेश करें अथवा पाप कर्म करावें उनको कभी न करना चाहिये और उनके जो सुकर्म हैं उनको तो अवश्य करना चाहिये उनके जो दुष्कर्म हैं उनको कभी न करना चाहिये वैसेही आचार्यादिक उपदेश करें कि हमलोग जो सुकर्म करें उनको तो तुम लोगों को अवश्य करना चाहिये हमलोग जो दुष्कर्म करें उनको कभी न करना चाहिये जो मनुष्य लोगों के बीचमें विद्या वाले धर्मात्मा और सत्यवादी होंय उनका सर्व दिन सङ्ग करना चाहिये उनकी गुरुशुश्रूषा करना चाहिये उनके वचन में और उनमें अत्यन्त श्रद्धा करनी चाहिये शिष्य लोग जब सुपात्र और धर्मात्मा मिलें तब श्रद्धा से उनको जो प्रियपदार्थ हो उसको देवें अथवा अश्रद्धा से भी देना चाहिये श्री नाम लक्ष्मी से देवें दारिद्र होवे तौ भी दान की इच्छा न छोड़नी चाहिये लज्जा और प्रतिज्ञा से भी देना चाहिये अर्थात् किसी प्रकार से देना चाहिये दान का वंचक भी न करना चाहिये परन्तु श्रेष्ठ सुपात्रों को देना चाहिये कुपात्रों को कभी नहीं किसी को अपराध से दुःख न देना चाहिये सर्व लोगों को बन्धुवत् जानना चाहिये और सब लोगों से प्रीति करनी चाहिये किसी से विवाद न करना चाहिये सत्य का खण्डन कभी न करना चाहिये और जो तुमको किसी विषय

या किसी पदार्थ विद्या में सन्देह होय तब तुम लोग ब्रह्मवित् पुरुषों के पास जाके वे जैसे होंय कि सर्वशास्त्रवित् निर्वैर पक्षपात कभी न करें वे युक्त अर्थात् योगी अथवा तपस्वी होंय रूक्ष नाम कठोर स्वभाव न होंय और धर्म काम में सम्पन्न होंय उनसे पूछ के संदेह निवृत्ति कर लेना वे जिस प्रकार से धर्म में वर्तमान करें वैसा ही तुम को धर्म में वर्तमान होना चाहिये यही आदेश है आदेश नाम परमेश्वर की आज्ञा है यही उपदेश है उपदेश नाम इसी का उपदेश करना योग्य है यही वेदोपनिषद् है नाम वेदों का सिद्धान्त है और यही अनुशासन है अनुशासन नाम सुनियम और शिष्टाचार है ऐसे ही धर्म की उपासना करनी चाहिये इसी प्रकार जानना भी चाहिये इसी प्रकार कहना भी चाहिये गुरु शिष्य को परस्पर ऐसा वर्तमान करना चाहिये ॐ सहनाववतु सहनौ भुनक्तु सहवीर्यं करवावहै तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॐ शान्तिश्शान्तिश्शान्तिः सहनाव परस्पर रक्षा करें गुरु तो शिष्यों की कुकर्मों से रक्षा करें और शिष्य लोग गुरु की आज्ञा पालन और गुरु की सेवा से रक्षा करें सहैव परस्पर भोग करें अर्थात् जो शिष्य लोग कोई उत्तम अन्न पान वस्त्रादिकों को प्राप्त होंय सो पहिले गुरु को निवेदन करके शिष्य लोग भोजनादिक करें सहवीर्य परस्पर वीर्य को करें वीर्य नाम पराक्रम नाम सत्व से जो विद्या उसको बढ़ावें जब गुरु यथावत् परिश्रम से विद्या दान करेंगे तब उनको भी विद्या तीव्र होगी शिष्य लोग यथावत् परिश्रम से और सुविचार से विद्या ग्रहण करेंगे तब उन को भी शीघ्र २ विद्या तीव्र होगी ऐसे सब गुरु शिष्य विचार करें कि हम लोगों का पढ़ना पढ़ाना तेजस्वी नाम प्रकाशित होय जिसका शिष्य विद्यावान् नहीं होगा उसका जो गुरु है उसी की निन्दा होती है बहुत से एक गुरु के पास पढ़ते हैं उन में

से कितने जो विद्यावान् होते हैं और कितने नहीं गुरु जो यथावत् पढ़ावेंगे और कोई शिष्य यथावत् विद्या को ग्रहण न करेगा तब तो उस शिष्य की निन्दा होगी इससे इस प्रकार का पढ़ना पढ़ाना करना चाहिये कि सत्य २ विद्या का प्रकाश होय और अविद्या जो अन्धकार इसका नाश होय ॥ कामात्मता न प्रशस्ता न चैवेहास्त्यकामता । काम्यो हि वेदाधिगमः कर्मयोगश्च वैदिकः ॥ मनुष्यों को विषयों में जो कामात्मता नाम अत्यन्त कामना सो श्रेष्ठ नहीं और अकामता नाम कोई पदार्थ की इच्छा भी न करनी वह भी श्रेष्ठ नहीं क्यों कि विद्या का जो होना सो इच्छा ही से है धर्म विद्या और परमेश्वर की उपासना की जो कामना अवश्य ही करनी चाहिये क्यों कि ॥ काम्यो हि वेदाऽधिगमः । वेद विद्या की जो प्राप्ति है सो कामनाऽधीन ही है और वैदिक कर्म जितने हैं वे भी कामनाऽधीन ही हैं इससे श्रेष्ठ पदार्थों की कामना सदा करनी चाहिये और अश्रेष्ठ पदार्थों की कामना कभी नहीं ॥ सङ्कल्पमूलः कामो वै यज्ञाः सङ्कल्पसम्भवाः व्रतानि यमधर्माश्च सर्वे सङ्कल्पजाः स्मृताः काम का मूल सङ्कल्प है अर्थात् सङ्कल्प ही से काम की उत्पत्ति होती है हृदय से बाह्य पदार्थ की प्राप्ति की सूचना की इच्छा उस को सङ्कल्प कहते हैं और जितने व्रत हैं वे भी काम ही से सिद्ध होते हैं पांच प्रकार के यम होते हैं अहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्या परिग्रहा यमाः । यह योगशास्त्र का सूत्र है इस का यह अर्थ है कि अहिंसा नाम कोई से कभी वैर न करना सत्य जैसा हृदय में है वैसाही वचन कहना अस्तेय नाम चोरी का त्याग बिना आज्ञा से किसी का पदार्थ न ग्रहण करना ब्रह्मचर्य नाम विद्या बल बुद्धि पराक्रम की यथावत् प्राप्ति करनी अपरिग्रह नाम अभिमान कभी न करना धर्म नाम न्याय का न्याय नाम पक्ष-पात का त्याग करना जैसे कि अपना पिता पुत्र भी दुष्ट कर्म करे

कहने से मारा जाता होय तोभी मिथ्या भाषण न करै ॥ अकामस्य क्रिया काचिद् दृश्यते नेह कर्हिचित् । यद्यद्धि कुरुते किञ्चित् तत्तत्कामस्य चेष्टितम् ॥ जिस पुरुष को कामना न होय तो उसको नेत्रादिकों की कुछ चेष्टा भी न होय इस्से जो २ शरीर में कुछ भी चेष्टा होती है सो २ काम ही से होती हैं ऐसा ही निश्चय जानना इस्से क्या आया कि काम के बिना कोई भी शरीर धारण नहीं करसका और खाना पीना भी नहीं करसका इसलिये श्रेष्ठ पदार्थों की कामना अवश्य करनी ही चाहिये दुष्ट पदार्थों की कभी नहीं और जो पुरुषार्थ को छोड़ेगा सो तो पाषाण और काष्ठ की नांई होगा इस्से आलस्य कभी न करना चाहिये और पुरुषार्थ को छोड़ना भी नहीं ॥ आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च । तस्मादस्मिन्सदा युक्तो नित्यं स्यादात्मवान् द्विजः ॥ शास्त्र को पढ़के सत्य धर्म का आचरण जो न करै उसका पढ़ना व्यर्थ हो है सोई परम धर्म है परन्तु यह आचार वेदादिक सत्य शास्त्रोक्त और मनुस्मृत्युक्त ही लेना जिस हेतु से इस आचरण नाम धर्माचरण में द्विज लोग अर्थात् सब मनुष्य होय युक्त मुक्तः सम्पूर्णफलभाग्भवेत् ॥ जो पुरुष वेदोक्त आचार को नहीं होय ॥ आचाराद्विच्युतो विप्रो न वेदफलमश्नुते । आचारेण तु संयुक्तः उसका जो विद्या का पढ़ना है उसका फल वह नहीं पाता और जो वेदादिकों को पढ़ के यथोक्त आचार करता है उस को संपूर्ण सुख का फल होता है ॥ योऽवमन्येत ते मूले हेतुशास्त्राश्रयाद्द्विजः । स साधुभिर्बहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः ॥ कुतर्क से जो कोई मनुष्य श्रुति नाम वेद स्मृति नाम धर्म शास्त्र ये दोनों धर्म के प्रकाशक हैं और धर्म के मूल हैं इन को जो न माने उसको सज्जन लोग सब अधिकारों से बाहर कर देवैं क्योंकि वह नास्तिक है जो वेद मार्ग विद्या की निन्दा करता है सोई पुरुष नास्तिक होता है ॥ वेदःस्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रि-

प्रियमात्मनः । एतच्चतुर्विधम्प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ॥ श्रुति स्मृति सत्पुरुषों का आचार और अपने हृदय की प्रसन्नता नाम जितने पाप कर्म हैं उनकी इच्छा जब पुरुषों को होती है तब उसी समय भय, शङ्का और लज्जा से हृदय में अप्रसन्नता होती है और जितने पुण्य कर्म हैं उन में नहीं होती इससे जिस २ कर्म में हृदय का अन्तर्यामी प्रसन्न होय वही धर्म है और जिसमें अप्रसन्न होय वही अधर्म जानना इसके उदाहरण चोरी जारादिक हैं इसको साक्षाद्धर्म का ४ प्रकार का लक्षण कहते हैं ॥ अर्थकामेष्वसक्तानां धर्मज्ञानं विधीयते । धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः ॥ जो मनुष्य अर्थों में नाम धनादिकों में आसक्त नाम लोभ नहीं करते हैं और काम नाम विषयासक्ति में जो आसक्त नहीं नाम फसे नहीं हैं उन्हीं को धर्म का ज्ञान होता है अन्य को कभी नहीं परन्तु जिनको धर्म जानने की इच्छा होय वे वेदादिक शास्त्र पढ़ें और विचारें उनको बिना पढ़ने से धर्म का यथार्थ ज्ञान न होगा ॥ वेदास्त्यागश्च यज्ञाश्च नियमाश्च तपांसि च । न विप्रदुष्टभावस्य सिद्धिं गच्छन्ति कर्हिचित् ॥ वेद, विद्या, त्याग, यज्ञ, नियम और तप इतने सिद्ध नाम अजितेन्द्रिय पुरुष को कभी सिद्ध नहीं होते । इससे जितेन्द्रियता का होना सब मनुष्यों को आवश्यक है जितेन्द्रिय का लक्षण यह है कि ॥ श्रुत्वा स्पृष्ट्वा च दृष्ट्वा च भुक्त्वा घ्रात्वा च यो नरः । न हृष्यति ग्लायति वा स विज्ञेयो जितेन्द्रियः ॥ जिस पुरुष को अपनी निन्दा सुनके शोक न होय और अपनी स्तुति सुनके हर्ष न होय तथा दुष्टस्पर्श, दुष्टरूप, दुष्टरस और दुष्टगन्ध को पाके शोक न होय और श्रेष्ठस्पर्श, श्रेष्ठरूप, श्रेष्ठरस और श्रेष्ठगन्ध को प्राप्त होके जिसको हर्ष नहीं होता उसको जितेन्द्रिय कहते हैं अर्थात् सब मनुष्यों को यही योग्यता है कि न हर्ष करना चाहिये न शोक किन्तु न शोक में गिरे न हर्ष के फन्दों में सदा बुद्धि को स्वस्थ

यही मुख्का स्थान है ॥ ब्रह्मारम्भेऽवसाने च पादौ ग्राह्यौ गुरोः सदा । संहत्य हस्तावध्येयं स हि ब्रह्माञ्जलिः स्मृतः ॥ जब शिष्य गुरु के पास पढ़ने का नित्य आरम्भ करें तब आदि और अन्त में गुरु को नमस्कार और पादस्पर्श करें जब तक पढ़ें तथा गुरु के सन्मुख रहैं तब तक हाथही जोड़ के रहैं इसी का नाम ब्रह्माञ्जलि है जब गुरु उठै तब आपही पहिले उठै जो आप बैठा होय और गुरु आवैं तब अपने उठके सन्मुख जाके गुरु को शीघ्रही नमस्कार करें और उत्तम आसन पर बैठावैं आप नीचे आसन पर बैठैं और नम्र होके पूछे अथवा सुनें ॥ नापृष्टः कस्यचिद् ब्रूयान्न चान्यायेन पृच्छतः । जानन्नपि हि मेधावी जडवल्लोक आचरेत् ॥ जब तक कोई न पूछे तब तक कुछ न कहैं और जो कोई हठ, छल और कपट से पूछे उससे कभी न कहै जाने तो भी दूसरों के सामने मौनही रहना ठीक है क्योंकि शठ लोग कभी न मानेंगे इससे उनसे कहना व्यर्थ ही है ॥ अधर्मेण च यः प्राह यश्चाधर्मेण पृच्छति । तयोरन्यतरः प्रैति विद्वेषं वाधिगच्छति ॥ जो कोई अधर्म से कहता और जो अधर्म से पूछता है नाम छल, कपट, दोनों का विरोध होने से किसी का मरण अथवा विद्वेष होजाय तो अवश्य होगा इससे गुरु-शिष्य अथवा कोई मनुष्य जो इस शिक्षा को मानेगा और यथावत् करेगा उसको बड़ा सुख होगा ॥ आचार्यपुत्रः शुश्रूषुर्ज्ञानदो धार्मिकः शुचिः । आप्तः शक्तोऽर्थदः साधुः स्वोऽध्याप्या दश धर्मतः ॥ आचार्य का पुत्र शुश्रूषु नाम सेवा का करने वाला तथा ज्ञान का देने वाला वा धार्मिक शुचि नाम पवित्र आप्त नाम पूर्ण काम और शक्त नाम समर्थ अर्थद नाम अर्थ का देने वाला साधु नाम सत्य मार्ग में चलाने वाला और सत्य का उपदेश करने वाला इन दश पुरुषों को विद्या धर्म और परिश्रम से पढ़ावैं जिससे कि वे विद्वान् होंय क्योंकि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र

और उन सभों की स्त्री ये सब जब तक विद्या वाले न होंगे तब तक यथावत बुद्धि, बल, पराक्रम, नैरोग्य और धर्म की उन्नति कभी न होगी आर्य्यावर्त्त देश की उन्नति कभी होगी जब विद्या का यथावत् प्रचार होगा और जब तक उक्त आचार में प्रवृत्त न होंगे तब तक सुख के दिन कभी न आवेंगे क्योंकि ब्राह्मण और साम्प्रदायिक लोग पढ़के यथावत् धर्म में निश्चित तो नहीं होते किन्तु अपनी २ आजीविका और अपना २ सम्प्रदाय जो वेद विरुद्ध पाखण्ड उन्हीं को बढ़ावेंगे और जीविका के लोभ से सब दिन छल कपटही में रहेंगे कभी धर्म में चित्त न देंगे न धर्म को जानेंगे क्योंकि उनको पाखण्डही से सुख मिलता है इससे पाखण्डही को बढ़ावेंगे धर्म को कभी नहीं और क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र पढ़ेंगे उनको आजीविका नाश का भय तो नहीं है इससे कभी छल कपट से असत्य न कहेंगे इससे सत्यही सत्य प्रवृत्ति होगी और वे क्षत्रियादिक जब तक न पढ़ेंगे तब तक आर्य्यावर्त्त देश वासियों के मिथ्याचार और पाखण्डों का नाश कभी न होगा जो राजा और जितने धनाढ्य लोग हैं उनको तो अवश्य सब शास्त्रों को पढ़ना चाहिये क्योंकि उनके पढ़े बिना कोई प्रकार से भी विद्या का प्रचार धर्म की व्यवस्था और आर्य्यावर्त्त देश की उन्नति कभी न होगी उनकी बहुतसी हानि भी होगी क्योंकि उनके अधिकार में राज्य धन और बहुत से पुरुष रहते हैं जब वे विद्वान्, बुद्धिमान्, जितेन्द्रिय और धर्मात्मा होंगे तब उनके राज्य में धर्म और विद्या का प्रचार होगा उनका धन अनर्थ में कभी न जायगा और उनके राज्य सब श्रेष्ठ धर्मात्मा होंगे इससे सब देशस्थों का उपकार होगा केवल आर्य्यावर्त्त वासियों का नहीं किन्तु सब देशस्थ मनुष्यों को ऐसाही करना उचित है कि पक्षपात का छोड़ना सत्य का ग्रहण करना और जितने मत हैं वे सब दुःखोंही के

कल्पित हैं और बुद्धिमानों का एकही मत अर्थात् सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना है इससे क्या आया कि जो लाभ विद्या के प्रचार से होता है ऐसा लाभ कोई अन्य प्रकार से नहीं होता ये सब श्लोक मनुस्मृति के हैं जो पढ़ना अथवा पढ़ाना सो शास्त्रोक्त प्रत्यक्षादिक प्रमाणों से सत्य २ परीक्षित करकेही पढ़ना और पढ़ाना भी ॥ इन्द्रियार्थसन्निकर्षोत्पन्नं ज्ञानमव्यपदेश्यमव्यभिचारि व्यवसायात्मकं प्रत्यक्षम् ॥ यह गौतम मुनि का सूत्र है सो प्रत्यक्ष सब को अवश्य मानना चाहिये ॥ अक्षस्य २ प्रतिविषयं वृत्तिः प्रत्यक्षम् । अक्ष नाम इन्द्रिय का है इन्द्रिय इन्द्रिय के प्रति विषय ग्रहण करने वाली जो वृत्ति तज्जन्य जो ज्ञान इसको प्रत्यक्ष कहते हैं सो जब किसी बाह्य व्यवहार को जीव को इच्छा होती है तब मन को संयुक्त होके जीव प्रेरणा करता है तब मन इन्द्रियों को अपने २ विषयों के प्रति प्रेरता है तब इन्द्रियों का और विषयों का सन्निकर्ष होता है अर्थात् सम्बन्ध होता है सम्बन्ध जिसका नाम है कि उन उन इन्द्रिय और विषयों का जो यथावत् वृत्ति द्वारा वर्त्तमान का होना अथवा ज्ञान का होना उसका नाम है सन्निकर्ष सन्निकर्षोऽविप्रकर्षः । यह वात्स्यायन भाष्य का वचन है इस पुस्तक में वारम्वार न लिखा जायगा परन्तु ऐसा जानना कि जो कुछ लिखा जायगा सो गौतम सूत्रादि के अनुसारही से और वात्स्यायनादिक मुनि के भाष्यों के अभिप्राय से लिखा जायगा इसमें जिनको शङ्का अथवा अधिक जानना चाहें सो उन ग्रन्थों में देख लें वैसा प्रत्यक्षज्ञान ठीक २ यथावत् स्वस्वरूप कहाता उसके भिन्न जो होगा उसको भ्रम नाम अज्ञान कहा जायगा जैसे कि ॥ व्यवस्थितः पृथिव्यां गन्धः अप्सु रसः अग्नौ तेजसि वायौ स्पर्शः । ये सूत्र और अभिप्राय वैशेषिक सूत्रकार मुनि के हैं इन्द्रियों से गुणही का ग्रहण होता है द्रव्य का कभी नहीं क्यों–

कि ॥ श्रोत्रग्रहणोयोऽर्थः सशब्दः । यह वैशेषिक का सूत्र है ऐसे न्याय सूत्र हैं यह लोग श्रोत्र नाम कर्णेन्द्रिय से शब्दही का ग्रहण करते हैं और स्पर्शादिकों का नहीं ऐसेही त्वगिन्द्रिय से स्पर्शही का ग्रहण करते हैं तथा नेत्र से रूप का जीभ से रस का और नासिका से गन्ध का ये शब्दादिक आकाशादिकों के गुण हैं गुणोंही को इन्द्रियों से ग्रहण करते हैं आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी इनका ग्रहण इन्द्रियों से कभी नहीं होता मन से भी जीव आकाशादिकों का प्रत्यक्ष ग्रहण करता है क्योंकि जो जिसका स्वाभाविक गुण है वह उससे भिन्न कभी नहीं होता जैसे कि पृथ्वी का स्वाभाविक गुण गन्ध है सो पृथ्वी से भिन्न कभी नहीं रहता और गन्ध से पृथ्वी भी भिन्न नहीं रहती इन दोनों के सम्बन्ध से जीव को गन्ध के ज्ञान होने से पृथ्वी का भी प्रत्यक्ष होता है वैसेही रस, रूप, स्पर्श और शब्दों का जीभ, नेत्र त्वक् और श्रोत्र से ग्रहण होने से जल, अग्नि, वायु और आकाश का भी मनसे जीव को प्रत्यक्ष होता है सो प्रत्यक्ष किस प्रकार का होता कि पृथ्वी में जल, अग्नि और वायु के सम्बन्ध होने से रस, रूप और स्पर्श भी ये तीनों गुण देख पड़ते हैं परन्तु तीन गुण स्पर्शादिक वायु आदिकों के संयोग निमित्तही से हैं वैसेही जल में रूप और स्पर्श मिले हैं तथा अग्नि में स्पर्श और वायु में शब्द आकाश में कोई नहीं एक शब्द ही अपना स्वाभाविक गुण है वायु में जो शब्द है सो आकाश के संयोग निमित्त से और जल में जो गन्ध है सो पृथ्वी के संयोग से है वैसेही अन्यत्र जान लेना सो प्रत्यक्ष ज्ञान ऐसा लेना कि अव्यपदेश्य ज्ञान संज्ञा से जो होता है जैसे कि घट एक पदार्थ की संज्ञा है इस संज्ञा से जिसका नाम कि घट है वह घट शब्द के उच्चारण से कि यह घड़े को जल जब घट घड़ा लेने को चला जिसने उसने घड़े को देखा उस वक्त को घट संज्ञा को वही

को न देख पड़ी किन्तु जैसी उसकी आकृति और रूप वही न देख पड़ा और घट शब्द नहीं फिर वह घड़े को लेके जिस ने आज्ञा दी थी उसके पास घड़े को रख के बोला कि यह घड़ है उसने घड़े को प्रत्यक्ष देखा परन्तु उसमें घड़ा ऐसा जो नाम उसको उसने भी न देखा के जो संज्ञा बिना पदार्थ मात्र का ज्ञान होता उसको अव्यपदेश्य कहते हैं और जो व्यपदेश्य ज्ञान है सो तो शब्द प्रमाण में है प्रत्यक्ष में नहीं और दूसरा प्रत्यक्ष ज्ञान का अव्यभिचारि यह विशेषण है सो जानना चाहिये व्यभिचारिज्ञान इस प्रकार का होता है कि अन्य पदार्थ में भ्रम से अन्यपदार्थ का ज्ञान होना जैसे कि लकड़ी के स्तम्भ में पुरुष का ज्ञान रज्जु में सर्प का सीप में चांदी और पाषाणादिक मूर्त्तियों में देव का ज्ञान इत्यादिक ज्ञान सब व्यभिचारि है उस समय में तो यथार्थ भ्रम से देखने में आते हैं परन्तु उत्तर काल में सत-सङ्गादिकों का साक्षात् प्रत्यक्ष विशेष तत्त्वज्ञान के होने से पुरु-षादिकों का जो भ्रम से ज्ञान हुआ था सो नष्ट हो जाता है इससे क्या आया कि जिस ज्ञान का कभी व्यभिचारि नाम नाश न होय उसको कहते हैं अव्यभिचारि ज्ञान सो प्रत्यक्ष अव्य-भिचारि ही होता अन्य नहीं और इस प्रत्यक्ष का तीसरा विशे-षण व्यवसायात्मक है व्यवसाय नाम है निश्चय का और जो जिसका तत्त्व स्वरूप है उसका नाम है आत्मा जब तक जो पदार्थ का तत्त्व नाम स्वरूप निश्चय न होय तब तक व्यवसायात्मक ज्ञान नहीं होता और जब उस के स्वरूप का यथावत् ज्ञान का निश्चय होता है उसको व्यवसायात्मक कहते हैं जैसे कि दूर से श्वेत बालुका देखी अथवा घोड़ा देखा उस के नेत्र से सम्बन्ध भी भया परन्तु उस के हृदय में निश्चय न हुआ कि यह वस्त्र अथवा धूल अथवा और कुछ है यह घोड़ा अथवा गैया अथ-वा और कुछ है जब तक यथावत् वह निकट से न देखेगा

तब तक सन्देह की निवृत्ति न होगी और जब तक सन्देह की निवृत्ति न होगी तब तक सन्देहात्मक नाम भ्रमात्मक ज्ञान रहेगा उसको प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं जानना और जो सत्य २ दृढ़ निश्चित तत्त्वज्ञान है उसको उक्त प्रकार से प्रत्यक्ष ज्ञान जानना इस प्रकार से थोड़ा सा प्रत्यक्ष के विषयमें लिखा परन्तु जिसको अधिक जानने की इच्छा होय सो षट्दर्शनों में देख लेवै इससे आगे दूसरा अनुमान प्रमाण है ॥ अथ तत्पूर्वकं त्रिविधमनुमानं पूर्ववच्छेषवत्सामान्यतोदृष्टञ्च । यह गौतममुनि का सूत्र है अर्थ नाम प्रत्यक्ष लक्षण लिखने के अनन्तर अनुमान लक्षण का प्रकाश करते हैं तत्पूर्वक नाम प्रत्यक्ष पूर्वक जिस में पहिले प्रत्यक्ष का होना आवश्यक होय और अनुमान पीछे मान नाम ज्ञान होना उसका नाम अनुमान है सो अनुमान प्रत्यक्ष पूर्वक ही होता है अन्यथा नहीं यह अनुमान तीन प्रकार का होता है एक तो पूर्ववत् दूसरा शेषवत् तीसरा सामान्य तो दृष्ट पूर्ववत् इसका नाम है कि जहां कारण से कार्य का ज्ञान होना जैसे बादल के विना वृष्टि कभी नहीं होती सो बादलों की उन्नति गर्जना और विद्युत् इन को देख के अवश्य वृष्टि होगी ऐसा ज्ञान होता है तथा परमेश्वर के विना सृष्टि कभी नहीं होती क्यों कि रचना करने वाले के विना रचना कभी नहीं होती और बादल जो है सो वृष्टि का कारण है परमेश्वर जो है सो जगत् का कारण है यह पूर्ववत् अनुमान है और शेषवत यह है कि जहां कार्य से कारण का ज्ञान होना जैसे कि पहिले नदी में थोड़ा प्रवाह वेग भी न्यून अथवा सूखी देखने से फिर जब वह पूर्ण हुई देख के उस के प्रवाह का शीघ्र चलना तृण काष्ठ फलादिक बहे जाते देख के अवश्य ज्ञान होता है कि वृष्टि ऊपर कहीं भई है इस संसार की रचना देख के अवश्य रचना करने वाला परमेश्वर ही है इसको नाम शेषवत् अनुमान है तीसरा

सामान्य तो दृष्ट अनुमान है जैसे कि चल के ही स्थान से स्थानान्तर में जाता है किसी पुरुष को अन्य स्थान में कहीं पैठा देखा फिर दूसरे काल में अन्य स्थान में उसी पुरुष को बैठा देखा इससे देखने वाले ने यह जाना कि यह पुरुष इस स्थान से चल के ही आया है क्योंकि बिना गमन स्थान से स्थानान्तर में कोई भी नहीं जा सक्ता ऐसा सामान्य से नियम है इस प्रकार का सामान्य से दृष्ट अनुमान है उसका गमन तो उस ने देखा नहीं परन्तु उस को गमन का ज्ञान हो गया यथा पूर्ववत् नाम किसी स्थान में अग्नि नाम अङ्गारे को काष्ठादिकों में मिला हुआ और उस में धूम भी निकलता हुआ देखा था उस ने जान लिया कि अग्नि और काष्ठादिकों का संयोग जब होता है तब धूम अवश्य निकलता है फिर किसी समय उसने दूर स्थान में धूम को देखा देखने से उस को ज्ञान भया कि वहां अग्नि अवश्य है इस प्रकार का अनेक विधि पूर्ववत् अनुमान होता है और ज्ञान होना शेषवत् नाम किसी ने बुद्धि से विचार करके कहा कि यह पुरुष उत्तम पण्डित है इससे यह जाना कि अन्य ऐसा कोई पण्डित नहीं और मूर्ख भी बहुत से हैं इस स्थान में ऐसा कहने से ऐसा जाना गया ऐसे अन्य भी बहुत प्रकार का शेषवत् अनुमान ज्ञान होता सामान्य दृष्ट नाम जैसे कि मनुष्य के शिर में प्रत्यक्ष शृङ्ग के नहीं देखने से अदृष्ट मनुष्यों के शिर में भी शृङ्ग का नहीं होना ऐसा निश्चित जाना जाता है इसका नाम सामान्य से दृष्ट अनुमान है इससे आगे तीसरा उपमान प्रमाण है ॥ प्रसिद्धसाधर्म्यात्साध्यसाधनमुपमानम् । यह गौतम मुनि का सूत्र है प्रसिद्ध नाम प्रकट साधर्म्य नाम तुल्य धर्मता एक का दूसरे से होना साध्य नाम जिस को बनावें साधन नाम जिससे बनावें किसकी उपमा जिससे की जाय उसका नाम उपमान प्रमाण है किसी ने किसी से पूछा कि गवय नाम नीलगाय

किस प्रकार की होती है उसने उसे उत्तर दिया कि जैसी यह गाय होती है वैसा ही गवय होता है उसने उस के उपदेश को हृदय में रख लिया फिर उसने कभी कालान्तर में किसी स्थान में वन में वा अन्यत्र उस पशु को देखके जान लिया कि यही नीलगाय है क्योंकि सादृश्य के तुल्य होने से ज्ञान का निश्चय होगया अथवा किसी ने किसी से कहा कि तू देवदत्तनाम मनुष्य के पास जा तब उसने उससे पूछा कि देवदत्त कैसा है उसने उससे कहा कि जैसा यह यज्ञदत्त है वैसा ही देवदत्त है फिर वह वहां गया उसने यज्ञदत्त के तुल्य देवदत्त को देखके निश्चय जान लिया कि यही देवदत्त है तब देवदत्त ने कहा कि आपने मुझ को कैसे जाना उसने कहा मुझ से किसी ने कहा था कि यज्ञदत्त ही के समान देवदत्त है उस यज्ञदत्त के समान होने से आपको मैं ने जान लिया इस का नाम उपमान प्रमाण है चौथा शब्द प्रमाण है ॥ आप्तोपदेशः शब्दः । यह गौतम मुनि का सूत्र है ॥ आप्तः खलु साक्षात्कृतधर्मा यथादृष्टस्यार्थस्य चिख्यापयिषया प्रयुक्त उपदेष्टा साक्षात्करणमर्थस्याप्तिस्तया प्रवर्त्तत इत्याप्तः आर्य्यम्लेच्छानां समानं लक्षणम् ॥ यह वात्स्यायन मुनि का भाष्य है आप्त उस को कहते हैं कि साक्षात् कृतधर्मा जिस ने निश्चय करके धर्म ही किया वा करता होय और कभी अधर्म कभी नहीं और जिस में काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोकादिक दोषों का लेश कभी न होय विद्यादिक शुभ गुण जिस में होंय वैर किसी से न होय पक्षपात कभी न करै और सब जीवों के ऊपर कृपा करै अपने हृदय में सत्य २ जानने से जैसा सुख भया वैसा ही सब जीवों को सत्य २ उपदेश जनाने सुख प्राप्त कराने की इच्छा से जो प्रीति से उपदेश करै और आप्ति उसका नाम है कि जो जैसा पदार्थ है उसका वैसा ही ज्ञान का होना उस आप्ति से युक्त होय तथा सब काम जिसके पूर्ण होंय सत्य, कपट

और लोभ से जो कभी मुक्त न होय किन्तु एक परमेश्वर की आज्ञा जो धर्म और सब जीवों के कल्याण के उपदेश की इच्छा जिसकी होय उसको आप्त कहते हैं सब आप्तों में भी आप्त परमेश्वर है उस आप्त परमेश्वर का और उस प्रकार के उक्त आप्त मनुष्यों का जो उपदेश है शब्द प्रमाण उसको कहते हैं इसी का प्रमाण करना चाहिये इससे विपरीत मनुष्यों के उपदेश का कभी प्रमाण न करना चाहिये आर्य कोई देश विशेष में होता है अथवा सब देशों में होता है इसका यह उत्तर है कि ऋष्यार्यन्ते [illegible] । ऋषि नाम यथार्थ मंत्रद्रष्टा यथार्थ पदार्थों के विचार के जानने वाले उत्तर में हिमालय और दक्षिण में विन्ध्याचल पूर्व में समुद्र और पश्चिम में समुद्र इन चारों के अवधि पर्यन्त देश में रहने वाले मनुष्यों का नाम आर्य है इस देश से भिन्न देशों में रहनेवाले मनुष्यों का नाम म्लेच्छ है म्लेच्छ नाम निन्दित नहीं है किन्तु म्लेच्छ—अव्यक्ते शब्दे । इस धातु से म्लेच्छ शब्द सिद्ध होता है इसका अर्थ यह है कि भिन्न देशों के उच्चारण में वर्णों का शुद्ध उच्चारण नहीं होता उनका नाम म्लेच्छ है सब देशों में और सब मनुष्यों में आप्त होने का सम्भव है असम्भव कभी नहीं अर्थात् यद्यपि आर्य और म्लेच्छ इनमें आप्त [illegible] होते हैं क्योंकि जो किसी मनुष्यों में उक्त प्रकार का लक्षण वाला मनुष्य होगा उसी का नाम आप्त होगा यह नियम नहीं है कि इस देश में होय और अन्य देश में न होय आर्य नाम है श्रेष्ठ का और जो हिन्दू नाम इसका रक्खा है सो मुसलमानों ने ईर्ष्या से रक्खा है उसका अर्थ है चुद्र, चोर, काफ़िर, काला और गुलाम इससे यह नाम [illegible] आर्यों का नाम हिन्दू कभी न रखना चाहिये ॥ आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् । तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः ॥ [illegible] ॥ और

देश आर्य्यों के नाम श्रेष्ठों से आवर्त्त नाम युक्त होय उसका नाम आर्य्यावर्त्त देश है सो देश हिमालयादिक अवधि से कह दिया सो जान लेना वह शब्द प्रमाण दो प्रकार का होता है सू० स द्विविधो दृष्टादृष्टार्थत्वात् । जिस शब्द का अर्थ प्रत्यक्ष देख पड़ता है सो तो दृष्टार्थ शब्द है और जिस शब्द का श्रवण तो प्रत्यक्ष होता है और उसका अर्थ प्रत्यक्ष देखने में नहीं आता उसका नाम अदृष्टार्थ शब्द है जैसे कि स्वर्गादिक शब्दों का अर्थ देखने में नहीं आता इस प्रकार के शब्द का नाम अदृष्टार्थ शब्द है दृष्टार्थ शब्द यह है कि जैसा पृथिव्यादिक इनके प्रत्यक्षादि के ४ प्रकार के भेद हैं एक तो प्रमाता होता है कि जो पदार्थ को प्रमाणों से जान लेता है जिसका नाम जीव है प्रमाणों का करने वाला प्रमिणोति स प्रमाता येनार्थं प्रमिणोति तत्प्रमाणम् जिससे अर्थ को यथावत् जाने उसका नाम प्रमाण है प्रत्यक्षादिक जो कह दिये जैसे कि नेत्र से जीव जो है सो रूप को जान लेता है योऽर्थः प्रतीयते तत्प्रमेयम् । जिसकी प्रतीति होती है उसका नाम प्रमेय है जैसा कि रूप नेत्र से देखा गया यदर्थविज्ञानं सा प्रमितिः । जो अर्थ का यथावत् तत्त्वविज्ञान होना उसका नाम प्रमिति है प्रमाता प्रमाण, प्रमेय, और प्रमिति इन चार प्रकार की विद्या को भी यथावत् जान लेना चाहिये और भी ४ प्रकार की जो विद्या है उसको जानना चाहिये हेयम् नाम त्याग करने के जो योग्य होय जैसे कि अधर्म और ग्राह्य नाम ग्रहण करने के योग्य जैसा कि धर्म दूसरा तन्निवर्त्तकम् नाम हेय जो अधर्म उसकी निवृत्ति का जो ज्ञान से करना और पुरुषार्थ से तत्प्रवर्त्तकम् ग्राह्य जो धर्म उसकी जो प्रवृत्ति हृदय में विचार से और पुरुषार्थ से होनी तीसरा हानस्यात्यन्तिकम् जो हेय अधर्म का अत्यन्त त्याग कर देना पुरुषार्थ से और विचार से स्थान भाव तात्त्विकम् नाम ग्राह्य जो धर्म उसकी दृढ़स्थिति हृदय

में हो जाती कि द्रव्य और आचरण से धर्म का नाश कभी न होय यथा तस्त्रोपायोऽधिगन्तव्यः । ऐसे जो अधर्म उसके त्याग के उपाय को प्राप्त होना और धर्म के ग्रहण के उपाय को प्राप्त होना वह उपाय सत्पुरुषों का सङ्ग, श्रेष्ठबुद्धि और सद्विद्या के होने से प्राप्त होता है इतने ४ अर्थ पद होते हैं इनका सम्यक् जानने से निःश्रेयस जो मोक्ष नाम नित्यानन्द परमेश्वर की प्राप्ति और जन्म मरणादिक दुःखों की अत्यन्त निवृत्ति हो जाती है इससे इस ४ प्रकार की विद्या को भी सज्जनों को अवश्य जानना चाहिये ४ प्रकार के जो प्रमाण हैं उनका विषय लिखा गया और इनकी परीक्षा भी संक्षेप से इससे आगे लिखी जाती है सो जान लेना ॥ प्रत्यक्षादीनां अप्रामाण्यं त्रै–काल्यासिद्धेः । इत्यादिक परीक्षा में गोतममुनि प्रणीत सूत्रों ही को लिखेंगे सो आप लोग जान लेवैं प्रत्यक्षादिकों का प्रमाण नहीं है क्योंकि तीन कालों की असिद्धि के होने से पूर्व पर सह-भाव नियम के भंग होने से कि पहिले प्रमाण होता है या प्रमेय देखना चाहिये कि पहिले जो प्रमाण सिद्ध होय और पीछे प्रमेय हो बिना प्रमेय के प्रमाण किसका होगा वा पहिले प्रमेय होय प्रमाण पीछे होय तो बिना प्रमाण के प्रमेय कैसे जाना जायगा और जो संग में दोनों का ज्ञान होय तो बिना प्रमेय से प्रमाण की उत्पत्ति नहीं इससे किसी प्रकार से भी प्रत्यक्षादिकों का प्रमाण नहीं होसक्ता तथाहि पूर्वहि प्रमाण–सिद्धौ नेन्द्रियार्थसन्निकर्षात्प्रत्यक्षोत्पत्तिः । यह गोतममुनि का सूत्र है जैसे कि गन्धादि विषय का जो प्रत्यक्ष ज्ञान सो गन्ध दिकों का और नासिकादिक इन्द्रियों का सम्बन्ध होने से प्रत्यक्ष की उत्पत्ति होती है अन्यथा नहीं और जो कोई कहै कि पहिले प्रमाण की उत्पत्ति होती है पीछे प्रमेय की अच्छा तो गन्धा–दिकों का तो सम्बन्ध भी उत्पन्न नहीं भया उनके सम्बन्ध के

निन्तर प्रत्यक्ष की उत्पत्ति नहीं होती फिर इन्द्रियार्थ सन्नि-कर्षोत्पन्नं ज्ञानमित्यादि प्रत्यक्ष का जो लक्षण किया है सो व्यर्थ हो जायगा क्योंकि आपने प्रमाण की उत्पत्ति प्रमेय के सम्बन्ध से पूर्वही मानी है इससे आपके मतमें यह दोष आवेगा अच्छा तो मैं प्रमेयों के सम्बन्ध के पीछे प्रमाणों को उत्पत्ति मानता हूं फिर क्या दोष आवेगा अच्छा सुनो सूत्र ॥ पश्चा-त्सिद्धौ न प्रमाणेभ्यः प्रमेयसिद्धिः । पहिले प्रमेय की सिद्धि मानें तो प्रमाणोंही से प्रमेय की सिद्धि होती है वह जो आप का कहना सो [illegible] होजायगा और आप एक [illegible] प्रमाण और प्रमेय मानेंगे तो भी यह दोष आवेगा सूत्र ॥ युगपत्सिद्धौ प्रत्यर्थ नियतत्वात्क्रमवृत्तित्वाभावो बुद्धीनाम् । यह जो बुद्धि है सो एक विषय को जानकर दूसरे विषय को जान सक्ती है दोनों को एक समय में नहीं जान सकती जैसे कि एक वस्तु को देखा देख के [illegible] की बुद्धि होती है तब इसका यह वस्तु भारी है उसको [illegible] [illegible] भार का जब विचार करता है तब [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] का उस भार का नहीं ॥ सूत्र । युग-पज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिङ्गम् । एक काल में दोनों ज्ञान को न ग्रहण करे किन्तु एक को ग्रहण करके फिर दूसरे को ग्रहण करे यही मन का [illegible] है वैसे ही प्रमाण और प्रमेय एक काल में दोनों का ज्ञान कभी नहीं होता जिस समय प्रमाण का ज्ञान होता है उस समय प्रमेय का नहीं [illegible] समय प्रमेय का ज्ञान होता है उस समय प्रमाण का नहीं यह सब जीवों को अनुभव सिद्ध बात है इस बात में आप के कहने से [illegible] [illegible] ऐसा भी [illegible] [illegible] को उचित नहीं इस पूर्वपक्ष का यह समाधान है कि ॥ सूत्र । [illegible]-[illegible] ॥

[illegible]

है और उपलब्धि का विषय जिसका ज्ञान होता है जैसा कि चन्द्रादिक इसका पूर्व पर सब भाग नाप सके इससे पूर्व का पद पर ऐसा नियम नहीं सर्वत्र देखने में आता इससे जैसा जहां योग्य होय वैसा वहां लेना चाहिये देखना चाहिये कि सूर्य का दर्शन तो पीछे होता है और दो घड़ी रात्रि से पहिले ही प्रकाश हो जाता है उससे नक्षत्रादिक पदार्थों का पीछे-से ही दर्शन हो जाता है जब दीपको जलाते हैं तब दीप का दर्शन तो पहिले होता है फिर दीप के प्रकाश से अन्य सब पदार्थों का दर्शन पीछे होता है सूर्य और दीप अपना प्रकाश आपही करते हैं और अन्य पदार्थों का भी एक कालमें प्रकाश करते हैं यह तो दृष्टान्त हुआ ऐसाही प्रमाणों के दृष्टान्त में जानना चाहिये कहीं तो पहिले प्रमाण होता है कहीं प्रमेय आगे समय में दोनों एकही साथ में होते हैं जैसे कि ॥ सूत्र ॥ त्रैकाल्यासिद्धेः प्रतिषेधानुपपत्तिः । आपने प्रत्यक्षादिक प्रमाणों का जो निषेध किया सो तीनों कालों का ग्रहण के लिया अथवा नहीं जो आप भूतकाल नाम बीते भये काल में प्रमाणों को सिद्ध न मानेंगे तो आपने निर्मूल निषेध किया और जो भविष्यत्काल में होने वाले प्रमाणों का आपने निषेध किया तो प्रमाण पश्चात् भी नहीं भये पहिले निषेध कैसे होगा और जो वर्तमान कालमें प्रत्यक्षादिक प्रमाण सिद्ध हैं तो सिद्धों का निषेध कोई कैसे करेगा ॥ सूत्र ॥ सर्वप्रमाणप्रतिषेधाच्च प्रतिषेधानुपपत्तिः । किसी प्रमाण को आप न मानेंगे तो आपके प्रतिषेध की प्रमाण से सिद्धि कैसे होगी जब प्रतिषेध में कोई प्रमाण नहीं है तब प्रतिषेध अप्रमाण होगा तब कोई शिष्ट इस प्रमाण के निषेध को न मानेगा तब आप का निषेध ही व्यर्थ होगया इससे आप को भी प्रमाणों को अवश्य मानना चाहिये ॥ सूत्र ॥ शब्दऐतिह्यानर्थान्तरभावादनुमानेऽर्थापत्तिसिद्धे

तीन कालों का निषेध नहीं हो सकता जैसा कि वीणा अथवा बांसुरिया वा कोई वादित्र कोई दूर बजाता होय उनका शब्द दूसरे सुनके एवं चिह्न वादित्र को जान लिया जाता है कि यह वीणा का शब्द है और जब वीणा देखी तब भविष्यत्काल में जो होने वाला शब्द इसको जान लिया कि वीणा आगे बजाने से शब्द होगा और जब सन्मुख वीणा को और उसके शब्द को भी एक काल में देखता और सुनता है तब वीणा और वीणा के शब्द को भी जान लेता है वैसे ही व्यवस्था प्रमाणों को जान-लेना॥ सूत्र॥ अर्थापत्त्यनुमानप्रमाण की नाई है तुला से ही घृतादिक द्रव्यों को तोल के प्रत्यक्ष कर लेते हैं इसमें तुला तो प्रमाण कहाती है और घृतादिक प्रमेय कहाती हैं परन्तु वही तुला दूसरी तुला से तौली जाय तब प्रमेय संज्ञा भी उसकी होती है वैसे ही जब प्रत्यक्षादिक प्रमाणों से रूपादिक विषयों को चक्षुरादिकों से हम लोग देखते हैं तब तो प्रत्यक्षादिक और चक्षुरादिक प्रमाण हैं रूपादिक विषय प्रमेय हैं और जब प्रत्यक्षादिक क्या होते हैं ऐसी आकांक्षा होगी तब वेही प्रमेय हो जायंगे क्योंकि ऐसा लक्षण वाले को प्रत्यक्ष प्रमाण कहना और ऐसा लक्षण जिसका होय वह अनुमान होता है इत्यादिक सब जान लेना तीन प्रकार से शास्त्र की प्रवृत्ति होती है १ एक उद्देश, २ दूसरा लक्षण, और ३ तीसरा परीक्षा, उद्देश उसका नाम है कि नाम मात्र से पदार्थ को गणना करनी जैसा कि द्रव्य गुण कर्म सामान्य विशेष और समवाय लक्षण इसका नाम है कि चिह्न जो जिसका धर्म है उससे पृथक् कभी न होय जैसा कि पृथिवी में गन्ध जलमें रस इत्यादिक गन्धही पृथिवी को जनाता है और गन्धही से पृथिवी जानी जाती है गन्ध रसादिकों से विशेष है और गन्ध से रसादिक

विशेष हैं परस्पर ये गन्धादि के निवर्तक और प्रकाशक हो जाते हैं इससे गन्ध पृथ्वी का लक्षण है और रसादिक जलादिकों के लक्षण हैं। गन्ध का लक्षण नासिका, नासिका का लक्षण मन, मन का लक्षण आत्मा, आत्मा का लक्षण भी आत्माही है और कोई नहीं लक्षण का भी लक्षण होता है वा नहीं लक्षण का लक्षण कभी नहीं होता जो कोई लक्षण का लक्षण करता है सो मूर्ख पुरुष है वा जिस ने ग्रन्थ में लिखा है वहभी मूर्ख पुरुष है क्योंकि पृथ्वी का लक्षण गन्ध है गन्ध का लक्षण नासिका सो नासिका के प्रति गन्ध लक्ष्य है क्यों कि नासिका ही से गन्ध जाना जाता है और नासिका मन से जानी जाती है इससे नासिका का लक्षण मन है नासिका मन का लक्ष्य है मन का लक्षण आत्मा है क्योंकि आत्मा ही से मन जाना जाता है आत्मा के प्रति मन लक्ष्य है क्यों कि मेरा मन सुखी वा दुःखी है सो आत्मा मन कोही जान के कहता है इससे मन आत्मा का लक्ष्य है आत्मा और परमात्मा परस्पर लक्ष्य और लक्षण हैं क्योंकि आत्मा परमात्मा को जान सक्ता है और अपने को आप भी जान लेता है तथा परमात्मा सब काल में आत्माओं को जानता है और आप को भी आप सदा जानता है वे अपने आपही के लक्ष्य और लक्षण भी हैं इससे आगे जो तर्क करना है सो मूढ़ही का धर्म है क्योंकि इसके आगे जो तर्क कुतर्क करता है उसका ज्ञान और बुद्धि नष्ट होजाती है इससे सज्जनों को और बुद्धिमानों को अवश्य जानना चाहिये कि यही ज्ञान की परम सीमा है और यही परम पुरुषार्थ है जो कोई लक्षण का लक्षण करता है उसके मत में अनवस्था दोष प्रसङ्ग आवेगा कहीं भी अवस्था न होगी क्योंकि लक्षण का लक्षण उसका लक्षण २ ऐसा धाड़ करता २ मर जायगा कुछ हाथ नहीं आवेगा और जैसा कि लक्षण का लक्षण करता है वैसा लक्ष्य का लक्षण

उसका लक्षण २ यह भी अनवस्था दूषण इनके मत में आवेगी इससे बुद्धिमानों को ऐसी बात न कहनी चाहिये और न सुननी चाहिये कुछ थोड़ी सी प्रमाणों के विषय में परीक्षा लिख दी है और अधिक जानने की जिसको इच्छा होय वह गोतमसूत्र के २ अध्याय से लेके ५ पञ्चमाध्याय की पूर्त्ति पर्य्यन्त देख लेवे इससे ४ प्रमाण हैं परन्तु चारों में और ४ चार प्रमाण मानना चाहिये ॥ न चतुष्ट्वमैतिह्यार्थापत्तिसम्भवाभावप्रामाण्यात् । यह गोतममुनि का पूर्वपक्ष का सूत्र है ४ चारही प्रमाण नहीं किन्तु ८ आठ प्रमाण हैं ऐतिह्य नाम जो बहुत काल से सुनते सुनाते चले आये उसका नाम ऐतिह्य है अर्थापत्ति किसी ने किसी से कहा कि बादल के होने ही से वृष्टि होती है इससे क्या आया कि विना बादल से वृष्टि नहीं होती इसका नाम अर्थापत्ति है सम्भव नाम मण के जानने से आधा मण पसेरी सेर और छटांक को भी विचार से ज्ञान होजाय उसका नाम सम्भव है क्योंकि मण ४० सेर का होता है उसका आधा २० सेर होगा १० सेर के चतुर्थांश की पसेरी होगी उसका ५ पांचवां अंश सेर होगा सेर का १६ सोलहवां अंश छटांक होगा ऐसा विचार करने से जो ज्ञान होता है उसका नाम सम्भव है यह सप्तम प्रमाण है आठवां अभाव किसी ने किसी से कहा है कि तूं अमुक नाम वृद्ध मनुष्य को ला जो कि तूने नहीं देखा है वह जाके जिसको उसने कभी न देखा था उसी को ले आवेगा देखने के अभाव से उसको ज्ञान होगया इससे अभाव भी आठवां प्रमाण मानना चाहिये इसका समाधान यह है कि ॥

सूत्र । शब्द ऐतिह्यानर्थान्तरभावादनुमानेऽर्थापत्तिसम्भवाभावानर्थान्तरभावाच्चाप्रतिषेधः । चारही प्रमाण मानना चाहिये उसका जो आपने निषेध किया सो अयुक्त है क्योंकि आप्तों का उपदेश जो है सो शब्द है उसी में ऐतिह्य भी आगया क्योंकि

भाग् भापदः इत्यादिक रूप और बहुत से शब्दों का ज्ञान होगा एक मास में इसको पढ़ लेगा इसके पीछे सर्व विश्व उभ उभय इत्यादिक गणपाठ के साथ अष्टाध्यायी की द्वितीयानुवृत्ति साथ दूसरी बार पढ़े उसके सूत्रों में जितने शब्द हैं और जितनेपद उनको सूत्रों से सिद्ध कर लेवेगा और सर्वादि गणों के सर्वः सर्वौ सर्वे ऐसे पुल्लिङ्ग में रूप होते हैं सर्वा सर्वे सर्वाः इत्यादिक स्त्रीलिङ्ग में रूप होते हैं और सर्वं सर्वे सर्वाणि इत्यादिक नपुं-सक में रूप होते हैं इसको भी पढ़ लेवे सूत्रों के साथ के ऐसे दूसरी बार अष्टाध्यायी को ४ वा ५ छः मास में पढ़ लेगा इस प्रकार से १६ वा १८ अठारह मास में पाणिनि मुनि के किये ४ चार ग्रन्थों को पढ़लेगा फिर इसके पीछे पतञ्जलि मुनि का किया महाभाष्य जिसमें अष्टाध्यायादिक चार ग्रन्थों की यथा-वत् व्याख्या है बहुत से वार्तिक सूत्र हैं सूत्रों के ऊपर और अनेक परिभाषा हैं अनेक प्रकार के शास्त्रार्थ शङ्का और समा-धान हैं उसको यथावत् पढ़ले उसको पढ़लेगा तब सब व्याकरण शास्त्र उसका पूर्ण हो जायगा वह सच्चा वैयाकरण कहावेगा फिर विद्वान् संज्ञा भी उसकी हो जायगी सो अठारह १८ महीने में सब महाभाष्य का पढ़ना संपूर्ण हो जायगा ऐसे मिलके ३ वर्ष तक व्याकरण शास्त्र संपूर्ण होगा उसके संपूर्ण पठन होने से अन्य सब शास्त्रों का पढ़ना सुगम हो जायगा इसमें कोई सज्जन को शङ्का मत हो कि यह बात सत्य नहीं है किन्तु इस प्रकार से पढ़ना और पढ़ाना देख तीन ३ वर्ष में संपूर्ण व्याकरण को पढ़ें और पूर्ण न होय तब शङ्का करनी चाहिये पहिले जो शङ्का करनी सो व्यर्थही है इससे जिन पुरुषों का बड़ा भाग्य होगा वेही इस रीति में प्रवृत्त होंगे और उनको शीघ्र विद्या भी हो जायगी वे बहुत सुख पावेंगे और जो भाग्यहीन हैं वे तो सुख की रीति को कभी न मानेंगे

व्याकरण के नाम से जो जाल रूप कौमुद्यादिक ग्रन्थ चन्द्रिका सारस्वतादिक और मुग्धबोधादिकों के ५० वर्ष तक पढ़ने से भी वैसा बोध नहीं होता है जैसे हजार गुणा अष्टाध्यायादिक सत्य ग्रन्थों के पढ़ने से तीन वर्ष में ही बोध हो जाता है इसमें विचार करना चाहिये कि सत्य ग्रन्थों के पढ़ने में बड़ा लाभ होता है वा मिथ्या जाल रूप ग्रन्थों के पढ़ने में जालरूप ग्रन्थों के पढ़ने से कुछ भी लाभ नहीं होगा क्योंकि जाल रूप ग्रन्थों में इस प्रकार का व्यर्थ विवाद लिखा है उसको पढ़ाने और पढ़ने वाले भी वैसे ही हठी, दुराग्रही और विरुद्धवादी होते ऐसेही देख भी पड़ते हैं क्योंकि जैसा ग्रन्थ पढ़ेगा वैसीही बुद्धि उसकी होगी इस प्रकार का बड़ा एक जाल बनाया है कि मरण तक एक शास्त्र भी पूर्ण नहीं होता उसको अन्य शास्त्र पढ़ने का अवकाश कैसे होगा कभी न होगा एक शास्त्र के पढ़ने से मनुष्य की बुद्धि संकुचितही रहती है विस्तृत कभी नहीं होती सब दिन उसकी शंकाही बनी रहती है सब पदार्थों का निश्चय कभी नहीं होता और जो व्याकरण का पढ़ना है सो तो वेदादिक अन्यशास्त्रों के पढ़ने केही लिये है और यह एक व्याकरणही में वाद विवाद करता २ मर जायगा तब हाथ में उसके कुछ भी न आवेगा इससे सब सज्जन लोगों को ऋषि मुनियों की पठन पाठन की जो रीति है उसी में चलना चाहिये जाल्मी लोगों की रीति में कभी नहीं क्योंकि आदि सृष्टि से मनुष्यों के बीच में कपिलादिक ऋषि मुनि जितने भये हैं वे बड़े विद्वान् और बड़े धर्मात्मा पुरुष भये हैं उनके सहस्रांश में भी इस समय जो आर्यावर्त्त में मनुष्य हैं वे बुद्धि, विद्या और धर्माचरण में नहीं देख पड़ते इस लिये उनका आचरण हम लोगों को करना उचित है कि उसी से आर्यावर्त्त के लोगों की उन्नति होगी अन्यथा कभी नहीं व्याकरण की रीति

वर्ष तक सम्पूर्ण पढ़के कात्यायनादि मुनि कृत जो कोश यास्क मुनिकृत जो निघण्टु और यास्क मुनिकृत निरुक्त को पढ़ें और पढ़ावें उसमें अव्ययार्थ एकार्थ कोश और अनेकार्थ कोश नाम और नामियों का आख्यातों के लिये सनातन से जो सम्बन्ध है वेद वर्ष के बीच में उसका ज्ञान होजायगा उसके पीछे पिङ्गल मुनि के किये जो छन्दों के सूत्र भाष्य सहित को पढ़ें पीछे यास्कमुनि के किये काव्यालङ्कार सूत्र और उसके ऊपर वात्स्यायन मुनि के भाष्य को पढ़ें उससे गायत्र्यादिक छन्दों का काव्य अलङ्कार और श्लोक रचने का भी यथावत् ज्ञान छः मास में होजायगा और अमर कोशादिक जो कोश ग्रन्थ और श्रुतबोधादिक जो छन्दो ग्रन्थ वे सब जाल ग्रन्थ हैं इनके दश वर्ष के पढ़ने से जो बोध नहीं होता सो उक्त निरुक्तादिक सत्यशास्त्रों के पढ़ने से दो वर्ष में होगा इससे इनका ही पढ़ना और पढ़ाना उचित है इसके पीछे पूर्व मीमांसा शास्त्र को पढ़ें जो कि जैमिनि मुनि के किये सूत्र हैं उनके ऊपर व्यासमुनि जी की अधिकरणमाला व्याख्या के सहित पढ़ें चार मास के बीच में पढ़ लेगा और इसी शास्त्र के साथ मनुस्मृति को पढ़ें सो एक मास में मनुस्मृति को पढ़ लेगा उसके पीछे वैशेषिकदर्शन जो कि कणादमुनि के किये सूत्र हैं उसके ऊपर गोतममुनि जी का किया जो प्रशस्तपादभाष्य और भरद्वाज मुनि के किये सूत्रों की वृत्ति के सहित को पढ़ें उसके पढ़ने में दो मास जायगे उसके पीछे न्यायदर्शन जो कि गोतममुनि के किये सूत्र उनके ऊपर वात्स्यायन मुनि का किया भाष्य उसको पढ़ें इसके पढ़ने में चार मास जायगे इसके पीछे पातञ्जल दर्शन नाम योगशास्त्र जो कि पतञ्जलि मुनि के किये सूत्र उसके ऊपर व्यासमुनि जी का किया भाष्य इसको एक मास में पढ़ लेगा उसके पीछे सांख्यदर्शन जो कि कपिलमुनि के किये सूत्र उनके ऊपर भागुरि

मुनि का किया भाष्य इसको भी एक मास में पढ़ लेगा इस के पीछे ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, और बृहदारण्यक इन दश उपनिषदों को पांच महीने के बीच में पढ़ लेगा और इस के पीछे वेदान्तदर्शन को पढ़ें जो कि व्यास मुनि के किये सूत्र उन के ऊपर वात्स्यायन मुनि का किया भाष्य अथवा बौधायन मुनि का किया भाष्य वा शङ्कराचार्य जी का किया भाष्य पढ़ें जब तक बौधायन और वात्स्यायन मुनि का किया भाष्य मिले तब तक अन्य भाष्य को न पढ़ें इस को छः मास में पढ़ लेगा इनको छः शास्त्र कहते हैं इनके पढ़ने में दो वर्ष काल अथवा दो वर्ष के बीच में सब पदार्थ विद्या पुरुष को यथावत् आवैगी और इन के विषय में बहुत से जाल ग्रन्थ लोगों ने रचे हैं जैसे कि पाराशर स्मृत्यादिक १७ सत्तरह पूर्व मीमांसा शास्त्र के विषय में जालग्रन्थ लोगों ने रचे हैं तथा वैशेषिकदर्शन और न्यायदर्शन के विषय में तर्कसंग्रह, न्यायमुक्तावली, जगदीशी, गदाधरी, और मथुरानाथी इत्यादिक जाल ग्रन्थ लोगों ने रचे हैं ऐसे ही योगशास्त्र के विषय में हठप्रदीपिकादिक मिथ्या ग्रन्थ लोगों ने रचे हैं तथा सांख्य शास्त्र के विषय में सांख्यतत्त्वकौमुद्यादिक जाल ग्रन्थ लोगों ने रचे हैं और वेदान्तशास्त्र के विषय में पञ्चदशी, वेदान्त, संज्ञा, वेदान्तमुक्तावली, आत्मपुराण, योगवाशिष्ठ और पूर्वोक्त दश उपनिषदों को छोड़ के गोपालतापिनी, नृसिंहतापिनी, रामतापिनी और अल्लोपनिषत् इत्यादिक बहुत उपनिषद् जाल ग्रन्थ लोगों ने रचे हैं ये सब सज्जनों को त्याग करने के योग्य हैं इन जाल ग्रन्थों में जो कुछ सत्य है सो सत्य शास्त्रों ही का विषय है उसका लिखना ग्रन्थान्तर में अयुक्त है क्यों कि जो सत्य शास्त्रों में लिखा ही है उसका फिर लिखना व्यर्थ है जैसे कि पीसे भये पिसान को फिर पीसना वैसा ही यह है

किन्तु विज्ञान भी उड़ जायगा तथा सत्य शास्त्रों की बात भी उनके हाथ से उड़ जायगी और जो सत्यशास्त्रों से विरुद्ध बात है सो तो कपोल कल्पित मिथ्या ही है इससे इनका पढ़ना और पढ़ाना निष्फल ही जानना चाहिये इससे कुछ फल न होगा और जो कोई पढ़ता है वा पढ़ेगा एक शास्त्र को मरण तक भी बुद्धि न होगी और कुछ बोध भी उसको न होगा इससे सज्जन लोगों को सत्यशास्त्रों ही का पढ़ना और पढ़ाना उचित है जाल ग्रन्थों का कभी नहीं पूर्व पक्ष छः शास्त्रों में भी अन्योन्यविरोध और परस्पर खण्डन देख पड़ता है एक का दूसरे से दूसरे का तीसरे से ऐसा ही सर्वत्र है जैसा कि जाल ग्रन्थों में एक शास्त्र के विषय में बहुत सी परस्पर विरुद्ध टीका और मूल ग्रन्थ हैं वैसा ही विरोध सत्यशास्त्रों में भी देख पड़ता है जो दोष आप ने जाल ग्रन्थों में दिया वही दोष सत्यशास्त्रों में भी आया फिर सत्य-शास्त्रों का पढ़ना और जाल ग्रन्थों का न पढ़ना आप कहते हैं इसमें क्या प्रमाण है उत्तर कि यह आप लोगों को जाल ग्रन्थों के पढ़ने और सुनने से भ्रान्ति हो गई है कि सत्य शास्त्रों में भी विरोध और परस्पर खण्डन है यह बात आप लोगों की मि-थ्या ही है देखना चाहिये कि आज काल के लोग टीका वा ग्रन्थ रचते हैं सो द्वेष बुद्धि ही से रचते हैं कि अपनी बात मिथ्या भी होय तो भी सत्य कर देते हैं जब सब लोग उस को कहते हैं कि वह बड़ा पण्डित है इस प्रकार के जो धूर्त मनुष्य हैं वेही टीका वा ग्रन्थ रचते हैं उन में इसी प्रकार की मिथ्या धूर्तता रखते हैं उनको जो पढ़ता है वा पढ़ाता है उस की भी बुद्धि वैसी ही भ्रष्ट हो जाती है सो मिथ्या वादों में ही प्रवृत्त होता है और सत्य वा असत्य का विचार कभी नहीं करता उस को तो यही प्रयोजन रहता है कि दूसरे की सत्य बात को भी खण्डन करके अपनी मिथ्या बात को मण्डन करके जिस किस प्रकार

से दूसरे का पराभव करना अपना विजय करलेना उस्से प्रतिष्ठा करना और धन लेना पीछे विषय भोग करना यही आज काल के पण्डितों की तुच्छबुद्धि और सिद्धान्त हो गया है इस प्रकार के किरानी मौलवी और पादरी लोग भी देखने में आते हैं पण्डितादिकों में कोई जो सत्य कथन करै तब वे सब मूर्ख लोग उस्से विरोध करते हैं उसका नाम नास्तिक रखते हैं और उनसे सब दिन विरोधही रखते हैं, क्योंकि उनकी बुद्धि वैसीही है इस दोष के होने से सत्य शास्त्रों का जो यथावत् अभिप्राय है उसको जानते भी नहीं इस्से वे कहते हैं कि सत्यशास्त्रों में भी परस्पर विरोध है परन्तु मैं आप लोगों से कहता हूं कि छः शास्त्रों में लेशमात्र भी परस्पर विरोध नहीं है क्योंकि इनका विषय भिन्न २ है और जो विरोध होता है सो एक विषय में परस्पर विरुद्ध कथन के होने से होता है जैसे कि एक ने कहा गन्धवाली जो होती है सो पृथ्वी कहाती है इसी विषय में दूसरे ने कहा कि नहीं जो रस वाली होती है सोई पृथिवी होती है क्योंकि पृथिवी में क्षार मिष्टादिकरस प्रत्यक्ष देख पड़ते हैं इस प्रकार के विषय को विरोध जानना चाहिये और जो ऐसा कहै कि गन्धवाली जो पृथिवी होती है और रसवाला जल होता है सो एक तो पृथिवी के विषय में व्याख्या करता है और दूसरा जल के विषय में दोनों का विषय भिन्न होने से व्याख्या भी भिन्न होगी परन्तु उसका नाम विरोध नहीं जैसे कि किसी ने ज्वर के विषय में चिकित्सा निदान औषध और पथ्य को लिखा और दूसरे ने कफ के विषय में चिकित्सादिक लिखें उसको विरोध नहीं कहना चाहिये वैसाही षट् शास्त्रों के विषय और भी सब वेदादिक शास्त्रों के विषय में जानना चाहिये जैसे कि धर्मशास्त्र नाम पूर्व मीमांसा में धर्म और धर्मी दो पदार्थों को मानते हैं और कर्मकाण्ड जो कि वेदोक्त है

संध्योपासन से लेके अश्वमेध पर्यन्त कर्मकाण्ड कहा है अब इसमें आकाङ्क्षा होती है कि धर्म और धर्मी किसको कहते हैं तब इसी की वैशेषिक दर्शन में स्पष्ट व्याख्या की है कि जो द्रव्य है सो तो धर्मी है और गुणादिक सब धर्म हैं फिर भी आकाङ्क्षा होती है कि गुण को क्यों नहीं द्रव्य और द्रव्य को क्यों नहीं गुण कहते उसका विचार न्यायदर्शन में किया है कि जिन प्रमाणों से द्रव्य गुणादिक सिद्ध होते हैं उनको द्रव्य और उन्हीं को गुण मानना चाहिये सो दोनों शास्त्रों के श्रवण नाम सुनना और मनन नाम उसी का विचार करना इस बात तक लिखा उससे आगे जितने पदार्थ अनुमान से सिद्ध होते हैं उनके प्रत्यक्ष से जैसा तीन शास्त्रों में कहा है वैसा ही है अथवा नहीं उसको विशेष विचार से और योगाभ्यास से उपासना काण्ड जो कि चित्तवृत्ति के निरोध से लेके कैवल्य पर्यन्त उपासना काण्ड कहाता है उसकी रीति योगशास्त्र में लिखी है जो देखना चाहै सो उस में देख लेवै तब के तत्त्व का यथावत् जानना चाहिये इस लिये सांख्यशास्त्र है फिर कितने भूत और तत्त्व हैं सो भी भिन्न २ गणना और वैसा ही निश्चय का होना इस लिये सांख्य शास्त्र का आवश्यक रचन हुआ इन पांच शास्त्रों का महाप्रलय तक व्याख्यान है जिस में कि स्थूल भूतों का नाश होता है और सूक्ष्मों का नहीं फिर इन्हीं सूक्ष्म भूतों से जैसी उत्पत्ति स्थूल की होती है और जिस प्रकार से प्रलय होता है यह बात सब लिखी है महाप्रलय तक परमाणु और प्रकृत्यादिक सूक्ष्म भूत बने रहते हैं उनका नाश नहीं होता फिर कार्य और परम कारण का विचार वेदान्त शास्त्र में किया कि सब प्रकृत्यादिक भूतों का एक अद्वितीय अनादि परमेश्वर ही कारण है और परमेश्वर से भिन्न सब कार्य हैं क्योंकि परमेश्वर ही में सब

प्रकृत्यादिक सूक्ष्म भूत रचे हैं सो परमेश्वर के सामने तो संसार सब आदि है और अन्य जीवों के सामने अनादि परमाणु प्रकृत्यादिक भूत भी अनित्य हैं क्यों कि परमाणु और प्रकृति इनका ज्ञान अनुमान से होता है वैसा नाश भी अनुमान से हम लोग जान सक्ते हैं परमेश्वर तो सब जगत का रचने वाला है अन्य ब्रह्मादिक देव और सब मनुष्य शिल्पी हैं। क्यों कि नवीन पदार्थ रचने का किसी का सामर्थ्य नहीं है बिना परमेश्वर के जगत् का रचने वाला कोई नहीं है जो वेदान्त शास्त्र में ज्ञान काण्ड का निश्चय किया है जो कि निष्काम कर्म से लेके परमेश्वर की प्राप्ति पर्यन्त ज्ञानकाण्ड है निष्काम कर्म यह है कि परमेश्वर की प्राप्ति जो मोक्ष उसके बिना भिन्न फल कर्मों से नहीं चाहना सो निष्काम कर्म कहाता है इससे विचारना चाहिये कि षट्शास्त्रों में कुछ भी विरोध नहीं है किन्तु परस्पर सहायकारी शास्त्र हैं सब शास्त्र मिलके सब पदार्थ-विद्या छः शास्त्रों में प्रकाश कर दी है और इतर जो शास्त्र पुस्तक हैं उन में केवल विरोध ही है उनका पढ़ना और पढ़ाना व्यर्थ ही है किन्तु सत्य शास्त्रों के पठन न होने से और जाल ग्रन्थों के पढ़ने से आर्यावर्त्त देश के लोगों की बड़ी हानि हो गई है इससे सज्जन लोगों को ऐसा करना उचित है कि आज तक जो कुछ भ्रष्टाचार भया सो भया इससे आगे हम लोगों के ऋषि मुनि और श्रेष्ठ राजा लोग जो कि पहिले भये थे उन की जो मर्यादा और वेदादिक सत्यशास्त्रोक्त जो मर्यादा उसी पर चलने से और सब पाखण्डों के छोड़ने ही से आर्यावर्त्त देश की बड़ी उन्नति होगी अन्य प्रकार से कभी न होगी इन सब शास्त्रों को पढ़के ऋग्वेद को पढ़ें उसका आश्वलायनकृत जो श्रौत सूत्र [illegible] जो ऋग्वेद का ब्राह्मण और कल्पसूत्र इन के साथ २ मन्त्रों का अर्थ पढ़ें और स्वर को भी पढ़ें सो ठीक ठीक

के भीतर सब ऋग्वेद को पढ़ लेगा तथा यजुर्वेद की संहिता उस के साथ २ कात्यायन श्रौतसूत्र, तथा गृह्यसूत्र तथा शतपथ ब्राह्मण स्वर अर्थ और हस्तक्रिया के सहित यथावत् पढ़ैं डेढ़ वर्ष तक यजुर्वेद को पढ़ लेगा इस के पीछे सामवेद को पढ़ैं गोभिल श्रौतसूत्र तथा द्राह्यायनश्रौतसूत्र और कल्पसूत्र साम ब्राह्मण तथा गोभिल द्राह्यायन गृह्यसूत्र के साथ २ पढ़ैं दो वर्ष में सब सामवेद को पढ़लेगा इस के पीछे अथर्ववेद को पढ़ैं शौनकश्रौतसूत्र, शौनकगृह्यसूत्र, अथर्वब्राह्मण और कल्पसूत्र के साथ २ सो एक वर्ष में पढ़लेगा ऐसे साढ़े छः वा सात वर्ष में चारो वेदों को पढ़लेगा चारों वेदों की जो संहिता है उन्हीं का नाम वेद है फिर उन्हीं वेदों की जितनी अन्य २ शाखा हैं वे सब वेदों के व्याख्यान हैं बिना पढ़े सब विचार मात्र से आजांयगी तथा आरण्यक बृहदारण्यकादिक व्याख्यान हैं उनको भी विचार करने से जानलेगा चारों वेदों को पढ़ के आयुर्वेद को पढ़ैं जो कि ऋग्वेद का उपवेद है उसमें धन्वन्तरिकृत निघण्टु, चरक और सुश्रुत इन तीनों ग्रन्थों को शस्त्रक्रिया, हस्तक्रिया और निदानादिक विषयों को यथावत् पढ़ैं सो तीन वर्ष में पढ़लेगा और वैद्यकशास्त्र के विषय में शार्ङ्गधरादिक भाषा ग्रन्थों को पढ़ना और पढ़ाना व्यर्थही जानना इसके पीछे यजुर्वेद का जो उपवेद धनुर्वेद उस को पढ़ैं उसमें शस्त्र विद्या जो कि शस्त्रों का रचना और शस्त्रों का चलाना और अस्त्र विद्या जो कि आग्नेयास्त्रादिक पदार्थ गुणों से होते हैं उनको यथावत् रच लेना धनुरादिक शस्त्रों के विषयों का विस्तार राजधर्म में लिखेंगे और युद्ध समय में व्यूह की रचना यथावत् जान लेवैं जैसे कि सूची व्यूह सूई का अग्र भाग तो बहुत सूक्ष्म होता है और उस अग्र भाग से पछिले २ स्थूल होता है उससे सूत स्थूल होता है इसी प्रकार से सेना

जैसे स्वपक्ष शत्रु की सेना वा दुर्ग वा नगर में प्रवेश करैं तब उनके विजय का संभव होता है ऐसा ही शकटव्यूह, मकरव्यूह और गरुड़व्यूहादिकों को जान लेवे उसको दो वा तीन वर्ष में पढ़लेगा उसके आगे सामवेद का जो उपवेद गान्धर्व वेद उसको पढ़ै उसमें वादित्रराग, रागिणी, काल-ताल स्वर पूर्वक गान विद्या का अभ्यास करै दो वर्ष में उसको पढ़लेगा इसके आगे अथर्ववेद का जो उपवेद अर्थवेद नाम शिल्पशास्त्र उसमें नाना प्रकार कला यन्त्र और नाना प्रकार के द्रव्यों को मिलाने से नाना प्रकार व्यवहारों के यानों की और दूरवीक्षण, अणुवीक्षण, नाम दूरस्थित पदार्थों को निकट देखें और अणुवीक्षण नाम सूक्ष्म पदार्थ भी स्थूल देख पड़ें इत्यादिक पदार्थों को रचले जैसे कि अग्नि का ऊर्ध्वगमन स्वभाव है और जल का नीचे जाने का स्वभाव है सो किसी पात्र में जल को करके चूल्हे के ऊपर रक्खे और उसके नीचे अग्नि करै फिर जलनेकी भाफ वाले पात्र से उस पात्र का मुख बन्द करै जब अग्नि से जल ऊपर चढ़ेगा तब इतना बल होजायगा कि ऊपर का पात्र नाचने लगेगा वा गिर पड़ेगा इसी प्रकार से पदार्थों के अनुकूल गुणों को और विरुद्ध गुणों को जानने से पृथिवीयान, जलयान और आकाश यानादिक पदार्थों को रच लेगा जैसे कि महाभारत में उपरिचरवसु राजा इन्द्रादिक देव तथा राम लङ्का से अयोध्या को आकाश मार्ग से आया उपरिचरादिक राजालोग और इन्द्रादिक देव वे भी आकाश मार्ग से जाते और आते थे तथा जैसे कि आज काल अंगरेज लोगों ने रेल तारादिक बहुत से पदार्थ रचे हैं वे सब शिल्पशास्त्र के विषय हैं और इनसे बहुत से उपकार हैं उसको भी तीनवर्ष में पढ़लेगा पढ़ के पीछे अपनी बुद्धि से बहुत सी शिल्प विद्या की उन्नति करलेगा पीछे ज्योतिश्शास्त्र को पढ़ै इसमें

गणित विद्या यथावत् जानै उससे पढ़ै। जो अधिकार होता है तो दो तीन वर्ष में उसको पढ़ लेगा और ज्योतिषशास्त्र में जो फल विषय है सो व्यर्थ ही है भृग्वादिक ऋषियों के किये सूत्र और भाष्यों को पढ़ें मुहूर्त्त चिन्तामण्यादिक जालग्रन्थों को कभी न पढ़ें इस प्रकार से साढ़े २७॥ वा २८ वर्ष तक पढ़ लेगा संपूर्ण विद्या उसको आजन्म फिर उसको पढ़ने की आवश्यकता कुछ न रहेगी सब विद्याओं से वह पूर्ण होके पुरुषों में पुरुषोत्तम होजायगा और उसके शरीर से संसार में बहुत उपकार होगा क्योंकि जैसे उत्तम विद्या को पढ़ा है वैसी पढ़ानेहारे से जैसा मनुष्यों का उपकार होता है वैसा किसी प्रकार से नहीं होता ऐसे २६ वर्ष की जब आयु होगी तबतक पुरुषों को विद्या भी पूर्ण हो जायगी और जो पुरुष ४०, ४४, और ४८ वर्ष तक ब्रह्मचर्य रक्खेगा उस पुरुष के आनन्द और सुख को हम कोई नहीं कह सकते कि कितना होगा जिस देश में राज्याभिषेक जिसका होना योग्य होय तो सब विद्या से युक्त होवै और ३६, ४०, ४४ वा ४८ वर्षतक अवश्य ब्रह्मचर्य भी करै उसी का राजा होना उचित है क्योंकि जितने उत्तम व्यवहार हैं वे सब राजाओं के आधीन हैं और सब दुष्ट व्यवहारों का बंध करना सो भी राजाओं के आधीन है इससे राजा और धनाढ्य लोगों को तो अवश्य सब विद्या पढ़नी चाहिये क्योंकि जो वे सब विद्याओं को जो न पढ़ेंगे तो अपने शरीर की भी रक्षा न कर सकेंगे फिर धर्मशास्त्र और धर्म की रक्षा तो कैसे करेंगे और जितने अन्य लोग हैं वे भी पूर्वोक्त व्याकरण, धर्मशास्त्र, वैद्यकशास्त्र, गानविद्या और शिल्पशास्त्र इन पांच शास्त्रों को तो अवश्य पढ़ें और जो अधिक पढ़ें तो उनका सौभाग्य बड़ा होगा १६ वर्ष से न्यून ब्रह्मचर्य कन्या लोग कभी न करें और जो १८, २० वा २४ वर्षतक ब्रह्मचर्याश्रम करेंगी तो उनको

अधिक २ सौभाग्य और सुख होगा जबतक स्त्री और पुरुष लोग जवानी तक ब्रह्मचर्य से विद्या प्राप्त न करेंगे तो उनका अभाग्य और दुःखही जानना परस्पर स्त्री और पुरुषों का विरोध और भ्रान्ति होगी जिन व्यवहारों से सुख प्राप्त होती है उनको भी न जानेंगे सर्वदा दीन रहेंगे और प्रमाद से धनादिकों का नाश करेंगे कहीं प्रतिष्ठा और आजीविका भी उनकी न होगी परस्पर व्यभिचारी होंगे इससे वीर्य का नाश होगा फिर बहुत से शरीर में रोग होंगे रोगों से सदा पीड़ित रहेंगे वे मूर्ख होंगे इससे कभी सुख न पावेंगे इससे सब स्त्री और पुरुष लोग सब पुरुषार्थ से अवश्य विद्यादि को पढ़ें इससे मनुष्यों को अधिक लाभ कोई नहीं है क्योंकि आपद अपना जितेन्द्रिय, रक्षक, धर्मग्राहक और अधर्म त्याग करनेवाला होता है इससे बड़ा कोई लाभ नहीं है विद्या के पढ़ने और पढ़ाने में जितने विघ्न रूप व्यवहार हैं उनको जब तक मनुष्य नहीं छोड़ेगा तब तक उसको विद्या कभी नहीं होगी प्रथम विघ्न बाल्यावस्था में जो विवाह का करना सोई बड़ा विघ्न है क्योंकि शीघ्र विवाह करने से विषयी होगा और विषयही की चिन्ता करेगा शरीर में धातु पुष्ट तो होंगे नहीं और सब धातुओं का सार जो कि सब धातुओं का राजा वह है जैसा कि दीपक प्रकाशक होता है जैसा ब्रह्माण्ड में सूर्य प्रकाशक है वैसाही शरीर में वीर्य है इस अपरिपक्व वीर्य और अत्यन्त वीर्य के नाश से बुद्धि, बल पराक्रम, तेज और धैर्य का नाश हो जाता है आलस्य, शोक, क्रोध और दुर्बुद्धि इत्यादि ये सब दोष उसमें हो जाते फिर कैसे उसको विद्या हो सकती है कभी न होगी क्योंकि जितेन्द्रिय, धैर्यवान्, बुद्धिमान्, शीलवान्, विचारवान् जो पुरुष होता है उसी को विद्या होती है अन्य को नहीं इससे ब्रह्मचर्य का आरम्भ करना उचित है-दूसरा विघ्न का

नाशक विघ्न पाषाणादिक मूर्तिपूजन, कर्ण मुद्र, त्रिपुंड्रादिक तिलक, एकादशी, त्रयोदश्यादिक व्रत, काश्यादिक तीर्थों में निवास, राम, कृष्ण, नारायण, शिव, भगवती और गणेशादिक नामों से पाप नाश होने का विश्वास यह सब विद्या धर्म और परमेश्वर की उपासना का बड़ा भारी विघ्न है क्योंकि विद्या का फल यही है कि परमेश्वर की आज्ञा का पालन करना जो कि धर्म रूप है परमेश्वर को यथावत् जानना मुक्ति का होना यथावत् व्यवहार और परमार्थ का धर्म से अनुष्ठान करना यही विद्या होने का फल है सोई फल मिथ्या बुद्धि से पाषाणादिक मूर्ति में और तिलकादिकों ही में मान लेते हैं और सम्प्रदायी लोग मिथ्या उपदेश करके धूर्तता और अधर्म का निश्चय करा देते हैं पीछे वे सम्प्रदायी लोग ऐसे कहते और उन के चेले सुनते हैं कि मूर्ति पूजादिक प्रकार ही से आप लोगों की मुक्ति होगी यही परम धर्म है ऐसा सुन के उन विद्याहीन मनुष्यों को निश्चय हो जाता है कि यही बात सत्य है सब कहने और सुनने वाले वैसे हैं जैसे कि पशु हैं वे ऐसा भी कहते हैं कि सम्प्रदायी और नाममात्र के जो पण्डित लोग आजीविका के लोभ से यही बात वेद में लिखी है ऐसी बात कहने वाले और सुनने वालों ने वेद का दर्शन भी कभी नहीं किया वेद में इन बातों का सम्बन्ध लेशमात्र भी नहीं है परन्तु अन्ध परंपरा की नाईं कहते और सुनते चले जाते हैं उन को सुख वा सत्य फल कुछ भी नहीं होता क्योंकि बाल्यावस्था से लेके यही मिथ्याचार करते रहते हैं कि इन का दर्शन अवश्य करें और तिलक माला धारण करें काश्यादिक तीर्थों में जाके वास करें और नाम स्मरण करें एकादश्यादिक व्रत करें और पुष्प ले आवें चन्दन घसें धूप दीप करें नैवेद्य धरें परिक्रमा करें पाषाणादिक मूर्ति का प्रक्षालन करके जल ग्रहण करें और कूदें नाचें

कूदैं और बाजे बजावैं रथ यात्रादिकों का मेला करैं और परस्पर व्यभिचार करैं मेले में उन्मत्तवत् होके घूमते घुमाते इत्यादिक मिथ्या व्यवहारोंही में फसे रहते हैं फिर उनको विद्या लेशमात्र भी न आवैगी क्योंकि मरणपर्यन्त उनको अवकाशही न मिलेगा फिर कैसे वे पढ़ें और पढ़ावेंगे यह विद्या का नाशक दूसरा विघ्न यह है तीसरा विघ्न यह है कि माता, पिता और आचार्यादिक पुत्र और कन्याओं को लाड़न में ही रखते हैं कुछ शिक्षा वा ताड़न नहीं करते इसमे भी विद्या का नाश ही होता है चौथा विघ्न यह है कि गुरु, पण्डित और पुरोहित ये तीनों विद्या तो पढ़ते नहीं फिर वे हृदय से यही चाहते हैं कि मेरे चेले और मेरे यजमान मूर्खही बने रहैं क्योंकि वे जो पण्डित हो जायगे तो हम लोगों का पाखण्ड उनके सामने न चलेगा इससे हम लोगों की आजीविका नष्ट हो जायगी इस लिये वे सदा पढ़ने पढ़ाने में विघ्न ही करते हैं धनाढ्य और राजा लोगों के ऊपर अत्यन्त विघ्न करते हैं कि ये लोग विद्याहीन बने रहैं इनसे हम लोगों की आजीविका बड़ी है धनाढ्य और राजा लोग भी आलस्य और विषय सेवा में फस जाते हैं इससे वे भी पढ़ना नहीं चाहते धनाढ्य वा राजपुत्र पढ़ना भी चाहैं तो गोसांई आदि सम्प्रदायी और पण्डित लोग छल और कपट रखते हैं यथावत् पढ़ाते भी नहीं यहां तक वे छल और विघ्न करते हैं कि चेला और पुत्र वा कन्यापुत्र भी विद्यावान् न हो जाय क्योंकि उनकी प्रतिष्ठा होने से मेरी प्रतिष्ठा नष्ट हो जायगी इससे जो कुछ गुण जानते भी हैं उस को छिपा रखते हैं इस लिये विद्या लोप आर्यावर्त्त देश से होगया है सर्व लोगों को विद्या का प्रकाश करना उचित है किसी को भी विद्या गुप्त रखना योग्य नहीं और पांचवां विघ्न यह है कि भङ्गपान, अफीम और मद्यपान करने से बहुत सा प्रमाद

होता है और बुद्धि भी नष्ट होजाती है इससे भी विद्या का नाश होता है दूसरा विघ्न यह है कि राजा और धनाढ्य लोगों का बाग, मन्दिर, खेतों में सदाव्रत, विहार, अपो-उपाश्रय, धर्मस्थान, और बागों के बनाने में बहुत धन नष्ट होजाता है किन्तु गृहस्थ लोगों को जितना आवश्यक हो उतनाही स्थान रक्खें निर्वाह मात्र विद्या प्रचार से किसी का धन नहीं जाता और विचार के न होने से गुणवान पुरुषों की प्रतिष्ठा भी नहीं होती किन्तु पाखण्डों ही की हो होती है इससे मनुष्यों का उत्साह भङ्ग होजाता है सातवां विघ्न यह है कि पांचवें वर्ष पुत्रों वा कन्याओं को पाठशाला में पढ़ने के लिये नहीं भेजते उनके ऊपर राजा का दण्ड न होने से भी विद्या का नाश होता है और विषय सेवा में अत्यन्त फसजाते हैं इससे भी विद्या नहीं होती यह आठवां विघ्न विद्या का नाशक है इत्यादिक और भी विद्या नाश करने के विघ्न बहुत हैं उनको सज्जन लोग विचार करलेवें जब सोलह वर्ष का पुरुष होय तब से लेके जबतक वृद्धावस्था न आवै तबतक व्यायाम करें बहुत न करें किन्तु ५० दण्ड करें और ३० वा ४० मुग्दर करें कुछ भीत खम्भे वा पुरुष से बल करें फिर लोट करें उस को भोजन से एक घण्टा पहिले करें जब अभ्यास जब करचुके उससे एक घण्टा पीछे भोजन करें परन्तु दूध जो पीना होय तो अभ्यास के पीछे थोड़ाही पीवे उसके शरीर में रोग न होगा जो कुछ खाया वा पीया सो सब परिपक्व हो जायगा सब धातुओं की वृद्धि होती है तथा वीर्य की भी अत्यन्त वृद्धि होती है शरीर दृढ़ होजाता है और इन्द्रियां सबी पुष्ट होजाती हैं जाठराग्नि शुद्ध प्रदीप्त रहता है और सन्धि से सन्धि हाड़ों की मिली रहती हैं अर्थात् सब अङ्ग सुन्दर रहते हैं परन्तु अधिक न करना अधिक के करने से उसके गुण न होवें क्योंकि सब धातु शुष्क

और रूक्ष हो जाते हैं उससे बुद्धि भी वैसे रूक्ष होजाती है और कामादिक भी बढ़ते हैं इससे अधिक न करना चाहिये यह बात सुश्रुत में लिखी है जो देखना चाहै सो देख लेवे इन बालकों के हृदय में वीर्य के रक्षण से जितने सुख लिखे हैं इस पुस्तक में और जितने दोष लिखे हैं वे सब माता पिता और आचार्यादिक निश्चय पढ़ा के करा देवें जैसे कि वीर्य की रक्षा में सुख लाभ होता है उसका हजारवां अंश भी विषय भोग में वीर्य के नाश करने से नहीं होता परन्तु जैसा निश्चय शास्त्रों में कहा है उसका कुछ अंश इसमें भी लिखा है इस प्रकार से जो वीर्य की रक्षा करेगा उसको बहुतसा सुख होगा जो प्रमाद और भांग आदिक नशा करेगा वह पागल भी होजाय तो आश्चर्य नहीं इससे युक्ति पूर्वक विद्या और बल से ही वीर्य की रक्षा करनी चाहिये अन्यथा वीर्य की रक्षा कभी न होगी जब वीर्य की रक्षा न होगी तब विद्या भी न होगी जब विद्या न होगी तब कुछ भी सुख न होगा उसका मनुष्य शरीर धारण करनाही वृथा होजायगा । सैषानन्दस्य मीमांसा भवति युवा-स्यात्साधुयुवाध्यायक आशिष्ठो द्रढिष्ठो बलिष्ठः तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्य पूर्णा स्यात् स एको मानुष आनन्दः श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ते ये शतं मानुषा आनन्दाः स एको मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दः श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दाः स एको देवगन्धर्वाणामानन्दः श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ते ये शतं देवगन्धर्वाणामानन्दाः स एकः पितॄणां चिरलोकलोकानामानन्दः श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ते ये शतं पितॄणां चिरलोकलोकानामानन्दाः स एक आजानजानां देवानामानन्दः श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ते ये शतमाजानजानां देवानामानन्दाः स एकः कर्मदेवानामानन्दः ये कर्मणा देवानपियन्ति श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ते ये शतं कर्मदेवानामानन्दाः स एको देवानामानन्दः श्रोत्रियस्य चाका

महतस्य तेयेशतंदेवानामानन्दाः सएकइन्द्रस्यानन्दः श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य तेयेशतमिन्द्रस्यानन्दाः सएकोबृहस्पतेरानन्द श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य तेयेशतंबृहस्पतेरानन्दाः सएकः प्रजापतेरानन्दः श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य तेयेशतंप्रजापतेरानन्दाः सएकोब्रह्मणआनन्दः श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य सयश्चायंपुरुषेयश्चासावादित्येसएकः ॥ यह तैत्तिरीयोपनिषद् की श्रुति है सो देखना चाहिये कि जैसा विद्या से आनन्द होता है वैसा कोई प्रकार से आनन्द नहीं होता इसमें इस श्रुति का प्रमाण है युवावस्था हो साधु युवा नाम उसमें कोई दुष्ट व्यसन न हो अध्यायक नाम सब शास्त्रों को पढ़के पढ़ाने का सामर्थ्य जिसको हो अर्थात सब विद्याओं में पूर्ण होय आशिष्ठ नाम सत्य जिसकी इच्छा पूर्ण हो द्रढ़िष्ठ बलिष्ठ नाम अत्यन्त जो शरीर और बुद्धि से दृढ़ हो अर्थात् कोई प्रकार का रोग जिसके शरीर में न होय बलिष्ठ नाम अत्यन्त बलवान् होवे और जिसको वित्त नाम धन से सब पृथ्वी पूर्ण होय अर्थात सार्वभौम चक्रवर्ती होवै उसको मनुष्य लोग के आनन्द की सीमा कहते हैं और जो कोई केवल विद्याकाही है और किसी प्रकार की कामना जिसको नहीं है अर्थात विद्या, धर्म और परमेश्वर की प्राप्ति के बिना किसी पदार्थ के ऊपर जिसको प्रीति न होवै ऐसा जो श्रोत्रिय ॥ श्रोत्रियश्छन्दोऽधीते । यह अष्टाध्यायी का सूत्र है व्याकरण पठन से लेके वेद पठन तक जिसका पूर्ण पठन होगया है उसको श्रोत्रिय कहते हैं उस श्रोत्रिय नाम विद्यावान् को वैसाही आनन्द होता है जैसा कि पूर्वोक्त चक्रवर्ती को उससे भी अधिक होने का सम्भव है क्योंकि चक्रवर्ती राजा को राज्य के अनेक कार्य रहते हैं इससे चित्त की एकाग्रता नहीं होती और जो वह पूर्ण विद्वान् है सो तो सदा परमेश्वर के आनन्द में मग्न रहता है लेशमात्र भी दुःख उस

इसको सम्भव नहीं है उस चक्रवर्ती के मनुष्यानन्द से शतगुण आनन्द मनुष्य गन्धर्वों को है मनुष्य गन्धर्वों के आनन्द से शतगुण अधिक आनन्द देव गन्धर्वों को है देव गन्धर्वों से पितृलोक वासियों को शतगुण आनन्द है और पितृलोकों से अधिक शतगुण आनन्द आजान नामक देवों को है आजान देवों से शतगुण आनन्द कर्म देवों को है जो कि कर्मों से देव होते हैं उन से शतगुण आनन्द देव लोग अर्थात् नाम देवों को है उन देवों से शतगुण आनन्द इन्द्र को है इन्द्र से शतगुण आनन्द बृहस्पति को है और बृहस्पति से प्रजापति को अधिक शतगुण आनन्द है और प्रजापति से ब्रह्मा को अधिक शतगुण आनन्द है जो २ आनन्द चक्रवर्ती और मनुष्य गन्धर्वों से शतगुण अधिक २ गिनाते आये सो सब आनन्द विद्या वाले पुरुष को होता है क्योंकि जो आनन्द मनुष्य में है सोई मूर्ख लोग में आनन्द है किन्तु एक ही अद्वितीय परमेश्वर आनन्द स्वरूप सर्वत्र पूर्ण है उस परमेश्वर को विद्वान् यथावत् जानता है उस परमेश्वर के जानने और उस का यथावत् योग होने से उस विद्वान् को पूर्ण अखण्ड आनन्द होता है उस आनन्द के लेश मात्र आनन्द में ब्रह्मादिक आनन्दित हो रहे हैं और उस आनन्द को जिस ने पाया है उस सुख को कोई गणना अथवा तौलना कभी नहीं कर सकता यह आनन्द विद्या के बिना किसी को कभी नहीं हो सकता इससे सब मनुष्यों को विद्या ग्रहण करने में अत्यन्त यत्न करना योग्य है यह ब्रह्मचर्याश्रम की शिक्षा को संक्षेप से लिखी गई इसके आगे चौथे प्रकाश में विवाह और गृहाश्रम की शिक्षा लिखी जायगी ॥

इति श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थप्रकाशे सुभाषा विरचिते तृतीयः समुल्लासः सम्पूर्णः ॥ ३ ॥

अथ विवाह गृहाश्रम विधिव्याख्यास्यामः

पुरुषों का और कन्याओं का ब्रह्मचर्याश्रम और विद्या जब पूर्ण हो जाय तब जो देश का राजा होय और अन्य जितने विद्वान् लोग वे सब उनकी परीक्षा यथावत् करें जिस पुरुष वा कन्या में श्रेष्ठ गुण, जितेन्द्रियता, सत्य वचन, निरभिमान, उत्तम बुद्धि, पूर्ण विद्या, मधुर वाणी, कुलीनता, विद्या और गुण के प्रकाश में अत्यन्त प्रीति जिस में काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोक, कृतघ्नता, छल, कपट, ईर्ष्या, द्वेषादिक दोष न होवें पूर्ण कृपा से सब लोगों का कल्याण चाहें उन को ब्राह्मण का अधिकार देवें और यथोक्त पूर्वोक्त गुण जिस में होय परन्तु विद्या कुछ न्यून होय शूर, धीरता, बल और पराक्रम ये तीन गुण वाले जो ब्राह्मण यथा उससे अधिक हो उस को क्षत्रिय करे और जिस को थोड़ी सी विद्या होवे परन्तु व्यापारादिक व्यवहारों में नाना प्रकारों के शिल्पों में देश देशान्तर के पदार्थों का ले आने और लेजाने में चतुर होवे और पूर्वोक्त जितेन्द्रियादिक गुण भी होवें परन्तु अत्यन्त श्रेष्ठ होवें उन को वैश्य करना चाहिये और जो पढ़ने लगा जिस को शिक्षा भी बहुत परन्तु कुछ भी विद्या नहीं आई उन को शूद्र बनाना चाहिये इसी प्रकार से कन्याओं को भी व्यवस्था करनी चाहिये इस में यह प्रमाण है ॥ शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम् । क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च ॥ यह मनुस्मृति का श्लोक है इस का यह अभिप्राय है कि विद्यादिक पूर्वोक्त गुणों से जो शूद्र कुल होवे सो ब्राह्मण हो जाय और पूर्वोक्त विद्यादिक गुणों से जो ब्राह्मण रहित हो जाय अर्थात् मूर्ख होय सो शूद्र हो जाय और जिस में क्षत्रिय का गुण होवे वह क्षत्रिय जिस में

वैश्य का गुण होय वह वैश्य अर्थात् जो शूद्र के कुल में उत्पन्न भया सो मूर्ख होय तब तो वह शूद्र ही बना रहै और वैश्य के जैसे गुण हैं वैसे गुण उस में होने से वह शूद्र वैश्य हो जाय क्षत्रिय के गुण होने से वह क्षत्रिय और ब्राह्मण के गुण होने से वह शूद्र ब्राह्मण हो जाय तथा वैश्य कुल में उत्पन्न भया उसको वैश्य के गुण होने से वह वैश्य ही बना रहै और मूर्ख होने से शूद्र हो जाय तथा क्षत्रिय और ब्राह्मण के गुण होने से वह क्षत्रिय और ब्राह्मण भी वैसे ही क्षत्रिय कुल में जो उत्पन्न भया उसको क्षत्रियवर्ण के गुण होने से वह क्षत्रिही बना रहै ब्राह्मण वैश्य और शूद्र के गुण होने से ब्राह्मण वैश्य और शूद्र भी हो जाय तथा ब्राह्मण के कुल में उत्पन्न होय ब्राह्मण के गुण होने से वह ब्राह्मण ही रहै क्षत्रिय वैश्य और शूद्र के गुण होने से क्षत्रिय वैश्य और शूद्र भी वह ब्राह्मण हो जाय ऐसा ही मनुष्य जाति के बीच में सर्वत्र जानना होता तैसे चारों वर्णों की कन्याओं में भी उन के उक्त गुणों के होने से ब्राह्मणी, क्षत्रिया, वैश्या और शूद्रा होजाय इन को वर्णों क्रम से अधिकारी दिये जांय ॥ अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा दानं प्रतिग्रहं चैव ब्राह्मणानामकल्पयत् ॥ अध्यापन नाम विद्या का पढ़ाना करना नाम पढ़ाना अध्ययन नाम पढ़ना यजन नाम अपने घर में यज्ञों का करना याजन नाम यजमानों के घर में यज्ञों का कराना दान नाम सुपात्रों को दान का देना प्रतिग्रह नाम धर्मात्माओं से दान का लेना इन षट्कर्म को करने और कराने में ब्राह्मणों को अधिकार देना उचित है ॥ प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च । विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः ॥ प्रजा की यथावत् रक्षा करना अर्थात् श्रेष्ठों का पालन और दुष्टों का ताड़न करना पक्षपात को छोड़ के सुपात्रों को दान देना अपने घर में यज्ञों का करना और अध्य

यज्ञ नाम सब लरह शास्त्रों का पढ़ना -विषयेषु- अप्रसक्ति नाम विषयों में फस न जाना यह संक्षेप से क्षत्रियों का अधिकार कहा पूर्वोक्त क्षत्रियों को इन अधिकार को देवें ॥ पशूनांरक्षणं दानमिज्याध्ययनमेवच । वणिक्पथंकुसीदञ्च वैश्यस्यकृषिमेवच ॥ गाय आदिक पशुओं की रक्षा करना क्षुधाओं को दान देना अपने घर में यज्ञों का करना सत्यशास्त्रों का पढ़ना धर्मसे व्यापार का करना धर्म से सूद नाम ब्याज का लेना और कृषिनाम खेती का करना इन सात कर्मों का अधिकार वैश्यों को देना ॥ एकमेवहिशूद्रस्य प्रभुःकर्मसमादिशत् । एतेषामेववर्णानां शुश्रूषामनसूयया ॥ ये चार श्लोक मनुस्मृति के हैं ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों की निन्दा को छोड़ के सेवा करना इस एक कर्म का शूद्रों को अधिकार देना कि तीनों वर्णों की यथावत् सेवा करें ॥ ब्राह्मणोऽस्यमुखमासीद् बाहूराजन्यःकृतः । ऊरूतदस्यय-द्वैश्यः पद्भ्यांशूद्रोऽअजायत ॥ यह यजुर्वेद की संहिता का मन्त्र है ॥ वेदाहमेतंपुरुषंमहान्तमादित्यवर्णंतमसःपरस्तात् । यह भी उसी अध्याय का वचन है पुरुष नाम है पूर्ण का पूर्ण नाम परमेश्वर का परमेश्वर के बिना पूर्ण कोई नहीं हो सकता क्योंकि व्यापक और मूर्तिमान् जो होता है सो एक ही देश में रहता है सर्व देश में व्यापक नहीं हो सकता इस अध्याय में परमेश्वर ही का ग्रहण होता है क्यों कि पुरुष से सब जगत् की उत्पत्ति लिखी है सो परमेश्वर ही से सब जगत् की उत्पत्ति होती है अन्य से नहीं उस परमेश्वर को अवयव का लेश मात्र भी सम्बन्ध नहीं मुख, बाहु ऊरु और पाद स्थूल २ इनके अवयवों की तो कभी संगति नहीं है क्यों कि सूक्ष्म भी अवयव का भेद परमेश्वर में नहीं हो सकता फिर स्थूल अवयव का भेद परमेश्वर में कैसे होगा कभी न होगा और इस मन्त्र में जो मुखादिक शब्दों का ग्रहण किया है सो इस अभिप्राय से किया

है कि शरीर में मुख सब अङ्गों से उत्तम अङ्ग है वैसे उत्तम से भी उत्तम गुण जिस मनुष्य में होय वह ब्राह्मण होवै मुख के समीप अङ्ग जैसा कि बाहु वैसाही ब्राह्मण के समीप क्षत्रिय है और हाथ के बल आदिक गुण हैं जिससे कि दुष्टों का दमन होता है और श्रेष्ठों का पालन अपने शरीर का भी रक्षा शत्रुओं और शस्त्रों के बल हाथ से होसक्ता है वैसेही प्रजा का पालन होगा और हाथ के बिना कभी रक्षा जगत् का वा अपना शत्रुओं वा दुष्टों से नहीं होसक्ता सो बलादिक गुण जिस मनुष्य में होय वह क्षत्रिय होवै तथा उरू नाम जङ्घा में जो बल होता है सब जहां तहां देशान्तरों में पदार्थों को उठा के लेजाना और देशान्तरों से लेआना हानि और लाभ में स्थिर बुद्धि होना जैसे कि जङ्घा के ऊपर स्थिर होके बैठना होता है इस प्रकार के वैश्यादिक गुण जिस मनुष्य में होवैं वह वैश्य होय तथा पाद जैसे कि सब अङ्गों से नीचे का अङ्ग है जब मनुष्य चलता है तब कङ्कड़, पाषाण, कीच और कांटों पर पैर पड़ते हैं सब शरीर ऊपर रहता है वैसेही विद्यादिकों में पड़े हैं वैसे मूर्खतादिक नीच गुण जिस मनुष्य में होवैं सो मनुष्य शूद्र होय इस मन्त्र से देखिये परमेश्वर की आज्ञा है सो सज्जनों को मानना और करना भी चाहिये सो इस प्रकार से परीक्षा करके वर्ण व्यवस्था अवश्य करना चाहिये वर्ण व्यवस्था बिना जन्म मात्रही से वर्णों के होने से बहुत दोष होते हैं इससे गुणोंही से वर्ण का होना उचित है और जो वर्णों को न मानें तो विद्यादिक गुण ग्रहण में मनुष्य का उत्साह भङ्ग होजायगा क्योंकि उत्तम गुण वाले को उत्तम अधिकार की प्राप्ति न होगी और गुणहीन को नीच अधिकार की प्राप्ति न होगी तो कैसे मनुष्यों को उत्साह गुण ग्रहण में होगा अर्थात् कभी न होगा इससे वर्ण व्यवस्था का

मानना उचित है और जो गुणों के विना वर्णों को जन्म मात्र ही से मानें तो सब वर्ण और सब गुण नष्ट हो जांयगे क्योंकि जन्म मात्र ही से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र होंगे तो कोई भी कुछ ग्रहण की इच्छा न करेगा इससे सब विद्यादिक गुण नष्ट हो जांयगे जैसे कि ब्राह्मण कुल सब कुलों से उत्तम है उस कुल में उत्तम पुरुषों ही का निवास होना उचित है क्यों कि वे उत्तम कर्मही करेंगे नीच कर्म कभी न करेंगे इससे उत्तम कुल की उत्तमता नष्ट कभी न होगी और जो ब्राह्मण कुल में मूर्ख और नीच पुरुषों के निवास होने से उत्तम कुल भी उत्तमता नष्ट होजायगी क्योंकि वे अभिमान तो ब्राह्मण ही का करेंगे और ब्राह्मण के गुणों को ग्रहण कभी न करेंगे सदा नीच ही कर्म करेंगे इससे ब्राह्मण कुल की बड़ी निन्दा उस निन्दा से अप्रतिष्ठा होगी उससे ब्राह्मण कुल दूषित हो जायगा इससे उत्तम गुण वाले को उत्तम ही कुल में रखना उचित है तथा भीरु काम भयादिक गुण वाले पुरुष को क्षत्रिय कुल में कभी न रखना चाहिये क्यों कि जिस को भय होगा सो दुष्टों को कैसे दण्ड और प्रजा का पालन कैसे करेगा युद्ध भूमि से सदा भग जायगा उस का राज्य शत्रु लोग लेलेंगे चोर और डाकू लोग सदा उस राजा और प्रजा को पीड़ा देंगे इससे उस राजा का राज्य और ऐश्वर्य नष्ट हो जायगा इससे विद्या, बल, बुद्धि, पराक्रम और पूर्वोक्त निर्भयादिक गुण युक्त ही को क्षत्रिय कुल में रखना चाहिये अन्य को नहीं तथा व्यापारादिक पशुपालनादिक में जो चतुर और बुद्धि विद्यादिक गुण से युक्त होवें उन्हीं को वैश्य होना उचित है जो मूर्खत्वादि गुण युक्त है उसी को शूद्र रखना चाहिये ऐसी जब व्यवस्था होगी तब ब्राह्मणादिक वर्णों में ब्राह्मणादिकों को भय होगा कि हम लोग उत्तम गुण ग्रहण न करेंगे और

उत्तम कर्म न करेंगे तो नीच अधिकार जाय शूद्रत्व को प्राप्त हो जायंगे अर्थात् शूद्र हो जायंगे और शूद्र द्विजों को विद्यादिक गुण ग्रहण में उत्साह होगा क्यों कि हम लोग जो उत्तम गुण वाले होंगे तो उत्तम अधिकार को प्राप्त होंगे अर्थात् द्विज हो जायंगे इससे उत्तमों को तो भय होगा और नीचों को उत्साह ही होगा। इससे ऐसी ही व्यवस्था सज्जनों को करना उचित है वर्ण शब्द के अर्थ से भी ऐसी व्यवस्था आती है॥ व्रियन्ते वरणीयाः। कि वर्ण नाम गुणों से जिसका स्वीकार किया जाय उस का नाम वर्ण है देखो दृष्टान्त भी सुनने में आता है कि विश्वामित्र क्षत्रिय से ब्राह्मण भया वरन क्षत्रिय से ब्राह्मण भया और क्षपण, श्वपाक पिता, श्वपाकी माता, वैश्य और शूद्र वर्णों से महर्षि भये मातङ्गऋषि का चाण्डाल कुल में जन्म था फिर ब्राह्मण होगया यह महाभारत में लिखा है और जाबाल वेश्या के पुत्र से ब्राह्मण होगया यह छान्दोग्य उपनिषद् में लिखाहै इत्यादिक और भी जान लेना चाहिये ऐसा वर्णों की व्यवस्था गुणों से है वैसा विवाह में व्यवस्था करनी चाहिये ब्राह्मण का ब्राह्मणी, क्षत्रिय का क्षत्रिया, वैश्य का वैश्या और शूद्र का शूद्रा से विवाह होना चाहिये क्यों कि विद्यादिक उत्तम गुणवाले पुरुष से विद्यादिक उत्तम गुणवाली स्त्री का विवाह होने से परस्पर दोनों को अत्यन्त सुख होगा और जो उत्तम पुरुष से मूर्ख स्त्री वा पण्डित स्त्री का मूर्ख पुरुष से विवाह होगा तो अत्यन्त क्लेश होगा कभी सुख न होगा तथा क्षत्रियों के गुणवाले से क्षत्रियगुण वाली स्त्री का। वैश्य गुणवाले पुरुष से वैश्य गुणवाली स्त्री का विवाह होना चाहिये और जो मूर्ख पुरुष सोई शूद्र है उससे मूर्ख स्त्री का विवाह होना उचित है क्योंकि तुल्य स्वभाव के होने में सुख होता है अन्यथा दुःखही होता है रूप की भी परीक्षा होनी चाहिये परस्पर दोनों की

अर्थात् वर और कन्या की प्रसन्नता से विवाह का होना उचित है कन्या वर की परीक्षा करै और वर कन्या की दोनों की परस्पर प्रसन्नता जब होय फिर माता, पिता वा बन्धु विवाह कर देवैं अथवा आपही दोनों परस्पर विवाह कर लेवैं पशुवत् विवाह का व्यवहार करना उचित नहीं जैसे कि गाय वा छेरी को पकड़ के दूसरे के हाथ में दे देते हैं वे लेके चले जाते हैं जैसी इच्छा होय वैसा करते हैं इस प्रकार का व्यवहार मनुष्यों को कभी न करना चाहिये पूर्वोक्त कालके नियम ही से विवाह करना चाहिये बाल्यावस्था में नहीं ॥ गुरुणानुमतः स्नात्वा स-मावृत्तो यथाविधि । उद्वहेत द्विजो भार्यां सवर्णां लक्षणान्विताम् ॥ यह मनु का श्लोक है इसका यह अभिप्राय है कि ब्रह्मचर्याश्रम से पूर्ण विद्या पढ़के गुरु की आज्ञा लेके जैसी विधि ग्रंथ में लिखी है वैसे सुगन्धादिक द्रव्यसे मन्त्र पूर्वक स्नान करके शुभ लक्षण युक्त अपने वर्णकी कन्याको वह द्विज ग्रहण करै ॥ महान्त्यपि समृद्धानि गोऽजाविधनधान्यतः । स्त्रीसम्बन्धे दशैतानि कुलानि परिवर्जयेत् ॥ बड़े भी कुल होंय गाय, भेड़ी, बकरी, हाथी, घोड़े धन और धान्य से सम्पन्न होवैं तो भी दश कुलों की कन्याओं को न ग्रहण करै वे कौन से दश कुल हैं ॥ हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम् । क्षय्यामयाव्यपस्मारि श्वित्रि-कुष्ठिकुलानि च ॥ वे दश कुल हैं हीन क्रिया नाम जिस कुल में यज्ञादिक क्रिया नहीं है और आलस्य भी बहुत सा जिस कुल में होय १ निष्पुरुष नाम जिस कुल में पुरुष न होवैं सभी स्त्री होवैं २ निश्छन्द नाम जिस कुल में वेदादिक विद्या न होय ३ रोम नाम जिस कुलमें भालू की नाईं देह के ऊपर लोम होवैं ४ अर्शास नाम जिस कुल में बवासीर रोग हो ५ क्षयि नाम जिस कुल में धातु क्षीणता वा राज रोग होय ६ आमयाविनाम जिस कुल में श्वास का विकार होय ७ अपस्मारि नाम जिसकुल

में किसी रोग होय ८ शिवित्र नाम जिस कुल में श्वेत कुष्ठ होय ९ और कुष्ठ नाम जिस कुल में गलित कुष्ठ होय १० इन दश कुलों की कन्याओं को विवाह के लिये ग्रहण न करें क्योंकि जो रोग पिता माता के शरीर में होता है सोई संतानों में भी कुछ २ रोग आवैगा इससे उनका ग्रहण करना उचित नहीं ॥ नोद्वहेत्कपिलांकन्यां नाधिकाङ्गीं न रोगिणीम्। नालोमिकां नातिलोमांनवाचाटांनपिङ्गलाम् ॥ नर्क्ष वृक्ष नदीनाम्नीं ना-न्त्यपर्वतनामिकाम्। न पक्ष्यहिप्रेष्यनाम्नीं न च भीषणनामिकाम् ॥ कपिला नाम बिलाई की नाईं जिस कन्या के नेत्र होवें उसके साथ विवाह न करे क्योंकि सन्तानों के भी ऐसे नेत्र होंगे अधि-काङ्गी नाम जिसका कन्या के अङ्ग वर से अधिक होवें अर्थात् कन्या का शरीर लम्बा चौड़ा वर का शरीर छोटा और दुबला होय उनका परस्पर विवाह न होना चाहिये अर्थात् दोनों के शरीर स्थूल अथवा दोनों के शरीर कृशित होंय तब विवाह होना चाहिये परन्तु स्त्री के शरीर से पुरुष का शरीर लम्बा होना चाहिये हाथ के कन्धे तक स्त्री का शरीर आवे उससे अधिक स्त्री का शरीर न होना चाहिये स्थूल होय तो होय अन्यथा वीर्य स्थिर न होगा और गर्भस्थिति भी होना भी आश्चर्य नहीं इससे स्त्री का शरीर पुरुष के शरीर से छोटा होना चाहिये रोगिणी नाम स्त्री के शरीर में कोई रोग न होना चाहिये और स्त्री भी पुरुष की परीक्षा करे कि उसके शरीर में स्थिर रोग कोई न होवे कोई सदा रोग न होय इस प्रकार की कन्या से विवाह न करे कि जिसके शरीर में सूक्ष्म भी लोम न होय और जिसके शरीर के ऊपर बड़े २ लोम होवें उससे भी विवाह न करे वाचाटा नाम बहुत बोलने वाली जो स्त्री है उसके साथ विवाह न करे अर्थात् परिमित भाषण करे अधिक बकवाद न करे जिसका पीतवर्ण हल्दी सी हो

होय उस स्त्री के साथ विवाह न करै और जिसका नक्षत्र के ऊपर नाम होय जैसा कि अश्विनी, भरणी, इत्यादिक तथा वृक्ष के ऊपर जैसा कि आमू, अश्वत्था, इत्यादिक और नदी के ऊपर जैसा कि नर्मदा, गङ्गा, इत्यादिक अन्त्यज, नाम चांडाली, चर्मकारिणी, इत्यादिक पर्वत के ऊपर जिसका नाम होवै जैसे कि हिमालया, विन्ध्याचला, इत्यादिक जिसका पक्षी के ऊपर होय जैसा कि हंसी, काकी, इत्यादिक जिसका सर्प के ऊपर होय जैसे कि सर्पिणी इत्यादिक जिसका दासी इत्यादिक नाम होय जिसका भयङ्करी, चण्डी और भैरवी, काली, इत्यादिक नाम होवै इस प्रकार के नाम वाली स्त्री से विवाह न करना चाहिये नक्षत्रादिक जितने नाम हैं वे सब अयुक्त हैं मनुष्यों के न रखना चाहिये कैसी स्त्री का विवाह होना चाहिये कि ॥ अव्यङ्गाङ्गीं सौम्यनाम्नीं हंसवारणगामिनीम्। तनुलोमकेशदशनां मृद्वङ्गीमुद्वहेत्स्त्रियम् ॥ अव्यङ्गाङ्गी नाम जिसके टेढ़े अङ्ग न होवें अर्थात् सब अङ्ग सूधे होवैं सौम्य जिसका नाम सुन्दर होवै जैसा कि यशोदा, कामदा, धर्मदा, कलावती, सुखवती, सौभाग्यवती, इत्यादिक हंसवारणगामिनीम् जैसे कि हंस और हाथी चलता है वैसी चाल जिसकी होवै ऐसी चलने वाली स्त्री न होय कि ऊंट और काक की नाईं चलै तनु नाम सूक्ष्म लोम केश और सूक्ष्म दांतवाली होय जिसके अङ्ग कोमल होवैं ऐसी स्त्री के साथ पुरुष विवाह करै ब्राह्मणादिक ८ आठ विवाह मनुस्मृति में लिखे हैं वे कौन हैं कि ॥ ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः। गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः ॥ ये सब श्लोक मनुस्मृति के हैं ब्राह्म विवाह उसको कहते हैं कि कन्या और वर का सत्कार करना यथावत् होमादिक करके और विद्या शीलादिकों की परीक्षा

करके कन्यादान देना उसका नाम ब्राह्म विवाह है मास वा दोमास पर्यन्त होम होता रहै और जामाताही ऋत्विक् होवै यज्ञ के अन्त दक्षिणा स्थान में कन्या देना उसका नाम दैव विवाह है एक गाय और एक बैल वा दो गाय और दो बैल वर से लेके कन्या को देना उसका नाम आर्ष विवाह है प्राजापत्य नाम वर और कन्या से प्रतिज्ञा का होना अर्थात् कन्या वर से प्रतिज्ञा करै कि मैं आप से व्यभिचार, अधर्म और अप्रियाचरण कभी न करूंगी तथा वर कन्या से प्रतिज्ञा करै कि मैं तुमसे व्यभिचार अधर्म और अप्रियाचरण कभी न करूंगा पीछे विधि पूर्वक विवाह होना उसका नाम प्राजापत्य विवाह है आसुर नाम अपने कुटुम्बियों को थोड़ा सा धन देना और वरके कुटुम्बियों को भी थोड़ा सा धन देना सत्कार के लिये कन्या और वर को भी थोड़ा २ धन देना होमादिक विधि से विवाह करना उसका नाम आसुर विवाह अर्थात् दैत्यों का विवाह है कन्या और वर के परस्पर प्रसन्न होने से विवाह का होना उसको गान्धर्व विवाह कहते हैं इसमें माता पिता और इष्टमित्रादिकों का कुछ प्रयोजन नहीं कन्या और वर वे दोनों आप ही से स्वतन्त्र होके सब विधि कर लेवें इसीका नाम गान्धर्व विवाह है कोई कन्या अत्यन्त रूपवती और सब गुणों से जिसकी प्रशंसा अर्थात् हजारहों कन्याओं के बीच में श्रेष्ठ होवे और कहने सुनने से उसका पिता न देता होय कन्या को भी बन्ध करके रक्खै तब वहां जाके बल से कन्या को ले लेना है उसको राक्षस विवाह कहते हैं फिर होमादिक विधि कर के विवाह करलेवैं अर्थात् जैसे कि राक्षस लोग बल से परपदार्थों को छीन लेते हैं वैसा यह विवाह है पैशाच विवाह यह है कि कहीं एकान्त में कन्या सूती अथवा मत्त अथवा

भांग वा मद्यादिक पीके मत्त हो अथवा कोई रोग से पागल भई होय उससे समागम करै विवाह के पहिले ही समागम का होना है वह पैशाच विवाह कहाता है वह सब विवाहों से नीच विवाह है इन आठ विवाहों में ब्राह्म, दैव और प्राजापत्य ये तीन विवाह सर्वोत्तम हैं इन तीनों में भी ब्राह्म अति उत्तम है और गान्धर्व भी श्रेष्ठ है उससे नीच आसुर, उससे नीच राक्षस, और सब से नीच पैशाच विवाह है उसको कभी न करना चाहिये ॥ अनिन्दितैः स्त्रीविवाहैरनिन्द्या भवति प्रजा । निन्दितैर्निन्दिता नृणां तस्मान्निन्द्यान्विवर्जयेत् ॥ मनुष्यों को निन्दित विवाह कभी न करना चाहिये जैसी परीक्षा और जो काल लिखा है उससे विरुद्ध विवाहों का करना वे निन्दित नाम भ्रष्ट विवाह हैं और भ्रष्ट विवाहों के करने से उनसे सन्तान भी भ्रष्ट होते हैं जैसे कि बाल्यावस्था में विवाह का करना उससे जो सन्तान होता है वह सन्तान रोगादिक पूर्वोक्त दुःखिनही होगा श्रेष्ठ कभी न होगा जो परीक्षा के बिना विवाह का करना उससे बहुत क्लेश होवे और सन्तान भी बहुत क्लेशित होवेंगे उनके बलादिकों का नाश भी हो जायगा इससे निन्दित विवाह मनुष्यों को कभी न करना चाहिये और जो ब्राह्मादिक उत्तम विवाह हैं उनका काल तथा परीक्षा लिखी है उस रीति से जो विवाह होते हैं वे अनिन्दित अर्थात् श्रेष्ठ विवाह हैं उन विवाहों के करने से स्त्री पुरुष और कुटुम्बियों को सदा सुखही होगा और उनकी प्रजा भी अनिन्दित अर्थात् श्रेष्ठही होगी तथा माता, पिता और कुटुम्बियों को वे पुत्रादिक सन्तान सुखही देवेंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं महाभारत में जितने विवाह लिखे हैं वे युवावस्थाही में लिखे हैं परस्पर परीक्षा और परस्पर प्रसन्नताही से विवाह होते थे जैसे कि द्रौपदी,

कुन्ती, गान्धारी, दमयन्ती, लोपामुद्रा, अरुन्धती, मैत्रेयी, कात्यायनी और शकुन्तलादिकों के विवाह इसी प्रकार से हुये थे तथा मनुस्मृति में भी लिखा है ॥ बाल्येपितुर्वशेतिष्ठेत्पाणिग्राहस्ययौवने । पुत्राणांभर्त्तरिप्रेते नभजेत्स्त्रीस्वतन्त्रताम् ॥ बाल्यावस्था न्यून से न्यून षोडश वर्ष पर्यन्त होती है तब तक पिता के वश में कन्या रहै और षोडश वर्ष से लेके २४ वर्ष पर्यन्त जिस वर्ष में विवाह होय तब अपने पति के वश में रहै जब पति न रहै तब पुत्रों के वश में स्त्री रहै कभी स्वतन्त्र न होवै क्योंकि स्त्री का स्वभाव चञ्चल होता है इससे अनेक कुमार्गों में चलेगी और धनादिकों का नाश भी करेगी इससे स्त्री को स्वतन्त्र न रहना चाहिये और जो लोग यह बात कहते हैं कि पिता के घरमें कन्या रजस्वला जो होय तो पितादिकों का धर्म नष्ट हो जायगा और पितादिक सब नरक में जावेंगे यह बात सत्य है वा नहीं यह बात मिथ्या ही है क्योंकि कन्या के रजस्वला होने से पितादिक पापमें हो जावेंगे और नरक में जावेंगे यह बड़ा आश्चर्य है पितादिकों का क्या अपराध है कि रजस्वला का होना तो स्त्री लोगों का स्वाभाविक है सो सदा होहीगा इसमें पितादिकों का क्या सामर्थ्य है कि बन्द करदेवें सो यह बात प्रमाण शून्य है बुद्धिमान् इस बात को कभी न मानें इसमें मनु भगवान् का प्रमाण भी है ॥ त्रीणि वर्षाण्युदीक्षेत कुमार्य्यृतुमती सती । ऊर्द्ध्वन्तु कालादेतस्माद्विन्देत सदृशम्पतिम् ॥ पिता के घरमें कन्या जब रजस्वला होय तब से लेके तीन वर्ष तक विवाह करने के लिये पति की परीक्षा करै तीन वर्ष के पीछे जैसी वह कन्या है वैसेही अपने तुल्य सवर्ण पति को ग्रहण करै कन्या के शरीर में धातु क्षीणादिक रोग न होवैं तो सोलहवें वर्ष रजस्वला होगी इससे पहिले नहीं और जो उक्त रोग होगा तो १५ पन्द्रहवें वा १८

चौदहवें अथवा १३ तेरहवें वर्ष कोई कन्या रोगी रजस्वला होजाय तो भी तीनवर्ष पीछे विवाह करें तो १६ सोलहवें १७ सत्रहवें वा १८ अठारहवें वर्ष विवाह करना उचित है और जब सोलहवें वर्ष रजस्वला होय तो १९ वा २० बीसवें वर्ष विवाह होना चाहिये क्योंकि शरीर से जो रज निकलता है सो स्त्री के शरीर की शुद्धि होती है इस कारण रजस्वला स्त्री के साथ ४ दिन तक सङ्ग करने का निषेध है कि स्त्री के शरीर से एक प्रकार की उष्णता निकलती है उसके निकलने से थोड़ी और उसका शरीर शुद्ध हो जाता है इसे रजस्वला होने के पीछे ही विवाह का करना उचित है जो जन्मपत्र देखके विवाह करते हैं सो बात सत्य है वा मिथ्या यह बात मिथ्या ही है क्योंकि जन्मपत्र को तो मिलाते हैं परंतु उनके स्वभाव, गुण, आयु और बल को न मिलाने से सदा उनमें झगड़ा ही होता है इसलिये यह बात मिथ्या ही है जन्मपत्र मिलाने का बुद्धिमान लोग सत्य कभी न जानें इसमें प्रमाण भी है॥ उत्कृष्टायाभिरूपाय वराय सदृशाय च। अप्राप्तामपि तां तस्मै कन्यां दद्याद्यथाविधि॥ यह मनुस्मृति का श्लोक है इसका यह अभिप्राय है कि उत्कृष्ट नाम उत्तम विद्यादिक गुणवान् अभिरूप अर्थात् जैसी कन्या रूपवती होय वैसा वर भी होय और श्रेष्ठ स्वभाव दोनों का तुल्य होय अप्राप्त नाम निकट सम्बन्ध में भी होय तो भी उसी को कन्या देवें अर्थात् दोनों तुल्य गुण और रूपवाले होंय तब विवाह का करना उचित है अन्यथा नहीं इसमें यह मनुस्मृति का प्रमाण है॥ काममामरणात्तिष्ठेद्गृहे कन्यर्तुमत्यपि। न चैवैनां प्रयच्छेत्तु गुणहीनाय कर्हिचित्॥ इसका यह अभिप्राय है कि ऋतुमती कन्या अपने पिता के घर में मरण तक भी बैठी रहै यह बात तो श्रेष्ठ है परन्तु गुणहीन अर्थात् विद्याहीन पुरुष को कन्या कभी

न देवै अथवा कन्या और भी दुष्ट पुरुष से विवाह न करै तथा पुरुष भी मूर्ख वा दुष्ट कन्या से विवाह न करै यहां गृहस्थों को यथोक्त प्रकार से जैसा कि कहा वैसा विवाह करना सब सुखों का मूल है अन्यथा दुःखही है कभी सुख न होगा जो शीघ्रबोध में ये दो श्लोक लिखे हैं कि ॥ अष्टवर्षा भवेद्गौरी नववर्षा च रोहिणी। दशवर्षा भवेत्कन्या तत ऊर्द्ध्वं रजस्वला ॥ १ ॥ माता चैव पिता चैव ज्येष्ठभ्राता तथैव च। त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम् ॥ २ ॥ ये दोनों श्लोक मिथ्या ही हैं क्योंकि आठवें वर्ष विवाह करने से जो कहते हैं वाला गौरी वही गौरी कैसे होगी ना महादेव की स्त्री गौरी आठ वर्ष की नाम है उससे विवाह कैसे हो सकेगा वैसे रोहिणी नक्षत्र लोक है सो आकाश में रहती है वह जड़ पदार्थ है उससे विवाह कैसे होगा कभी नहीं होसकता जो रोहिणी बलराम की स्त्री थी वह तो मर गई थी उसी का विवाह कभी नहीं होसकता और दशवर्ष में कन्या होती है यह भी मिथ्या है क्योंकि जब तक विवाह नहीं होता तब तक कन्याही कहाती है और पिता के समीप जो रहती कन्याही और बन्धु के समीप भगिनी रहती है फिर जो कहा कि दश वर्ष में कन्या होती है सो बात काशिनाथ की मिथ्याही है जो कहता है कि दशवर्ष के आगे रजस्वला होती है यह भी मिथ्याही है सुश्रुत में १६ वर्ष के आगे धातुओं की वृद्धि लिखी है सो ठीक है उस समय में सोलह वर्ष से लेके आगे रजस्वला होने का संभव है सो सज्जनों को यही बात मानना चाहिये और काशिनाथ की बात कभी न मानना चाहिये और उसने यह बात लिखी है कि कन्या रजस्वला होने से पितादिक नरक में जायेंगे सो मनुस्मृति वेदादिक सत्यशास्त्रों और प्रमाणों से विरुद्ध है इस वास्ते

उसकी बड़ी भारी मूर्खता है क्योंकि माता पितादिकों का क्या दोष है कन्या रजस्वला होने से वे नरक में जांय यह कहना उसका बड़ा पागलपन है पूर्वपक्ष पिता ने काल में विवाह न किया इससे उनको दोष होता होगा और दश वर्ष के आगे उनको विवाह का फल न होता होगा इससे जो काशिनाथ ने लिखा होगा उत्तर यह बात भी उसकी मिथ्या है क्योंकि सोलह वर्ष के पहिले कन्या और २५ वर्ष के पहिले पुरुष का विवाह करने से अवश्य पितादिकों को पाप का संभव होता है अथवा उनकी स्त्री पुरुषों को तो पाप होने का सम्भव होता है किन्तु पाप का फल दुःख है सो बाल्यावस्था में विवाह करने से वीर्यादिक धातुओं के नाश और विद्यादिक गुण न होने से अवश्य वे दुःखी होते हैं और होंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं है इससे इस काशिनाथ का नाम काशिनाश रखना चाहिये क्योंकि काशि नाम प्रकाश का है इसने विद्यादिक गुणों का नाश कर दिया इससे इसका नाम काशिनाश ही ठीक है सो इसने ग्रन्थ का नाम शीघ्रबोध रक्खा है उसका नाम शीघ्रनाश रखना चाहिये क्योंकि बाल्यावस्था में विवाह करने से शीघ्र ही रोग होते और बहुत रोग होने से शीघ्र ही मर जायंगे इससे इसका नाम शीघ्रनाश ही ठीक है इस प्रकार के श्लोक हम लोग भी रच ले सकते हैं ॥ श्लोकौ ॥ एकपादमपरेन्दौवी द्विपादश्चै-वर्षोविदः । पितामातृश्चेत्कन्या तयकुर्द्रजस्वला ॥ १ ॥ शीतामस्याः पितादेव ज्येष्ठोभ्रातातथानुजः । एतेवैनरकंयान्ति दृष्ट्वाकन्यांरजस्वलाम् ॥ २ ॥ पूर्वपक्ष ये दो श्लोक कौन शास्त्र के हैं तो मैं पूछता हूं कि काशिनाथ के श्लोक कौन शास्त्र के हैं वे काशिनाथ के ग्रन्थ हैं तो यह श्लोक मेरे ग्रन्थ के हैं आपके ग्रन्थ का क्या प्रमाण है तो काशि-नाथ के ग्रन्थ का क्या प्रमाण है काशिनाथ के ग्रन्थ को तो

बहुत लोग मानते हैं जिस को बहुत मनुष्य मानें वही श्रेष्ठ होय तो जैन मुसलमान और महम्मद के मत के मानने वाले बहुत हैं उन्हीं को मानना चाहिये के इन लोगों के मत से विरुद्ध हैं इससे हम लोग नहीं मानते तो आप लोगों का कौन मत है जो वेदोक्त और धर्मशास्त्रोक्त है सोई तो हम लोगों के मत से काशिनाथ का मत विरुद्ध हुआ क्यों कि आप लोगों का मत वेद और मनुस्मृत्युक्त ही हुआ जैन धर्म शास्त्र में मनुस्मृति भी है इससे विरुद्ध होने से आप लोगों को काशिनाथ का मत मानना उचित नहीं और आप ने जो श्लोक बनाके उस के आगे ब्रह्मोवाच क्यों लिखा यह दृष्टान्त के लिये लिखा। इससे क्या दृष्टान्त हुआ कि इसी प्रकार से ब्रह्मोवाच, विष्णुरुवाच, नारदउवाच, नारायणउवाच, महेश्वरउवाच, वसिष्ठ-उवाच, याज्ञवल्क्यउवाच, अत्रिरुवाच, अङ्गिराउवाच, बृहस्पति-रुवाच, व्यासउवाच, शुकउवाच, परीक्षितउवाच, कृष्णउवाच, अर्जुनउवाच, इत्यादि नाम लिख के [illegible] पद्मपुराण, ईश्वरगीता पाराशरादिक स्मृतियां, निर्णयसिन्धु, धर्मसिन्धु, नारदपञ्चरात्र, काशीखण्ड, काशीरहस्य, और सत्य-नारायणकथा, इत्यादिक ग्रन्थ सम्प्रदायी लोग और पण्डित लोगों ने रच लिये हैं तथा महाईश्वरउवाच, पार्वत्युवाच, भैरव-उवाच, भैरवीउवाच, दत्तात्रेयउवाच, इत्यादिक लिख के बहुत तन्त्रग्रन्थ लोगों ने रच लिये हैं यह तो दृष्टान्त भया जैसे कि मैं ने अपने श्लोकों के पहिले अपनी इच्छा से ब्रह्मोवाच लिखा वैसे इन्हों ने ब्रह्मोवाच इत्यादिक लिख के ग्रन्थ रच लिये हैं इस लिये कि श्रेष्ठों के नाम लिखने से ग्रन्थों का प्रमाण हो जाय प्रमाण के होने से सम्प्रदायी और आजीविका की वृद्धि होवै उससे बिना परिश्रम से धन आवे और बहुत सुख होवै इस लिये [illegible] नहीं है जैसा कि ब्रह्मोवाच ऐसा लिखना पड़ा है जैसा

धन का भी अभिमान इत्यादिक लिखना व्यर्थ ही है और जैसे मेरे श्लोक दोनों लिखा है वैसे उनके पुराणादिक ग्रन्थ और [illegible] लोगों के इत्यादिक करने वाले हैं इन को सज्जन लोग मिथ्या ही जानें इससे क्या आया कि मरण तक भी कन्या विवाह के बिना घर में बैठी रहै तो भी पितादिकों को कुछ दोष नहीं होता परन्तु दुष्ट पुरुष के साथ श्रेष्ठ कन्या अथवा दुष्ट कन्या के साथ श्रेष्ठ पुरुष का विवाह कभी न करना चाहिये किन्तु तुल्य श्रेष्ठ गुण वालों का परस्पर विवाह होना चाहिये जो दुष्ट पुरुष के साथ श्रेष्ठ कन्या वा श्रेष्ठ के साथ दुष्ट कन्या का विवाह होगा तो परस्पर दोनों को दुःख ही होगा इससे दोनों का परस्पर विचार करके वर और कन्या का विवाह करें क्यों कि श्रेष्ठ विवाह से उन्हीं को सुख और दुष्ट विवाह से उन्हीं को दुःख होगा। इस में माता पितादिकों का कुछ भी अधिकार नहीं उन दोनों के विचार और प्रसन्नता ही से विवाह होना चाहिये विवाह में बहुत धन का नाश करना अनुचित ही है क्योंकि वह धन व्यर्थ ही जाता है इससे बहुत राज्य नष्ट हो गये और वैश्य लोगों का भी विवाह में धन के व्यय से दिवाला निकल जाता है सब लोगों को विवाह में धन का व्यय करना अनुचित है इसलिये धन का नाश विवाह में कभी न करना चाहिये एक ही स्त्री से विवाह करना उचित है बहुत स्त्री के साथ विवाह करना पुरुषों को उचित नहीं स्त्री को भी बहुत विवाह करना उचित नहीं क्यों कि विवाह सन्तान के लिये है सो एक स्त्री एक पुरुष को बहुत है देखना चाहिये कि एक व्यभिचारिणी स्त्री अथवा वेश्या से बहुत पुरुषों के वीर्य के नाश से निर्बल कर देती है इससे एक पुरुष के लिये एक स्त्री क्या थोड़ी है अर्थात् बहुत है एक स्त्री के साथ भी सर्वथा वीर्य का नाश करना

उचित नहीं क्योंकि वीर्य के नाश से पूर्वोक्त सब दोष हो जायंगे इससे विचारशील पुरुष को साथ भी वीर्य का नाश बहुत न करना चाहिये केवल सन्तान के लिये वीर्य का दान करना चाहिये अन्यथा नहीं और स्त्री भी केवल सन्तान ही की इच्छा करै अधिक नहीं दोनों परस्पर सदा प्रसन्न रहैं पुरुष स्त्री को सदा प्रसन्न रक्खै और स्त्री पुरुष को विरोध वा क्लेश परस्पर कभी न करैं ॥ सन्तुष्टो भार्यया भर्त्ता भर्त्रा भार्या तथैव च । यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम् ॥ यह मनुस्मृति का श्लोक है इस का यह अभिप्राय है कि स्त्री प्रियाचरण से पुरुष को सदा प्रसन्न रक्खै और पुरुष भी स्त्री को जिस कुल में इस प्रकार की व्यवस्था है उस कुल में दुःख कभी नहीं होता किंतु सदा सुख ही रहता है और जो परस्पर अप्रसन्न रहैं तो सब दोष आवेगा ॥ यदि हि स्त्री न रोचेत पुमांसं न प्रमोदयेत् । अप्रमोदात्पुनः पुंसः प्रजनं न प्रवर्त्तते ॥ १ ॥ स्त्रियां तु रोचमानायां सर्वं तद्रोचते कुलम् । तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते ॥ २ ॥ ये दोनों मनुस्मृति के श्लोक हैं इनका यह अभिप्राय है कि जो स्त्री प्रीति और सेवा से पुरुष को प्रसन्न न करेगी तो पुरुष को अप्रसन्नता से हर्ष न होगा जब हर्ष न होगा तब प्रजनं नाम वीर्य की अत्यन्त उत्पत्ति और गर्भस्थिति भी न होगी जो स्त्री को पुरुष के अप्रीति से कुछ भी सुख न होगा और जो पुरुष स्त्री को प्रसन्न न रक्खेगा तो उस पुरुष को कुछ भी गृहाश्रम करने का सुख न होगा स्त्री को जो प्रसन्न रक्खेगा उसको सब आनन्द होगा तथा च ॥ पितृभिर्भ्रातृभिश्चैताः पतिभिर्देवरैस्तथा पूज्या भूषयितव्याश्च बहुकल्याणमीप्सुभिः ॥ १ ॥ यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः । यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥ २ ॥ शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम् । न शोचन्ति तु यत्र

र्धते तद्धि सर्वदा ॥ ३ ॥ जामयो यानि गेहानि शपन्त्यप्रति-पूजिताः । तानि कृत्याहतानीव विनश्यन्ति समन्ततः ॥ ४ ॥ तस्मादेताः सदा पूज्या भूषणाच्छादनाशनैः । भूतिकामैर्नरैर्नित्यं सत्कारेषूत्सवेषु च ॥ ५ ॥ ये सब मनुस्मृति के श्लोक हैं इनका यह अभिप्राय है कि पिता, भ्राता, पति और देवर ये सब लोग स्त्रियों को पूजा करें देखना चाहिये कि पूजा का अर्थ चन्दन, अक्षत, भक्षणादि, फूल, धूप, दीप और नैवेद्यादिक षोडशोप-चारों को पूजा शब्द से जो लेते हैं सो मिथ्या ही लेते हैं क्योंकि स्त्रियों की ऐसी पूजा करनी उचित नहीं और न कोई ऐसी पूजा करता है इससे पूजा शब्द का अर्थ सत्कार ही है सत्कार जो होता है सो चेतन ही का होता है जो सत्कार को चाहें पुरुष स्त्री लोगों का सदा सत्कार करना चाहिये जिससे कि वे सदा प्रसन्न रहें और उन को यथाशक्ति आभूषणों से प्रसन्न रक्खें जिन गृहस्थों का बड़ा भाग्य होता है और बहुत कल्याण की जिन को इच्छा होवे वे इस प्रकार से स्त्रियों को प्रसन्न ही रक्खें ॥ १ ॥ जिस कुल में नारी लोग स्वयं नाम आनन्द से क्रीड़ा करती और प्रसन्न रहती हैं तिस कुल में देवता नाम दिव्यादिक गुण जिनसे कि वह कुल प्रकाशित हो जाता है वे गुण सदा उस कुल में बढ़ते रहते हैं जिस कुल में स्त्रियों का सत्कार और उन की प्रसन्नता नहीं होती उस गृहस्थ की सब क्रिया निष्फल होती है और दुर्दशा भी होती है इससे स्त्रियों को प्रसन्न ही रखना चाहिये ॥ २ ॥ और जिस कुल में जामय नाम स्त्री लोग शोक से दुःखित रहती हैं उस कुल का नाश शीघ्र ही हो जाता है जिस कुल में स्त्री लोग शोक नहीं करतीं अर्थात् प्रसन्न रहती हैं उस कुल की वृद्धि और आनन्द सदा होता है और आज काल आर्यावर्त्त में कोई एक राजा वा धनाढ्य विचारहीन स्त्री को भी कैद की नाईं

बन्द करके रखते हैं और आप वेश्या और पर स्त्री के पास गमन करते हैं उससे अपने धन और शरीर का नाश करते हैं और उनकी विवाहित स्त्रियां रोती और बड़ी दुःखित रहती हैं परन्तु उन मूर्ख पुरुषों को कुछ भी लज्जा नहीं आती कि यह स्त्री तो मेरे साथ विवाहित है इसको छोड़ के मैं अन्य स्त्री गमन करता हूं यह मैं न करूं ऐसा विचार उन पुरुषों के मन में कभी नहीं आता अन्य स्त्री और वेश्या गमन जो करते हैं सो तो बुराही काम करते हैं परन्तु बालकों से भी बुरा काम करते हैं यह बड़ा आश्चर्य है कि स्त्री का काम पुरुषों से करते हैं इनको तो अत्यन्त भ्रष्ट बुद्धि सज्जनों को जाननी चाहिये ३ जिन पुरुषों की स्त्री दुःखित होके शाप देती है उन कुलों का नाशही होजाता है जैसे कि कोई विषदान करके कुल का नाश कर देवै वैसेही उन कुलों का नाश हो जाता है इससे सज्जनों को स्त्रियों का सत्कार सदा करना चाहिये जिससे कि स्त्री लोग प्रसन्न होके गृह का कार्य धर्माचरण और पुरुषार्थ सदा करें ४ जिससे स्त्रियों का सत्कार सदा करना चाहिये आभूषण, वस्त्र, भोजन और मधुर वाणी से स्त्रियों को प्रसन्न रक्खें जिनको कि ऐश्वर्य की इच्छा होय वे मङ्गलादिक उत्सवों में स्त्रियों का बहुत सत्कार करें अर्थात् स्त्रियों को प्रसन्नही रक्खें तथा स्त्री लोग भी सब प्रकार से पुरुषों को प्रसन्न रक्खें ॥ ५ पाणिग्राहस्य साध्वी स्त्री जीवतो वा मृतस्य वा । पतिलोकमभीप्सन्ती नाचरेत्किञ्चिदप्रियम् ॥ १ ॥ जिसके साथ विवाह होय उसको स्त्री सदा प्रसन्न रक्खे जिससे वह अप्रसन्न होय ऐसी बात कभी न करै सोई स्त्री श्रेष्ठ कहाती है यहां तक कि पति मर भी गया होय तो भी व्यभिचार न करै उस स्त्री को सदा श्रेष्ठ पति इस जन्म वा जन्मान्तर में भी प्राप्त होता है ॥ १ ॥ अनृतावृतुकाले च मन्त्रसंस्कारकृत्पतिः । सुखस्य नित्यं दातेह परलो

केनचिदपि: ॥ २ ॥ यह मनु के जिस पुरुष से विवाह का संस्कार अर्थात् वही ऋतु काल वा अनृतु काल और इस लोक वा परलोक में नित्य सुख देने वाला है और कोई नहीं इससे विवाहित पुरुष की स्त्री सदा सेवा करे जिससे कि वह प्रसन्न रहे और घर का जितना कार्य है वह स्त्री के अधिकार में रहे। सदा प्रहृष्टया भाव्यं गृहकार्येषु दक्षया । सुसंस्कृतोपस्करया व्यये चामुक्तहस्तया ॥ ३ ॥ सदा स्त्री प्रसन्न होके गृह कार्य चतुराई से करे पाक को अच्छे प्रकार से संस्कार करे जिससे कि औषधवत् अन्न होय और गृह में जो पात्र वस्त्रादिक पदार्थ और अन्न सदा शुद्ध रक्खैं जितने घर हैं उनको सब दिन शुद्ध रक्खैं जाला धूली वा मलिनता थोड़ी कुछ भी न रहे घर में लेपन प्रक्षालन और मार्जन करे जिससे कि घर सब दिन शुद्ध बना रहे और घर के दास दासी नौकर इत्यादिकों पर सब दिन शिक्षा की दृष्टि रक्खै जो पाक करने वाला पुरुष वा स्त्री होवे उसके पास पाक करने समय बैठ के शिक्षा करे जैसी पाक की रीति वैद्यकशास्त्र में लिखी है उस रीति से पाक करे और पदार्थ तथे घर के बनाना वा शुद्धरक्षा होना इत्यादि और स्त्रीही करावे शिल्पशास्त्र की रीति से अर्थात् जितना घर का जो कार्य है सो स्त्रीही के आधीन रहे उस में जो नित्य नित्य का व्यय ह वे सो सब ही होय सब स्त्री को सम्हाला देवे और जितना बाहर का कार्य होय सो सब पुरुष के आधीन रहे परस्पर सदा प्रसन्न से घर के कार्यों को करें घर इस प्रकार बनावें कि जिसमें सब ऋतु में सुख होय और जिस स्थान में वायु शुद्ध होय चारों ओर पुष्पों की सुगन्ध वाटिका लगावें जिससे कि सदा चित्त प्रसन्न रहे और व्यर्थ धन का नाश कभी न करें धर्मही से धन का संग्रह करें अधर्म से कभी नहीं अच्छे से अच्छा भोजन करें जो पिता पढ़े होवें उनको सदा पढ़ावें और

विद्याविविधशिल्पानि सम्यक्शिक्षितव्यानि ॥ ४ ॥ ये पांच मनुस्मृति के श्लोक हैं और ब्रह्मचारियों को सत्यविद्या, सत्यभाषण, पवित्रता, मधुरवाणी, न्याय आचरण करने की रीति और विविध अर्थात् अनेक प्रकार के शिल्प ये सब जिस में होवें उसी को होना चाहिये भाषण की रीति यह है कि ॥ सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम् । प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः ॥ १ ॥ भद्रं भद्रमिति ब्रूयाद्भद्रमित्येव वा वदेत् । शुष्कवैरं विवादञ्च न कुर्य्यात्केनचित्सह ॥ २ ॥ ये दो श्लोक मनुस्मृति के हैं इनका यह अर्थ है कि सत्य ही कहै मिथ्या कभी न कहै सदा सब जनों को जो प्रिय लगे वैसा ही कहै पूर्वपक्ष प्रिय तो वेश्यागामी पर स्त्री गामी और चोरी करने वाले आदि पुरुषों से उन्हीं बातों को कहै तब उन को अनुकूल प्रिय होता है अन्यथा प्रिय नहीं होता इस से वैसा ही कहना चाहिये वा नहीं उत्तर एक इस को प्रिय वचन न कहना चाहिये क्योंकि वेश्यादिक गमन की इच्छा जब वे करते हैं तभी उनके हृदय में शङ्का भय और लज्जा हो जाती है यह बात तो उन के हृदय को प्रिय ही नहीं है और उन का आचरण करना भी अधर्म है किन्तु उन का जो निषेध करना है वही तो प्रिय है जैसे कोई बालक अग्नि पकड़ने को चले उस से कोई कहै कि तू अग्नि पकड़ यह वचन बालक को प्रिय न होगा किन्तु अग्नि में हाथ लावेगा तब हाथ जल जायगा उस से बालक को आनन्द होगा अर्थात् दुःख ही होगा किन्तु बालक को निषेध जो करना है कि तू आग को मत पकड़ वही वचन उस को प्रिय है प्रिय उस का नाम है कि जो जिस वचन से किसी का अहित न होय उसको प्रिय वचन कहते हैं और सत्य होय परन्तु अप्रिय होय तो उस को न कहै जैसे किसी ने किसी से पूछा कि विवाह किस लिये करना होता है और तेरा जन्म किस प्रकार भया तब उस को ऐसा ही

कहना उचित है कि विवाह का करना सन्तान के लिये है और मेरा जन्म मेरी माता और पिता से हुआ है जो पुत्र लिया है स्त्री से और माता पिता को उसको कहना उचित नहीं यद्यपि यह बात सत्य ही है तो भी उन लोगों के अप्रिय के होने से इस बात का कहना उचित नहीं तथा दश पांच पुरुष कहीं बैठे होवें और उस समय में काना, अन्धा, मूर्ख वा दरिद्र पुरुष आवें उनसे वे पुरुष कहें कि काना आओ अन्धा आओ मूर्ख आ वा दरिद्र आओ ऐसा कहना उचित नहीं यद्यपि यह बात सत्य है तो भी अप्रिय के होने से न कहना चाहिये किन्तु देवदत्त आ यज्ञदत्त आओ ऐसा उनसे कहना उचित है फिर आप के आंख में कुछ रोग भया था वा जन्मही से ही है तब वह प्रसन्नता से सब बात कह देगा वैसी और भी जो इससे इस प्रकार का सत्य होय और वह अप्रिय भी होय तो कभी न कहें ॥ प्रियञ्चनानृतं ब्रूयात् । और जो बात अन्य को प्रिय होय परन्तु वह अनृत अर्थात् मिथ्या होय तो उसको कभी न कहें जैसे कि आज काल इन राजा और धनाढ्य लोगों के पास खुशामदी लोग बहुत से धूर्त रहते हैं वे सदा उनको प्रसन्न करने के लिये मिथ्या ही कहते रहते हैं आप के तुल्य कोई दातार वा अमीर न हुआ न है और न होगा और जो राजा वा धनाढ्य दिवस के समय में कहें कि इस समय में आधी रात है तब वे खुशामदी लोग कहते हैं कि हां महाराजाधिराज हां इसलिये चांद और चांदनी भी अच्छी खिल रही है फिर वे कहते हैं कि महाराज के तुल्य कोई बुद्धिमान् न भया न है न होगा तब तो वह मूर्ख राजा और धनाढ्य प्रसन्नता से फूल के ढोल हो जाते हैं फिर वे ऐसी बात कहते हैं कि महाराज आप के प्रताप के सामने किसी का प्रताप नहीं चलता है आप का प्रताप कैसा है जैसा कि सूर्य और

आदि ऐसा कहते हैं कि बहुत धन इकट्ठा कर लेते हैं वे राजा और धनाढ्य लोग उन्हीं से प्रसन्न रहते हैं क्योंकि आप जैसा मूर्ख वा पण्डित होता है उसको वैसेही पुरुष से प्रसन्नता होती है कभी उनको सत्पुरुषों का सङ्ग नहीं होता और कभी सत्पुरुषों का सङ्ग होजाय तो भी वे खुशामदी धूर्त राजा और धनाढ्य लोगों को मूर्खता के होने से उनको प्रसन्नता सत्यबात के सुनने से कभी नहीं होती क्योंकि जैसा जो पुरुष होता है उसको वैसाही सङ्ग मिलता है ऐसे व्यवहार के होने से आर्य्यावर्त्त देश के राज्य और धन बहुत नष्ट होगये और जो कुछ है उसकी भी रक्षा इस प्रकार से होनी दुर्लभ है जब तक कि सत्य व्यवहार सत्यशास्त्र और सत्पुरुषों को न करेंगे तब तक उनका भलाई होना अथवा धर्मी बढ़ना न होगी खुशामदी लोगों के विषय में एक दृष्टान्त है कि कोई राजा था उसके पास पण्डित वैरागी और नौकर थे खुशामदी लोग बहुत थे राजा ने किसी दिवस राजा के रसोई में बैंगन का शाक बनाके डाला था बहुत अच्छा बना फिर राजा भोजन करने को जब बैठा तब स्वाद के होने से उस शाक को अधिक खाया राजा भोजन करके सभा में आया तहां कि वे खुशामदी लोग बैठे थे उन से राजा ने कहा कि बैंगन का शाक बहुत अच्छा होता है तब वे खुशामदी लोग सुन के बोले कि वाहवाह महाराज की नाईं कोई बुद्धिमान् नहीं है महाराज आप देखिये कि जब बैंगन उत्तम है तब तो परमेश्वर ने उसके ऊपर मुकुट रख दिया तथा मुकुट के चारों ओर कलगी रख दी है और बैंगन का वर्ण श्रीकृष्ण के शरीर का जैसा घनश्याम है वैसाही बनाया है और उसका गूदा मक्खन की नाईं परमेश्वर ने बनाया है इससे बैंगन का शाक उत्तम क्यों न होवे फिर जब उस शाक से राजा को सब रात भर नींद भी न आई और द

हुआ चार चौंद थी गया उससे राजा बड़ा क्रोधित भया फिर
जब प्रातःकाल भया तब भीतर से राजा बाहर आया वे खुशा-
मदी लोग भी आये जब राजा का मुख बिगड़ा देखा तब उन
खुशामदी लोगों ने भी उससे अधिक मुख बिगाड़ लिया फिर
वे सब खुशामदी लोग राजा के पास जाके बैठ गये। बोले कि
बैंगन का शाक तो अच्छा होता है परन्तु बादी करता है तब
वे बोले कि महाराज के तुल्य कोई बुद्धिमान् नहीं है
एकही दिन में बैंगन की परीक्षा कर ली देखिये महाराज कि
जब बैंगन अशुद्ध है तब तो उस के ऊपर परमेश्वर ने खूंटी गाड़
दी है उस खूंटी के चारों ओर कांटे लगा दिये हैं वस कुष्ट का
वर्ण भी कोइले के तुल्य रक्खा है तथा परमेश्वर ने उस का
रूप भी रक्तकुष्ट के सदृश बना दिया है तब उन खुशामदियों
से राजा ने पूछा कि प्रात को तुम लोगों ने मुकुट, कलंगी
घनश्याम और मक्खन के तुल्य बैंगन के अवयव वर्णन किये
उसी बैंगन के अवयवों को खूंटी, कांटे, कोइला और कुष्ट के
सदृश बताते हम कौन बात को सत्य मानें कि जो कल प्रात
को कही थी उस को मानें वा आज के कहे को मानें। भला
महाराज किस प्रकार के विवेकी हैं कि निरर्थक वार्त्ता को जान
लिया सुनिये महाराज जिस बात से आप प्रसन्न होंगे उसी
बात को हम लोग कहेंगे क्यों कि हम लोग तो आप के
नौकर हैं सो आप झूठी वा सच्ची बात कहेंगे उसी बात की
हम लोग पुष्ट करेंगे और हम लोग कुछ साले बैंगन के नौकर
नहीं हैं कि बैंगन की स्तुति करें हम को बैंगन से क्या लेना है
हम को तो आप की प्रसन्नता से प्रयोजन है आप असत्य कहें
तो भी हम को सत्य है वे इस प्रकार की सम्मति रखते हैं कि
राजा सब दिन भला करे और मूर्ख ही बना रहे फिर जब वे
और कोई राजा वा महाजन के पास जाते हैं तब उसी को

खुशामद करते हैं जिस के पास पहिले रहते थे उस की निन्दा करते हैं इस प्रकार से खुशामदी मनुष्यों ने राजाओं की और प्रजाओं की अति भ्रष्ट कर दी है जो बुद्धिमान् राजा और प्रजास्थ लोग हैं इस प्रकार के मनुष्यों को पास भी नहीं बैठने देते न आप उन के पास बैठते तथा न उन की बात सुनते हैं और जो कोई मिथ्या बात उन के पास कहता है उसी समय उसको दण्ड देते हैं और सदा बुद्धिमान्, सत्यवादी, विद्वान् पुरुषों का सङ्ग करते हैं जो कि मुख के ऊपर सत्य २ कहें मिथ्या कभी न कहैं उन राजाओं और प्रजाओं को सदा अतुल ऐश्वर्य और सुख होता है इससे सज्जनों को श्रेष्ठ ही पुरुषों का संग करना चाहिये दुष्टों का कभी नहीं सत्य बात के आचरण में निन्दा वा दुःख होय तो भी न भय करना चाहिये भय तो एक परमेश्वर और अधर्म ही से करना चाहिये और किसी से नहीं क्योंकि परमेश्वर सब काल में सब बातों को जानता है कोई पाप परमेश्वर से गुप्त नहीं रहता इससे सज्जनों को परमेश्वर ही से भय करना चाहिये कि परमेश्वर की आज्ञा के विरुद्ध हम लोग कुछ भी कर्म न करें तथा अधर्माचरण से भय करना चाहिये क्योंकि अधर्म से दुःख ही होता है सुख कभी नहीं और चाहे कोई सब लोग स्तुति करें अथवा निन्दा करें ऐसा कोई भी नहीं है निन्दा इस वेद भाग में है कि गुणेषुदोषारोपणमसूया अथ दोषेषु गुणारोपणमप्यसूया ॥ जो कि गुणों में दोषों का स्थापन करना वह तो निन्दा है वैसे ही अर्थापत्ति से यह आया कि दोषों में गुणों का आरोपण भी निन्दा होती है इससे क्या आया कि ॥ गुणेषु गुणारोपणं स्तुतिः दोषेषु दोषारोपणञ्च स्तुतिरेवास्ति ॥ गुणों में गुणों का जो स्थापन करना और दोषों में दोषों का वह यथार्थ स्तुति है जो जैसा पदार्थ है उस को वैसाही जानें अर्थात्

यथावत् सत्यभाषण करना स्तुति है और अन्यथा अर्थात् मिथ्या भाषण करना निन्दा है इसलिये सज्जन लोगों को सदा स्तुतिही करनी चाहिये निन्दा कभी नहीं मूर्ख लोग सत्यभाषण करने और सत्याचरण के करने में निन्दा करें तो भी बुद्धिमान लोगों को दुःख वा भय न मानना चाहिये किन्तु प्रसन्नताही रखनी चाहिये क्योंकि उनकी बुद्धिभ्रष्ट है इसलिये भ्रष्ट बात भी सदा कहते हैं जैसे वे मूढ़ लोग मूढ़ता को नहीं छोड़ते हैं तो श्रेष्ठ लोग श्रेष्ठता को क्यों छोड़ें किन्तु मूढ़ता मूढ़ लोगों को भी अवश्य छोड़नी चाहिये यदि सब भ्रष्ट लोग विरोध भी अत्यन्त करें यहां तक कि प्राण भी अवस्था आजाय तो भी सत्यवचन और सत्याचरण सज्जनों को कभी न छोड़ना चाहिये क्योंकि यही मनुष्यों के बीच में मनुष्यत्व है और इसको छोड़ने से मनुष्यत्व तो नष्टही हो जाता है किन्तु पशुत्व भी आजाता है आजीविका भी सत्यसे करनी चाहिये असत्य से कभी नहीं इसमें यह मनु भगवान का प्रमाण है । न लोकवृत्तं वर्त्तेत वृत्तिहेतोः कथंचन । इसका यह अभिप्राय है कि संसार में बहुत धूर्त लोग असत्य और पाखण्ड से आजीविका करते हैं वैसे आचरण कभी न करें वृत्ति अर्थात् आजीविका के हेतु भी असत्य भाषणादिक न करें किन्तु सत्यही भाषण से आजीविका करें यही धर्म सनातन है कि अनृत अर्थात् मिथ्या वही दूसरे को प्रिय होय सो कभी न करें किन्तु सदा सत्य भाषणही करें इसमें मनु भगवान्का श्लोक है कि भद्रं भद्रमिति ब्रूयात् । यह भद्र शब्द का नाम सातवीं बार श्लोक में पाठ किया है इसी हेतु कि कल्याण कारक वचनसदा कहे जिसको सुनके मनुष्य धर्मनिष्ठ होय और अधर्म त्याग करें शुष्कवैर अर्थात् मिथ्या वैर और विवाद किसी से न करना चाहिये जैसे कि आज काल के पण्डित और विद्यार्थी लोग हठ दुराग्रह और क्रोध से वाद विवाद करें २ लड़ पड़ते उनके हाथ सिवाय दुःखके कुछ

भी नहीं लगता है इससे जो कुछ अपने को अज्ञात होय उस विषय को प्रीति पूर्वक विवाद छोड़ कर पूछने आप जो सत्य २ जानता होय सो औरों से कह दे ॥ परित्यजेदर्थकामौ यौ स्यातां धर्मवर्जितौ । यह मनुस्मृति का वचन है इसका यह अभिप्राय है कि स्वाध्याय अर्थात् विद्या पठन पाठन और धन उपार्जन यदि धर्म से विरुद्ध होवें तो उनको छोड़ दे परन्तु विद्या प्रचार और धर्म को कभी न छोड़ैं सन्तोषं परमास्थाय सुखार्थी संयतो भवेत् सन्तोषमूलं हि सुखं दुःखमूलं विपर्ययः । इत्यादिक मनुस्मृति के श्लोक लिखेंगे सो जान लेना । संतोष इसका नाम है कि सर्वदा प्रसन्न रहै सदा अत्यन्त पुरुषार्थ करै आलस्य और पुरुषार्थ का छोड़ना संतोष नहीं किन्तु सब दिन पुरुषार्थ में तत्पर रहै सब दिन सुखार्थी और जितेन्द्रिय होवे कभी हर्ष और शोक न करैं किंचित् जितना सुख है सो संतोष से ही है और जितना दुःख होता है सो लोभ ही से होता है ॥ इन्द्रियार्थेषु सर्वेषु न प्रसज्येत कामतः अतिप्रसक्तिं चैतेषां मनसा संनिवर्तयेत् ॥ २ ॥ श्रोत्रादि इन्द्रियों के शब्दादिक जो विषय हैं उन में कामातुर होके प्रवृत्त कभी न होवें किन्तु धर्म के हेतु ग्रहण होवें और मन से उन में अत्यन्त प्रीति छोड़ना जाय धर्म और परोपकार में प्रीति बढ़ाता जाय ॥ ३ ॥ बुद्धिवृद्धिकराण्याशु धन्यानि च हितानि च नित्यं शास्त्राण्यवेक्षेत निगमांश्चैव वैदिकान् ॥ ३ ॥ जो शास्त्र शीघ्र ही बुद्धि धन और हित को बढ़ाने वाले हैं उन शास्त्रों को नित्य विचारैं जैसे कि ६ दर्शन चारों उपवेद और वेदों को नित्य विचारैं उनके विचार से अनेक पदार्थविद्या का ग्रहण करै । यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते ॥ ४ ॥ जैसे २ पुरुष शास्त्र का विचार करता है वैसे २ उसका विज्ञान बढ़ता जाता है फिर विज्ञान होने से उसको प्रीति होती है और में नहीं ॥ ५ ॥ ऋषियज्ञं देव–

यज्ञं भूतयज्ञं च सर्वदा। नृयज्ञं पितृयज्ञं च यथाशक्तिर्न हापयेत् ॥ ५ ॥ ऋषियज्ञ अर्थात् पठन पाठन और संध्योपासन १ देवयज्ञ अर्थात् अग्नि होत्रादिक २ भूतयज्ञ अर्थात् बलिवैश्वदेव ३ नृयज्ञ अर्थात् अतिथि सेवा ४ और पितृयज्ञ नाम श्राद्ध और तर्पण अपने सामर्थ्य के अनुकूल यथा शक्ति करें उन्हें कभी न छोड़ें इतने सब कर्म अविद्वान् पुरुषों के वास्ते हैं और जो ज्ञानी हैं वे तो यथावत् पदार्थविद्या और परमेश्वर को जानते हैं। योगाभ्यास करें सब शास्त्रों को विचारें ब्रह्म विद्या को प्राप्ति और उपदेश भी करें इसमें मनु भगवान् का प्रमाण है एतानेके महायज्ञान्यज्ञशास्त्रविदो जनाः अनीहमानाः सततमिन्द्रियेष्वेव जुह्वति ॥ ६ ॥ जितने ज्ञानी हैं वे पांच महायज्ञों को ज्ञान क्रिया होम करते हैं बाह्य चेष्टा से नहीं क्योंकि वे यज्ञशास्त्र के तत्त्वों को जानते हैं उनकी अनीहमान अर्थात् बाहर की चेष्टा न देख पड़े ज्ञान और योगाभ्यास से विषयों को इन्द्रियों में होम कर देते हैं तथा इन्द्रियों को मनमें मनको आत्मा में और आत्मा का परमेश्वर से योग करते हैं उनको बाहर की चेष्टा करना आवश्यक नहीं ॥ ६ ॥ वाच्येके जुह्वति प्राणं प्राणे वाचं च सर्वदा। वाचि प्राणे च पश्यन्तो यज्ञनिर्वृत्तिमक्षयाम् ॥ ७ ॥ कितने योगी और ज्ञानी लोग वाणी में प्राण का होम करते हैं कितने प्राण में वाणी का होम करते हैं सदा वाणी और प्राण में यज्ञ की सिद्धि अक्षय अर्थात् जिसका नाश नहीं होता उसको देखते हैं अर्थात् वाणी तो प्राणही से उत्पन्न होती है और प्राण आत्मा से आत्मा अविनाशी है उसको परमात्मा से युक्त कर देते हैं इससे उनकी मुक्तिही हो जाती है फिर कभी उनको दुःख का लेश नहीं होता है इससे उनको बाह्य क्रिया का करना आवश्यक नहीं ॥ ७ ॥ ज्ञानेनैवापरे विप्रा यजन्त्येतैर्मखैः सदा ज्ञानमूलां क्रियामेषां पश्यन्तो ज्ञानचक्षुषा ॥ ८ ॥ जो

ज्ञान चक्षु से सब पदार्थों को यथावत् जानते हैं वे ज्ञान ही से उन यज्ञादिक पांच महायज्ञों को करते हैं क्योंकि ज्ञानयज्ञों से उनका सब प्रयोजन सिद्ध है सब क्रिया उन की ज्ञानमूलक ही है क्योंकि उनके हृदय मन और आत्मा सब शुद्ध हो गये हैं उनको बाह्य आडंबर करना आवश्यक नहीं बाह्य क्रिया तो उन लोगों के लिये है कि जिनका हृदय और आत्मा शुद्ध नहीं वे अग्नि होत्रादिक यज्ञों को बाह्य क्रिया से अवश्य करें क्योंकि उनके करने विना हृदय शुद्ध नहीं होता उन ज्ञानियों की सेवा और सङ्ग से ज्ञानोपदेश लेवें जिससे कि कर्मियों की भी बुद्धि बढ़े ॥ ८ ॥ आसनाशनशय्याभिरद्भिर्मूलफलेन वा । नास्य कश्चिद्वसेद्गेहे शक्तितोऽनर्चितोऽतिथिः ॥ ९ ॥ गृहस्थ के घर किसी समय कोई अतिथि आवे तो वैसा असत्कृत अर्थात् सत्कार विना न रहे जैसा अपना सामर्थ्य वैसा सत्कार करना चाहिये आसन भोजन शय्या जल कंद और फल से अवश्य सत्कार करे ॥ ९ ॥ परन्तु ऐसे मनुष्य का सत्कार कभी न करे । पाषण्डिनो विकर्मस्थान् वैडालव्रतिकाञ्छठान् । हैतुकान् बकवृत्तींश्च वाङ्मात्रेणापि नार्चयेत् ॥ १० ॥ पाषंड अर्थात् वेद विरुद्ध मार्ग में चलाने वाले चक्रांकितादिक वैरागी और गोकुलिये गोसाईं आदिकों का वचन से भी सत्कार गृहस्थ लोग कभी न करें जैसे चोरी वेश्या गमनादिक विरुद्ध कर्म करने वाले पुरुषों का भी सत्कार न करें वैडाल व्रतिक नाम परकार्य के नाश करने वाले अपने कार्य में तत्पर हैं जैसे कि बिलार मूसे का तो प्राण हरले और अपना पेट भरले ऐसे पुरुषों का वचनसेभी गृहस्थ लोग सत्कार न करें शठनाम मूर्खों का भी सत्कार न करें शठ वे होते हैं कि उन्हें बुद्धि न होय और अन्य का समाधान भी न करें हैतुक नाम वेद शास्त्र विरुद्ध कुतर्क के करने वाले उनका भी वचन से सत्कार न करें

बकवृत्ति अर्थात् जैसे वैरागियों में खाखी लोग भस्म लगा लेते जटा बढ़ा लेते और काठ की कौपीन धारण कर लेते हैं फिर ग्राम वा नगर के समीप जाके ठहरते और शंखादिक बजा देते हैं अर्थात् सूचना कर देते हैं कि गृहस्थ लोग आवें और हम को धन आदिक पदार्थ देवें जब गृहस्थ लोग आते हैं तब दूर से देख के ध्यान लगाते हैं प्रसाद में विष भी देदेते हैं और उन का धन सब हरण कर लेते हैं उनका गृहस्थ लोग वचन से भी सत्कार न करें ऐसे जितने मंडली बांध के फिरते हैं वैरागी और साधू इत्यादिक उन को साधू न जानना चाहिये, किन्तु ठग जानना चाहिये और जितने गृहस्थ लोग सदाव्रत और क्षेत्र करते हैं वे अनुचित करते हैं क्योंकि बड़े धूर्त गांजा और भांग पीने वाले तथा चोर और डाकू वैसे ही लुच्चे सदाव्रतों से अन्न लेते और क्षेत्रों में भोजन कर लेते हैं फिर कुकर्म ही करते रहते और दुःखी हो जाते हैं बहुत से लोग अपना काम काज छोड़ सदाव्रतों और क्षेत्रों के ऊपर घर के सब काम और नौकरी चाकरी छोड़ के साधू वा भिखारी बन जाते हैं फिर अन्न का खाके खाते और सोते पड़े रहते हैं अथवा कुकर्म करते रहते हैं इस्से संसार की बड़ी हानि होती है सो जो कोई सदाव्रत क्षेत्र करता है उस से संसार का उपकार कोई नहीं होता इससे उन गृहस्थों का पुण्य कुछ नहीं होता किन्तु पाप ही होता है इस्से गृहस्थ लोग अन्नादिक दान करना चाहैं तो पाठशाला रचवावें उनों में सब दान करें अथवा जो श्रेष्ठ धर्मात्मा गृहस्थ और विरक्त होवें उन को अन्नादिक देवें और यज्ञ करें तब उन को बड़ा पुण्य होवे पाप कभी न होवे तथा मनु भगवान् का वचन है। वेद-विद्याव्रतस्नातान् श्रोत्रियान्गृहमेधिनः । पूजयेद्धव्यकव्येन विपरीतांश्च वर्जयेत् ॥ १० ॥ जिन्हों ने अखण्ड ब्रह्मचर्याश्रम कर के

वेदविद्या अर्थात् सर्व विद्या को पढ़ा है और धर्मात्मा हो शुद्ध होवें ऐसे श्रोत्रिय अर्थात् विद्वान् और गृहस्थ लोगों का हव्य नाम देवकार्य और कव्य नाम पितृकार्य में गृहस्थ लोग सत्कार करें अन्य से विपरीत लोगों का सत्कार कभी न करें । ११ ॥ शक्तितोऽपचमानेभ्यो दातव्यं गृहमेधिना संविभागश्च भूतेभ्यः कर्तव्योऽनुपरोधतः ॥ १२ ॥ जो संन्यासी ब्रह्मचारी विद्यावान् और धर्मात्मा होवें उन की भी गृहस्थ लोग सेवा करें और जो जितने अनाथ होवें अर्थात् अन्धे लंगड़े लूले और जिनका कोई पालन करने वाला न होवे उन का भी गृहस्थ लोग पालन करें । १२ ॥ नोपगच्छेत्प्रमत्तोऽपि स्त्रियमार्तवदर्शने । समानशयने चैव न शयीत तया सह ॥ १३ ॥ जब स्त्री रजस्वला होवे उस दिन से लेके चार दिन तक काम पीड़ा से प्रमत्त भी होय तो भी स्त्री का संग न करै और एक शय्या में स्त्री के साथ कभी न सोवे ॥ १३ ॥ रजसाभिप्लुतां नारीं नरस्य ह्युपगच्छतः । प्रज्ञा तेजो बलं चक्षुरायुश्चैव प्रहीयते ॥ १४ ॥ जो पुरुष रजस्वला स्त्री से समागम करता है उस की बुद्धि तेज बल नेत्र और आयु ये पांच नष्ट हो जाते हैं क्योंकि स्त्री के शरीर से एक प्रकार का अशुद्ध निकलता है उससे पुरुष का शरीर रोगयुक्त होता है रोग युक्त होने से बुद्ध्यादिक नष्ट हो जाते हैं ॥ १४ ॥ तां विवर्जयतस्तस्य रजसा समभिप्लुताम् । प्रज्ञा तेजो बलं चक्षुरायुश्चैव प्रवर्द्धते ॥ १५ ॥ जो पुरुष रजस्वला स्त्री का संग नहीं करता उस पुरुष के बुद्धि तेज बल नेत्र और आयु ये सब बढ़ते हैं । १५ ॥ ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत् कायक्लेशांश्च तन्मूलान् वेदतत्त्वार्थमेव च ॥ १६ ॥ एक पहर रात जब रहै तब सब मनुष्य उठैं उठ के प्रथम धर्म का विचार करैं कि यह २ धर्म की बात हमको करनी होगी तथा यह २ अर्थ नाम व्यवहार की बात अवश्य करना होगा जब धर्म और अर्थ के आचारण में विचार करैं कि परीश्रम थोड़ा होय और

सह कार्य सिद्ध हो जाय और जो शरीर में रोगादिक क्लेश हो उन का औषध पथ्य और निदान का इस से यह रोग भया है इन सब को विचारें विचार के उनके निवारण का विचार करें फिर वेदतत्त्वार्थ नाम परमेश्वर की प्रार्थना करें और उठ के मल मूत्रादिक त्याग करें हस्त पाद का प्रक्षालन करें फिर जो कुछ दूध वाले होवें उनसे दन्त धावन करें अथवा खैर के चूर्ण या सूंघनी से शुद्ध करके दन्त धावन से दांतों को शुद्ध और स्नान करें सूर्योदय से पहिले १ वा दो कोस भ्रमण करें एकान्त में जाके संध्योपासन जैसा कि लिखा है वैसा करें सूर्योदय के पीछे घर में आके अग्निहोत्र जैसा जिस वर्ण का व्यवहार पूर्वक लिखा है वैसा करें जब तक पहर दिन न चढ़े तब तक दूसरे प्रहर के प्रारंभ में तर्पण बलिवैश्वदेव और अतिथि सेवा करके भोजन करें तब जो जिसका व्यवहार है उस व्यवहार को यथावत् करें ग्रीष्मऋतु को छोड़के दिवस में न सोवें क्योंकि दिन को सोने से रोग होते हैं और ग्रीष्म में अर्थात् वैशाख और ज्येष्ठ में थोड़ा सोने से रोग नहीं होता क्यों कि निद्रा से शरीर में उष्णता होती है सो ग्रीष्म में उष्णता ही अधिक होती है जल भी अधिक पीने में आता है फिर जब मनुष्य सोता है तब सब द्वार अर्थात् लोम द्वार से भीतर से जल बाहर निकलता है उससे सब मार्ग शुद्ध हो जाते हैं इससे ग्रीष्म ऋतु में सोने से रोग नहीं होता है अन्य ऋतु में सोने से होता है और जो कुछ आवश्यक कार्य होवे तो ग्रीष्मऋतु में भी न सोवें तो बहुत अच्छा है फिर चार वा पांच घड़ी दिन रहै तब सब कार्यों को छोड़के भोजन के लिये जावें पहिले शौच स्नानादिक क्रिया करें तदनन्तर बलिवैश्वदेव फिर अतिथि सेवा करके भोजन करें भोजन करके फिर भी संध्योपासन के वास्ते एकान्त में चला जाय संध्योपासन करके फिर अपने अग्निहोत्र स्थान में आके अग्नि-

होम करैं जब २ अग्निहोत्र करैं तब २ स्त्री के साथ ही करैं फिर जो जिसका व्यवहार होय तद उसको करैं अथवा भ्रमण करैं निदान एक पहर रात तक व्यवहार करैं फिर सोवैं दो पहर अथवा डेढ़ पहरतक फिर उठके ऐसे ही नित्य किया करैं सो मध्यरात्रि के मध्य दो पहर में जब २ वीर्य दान करैं उस के पीछे कुछ ठहर के दोनों स्नान करैं पीछे अपने २ शय्या में पृथक् २ जाके सोवैं जो स्नान न करेंगे तो उनके शरीर में रोग ही हो जायगे क्योंकि उसके बड़ी उष्णता होती है इसलिये स्नान करने से वह विकार न होगा और वीर्यतेज भी बढ़ेगा इससे उस समय स्नान अवश्य करना चाहिये इस में मनुभगवान् के वचन का प्रमाण है । भोक्तव्यंद्विर्गृहस्थानांसायंप्रातर्निशीथयोःस्नानंमैथुनिनःस्मृतम् ॥ इस का अर्थ यह है कि दो वेर गृहस्थ लोगों को भोजन करना चाहिये सायं और प्रातःकाल जो मैथुन करै तो उसके पीछे स्नान अवश्य करै तथान्यत् द्विःअहरहःसंध्यामुपासीत अहरहरग्निहोत्रंजुहुयात् । इस का यह अभिप्राय है कि सायं और प्रातःकाल में दो वेर संध्योपासन और अग्निहोत्र करैं दोई संध्या हैं प्रातः और सायंकाल मध्यान्ह संध्या कहीं नहीं क्योंकि संध्या नाम है सन्धि का सन्धि दो काल होती है प्रातःकाल प्रकाश और अन्धकार की सन्धि होती है तथा सायंकाल प्रकाश और अन्धकार की सन्धि होती मध्यान्ह में केवल प्रकाश ही है इससे मध्यान्ह में संध्या नहीं हो सकती । संध्यायन्तिपरंतत्त्वंनामपरमेश्वरंयस्यांसासंध्या । इस समय परमेश्वर का ध्यान करते हैं इससे इसका नाम संध्या है अथवा संधिवेलायांसंध्या मन और जीवात्मा का परमेश्वरसे जिस कर्म से सम्बन्ध होय उस का नाम सन्धि है सन्धि के लिये जो अनुकूल कर्म होता है उस का नाम संध्या है सो दोई हैं । तस्मादहोरात्रस्यसंयोगेब्राह्मणः संध्यामुपासीत ॥ यह

सामवेद के ब्राह्मण की श्रुति है। उद्यन्तमस्तं यान्तमादित्यमभिध्यायन् ब्राह्मणो विद्वान्सकलं भद्रमश्नुते। यह यजुर्वेद के ब्राह्मण की श्रुति है इसका यह अभिप्राय है कि जिससे अहोरात्र अर्थात् रात्रि और दिवस के संयोग में संध्या करें जब जीवात्मा बाहर व्यवहार करने को चाहता है तब बहिर्मुख होता है मन और इन्द्रियों को भी बहिर्मुख करता है और जीव भी नेत्र ललाट और श्रोत्र ऊपर के अंगों में विहार करता है जैसे कि सूर्य उदय होकर ऊपर २ विहार करता है वैसे जीव भी जब सोना चाहता है तब हृदय पर्यन्त नीचे के अंगों में चला जाता है रात्रि की नांई अन्धकार हो जाता है बिना अपने स्वरूप के किसी पदार्थ को नहीं देखता जैसे कि सूर्य जब अस्त हो जाता है तब अन्धकार होने से कुछ नहीं देख पड़ता है ऐसे ही जीव के ऊपर आने और नीचे जाने का व्यवहार उसका सन्धान दोनों संध्याकाल में करें इसके सन्धान करने से परमेश्वर पर्यन्त का साक्षात्कार में मनुष्यों को बोध हो जाता है और जीवका कभी नाश नहीं होता इससे इनका नाम आदित्य है इस श्रुतिका अर्थ हो गया अर्थात्। उद्यन्तमस्तं यान्तमादित्यमभिध्यायन् ब्राह्मणः सकलं भद्रमश्नुते। इससे उदय और सायंकाल की दो संध्या निकली हैं यही मत लेना तथा मनुस्मृति के श्लोक भी हैं। नतिष्ठति यः पूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम्। स शूद्रवद्बहिष्कार्यः सर्वस्माद्द्विजकर्मणः॥ १॥ प्रातःसंध्यां जपंस्तिष्ठेत्सावित्रीमार्कदर्शनात्। पश्चिमां तु समासीनः सम्यगृक्षविभावनात्॥ २॥ जो प्रातः और सायम् काल की संध्या नहीं करता उसको शुद्ध द्विज लोग सब द्विज कर्मों के अधिकारों से निकाल देवें अर्थात् यज्ञोपवीत को तोड़ के शूद्र कुल में कर देवें वह केवल सेवादि कर्म को कि शूद्र का कर्म है॥ १॥ इससे दो सन्ध्या निकलती हैं दूसरे श्लोक में सन्ध्या के काल का नियम और दोनों सन्ध्या

है दो घड़ी रात से लेके सूर्योदय पर्यन्त प्रातः संध्या के काल का नियम है तथा एक वा आध घड़ी दिन से लेके जब तक तारा न निकलें तब तक सायं सन्ध्या के काल का नियम है और गायत्री का अर्थ और जैसा ध्यान उसका कहा है वैसाही दोनों काल में करें और जो कहता है कि मध्यान्ह संध्या क्यों न होय तो उनसे पूंछना चाहिये कि मध्य रात्रि में संध्या क्यों न होय और दो पहर के दो मुहूर्त्त और दो क्षण में संध्या क्यों न होजाय ऐसा कहने से तो हजारों संध्या हो जांयगी और उसके मत में अनवस्था भी आजायगी इससे उसका कहना मिथ्याही है ॥ २ ॥ अधार्मिकोनरोयोहि यस्यचाप्यनृतं धनम् । हिंसारतश्चयोनित्यं नेहासौसुखमेधते ॥ ३ ॥ जो नर अधार्मिक अर्थात् अधर्म का करने वाला है और जिसका धन भी अनृत अर्थात् असत्य से आया होय और नित्य हिंसारत अर्थात् पर पीड़ाही में नित्य रहता होय वह पुरुष इस संसार में सुख को कभी नहीं प्राप्त होता ॥ ३ ॥ नसीदन्नपिधर्मेण मनो ऽधर्मेनिवेशयेत् । अधार्मिकाणांपापानामाशुपश्यन्विपर्ययम् ॥४॥ यदि मनुष्य बहुत क्लेशित भी होय और धर्म के आचरण से भी बहुत दुःख पावै तो भी अधर्म में मनको प्रविष्ट न करै क्योंकि अधर्म करने वाले मनुष्यों का शीघ्रही विपर्यय अर्थात् नाश हो जाता है ऐसा देखने में भी आता है इससे मनुष्य अधर्म करने की इच्छा कभी न करै ॥४॥ नाधर्मश्चरितोलोके सद्यःफलतिगौरिव । शनैरावर्त्तमानस्तु कर्त्तुर्मूलानिकृन्तति ॥ २ ॥ जो पुरुष अधर्म करता है उसको उसका फल अवश्य होता है जो शीघ्र न होगा तो देर में होगा जैसे कि गाय जिस समय उसको सेवा करते हैं उस समय दूध नहीं देती किन्तु कालान्तर में देती है वैसेही अधर्म का भी फल कालान्तर में होता है धीरे २ जब अधर्म पूर्ण होजायगा तब उसके करने वालों का मूल अर्थात् सुख

के कारणों को छेदन कर देगा इससे वे दुःख सागर में गिरेंगे ॥ ५ ॥ अधर्मेणैधते तावत्ततो भद्राणि पश्यति । ततः सपत्नाञ्जयति समूलस्तु विनश्यति ॥ ६ ॥ जब मनुष्य धर्म को छोड़ के अधर्म में प्रवृत्त होता है तब छल कपट और अन्याय से पर पदार्थों को हरण कर लेना है इससे उसके कुछ सुख भी करता है फिर शत्रु को भी अधर्म छल और कपट से जीत लेता है परंतु उसके पीछे जैसा मूल सहित वृक्ष उखड़कर गिर जाता है वैसा मूल सहित उस अधर्म करनेवाले पुरुष का नाश होजाता है ॥६॥ इससे किसी मनुष्य को अधर्म करना न चाहिये किञ्च । सत्यधर्मार्यवृत्तेषु शौचे चैवारमेत्सदा । शिष्यांश्च शिष्याद्धर्मेण वाग्बाहूदरसंयतः ॥ ७ ॥ सत्य धर्म और आर्य जो श्रेष्ठ मनुष्य हैं उनमें और उनके आचरण में सदा स्थित हो शौच पवित्रता अर्थात् हृदय की शुद्धि और शरीरादिक पदार्थों की शुद्धि करने में सदा रमण करें तथा अपने शिष्य पुत्र और विद्यार्थियों को यथावत धर्म से शिक्षा करें और वाणी बाहु उदर इनका संयम करें अर्थात् वाणी से दुष्ट भाषण, बाहु से अन्यथा चेष्टा और उदर का संयम अर्थात भोजन का बहुत लोभ न रक्खें ॥ ७ ॥ नपाणिपादचपलो ननेत्रचपलोऽनृजुः । नस्याद्वाक्चपलश्चैव नपरद्रोहकर्मधीः ॥ ८ ॥ पाणि हाथ पाद अर्थात पैर इनसे अयोग्य कर्म चपलता न करें तथा नेत्र से भी चपलता न करें अनृजु अर्थात अभिमान कभी न करें सदा सरल होंय और वाक् चपल न होंय अर्थात बहुत न बोलें जितना उचित हो उतना ही भाषण करें और पराये का द्रोह अर्थात ईर्षा कभी न करें और कर्मों पर यथार्थ है उपासना और ज्ञान तुच्छ हो नहीं ऐसी बुद्धि कभी न करें किन्तु कर्म से उपासना और उपासना से ज्ञान श्रेष्ठ है ऐसे बुद्धि सदा रक्खें ॥८॥ येनास्य पितरो याताः येन याताः पितामहाः । तेन यायात्सतां मार्गं-

तेनगच्छन्नरिष्यते ॥ ९ ॥ जिस मार्ग से इसके पिता और पितामह गये हों उसी मार्ग से आप भी जावें उस मार्ग पर जाने से मनुष्य नष्ट नहीं होता किन्तु सुखी ही होता है और दुःख कभी नहीं पाता पूर्वपक्ष यदि पिता और पितामह कुकर्मी होय तो भी उनकी रीति से चलना चाहिये वा नहीं उत्तर नहीं क्योंकि इसी लिये मनु भगवान् ने सतांमार्ग विशेषण दिया है कि यदि पिता और पितामह सत्पुरुष अर्थात् धर्मात्मा होवें तो उनकी रीति से चलना और यदि अधर्मी होवें तो उनकी रीति से कभी न चलना चाहिये ॥ ९ ॥ ऋत्विक्पुरोहिताचार्यैर्मातुलातिथिसंश्रितैः । बालवृद्धातुरैर्वैद्यैर्ज्ञातिसम्बन्धिबान्धवैः ॥१०॥ मातापितृभ्यांयामीभिर्भ्रात्रापुत्रेणभार्यया । दुहित्रादासवर्गेण विवादंनसमाचरेत् ॥११॥ ऋत्विक् पुरोहित, आचार्य मातुल अर्थात् मामा, अतिथि, तथा संश्रित अर्थात् मित्र, बालक, वृद्ध, आतुर, नामदुःखी, वैद्य, ज्ञाति, संबंधी अर्थात् श्वशुरादिक, बान्धव अर्थात् कुटुम्बी, माता, पिता, तथा यामि, भ्राता, पुत्र, तथा भार्या अर्थात् स्त्री, दुहिता अर्थात् कन्या, दासवर्ग अर्थात् सेवकलोग इनसे विवाद कभी न करे और औरों से भी विवाद न करे विवाद का करना दुःखमूलही है इससे सज्जनों को किसी से विवाद करना न चाहिये ॥ ११ ॥ प्रतिग्रहसमर्थोपिप्रसङ्गन्तत्रवर्ज-येत् । प्रतिग्रहेणह्यस्याशुब्राह्मंतेजःप्रशाम्यति ॥ १२ ॥ प्रतिग्रह लेने में समर्थ अर्थात् गुणवान् भी होय और उसको कोई देते भी होंय तो भी किसी से दान न लेवै किंतु अध्यापन नाम पढ़ाना याजन नाम यज्ञ का कराना अथवा अपने परिश्रम से आजीविका को करै और जो पुरुष प्रतिग्रह लेता है उसका ब्राह्म तेज अर्थात् विद्या नष्ट हो जाती है क्योंकि वह खुशामदी होजायगा इससे दान का लेना उचित नहीं ॥१२॥ अतपास्त्व-नधीयानः प्रतिग्रहरुचिर्द्विजः । अम्भस्यश्मप्लवेनेव सहतेनैवमज्ज-

नि ॥ १३ ॥ जो पुरुष तपस्वी और विद्वान् नहीं और प्रतिग्रह में अति प्रसक्त है वह उसी दान के साथ पाप समुद्र में डूब मरेगा जैसे कोई पाषाण की नौका से समुद्र वा नदी को तरे वह तरेगा तो नहीं परन्तु डूब के मर जायगा वैसे ही प्रतिग्रह लेने वाले मूर्ख की गति होगी ॥१३॥ त्रिष्वप्येतेषु दत्तं हि विधिनाप्यर्जितं धनम् । दातुर्भवत्यनर्थाय परत्रादातुरेव च ॥ १४ ॥ एक तो अविद्वान् दूसरा वैडालव्रतिक तीसरा बकव्रतिक इन तीनों को तो जलका भी दान न देवे और जिसने विधि अर्थात् धर्मसे धन का संचय किया होय उस धनको तीनों को कभी न देवे जो कोई दाता देगा उसको बड़ा दुःख होगा और परलोक में उन तीन पुरुषों को इस लोक में भी बड़ा दुःख होगा ॥ १४ ॥ यथाप्लवेनौपलेन निमज्जत्युदके तरन् । तथा निमज्जतोऽधस्तादज्ञौ दातृप्रतीच्छकौ ॥ १५ ॥ जैसे कोई पाषाण की नौका पर बैठ के उदक में तरा चाहै वह तर तो नहीं सकेगा परन्तु डूब के मर जायगा वैसे ही परीक्षा के विना मूर्खों को जो दान देता है और जो मूर्ख लेने वाले हैं वे सब अज्ञान के होने से अधोगति को पावेंगे अर्थात् दुःख और नरक को प्राप्त होंगे इनको कभी कुछ सुख न होगा इससे परीक्षा करके श्रेष्ठ और धर्मात्माओं ही को दान देना चाहिये अन्य को नहीं वैडालव्रतिक और बकव्रतिक मनुष्यों का यह लक्षण है ॥ १५ ॥ धर्मध्वजी सदालुब्धश्छाद्मिको लोकदम्भकः । वैडालव्रतिको ज्ञेयो हिंस्रःसर्वाभिसन्धकः ॥१६॥ अधोदृष्टिर्नैष्कृतिकः स्वार्थसाधनतत्परः । शठो मिथ्याविनीतश्च बकव्रतचरो द्विजः ॥ १७ ॥ जो मनुष्य धर्मध्वजी अर्थात् धर्म तो कुछ न करै अथवा कुछ करै भी तो फिर अपने मुख से कहै कि मैं बड़ा पण्डित वैराग्यवान् योगी तपस्वी और बड़ा धर्मात्मा हूं इसको धर्मध्वजी कहते हैं और सदा लोभी होय अर्थात् जो कुछ पावै सो भूमि में अथवा

जहां तहां रख छोड़े खाने में भी लोभ करै और बड़ा कपटी छली होय लोगों को दंभ का उपदेश करै अर्थात् जैसेकि संप्रदायी लोग उपदेश करते हैं कि तुलसी की माला धारण करने से वैकुंठ को जाता है और सब पापों से छूट जाता है तथा रुद्राक्ष माला धारण करने से कैलाश को जाता है और सब पापों से दूर हो जाता है और गङ्गादिक तीर्थ राम शिवादिक नाम स्मरण और काश्यादिकों में मरण से मुक्ति हो जाती है इस प्रकार के उपदेश करके दंभ और अभिमान में लोगों को गिरा देते हैं और आप भी गिरे रहते हैं इससे दुःख और बन्धन तो होहोगा और मुक्ति कभी न होगी किंतु धर्माचरण विद्या और ज्ञान इन के बिना मुक्ति कभी नहीं हो सकती हिंस्रः नाम रात दिन जिस का चित्त प्राणियों को पीड़ा देने में नित्य प्रवृत्त रहै उस को हिंस्र कहते हैं सर्वाभिसन्धक अर्थात् अपने प्रयोजन के लिये दुष्ट तथा श्रेष्ठों से मेल रक्खे सो मेल धर्म में से नहीं किन्तु अधर्म ही से धनादिक हरण करनेके लिये प्रीति करै उनको सर्वाभिसन्धक कहते हैं यह बैडालव्रतिक का लक्षण है ॥ क्रोध के मारे वा कपट छल से अधोदृष्टि नाम नीचे देखता रहै कोई जाने कि यह बड़ा शान्त और वैराग्यवान् है नैष्कृतिक नाम यदि कोई एक कठिन वचन बोले कहै और उसके बदलेमें दस कठिन वचन भी उसको कहे तो भी उसकी शान्ति न होय उसको नैष्कृतिक कहते हैं स्वार्थ साधन तत्पर अर्थात् अपने स्वार्थ साधन में ही तत्पर अर्थात् किसीको पीड़ा तथा हानि हो जाय और वह अपने स्वार्थ के आगे कुछ न गिने शठ अर्थात् मूर्ख जो हठ दुराग्रह से निर्बुद्धि होय और अन्य का उपदेश न मानै उसको शठ कहते हैं मिथ्या विनीत नाम विनय तथा नम्रता करै सो कुटिलता से करै शुद्ध हृदयसे नहीं ऐसे लक्षण वाले को बकव्रतिक कहते हैं अर्थात् जैसे बक नाम बगुला जल

के समीप एकाग्रचित्त होके खड़ा रहता है और मच्छी को देखता भी रहता है जब अवसर उसके ध्यान में आता है तब झट को उठा के खा लेता है तथा जितने धूर्त पाखण्डी होते हैं वे दूसरे का प्राण भी हरण कर लेते हैं निरन्तर उनको कभी दया नहीं आती ऐसेही जितने चोर शाक्त गाणपत्य वैष्णवादिक संप्रदाय वाले हैं इन में कोई लाखों में एक अच्छा होता है और सब वैसे ही होते हैं इससे गृहस्थ लोग इनकी सेवा कभी न करें १७ ॥ सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते । वार्यन्नगोमहीवासस्तिलकाञ्चनसर्पिषाम् ॥ १८ ॥ वारि नाम जल अन्न गाय मही अर्थात् पृथिवी वास नाम वस्त्र तिल कांचन नाम सुवर्ण सर्पि नाम घी ८ इन सब दानों से ब्रह्म अर्थात् वेद विद्या का दान सब से श्रेष्ठ दान है ऐसा अन्य कोई दान नहीं है इससे सब गृहस्थों को अर्थ सहित वेद पढ़ने और पढ़ाने में शरीर मन और धन से अत्यन्त पुरुषार्थ करना उचित है ॥ १८ ॥ धर्मं शनैस्सञ्चिनुयाद्वल्मीकमिव पुत्तिकाः । परलोकसहायार्थं सर्वभूतान्यपीडयन् ॥ १९ ॥ सब भूतों को पीड़ा के विना धीरे धीरे धर्म का संचय मनुष्यों को करना उचित है जैसे कि चींटी धीरे २ मिट्टी को बाहर निकाल के संचय कर देती है तथा धान्य कणों का भी धीरे २ बड़ा संचय कर देती है वैसे ही मनुष्यों को धर्म का संचय करना उचित है क्योंकि धर्म ही के सहाय से मनुष्यों को सुख होता है और किसी के सहाय से नहीं ॥ १९ ॥ नामुत्र हि सहायार्थं पितामाता च तिष्ठतः । न पुत्रदारं न ज्ञातिर्धर्मस्तिष्ठति केवलः ॥ २० ॥ परलोक में सहाय के करने को पिता माता पुत्र स्त्री और ज्ञाति नाम कुटुम्बी लोग कोई समर्थ नहीं है केवल एक धर्म ही सहायकारी है और कोई नहीं ॥ २० ॥ एकः प्रजायते जन्तुरेक एव प्रलीयते । एकोऽनुभुङ्क्ते सुकृतमेक एव च दुष्कृतम् ॥ २१ ॥ देखना चाहिये कि जब

जन्म होता है तब एक ही का होता है और मरण होता है तो भी एक ही का होता है तथा सुख का भोग करता है तो एक ही करता है अथवा दुःख का भोग करता है तो एक ही करता है इस में संग किसी का नहीं इससे सब मनुष्यों को यह उचित है कि अपना पालन वा माता पितादिकों का पालन धर्म ही से जितना धनादिक मिले उतने ही से व्यवहार और पालन करें अधर्म से कभी नहीं क्योंकि ॥ एकः पापानि कुरुते फलं भुङ्क्ते महाजनः । भोक्तारो विप्रमुच्यन्ते कर्ता दोषेण लिप्यते ॥ यह महाभारत का श्लोक है इस का यह अभिप्राय है कि जो अधर्म करेगा उसका फल वही भोगेगा और माता पितादिक सुख के भोग करने वाले तो हो जायंगे परंतु दुःख जो पाप का फल उस में से भाग कोई न लेगा किन्तु जिसने किया वही पाप का फल भोगेगा और कोई नहीं ॥ २१ ॥ मृतं शरीरमुत्सृज्य काष्ठलोष्टसमं क्षितौ । विमुखा बान्धवा यान्ति धर्मस्तमनुगच्छति ॥ २२ ॥ देखना चाहिये कि जब कोई मर जाता है तब काष्ठ वा लोष्ठ जैसा कि मिट्टी के ढेले को पृथिवी में फेंक के चले जाते हैं वैसे मरे हुए शरीर को अग्नि वा पृथिवी में डाल के विमुख नाम पीठ कर के कुटुम्बी लोग चले आते हैं कुछ सहायता नहीं करते ॥ २२ ॥ तस्माद्धर्मं सहायार्थं नित्यं संचिनुयाच्छनैः । धर्मेण हि सहायेन तमस्तरति दुस्तरम् ॥ २३ ॥ जिससे नित्य ही सहाय के लिये धीरे २ धर्म ही का संचय करें क्योंकि धर्म ही के सहाय से दुस्तर जो तम अर्थात् जन्म मरणादिक दुःख सागर का जो संयोग उसका नाश और मुक्ति अर्थात् परमेश्वर की प्राप्ति और सब दुःख की निवृत्ति धर्म ही से होती है अन्यथा नहीं ॥ २३ ॥ धर्मप्रधानं पुरुषं तपसा हतकिल्बिषम् । परलोकं नयत्याशु भास्वन्तं खशरीरिणम् ॥ २४ ॥ जिस पुरुष को धर्म ही प्रधान है अधर्म के लेश मात्र भी जिस की प्रवृत्ति नहीं

तथा दान जो धर्म का अनुष्ठान है और पाप का त्याग इससे जिस का पाप नष्ट होगया है उस को वही धर्म परलोक अर्थात् स्वर्ग लोक अथवा परमानन्द परमेश्वर को प्राप्त कर देता है वह किस प्रकार का शरीर वाला होता है भास्वन्त अर्थात तेजोमय वा ज्ञान युक्त, और आकाशवत् स्वच्छ, शस्त्रेण काटने वा दाह करने में न आवै ऐसा उस का सिद्ध शरीर होता है जैसा कि योगियों का ॥ २४ ॥ दृढकारीमृदुर्दान्तः क्रूराचारैरसंवसन् । अहिंस्रोदमदानाभ्यां जयेत्स्वर्गं तथाव्रतः ॥ ॥ २५ ॥ म० दृढकारी अर्थात् जो कुछ धर्म कार्य अथवा धर्म युक्त व्यवहार को करै सो दृढ़ ही निश्चय से करै और मृदु अर्थात अभिमानादिक दोष से रहित होय दान्त अर्थात जिते- न्द्रिय होय और क्रूराचार अर्थात् जितने दुष्ट हैं उनका साथ कभी न करै किन्तु श्रेष्ठ पुरुषों ही का संग करै दम अर्थात जिस का मन वशीभूत होय दान अर्थात वेद विद्या का नित्य दान करना और अहिंस्र अर्थात किसी से वैर बुद्धि नहीं ऐसाही आचरणवाला पुरुष स्वर्ग को प्राप्त होता है अन्य नहीं २५ ॥ वाच्यर्थानियताःसर्वे वाङ्मूलावाग्विनिःसृताः । तांस्तुयःस्ते- नयेद्वाचं ससर्वस्तेयकृन्नरः ॥ २६ ॥ जिस पुरुष की वाणी मिथ्या होती है अथवा जो मिथ्या भाषण करता है उसने सब चोरी करली क्योंकि वाणी ही में सब अर्थ निश्चित रहते हैं केवल वचनहीं व्यवहारों का मूल है उस वाणी से जो मिथ्या बोलता है वह सब चोरी आदिक पापों को अवश्य करता है इससे मिथ्या भाषण करना उचित नहीं ॥ २६ ॥ आचाराल्लभ- तेह्यायुराचारादीप्सिताःप्रजाः । आचाराद्धनमक्षय्यमाचारो- हन्त्यलक्षणम् ॥ २७ ॥ जो सत्पुरुषों के श्रेष्ठ आचार के करने से आयु, श्रेष्ठ, प्रजा और अक्षयधन प्राप्त होते हैं और पुरुष में जितने दुष्ट लक्षण हैं वे सब सत्पुरुषों के आचरण

और संग करने से नष्ट होजाते हैं और श्रेष्ठ लक्षण भी उस में आजाते हैं इस से श्रेष्ठ ही आचार को करना चाहिये ॥ २७ ॥ दुराचारोहिपुरुषो लोकेभवति निन्दितः । दुःखभागीचसततं व्याधितोऽल्पायुरेवच ॥ २८ ॥ दुष्ट आचार करने वाला पुरुष लोक में निन्दित होता है निरन्तर दुःखी ही रहता है अनेक काम औपाधिक हृदय के रोग और ज्वरादिक शरीर के रोगों से शीघ्र मर भी जाता है इस से दुष्टों का आचार कभी न करना चाहिये ॥ २८ ॥ यद्यत्परवशंकर्म-तत्तद्यत्नेनवर्जयेत् । यद्यदात्मवशंतुस्यात्तत्तत्सेवेतयत्नतः ॥ २९ ॥ जो जो पराधीन कर्म होय उन को यत्न से छोड़ देवे और जो स्वाधीन होय उन को यत्न से करता जाय ॥ २९ ॥ सर्वंपरव-शंदुःखंसर्वमात्मवशंसुखम् । एतद्विद्यात्समासेन लक्षणंसुखदुःख-योः ॥ ३० ॥ जो जो पराधीन कर्म हैं वे सब दुःख रूप ही हैं और जो २ स्वाधीन कर्म हैं सो २ सब सुख रूप हैं सुख और दुःख का समास अर्थात संक्षेप से यही लक्षण है सो जान लेवें ॥ ३० ॥ यमान्सेवेतसततंनियमान्केवलान्बुधः । यमान्पतत्यकुर्वाणोनियमान्केवलान्भजन् ॥ ३१ ॥ यमों का निरन्तर सेवन करना चाहिये वे यम पूर्व कह दिये हैं वहीं जान लेना और यमों को छोड़ के पांच जो नियम हैं उन का सेवन करें वे नियम ये हैं । शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधाना-नियमाः । यह योगशास्त्र का सूत्र है शौच नाम पवित्रता रात दिन नहाने धोने में लगा रहै सन्तोष अर्थात् केवल आलस्य से दरिद्र बना रहै तप नाम निरन्तर कृच्छ्र चान्द्रायणादिकों के करता रहै स्वाध्याय अर्थात केवल पढ़ने और पढ़ाने ही में प्रवृत्त रहै धर्मानुष्ठान अथवा विचार कभी न करै और ईश्वर प्रणिधान अर्थात् स्वार्थ के लिये ईश्वरकी प्रसन्नता चाहै वे सर्व व्यवहारों की रीति से पांच नियमों के किये गये और योगशास्त्र की रीति

से नियमों के इस प्रकार के अर्थ हैं मृत्तिका और जलादिकों से बाह्य शरीर की शुद्धि और सत्यभाषणादिकों के ग्रहण और ईर्ष्यादिकों के त्याग से चित्त की शुद्धता इसका नाम शौच है धर्मयुक्त पुरुषार्थ करने से जितने पदार्थ प्राप्त होंय उतने ही में संतुष्ट रहै और पुरुषार्थ का त्याग कभी न करै इस का नाम सन्तोष है क्षुधा, तृषा, शीत और उष्ण इत्यादिक द्वंद्वों को सहै और कृच्छ्र, चान्द्रायणादिक व्रत भी करै इसका नाम तप है मोक्ष शास्त्र अर्थात् उपनिषदों का अध्ययन करै ओंकार के अर्थ का विचार और जप करै इस का नाम स्वाध्याय है पाप कर्म कभी न करै यथावत् शुभकर्मों को करके सिवाय परमेश्वर की प्राप्ति के फल की इच्छा न करै इस का नाम ईश्वर प्रणिधान है इन को जो करता रहै परन्तु यमों को न करै उस को उत्तम सुख नहीं होगा किन्तु यमों का करना उन के साथ गौण नियमों का भी करनाहीं उचित है और केवल नियमों का करना उचित नहीं ऐसे यथावत् विवाह करके गृहस्थ लोग वर्त्तमान करैं यह जितनी विद्याशाली स्त्री और पुरुष द्विज अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य पूर्वोक्त नियम से करैं विवाह का विधान संक्षेप से लिख दिया और सब मनुष्योंके बीचमें स्त्री और पुरुषजो मूर्ख होंय उनका यज्ञोपवीत भी हुआ होय तो उसको तोड़ के शूद्र कुल में करदें उन का परस्पर यथायोग्य विवाह भी होना चाहिये वे सब द्विजों की सेवा करैं और द्विज लोग उनको अन्न वस्त्रादिक उनके निर्वाह के लिये देवैं और यह बात भी अवश्य होना चाहिये कि देश देशान्तर से विवाह का होना उचित है क्योंकि पूर्व, उत्तर, दक्षिण और पश्चिम देशोंमें रहनेवाले मनुष्यों में परस्पर विवाह के करने से प्रीति होगी और देश देशान्तरों के व्यवहार भी जानें आपमें बलादिक गुण भी तुल्य होंगे और भोजन व्यवहार भी एकही होगा

इससे मनुष्यों को बड़ा सुख होगा जैसे कि पूर्व दक्षिण देश की कन्या और पश्चिम उत्तर देश के पुरुषों से विवाह जब होगा और पश्चिम उत्तर देश के मनुष्यों की कन्या और पूर्व तथा दक्षिण देश में रहने वाले पुरुषों से विवाह होगा तब बल बुद्धि पराक्रमादिक तुल्य गुण हो जायंगे इस द्वारा और आने जाने से परस्पर प्रीति बढ़ेगी और परस्पर गुण ग्रहण होगा और सब देशों के व्यवहार सब देशों के मनुष्यों को विदित होंगे परस्पर विरोध जो है सो नष्ट होजायगा इससे मनुष्यों को बड़ा आनन्द होगा पूर्वपक्ष जैसे स्त्री मर जाती है तब पुरुष का दूसरी बार विवाह होता है वैसे स्त्री का पति मरने से विधवाओं का विवाह होना चाहिये वा नहीं उत्तर विवाह तो न होना चाहिये क्यों कि बहुत बार विवाह की रीति जो संसार में होगी तो जब तक पुरुष के शरीर में बल होगा तब तक वह स्त्री उसके पास रहेगी जब वह निर्बल होगा तब उस को छोड़ के दूसरे पुरुष के पास जायगी जब दूसरा भी बल रहित होगा तब वह तीसरे के पास जायगी जब तीसरा भी बल रहित होगा तब चौथे के पास जायगी ऐसी स्त्री जबतक वृद्धा न होगी तब तक बहुत पुरुषों का नाश कर देगी जैसे कि एक वेश्या बहुत पुरुषों को नष्ट कर देती है वैसे सब स्त्री हो जायंगी और विषदानादिक भी होने लगेंगे इससे द्विज कुल में दो बार विवाह का होना उचित नहीं स्त्रियों का और पुरुषों का भी बहुत विवाह होना उचित नहीं क्यों कि पुरुषों को भी वीर्य की रक्षा करनी उचित है जिससे शरीर में बल पराक्रमादिक भी मरण तक बने रहैं और एक पुरुष बहुत स्त्री के साथ विवाह करता है यह तो अत्यन्त दुष्ट व्यवहार है इस को कभी न करना चाहिये तथा कन्या और वर का पिता जो धन लेके विवाह करते हैं यह भी अत्यन्त दुष्ट व्यवहार है जैसे कि श्याम

काशी कान्यकुब्जों में है बहुत गृहस्थ इससे दरिद्र होजाते हैं धन के नाश होने से दरिद्र लोग विवाह करने में बड़ा दुःख पाते हैं बहुत कन्या वृद्ध हो जाती हैं और विवाह के बिना वृद्ध होके मर जाती हैं इससे इस दुष्ट व्यवहार को छोड़ना उचित है और बंगाले में कुलीन लोगों में बहुत स्त्रियों के साथ एक पुरुष विवाह कर लेता है एक जो वह मर जाय तो एक के मरने से वे सब स्त्री विधवा होजाती हैं यह भी अत्यन्त दुष्ट व्यवहार है इसको सज्जनों को छोड़ना चाहिये और जो विधवा होजाती हैं उनका कुछ आधार नहीं होने से भी बहुत अनर्थ होते हैं वे कन्या बाल्यावस्था वा युवावस्था में विधवा होजाती हैं बहुत दुःखी होती और वे कुकर्म भी करती हैं बहुत गर्भहत्या और बालहत्या भी होती है इससे विधवाओं का पति के बिना रहना भी उचित नहीं क्योंकि इससे बहुत अनर्थ होते हैं इससे इस व्यवहार का रहना भी उचित नहीं फिर क्या करना चाहिये कि प्रथम तो जब पूर्ण युवावस्था होय तब विवाह होना चाहिये जिससे कि विधवा भी बहुत न होंगी फिर जब कोई विधवा होय तब जो पीछी अपना अपने गोत्र और अपनी जाति में देवर अथवा ज्येष्ठ जो संबंध से होय उससे विधवा का पाणिग्रहण होना चाहिये परन्तु स्त्री की इच्छा से सब जिस स्त्री का पति मर जाय और मरने का शोक भी निवृत्त होजाय अर्थात् त्रयोदश दिवस के अनन्तर जब कुटुम्ब के श्रेष्ठ मनुष्य विधवा स्त्री के पास जाके उससे पूछें कि तेरी क्या इच्छा है जो वह विधवा कहै कि मेरी इच्छा न सन्तान और न नियोग की है तब तो वह स्त्री चान्द्रायणादिक व्रत सदा परमेश्वर का ध्यान और धर्म का अनुष्ठान करै ऐसे ही मरण तक धर्म का आचरण करै दूसरे पुरुष का मन से भी चिन्तन न करै और जो विधवा कहै कि मेरा पुत्र के बिना निर्वाह न

होगा तब नव पुरुषों के साम्हने देवर वा ज्येष्ठ का पाणिग्रहण करके उससे एक वा दो पुत्र उत्पादन करले अधिक नहीं इसमें ऋग्वेद के मन्त्र का प्रमाण है ॥ कुहस्विद्दोषा कुहवस्तोरश्विना कुहाभिपित्वं करतः कुहोषतुः को वां शयुत्रा विधवेव देवरं मर्यं न योषा कृणुते सधस्थ आ । इसका यह अभिप्राय है कि स्त्री और पुरुष ये दोनों के प्रति प्रश्न की नांई कहा है आप दोनों दोषा अर्थात् रात्रि कुह नाम कौन स्थान में वास करते भये और किस स्थान में अश्वि नाम दिवस में वास किया था किस स्थान में इन दोनों ने अभिपित्वं अर्थात प्राप्ति इन पदार्थों की की थी इन दोनों का निवासस्थान किस देश में था और शयुत्रा नाम शयनस्थान इन दोनों का किस स्थान में है यह दृष्टान्त भया और इसके यह अभिप्राय भी आया कि स्त्री और पुरुष का वियोग कभी न होना चाहिये सब दिन स्थान और सब देशों में संगही संग रहैं अब यह दृष्टान्त है कि जैसे विधवा देवर के साथ रात्रि दिवस और अभिलाषा करना एक देश में वास एक स्थान में शयन और संग २ रहती है और देवर को सधस्थ अर्थात् स्थान में आकृणुते अर्थात स्वीकार करके रखती और सन्तानोत्पत्ति करती है वैसे उन दोनों से भी वेदमन्त्र से पूछा गया और देवर शब्द का निरुक्त में भी अर्थ लिखा है कि ॥ देवरः कस्माद्द्वितीयो वर उच्यते । देवर अर्थात् विधवा को जो दूसरा वर पाणिग्रहण करके होता है उस पुरुष को देवर कहते हैं इस निरुक्त से वर का बड़ा भाई अथवा छोटा भाई वा और कोई भी विधवा का जो दूसरा पति होय उसी का नाम देवर आया इस मन्त्र से विधवा का नियोग अवश्य करना चाहिये यह अर्थ आया और मनुस्मृति में भी लिखा है ॥ देवराद्वा सपिण्डाद्वा स्त्रिया सम्यङ्नियुक्तया । प्रजेप्सिताधिगन्तव्या सन्तानस्य परिक्षये ॥ १ ॥ देवर अथवा कः कोई देवर को

ज्येष्ठ के स्थान में कोई पुरुष होय उससे विधवा स्त्री का नियोग करना चाहिये और जिसका वृद्ध स्त्री के साथ नियोग भया वह वृद्ध स्त्री के साथ गमन करे परन्तु जिस स्त्री को सन्तान की इच्छा होय और सन्तान के भाव में भी नियोग का होना उचित है ॥ १ ॥ विधवायांनियुक्तस्तुघृताक्तोवाग्यतोनिशि । एकमुत्पादयेत्पुत्रंनद्वितीयंकथंचन ॥ २ ॥ द्वितीयमेकेप्रजनंमन्यन्ते-स्त्रीषुतद्विदः । अनिर्वृत्तंनियोगार्थम्पश्यन्तो धर्मतस्तयोः ॥ ३ ॥ जो विधवा के साथ नियुक्त होय सो रात्रि के दोनों मध्य पहरों में घृत का शरीर में लेपन करके चुपका विधवा को वीर्यप्रदान करे मौन करके अर्थात् बहुत मोहित होके क्रीड़ासक्त न होय किन्तु सन्तानोत्पत्ति मात्र प्रयोजन रक्खे ॥ २ ॥ कई एक आचार्य ऋषि लोग ऐसा कहते हैं कि दूसरा भी पुत्र विधवा को होना चाहिये क्योंकि एक पुत्र जो हो जाता है उससे नियोग का प्रयोजन सब सिद्ध नहीं होता ऐसेही धर्म से विचार करके कहते हैं कि दो पुत्र का होना उचित है ॥ ३ ॥ विधवायांनियोगार्थेनिर्वृत्तेतुयथाविधि । गुरुवच्चस्नुषावच्चवर्तेया-तांपरस्परम् ॥ ४ ॥ विधवा में नियोग का जो प्रयोजन कि दो पुत्र का होना सो विधि पूर्वक जब होगया उसके पीछे वह विधवा नियुक्त पुरुष को गुरुवत् माने और वह पुरुष उस विधवा को पुत्र की स्त्री की नाईं माने अर्थात् फिर समागम कभी न करें और जैसे कि पहिले सब कुटुम्बियों के सामने पाणिग्रहण किया था और नियम भी किया था कि जब तक दो पुत्र न होवें तब तक नियोग रहै फिर वैसे फिर भी सब कुटुम्बियों के सामने दोनों कह देवें कि हम लोगों का नियम पूर्ण होगया अब हम लोग ऐसा काम न करेंगे ॥ ४ ॥ नियु-क्तौयौविधिंहित्वावर्तेयातांतुकामतः । तावुभौपतितौस्यातांस्नु-षागगुरुतल्पगौ ॥ ५ ॥ फिर जो वे दोनों विधि अर्थात् उस

मर्यादा को छोड़ के कामातुर होके समागम करें तो पतित होजांय क्योंकि ज्येष्ठ और कनिष्ठ इन दोनों को जैसे पुत्र वा पुत्र की स्त्री से गमन करने का पाप होता है वैसाही पाप होता है अर्थात फिर कभी परस्पर कामक्रीड़ा न करें ॥ ५ ॥ नान्यस्मिन्विधवानारीनियोक्तव्याद्विजातिभिः । अन्यस्मिन्हिनियुञ्जानाधर्मंहन्युःसनातनम् ॥ ६ ॥ उक्त प्रकार से भिन्न पुरुष के साथ विधवा का नियोग कभी न करें अपने कुटुम्बही में करें जिससे स्त्री जहां की तहां बनी रहैं और सन्तान से भी कुल की वृद्धि बनी रहै नाश कभी न होय जो और किसी पुरुष के साथ नियोग करेंगे तो स्त्री हाथ से जायगी और सन्तान की हानि होने से कुल की भी हानि होगी फिर जो कुल की वृद्धि करना सो सनातन धर्म नष्ट होजायगा इससे अपनेही कुटुंब में नियोग करना उचित है इस बात की सज्जन लोग शीघ्रही प्रवृत्ति करें क्योंकि इसके विना विधवा लोगों को अत्यन्त दुःख होता है और बड़ा दोष होता है संसार में इस बातके करने से यह दुःख और पाप कभी न होंगे ॥ ५ ॥ ज्येष्ठोयवीयसोभार्य्यांयवीयान्वाग्रजस्त्रियम् । पतितौभवतोगत्वा नियुक्तावप्यनापदि ॥ ६ ॥ ज्येष्ठ कनिष्ठ की तथा कनिष्ठ ज्येष्ठ की स्त्री से नियुक्त भी होवें तो भी आपत्काल के विना अर्थात दो पुत्र होने के पीछे भी गमन करें तो पतित होजांय इससे आपत्काल ही में नियोग का विधान है ॥६॥ यस्याम्रियेतकन्याया वाचासत्येकृतेपतिः । तामनेनविधानेननिजोविन्देतदेवरः ॥७॥ जिस कन्या का पाणिग्रहण मात्र तो हो जाय और पति का समागम न होने तो उस स्त्री का देवर के साथ विवाह होना उचित है ॥ ७ ॥ परन्तु इस प्रकार से दोनों विधान करें ॥ यथाविध्यधिगम्यैनांशुक्लवस्त्रांशुचिव्रताम् । मिथोभजेताप्रसवात्-सकृत्सकृदृतावृतौ ॥ ८ ॥ यथाविधि विधवासे देवर विवाह करके

परस्पर आठ२ में एकरवार समागम करें परंतु वह स्त्री शुक्रमस्थापन करे परन्तु जिस प्रकारसे कुआचार होता जोकि रो और दुष्टाचारवालोंका नहीं ८ सा चेदक्षतयोनिः स्याद्गतप्रत्यागतापि वा। पौनर्भवेन भर्त्रा सा पुनः संस्कारमर्हति॥९॥ जो स्त्री अक्षतयोनि अर्थात् विवाह तथा कानें आने मात्र व्यवहारको हुआ होय परंतु पुरुष से समागम न भया होय तो पौनर्भव पुरुष अर्थात् विधवाके नियोग से जो उत्पन्न भया होय उसके साथ उस विधवाका विवाहही होना उचित है ॥९॥ यह विधवाओं योगका प्रकरण पूरा होगया जोकि विधवा नहीं है और किसीप्रकारका आपत्काल है उसके लिये ऐसा विधान है कि जिसका पति परदेशको चला जाय और समयकेऊपर न आवे उसही के लिये इसप्रकारका विधान शास्त्रमें है और पुरुष केलिये भी है। प्रोषितो धर्मकार्यार्थं प्रतीक्ष्योऽष्टौ नरः समाः। विद्यार्थं षड्यशोऽर्थं वा कामार्थं त्रींस्तु वत्सरान् ॥१०॥ जो पुरुष स्त्री को छोड़के परदेशको जाय और जो धर्म ही के लिये गया होतो आठवर्ष पर्यन्तही पति की मार्ग प्रतीक्षा करै, और जो उससमय पर न आवैतो स्त्री पूर्वोक्त प्रकारसे नियोग करके पुत्रोत्पत्ति करै, और जो पति जीता ही आजावैतो नियोग छूटजाय जिससे विवाह किया था उसके पास रहै और किसी उत्तम विद्या पढ़ने के लिये गया होतो छः वर्षतक परीक्षा करै तथा कामनाफल केलिये गया होय किसी धनलाभके लिये प्रतिष्ठा प्राप्त करने को गया होतो तीन वर्षतक प्रतीक्षा करै कि फिर उक्त प्रकार से नियोग करके पुत्रोत्पत्ति करलेवे ॥१०॥ संवत्सरं प्रतीक्षेत द्विषन्तीं योषितं पतिः। ऊर्ध्वं संवत्सरात्त्वेनां दायं हृत्वा न संवसेत् ॥११॥ जो दुष्टाचारके स्त्री प्रतिकूल होजाय अर्थात् आगे पिता वा भाईके पास रहके चली जाय जो पति एकवर्ष पर्यन्त राह देखै फिर दाय अर्थात् जो कुछ अलंकार गहनादिक दिया था उसको लेके उसका संग न करै अर्थात् दूसरा विवाह करलेवे ॥११॥ मद्यपासाधुवृत्ता च प्रतिकूला च या भवेत्। व्याधिता वाधिवेत्तव्या हिंस्रार्थघ्नी च सर्वदा ॥१२॥ जो स्त्री मद्य पीती होय तथा मिथ्याही बोले

आज्ञाको नमाने व्यभिचारिणी रोगयुक्त होजाय व्यभिचारिकदेके कोई मनुष्यको मारडाले और घरके पदार्थोंका सदा नाशकरती होयतो उसस्त्रीको छोड़के दूसरा विवाह करलेवे ॥१२॥ वन्ध्याष्टमेऽधिवेद्याब्दे दशमेतुमृतप्रजा। एकादशेस्त्रीजननीसद्यस्त्वप्रियवादिनी॥१३॥ विवाहकेपीछे ८ आठवर्ष तकगर्भनरहै, और वैद्यकशास्त्रकी रीतिसे परीक्षाभी करलेफिर अष्टमेवर्ष दूसराविवाह करलेऔर वन्ध्याका यथावत् पालनकरैपरंतुत्यागन नकरै औरजिसके संतानहोके मर जांयऔर एकभीनजीवेतो १० दशवेंदूसराविवाहकरलेवैऔरउसको अन्नवस्त्रादिकदेवैऔरजिसस्त्रीसेकन्याही बहुतहोवेंपुत्रएकभीनहो वेतो ११ ग्यारहवेंवर्ष दूसराविवाहकरले औरउसस्त्रीकापालनकरै जोदुष्टस्त्रीहोय औरअप्रिय वचनबोलैतो उसकोशीघ्रहीछोड़ केदूसरा विवाह करलेवै १३ वैसापुरुषभीदुष्टहोजाय,तोस्त्रीभीउसको छोड़केधर्मसे नियोगकरके पुत्रोत्पत्तिकरले औरएकऐसाभीव्यवहार है इसको आपत्काल कहतेहैं कि अपनेशरीर सेपुत्रनहोय अर्थात् रोग सेवीर्यहीन होगयाहोय अथवास्त्रीके किसीरोगसेनपुंसकहोगयाहोय तो अपनेसवर्णजाति केपुरुषकेवीर्यसे पुत्रोत्पत्तिकरालेवैपरन्तुधर्मसे व्यभिचारसे नहीं इसीप्रकारसे १२ पुनःमनुस्मृतिमेंलिखेहैंजिसकोदे खनेकी इच्छाहोय सोदेखलेवै नियोगमेंऔरवेदव्यासऋषिपुत्रोंकेहो नेमें महाभारत में दृष्टान्तभी है जैसेकिचित्रांगद औरविचित्रवीर्य दोनों जबमरगए उनकेभाई जोव्यासजी उनके वीर्यसेतीनपुत्र उत्पन्न भएजिनमेंएक धृतराष्ट्र, दूसरापाण्डु,तीसराविदुरये तीनपुत्र सबसंसार में प्रसिद्ध हैं और युधिष्ठिर,भीम,अर्जुन,नकुलऔरसह देवये पांचओंके नियोगसे उत्पन्न भयेहैंयहबातसंसारमेंप्रसिद्धहै इससेनियोगका करना औरजोकराते पुत्रोंकाहोनाशास्त्रकीरीति औरयुक्तिसेठीकहै इसमें सब श्लोक मनुस्मृतिके लिखेहैं पूर्वपक्ष औरस्मृतिके श्लोक क्योंनहीं लिखे इसपरपक्षअन्यस्मृतियोंकावेदोंसे विरोध औरवेदमें प्रमाणभी किसीका नहींहै ऋषिमुनियोंकीकई

भी कोई स्मृति नहीं सिवाय मनुस्मृति के ॥ यद्वै किञ्च मनुरवदत्तद्भेषजं भेषजतायाः । यह छांदोग्यउपनिषद् की श्रुति है इसका यह अभिप्राय है कि जो कुछ मनु जी ने उपदेश किया है सो यथावत् वेदोक्त है और सत्य ही है जैसे कि रोग के नाश करने का औषध वैसा ही है यह एक मनुस्मृति ही का वेद में प्रमाण मिलता है और किसी स्मृति का नहीं और सब लोगों को भी यह बात सम्मत है ॥ वेदार्थोपनिबन्धृत्वात्प्राधान्यं हि मनोः स्मृतम् । मन्वर्थविपरीता या सा स्मृतिर्न प्रशस्यते ॥ इस श्लोक के सब पंडित लोग कहते हैं कि मनुस्मृति के अनुकूल जो स्मृति उसको मानना चाहिये और उससे विरुद्ध किसी स्मृति का नहीं सो एक बात में तो पंडितों को और मेरी सम्मत होगई परन्तु एक बात में विरोध होता है कि मनु के अनुकूल स्मृतियों को वे मानते हैं और मैं नहीं मानता क्योंकि मनुस्मृति के अनुकूल तो तब कोई स्मृति होगी जब मनुस्मृति के अर्थ ही को कहै फिर मनु जी ने तो सब अर्थ कह दिया है उसका कहना दूसरी बार व्यर्थ है क्योंकि पीसे को पीसना जो पीसना सो व्यर्थ ही होता है और मनुस्मृति में जो उपदेश करना था सो सब कर दिया है कुछ बाकी नहीं रक्खा इससे भी अन्य स्मृति का होना व्यर्थ ही है इस बात को पंडित लोग विचार करेंगे तो बहुत अच्छी बात है और महाभारत में भी जहां २ प्रमाण लिखा वहां २ मनुस्मृति ही का लिखा और किसी स्मृति का नहीं इससे जाना जाता है कि मनुष्यों ने ऋषियों के नाम प्रमाण के वास्ते लिख २ के अपने प्रयोजन के वास्ते बना लिया है और जो यह बात कहते हैं कि कलौ पाराशरी स्मृतिः । सो भी अत्यन्त अयुक्त है क्योंकि पाराशर के अनन्तर व्यास जी ने मनुस्मृति का ही प्रमाण लिखा सो क्यों लिखा शङ्कराचार्य जी ने भी मनुस्मृति का ही प्रमाण लिखा है और जो सत्य बात है उसका सब दिन प्रमाण होता है इसमें कुछ शङ्का नहीं इससे जो लोग कहते हैं कि कलौ में पाराशरी स्मृति का प्रमाण है सो मिथ्या बात है और पाराशरी स्मृति के आरंभ में यह बात लिखी है कि ऋषि लोगों ने व्यास जी के पास जाके पूछा कि युग

सेवसुध्यण यथावत्कहैं तबउनसे व्यासजीनेकहाकियैंयथावत्वर्णा-श्रम धर्मोंको नहीं जानता इसलिये मेरेपिता जो पराशर उनसे चलके पूछे वे सब धर्मों को यथावत्कहैंगे फिरउनके पासजाके सबलोगोंने प्रश्नकिया और पराशरजी उत्तरदेनेलगे उसमेंही पाराशरजीने कहाकि कलौपाराशराःस्मृताः। इसमें विचारना चाहिये कि व्यास जी वेदादिक सबशास्त्रजाननेवाले वर्णाश्रमधर्मकोक्या नहीं जानतेथे किन्तु अवश्यही जानतेथे औरपाराशर अपनेमुख से कैसे कहैंगेकि कलौमें पाराशर उक्तधर्मोंको मानना यहअयुक्तहै औरइसीमेंऐसेर अयुक्तश्लोक लिखेहैं कि कोई बुद्धिमान् उनका प्रमाणभीनकरैजैसे दुःशीलोपि द्विजःपूज्यो नतुशूद्रो जितेन्द्रियः। किंदुग्ध्वादिनीगौः— पृथग्गामचतुरवरवतीखरी ॥१॥ अश्वालम्भङ्गवालम्भसंन्यासंपलपैतृ-कम्। देवराच्चसुतोत्पत्तिं कलौपञ्चविवर्जयेत् ॥ नष्टे मृते नप्रजिते— क्लीबेच पतितेपतौ। पञ्चस्वापत्सु नारीणांपतिरन्यो विधीयते ॥२॥ इसमें देखना चाहियेकि कुकर्मी जो है सोई पतित होता है वहश्रेष्ठ कैसे होगा कभी न होगा औरजितेन्द्रिय अर्थात् श्रेष्ठ कर्मकरनेवाला शूद्रहै सो कभीभी नीचहोगा किन्तु कभी न होगा और गायतोपशु है सो पशुकी यथायोग्य करनाउचितहै कभीनहीं किन्तु उसकीतो रक्षापूजाहै कि घास, जल इत्यादिकोंसे उसकी रक्षाकरना सोयीदु-ग्धादिकधर्मोंजिनके वास्ते अन्यथानहीं औरगधीकीभी पूजावैसी ही होतीहै जिसको प्रयोजन रहता है वह प्रयोजन के वास्ते करतीही है १॥ औरदूसराश्लोक अश्वालम्भजो अश्वमेधगवालम्भ नामगोमेध औरसंन्यास ग्रहणऔर पलपैतृक पिण्डदान औरनियोग से देवरके नियोगसे पुत्रोत्पत्ति ये पांच कलयुगमें छोड़नाचाहिये इनकात्याग कभी नहीं इनसेबड़ा संसारका उपकारहै और कुछ पापनहीं इसके कहनेसे अश्वमेधादिकोंका त्यागनहींआया अश्वमेधऔरगोमेधकार जो करना उससेबड़ा संसारका उपकारहै सो पहिले कहदिया और संन्यासका त्यागकरैंगे तो धर्मकाखण्डनकरैंगे। जैसे द्विजोंका आदि क

उसरे तो संसारकी वृद्धि शान्ति होती इससे संन्यासका होना अवश्य है, और मांसके पिण्डदेनेमें तो कुछ पाप नहीं क्योंकि महाभारत अनुशासन केवलमांसः पितृदेवतः ॥१॥ यह महाभारत का वचन है मनुस्मृति तथा यज्ञेपित्र्यदैवतकर्माणि । अत्र पशवोहिंसायां नान्यत्रेत्यब्रवीन्मनुः ॥२॥ जो पदार्थ आप खाय उसीसे यज्ञ अवश्य करै अर्थात् पितृ देव पूजा भी उसीसे करै अर्थात् श्राद्ध और होम उसीका करै मधुपर्क विवाहादिक और गोमेधादिक यज्ञ और देवपितृकार्य इनमें मांस को जो खाना होय तो उसके वास्ते मांसके पिण्डकरनेका विधान है इससे मांसके पिण्ड देनेमें भी कुछ पाप नहीं देवरवा ज्येष्ठसे नियोग का विधि लिखदिया सो नहीं मानलेना क्योंकि पापोंकोन करना सो यह बात मिथ्या ही है २ अर्थात् परदेशको पति चलागया हो चाहे कोई दूसरा पति करले फिर जो पूर्वविवाहित पति आजाय तो दोनों में बड़ा बखेड़ा होय। क्योंकि एक कहेगा मेरी स्त्री है दूसरा कहेगा मेरी स्त्री है फिर क्याने व्यभिचारी कोऽसत्यवादी कोई अनाचारकारक दुराचारी मिथ्याही है और पतिव्रता के आपत्कालमें कहीं आपद्धर्म नहीं है यह स्त्री क्या करेगी इससे ये भी जो कोई मिथ्याही है मेंही प्रथमा ही मेंमिथ्या अशुद्ध बहुत हुए हैं और जो कोई सत्य है सो मनुस्मृति हीका है इससे पाराशरी का प्रमाण करना सज्जनों को उचित नहीं और जैसी पाराशरी वैसी याज्ञवल्क्यादिक स्मृतियां हैं इससे मनुस्मृति को छोड़के और किसीका प्रमाण करना उचित नहीं है अब आगे ऋतुदान प्रमाण लिखा कहते हैं मनुस्मृति की आज्ञा जब जिस दिन स्त्री रजस्वला होय उस दिनसे लेके १६ सोलह दिनतक ऋतुकाल है उन में से पहिले के चार दिन त्याज्य हैं और ११ ग्यारहवां और १३ तेरहवां दिन छोड़ देना और अमावस्या और पौर्णमासी भी त्याज्य है अर्थात् सोलह में से ८ दिन छोड़के रहे उन में भी छठवां, आठवां, दशवां, और १२ वां दिन भी ऋतुदान करने में अच्छे हैं क्योंकि इन दिनों में स्त्रीके शरीर की धातु स्वस्थता के हेतु से सन्तान बहुत होते हैं और ५ वां आदि

और ६ आठवें दिन मध्यम हैं क्योंकि उस दिन स्त्री के धातुओं का अ-
धिक न्यून होता है इसलिये ४ चार दिनों में वीर्यदान करेगा तो
प्रायः पुत्र होवेगा अथवा कन्या होगी तो वह भी होगी और जो
तीन दिनों में वीर्य दान करेगा तो नपुंसक कन्या होगी और नपुं-
सक भी होजावगे आश्चर्य नहीं इसलिये ४ चार दिन अथवा ७ सातवें दिन
वीर्य दान के उत्तम और मध्यम हैं, अन्य दिन में समागम करेगा तो
स्त्री वश संतान होगा इसलिये ११ ग्यारहवीं वा १३ तेरहवीं अमावस्या
और पौर्णमासी इन में वीर्य दान करेगा तो वीर्य नष्ट हो जायगा और
जो संतान होगा सो भी नष्ट होगा रोग के होने से क्योंकि प्रकृति में
स्त्री की धातु क्षिप्त होजाती है एक २ मास में स्त्री स्वभाव से रजस्वला
होती है, ...के सोलह दिन के पीछे ऋतु समय में गमन
करें क्योंकि जिसका वीर्य नष्ट होता और गर्भ भी नष्ट होता इससे नि-
ष्फल वीर्य का नाश करना न चाहिये जितने दिन गर्भ होवे उस दिन
से लेके ६ वर्ष तक स्त्री का त्याग करना अवश्य चाहिये क्योंकि गर्भ का
नाश और पुत्र का बल भी नष्ट हो जाता है इससे उत्तम पुरुष को स्त्रीगम-
न करना चाहिये जो पुरुष परस्त्री वा वेश्यागमन करेगा उसके वीर्य नाश
होंगे ... क्योंकि परस्त्रीगमन में चिन्ता होजायगी और दुष्ट
रोग होंगे ... और बुद्धि बल ... क्योंकि जि-
स की स्त्री है उसी का पुत्र होगा और नीचे देने वाले का नहीं और
वेश्या से जो पुत्र होगा सो भडुवा होवेगा और जो कन्या होगी तो
वह वेश्या ही होगी इसलिये वेश्या के संग से कोई पुत्र नहीं सिवाय हानि
के और रोग भी उनके ... होते हैं जिससे शीघ्र ही दुःख पाते हैं क्योंकि
जब परस्त्रीगमन की इच्छा करता है अथवा ... समागम करता है,
तब उसके हृदय में भय, शंका और लज्जा उत्पन्न होती है कि इस कर्म को
कोई न जाने जो कोई जानेगा तो मेरी दुर्दशा होगी ...
है, इस प्रकार मैथुन का काम और तीसरा चिन्ता से जितने दिन करें
चिन्ता से जल जाय उतने ही ... वीर्य धातु नष्ट होजा-

ती हैं इससे महारोगी होके मर जाता है और बड़ा पापभी है इससे मनुष्य वा स्त्री अल्पायु हो जाते हैं और वेश्या गमन करै है कुत्ताकी नाईं वह पुरुष है क्योंकि जैसे कुत्ता सब का मुंह छोड़ दिये अन्नको खा लेता है उसको घृणा नहीं होती वैसेही घृणा न होनेसे सकल लोग उस पुरुषको कुत्तेके नाईं जानैं और जो व्यभिचारिणी स्त्री और वेश्या उनको भी कुत्तीकी नाईं जानैं क्योंकि इनको भी घृणा नहीं होती है और देखना चाहिये कि माली और खेती करने वाले लोग अपने बाग में और अपनेही खेत में वृक्ष वा अन्न बोते हैं अन्यके बाग वा खेत में नहीं वे मूर्ख भी हैं तो भी पराए बाग वा खेतमें कभी कुछ नहीं बोते और [illegible] काभी करते हैं वे तो सूअर वा कौवे की नाईं हैं क्योंकि जैसे सूअर वा कौवे विष्ठा में बड़ी प्रीति रखते हैं और कश्चित् घृणा नहीं करते हैं वैसेही मनुष्य [illegible] जिस मार्ग से निकलती है उस मार्ग में बड़ी प्रीति रखते हैं, इससे इस प्रकार के जो मनुष्य हैं वे मूर्खसे [illegible] हैं वीर्य [illegible] से उत्पन्न होता है उसको व्यर्थ नष्ट करते हैं और केवल पाप ही कमाते हैं और युक्तिसे वीर्यके रखने में सुख होता है उतना सुख लाखों [illegible] गमन से भी नहीं होता और [illegible] श्रमसे वीर्य की रक्षा करै फिर जब पूर्ण [illegible] होजाय और [illegible] ब्रह्मचर्याश्रम करके पूर्ण युवती [illegible] विषयभोगमें सुख होता है सो [illegible] विवाह करके [illegible] समागम में भी सुख नहीं होता और संतान भी [illegible] होते हैं जो ब्रह्मचर्याश्रम करनेवालोंके सन्तान होंगे वे बड़े सामर्थ्यवान् धनवान् शूरवीर विद्यावान् और सुशील हो वेंगे इस [illegible] लिखनेका यही प्रयोजन है कि [illegible] विद्याके बिना मनुष्य शरीर धारना ही नहीं है [illegible] शरीर और नाना प्रकारके शिल्प [illegible] बुद्धि [illegible] लोभीके [illegible] उनको [illegible] और [illegible] आनन्द [illegible] नाही–

संदूषणानि षट् ॥ यहां मनुजी का यह अभिप्राय है कि पानं
अर्थात् मद्य और भंगादिक मादकद्रव्यों का सेवन दुर्जनसंसर्ग अर्थात् दुष्ट-
जनों का संयोग पत्या विरह अर्थात् पति और स्त्री का वियोग अर्थात्
स्त्री अन्यदेश में और पुरुष अन्यदेश में रहै अटन अर्थात् पति को
छोड़के जहां तहां भ्रमण करै जैसे कि नानाप्रकार के मेले में तथा
तीर्थों में स्नान के बहाने और बहुत बाग बगीचों के दर्शन के बहाने स्त्री का
भ्रमण करना स्वप्नोऽन्यगेहवासश्च अर्थात् अन्यत्र निद्रा अन्य के घर में
रहना सोना और अन्य के घर में वास करै पति के बिना और अन्य पुरुषों
के संग का होना येह छः अर्थात् दूषण स्त्रियों के प्रकट होने के वास्ते हैं कि इन
छः कर्मों से स्त्री अवश्य भ्रष्ट हो जाती है इसमें कुछ सन्देह नहीं और
पुरुषों के वास्ते भी ऐसे ही बहुत दूषण हैं ॥ मात्रा स्वस्रा दुहित्रा वा नाविवि-
क्तासनो भवेत् । बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति ॥ १ ॥
माता और स्वसा अर्थात् भगिनी दुहिता अर्थात् कन्या इनके साथ भी
एकान्त में निवास कभी न करै और एकान्त में भाषण भी न करै और
संग से सम्भाषण स्पर्श और सेवा न करै जो कुछ उनसे कहना हो
[illegible] अर्थात् जितनी
[illegible] पुरुष
है उनमें भी बारंबार [illegible] इस प्रकार
के दर्शनों से भी पुरुष भ्रष्ट हो जाता है क्योंकि यह जो इन्द्रियग्राम अर्थात्
मन और इन्द्रियों का समूह है सो कोई विद्वान् अथवा जितेन्द्रिय ना
होगा तो भी इस प्रकार के संगों से भ्रष्ट हो जाता है [illegible]
का पुरुष पतन होकर अवश्य भ्रष्ट ही हो जाता है इस वास्ते स्त्री वा पुरुष सदा
इन दुष्ट संगों से बचे रहैं [illegible]
भी बड़ा मूर्खपन है क्योंकि स्त्रियों को बड़ा दुःख होता है और पुरुषों
का दर्शन भी नहीं होता और नीच पुरुषों से भ्रष्ट हो जाती हैं देखना
चाहिये कि परमेश्वर ने तो सब जीवों को स्वतन्त्र रक्खा है और उनको
अनुरूप भोग बिना अपराध से परतन्त्र अर्थात् बन्धन में रखते हैं । जो

बड़ापापकर्ते हैं सो इस बातको सज्जनलोगकभीनकरें यहबातमुस-
ल्मानों के राज्यसेपहले भईहै आगेनथी कौन्ती,गान्धारी औरद्रौप-
द्यादिक, स्त्रियां राजसभा में अर्थात् राजालोगोंकी सभाओंमेंभी
औरबातसंभाषणकरतीथीं अपनेपतिको पंखा औरजलादिकोंसे
सेवाभी करतीथीं औरयागोंमेंभीइत्यादिक ऋषिलोगोंकीस्त्रियां
भीसभाओंमेंशास्त्रार्थकरतीथीं यह बात महाभारत और बृहदारण्यक
उपनिषद्में लिखी है इसकोअवश्यकरनाचाहिये, मुसल्मानलोगों
का नवराज्यभयाथा तबजिसकिसीकी कन्या वा स्त्रीको पकड़लेते,
औरभ्रष्टकरदेतेथे उसीदिनसेश्रेष्ठआर्य्यावर्त्तदेशवाली लोग स्त्रियों
कोघरमेंरखनेलगे औरस्त्रीलोगभीमुखकेऊपरवस्त्ररखने लगीं सो
इसबातकोछोड़ही देनाचाहियेक्योंकिइस व्यवहार मेंसिवायदुःखके
सुखकुछनहींहैजैसेदाक्षिणात्यलोगोंकीस्त्रियांविनआवरणरहतीं हैंवैसा
हीरहनाचाहिये क्योंकिमनभीवस्त्र अशुद्धनहींरहता सबदिनजैसेपुरुषों
केमुखशुद्धरहतेहैं वैसेस्त्रीलोगोंके भीशुद्धरहते हैं इससे इसप्रकारका
वस्त्रधारणकरनाउचित है, स्त्रीलोगोंकोपतिकीसेवा औरदीर्घ दे:
स्थान में साम, शनशुर इन तीनों कीसेवा जोईसोई उत्तम कर्म है
और अपने घरका कार्य और धनादिकों की रक्षा करना और
सब कुटुम्ब मेंपरस्परप्रीतिकाहोना सबदिनविशेष और नानाप्रकार
केशिल्पोंकीउन्नतिस्त्रीलोगकरें औरपुरुषलोगभीघर बैठकर उनके
परस्परप्रसन्नहोकेरहना यहीगृहस्थलोगोंकाभाग्य औरसुखकीउ
न्नतिहै यहगृहस्थलोगों कीशिक्षासंक्षेपसेलिख दिया औरजोवि-
स्तारसे देखना चाहैंतोवेदादिकसत्यशास्त्र औरमनुस्मृतिमेंदेख लेवे
इसकेआगेवानप्रस्थ और सन्यासियोंकेविषय में लिखाजायगा ॥

इति श्री मद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थ प्रकाशे सुभाषा विरचिते चतुर्थः समुल्लासः संपूर्णः ॥ ४ ॥

अथ वानप्रस्थसंन्यासविधिं वक्ष्यामः। ब्रह्मचर्याश्रमं समाप्य गृही भवेत् गृही भूत्वा वनी भवेत् वनी भूत्वा प्रव्रजेत् बृहदारण्यक उपनिषद् की श्रुति है इसका यह अभिप्राय है कि ब्रह्मचर्याश्रम अर्थात् यथावत् विद्याओं को पढ़ के फिर गृहाश्रमी होय फिर वानप्रस्थ होय और वानप्रस्थ होके संन्यासी होय ऐसा क्रम है कि इसमें जितने श्लोक लिखेंगे वे सब मनुस्मृति ही के जानने उसके आगे म० ऐसा चिन्ह लिख देंगे। एवं गृहाश्रमे स्थित्वा विधिवत्स्नातको द्विजः। वने वसेत्तु नियतो यथावद्विजितेन्द्रियः॥ १॥ इस प्रकार से विधिवत् गृहाश्रम में रह के स्नातक द्विज अर्थात् विद्यावाले ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य, ऐसा जो गृहस्थ होवें सो वन में जाके वास करें यथावत् निश्चय करके और जितेन्द्रिय होके सो किस समय वानप्रस्थ हो यह कि १॥ गृहस्थस्तु यदा पश्येद्वलीपलितमात्मनः। अपत्यस्यैव चापत्यं तदारण्यं समाश्रयेत्॥ २॥ म० जब गृहस्थ ऐसा जाने अर्थात् शरीर का चमड़ा ढीला होजाय पलित नाम केश श्वेत होजांय और उसका पुत्र ब्रह्मचर्य से सब विद्याओं को पढ़ के विवाह कर लेवे फिर उस पुत्र का भी पुत्र होय तब वानप्रस्थ की यात्रा जाय॥ २॥ संत्यज्य ग्राम्यमाहारं सर्वं चैव परिच्छदम्। पुत्रेषु भार्यां निक्षिप्य वनं गच्छेत्सहैव वा॥ ३॥ म० ग्रामों के जितने पदार्थ हैं उन सभों को छोड़ दे और शय्या वस्त्रादिक भी छोड़ दें अर्थात् लिखे हुए मात्र लेजाय उसको भी छोड़ दे वन में जाके अपनी स्त्री को पुत्र के पास रख दे अथवा स्त्री जो कहे कि मैं आप के साथ में चलूंगी तो संग में लेके वन को जावे और जो स्त्री कहे कि मैं पुत्रों के पास रहूंगी तो उसको छोड़ के एकाकी जाय॥ ३॥ अग्निहोत्रं समादाय गृह्यं चाग्निपरिच्छदम्। ग्रामादरण्यं निःसृत्य निवसेन्नियतेन्द्रियः॥ ४॥ म० अग्निहोत्र की सब सामग्री अर्थात् कुण्ड और पात्रादिकों को लेके ग्राम से निकल के जितेन्द्रिय हो के वन में वास करें॥ ४॥ मुन्यन्नैर्विविधैर्मेध्यैः शाकमूलफलेन वा। एतानेव महायज्ञान् निर्वपेद्विधिपूर्वकम्॥ ५॥ म० मुन्यन्न नाम मुनियों के विविध जो अन्न तथा शाक मूल कन्दों के विषय में जितने पवि-

होते हैं वे मेध्य होते हैं अर्थात् शुद्धि वृद्धि करनेवाले हैं उनसे शाक जो कि पत्र और पुष्प मूल जो कि कन्द जो कि भूमि में से निकलते हैं और फल इनमें पूर्वोक्त पंच महायज्ञों को विधिपूर्वक नित्य करै ॥ ५ ॥ वसीत चर्म चीरं वा सायं स्नायात् प्रगे तथा । जटाश्च बिभृयान्नित्यं श्मश्रुलोमनखानि च ॥ ६ ॥ भ० मृगचर्म अथवा चीर जो कि वृक्षों के छाल से होता है उसको धारण करै शरीर की रक्षा के वास्ते सायंकाल और प्रातःकाल दो बेर स्नान करै जटा दाढ़ी मोंछ लोम और नख इनको नित्य धारण करै अर्थात् गृहाश्रम में इनका धारण करना चाहिये सो ही लिखा है ॥ ६ ॥ केशान्तः षोडशे वर्षे ब्राह्मणस्य विधीयते । आद्वाविंशात् क्षत्रबन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः ॥ ७ ॥ भ० सोलह वर्ष में ब्राह्मण २२ वर्ष में क्षत्रिय २४ वर्ष में वैश्य और शूद्र भी दाढ़ी मोंछ और नख भी न रक्खैं इससे यह वानप्रस्थ के वास्ते धारण लिखा ॥ ७ ॥ यद्भक्ष्यं स्यात्ततो दद्याद्बलिं भिक्षां च शक्तितः । अम्मूलफलभिक्षाभिरर्चयेदाश्रमागतान् ॥ ८ ॥ भ० जो आप भक्षण करै उसी से पंचमहायज्ञ सामर्थ्य के अनुकूल करै जल मूल नाम कन्द फल और भिक्षा इनसे अपने आश्रम में कोई अतिथि आवै उसका भी सत्कार करै ॥ ८ ॥ स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्याद्दान्तो मैत्रः समाहितः । दाता नित्यमनादाता सर्वभूतानुकम्पकः ॥ ९ भ० स्वाध्याय अर्थात् शास्त्र के विचार अथवा योगाभ्यास में नित्ययुक्त होय और दान्त नाम दमन करना सब इन्द्रियों को जीतें सब से मित्रता रक्खैं समाहित नाम शरीर और चित्त का समाधान रक्खें अपने कर्म का भी समाधान रक्खै नित्य औरों को देवै आप किसी से न लेवै और सब जीवों के ऊपर कृपा रक्खै दुःख्यों का भी यथावत् करै ॥ ९ ॥ अफालकृष्टमश्नीयादुत्सृष्टमपि केनचित् । न ग्रामजातान्यार्तोऽपि मूलानि च फलानि च ॥ १० ॥ भ० फालकृष्ट अर्थात् हल के जोतने से अन्न जो कुछ होता है उसको कभी न ग्रहण करै और खेत वा खलिहान में छूटा पड़ा जो अन्न उसको भी ग्रहण न करै और जो ग्राम के मूल वा फल उनको ग्रहण कभी न करै ॥ १० ॥ अग्निपक्वाशनो वा स्यात्कालप-

भुगेव वा । अश्मकुट्टो भवेद्वापि दन्तोलूखलिकोपि वा ॥ ११ ॥ भा० अग्निपक्वाशन अर्थात् अग्नि में पका के खावै कालपक्वभुग् अर्थात् जो आप से पके हुए फल पक जांय उनको खावै अश्मकुट्ट अर्थात् पाषाण से कूट २ के फलादिकों को खाय दन्तोलूखलिक नाम दांतनों मूसल की नांई और मुख को ऊखल की नांई वैसे ही हाथ से फलादिक लेके मुख और दांतों से खा लेवै ॥ ११ ॥ सद्यः प्रक्षालको वा स्यान्माससंचयिकोपि वा । षण्मासनिचयो वा स्यात्समानिचय एव वा ॥ १२ ॥ भा० एक तो यह दीक्षा है कि जितने से अपना निर्वाह होय उतना ही ले आवै दूसरे दिन के वास्ते न रक्खै दूसरी यह दीक्षा है कि मास भर के वास्ते फलादिकों का संचय कर लेवै अथवा छः मास पर्यन्त का संचय कर लेवै यह तीसरी दीक्षा है चौथी दीक्षा यह है कि साल भर का संचय कर ले इत्यादिक चतुर्विध वानप्रस्थ के वास्ते मनु लिखे हैं ॥ १२ ॥ ग्रीष्मे पंचतपास्तु स्याद्वर्षास्वभ्रावकाशिकः । आर्द्रवासास्तु हेमन्ते क्रमशो वर्द्धयंस्तपः ॥ १३ ॥ भा० ग्रीष्म नाम वैशाख ज्येष्ठ में जब सूर्य दशपंदा के ऊपर आवै तब चारों दिशाओं में अग्नि करदे और बीच में बैठे जब तक तीन घंटे तप करे और वर्षाकाल में मैदान में बैठे और अपने ऊपर छाया न करे वहां शीतकाल में गीले वस्त्र धारण करै इत्यादिक प्रकार से क्रम से तप नित्य करै क्योंकि विना तप अन्तःकरण शुद्ध नहीं होता और इन्द्रियों का जय भी नहीं होता इससे अवश्य तप करना चाहिये ॥ १३ ॥ अग्नीनात्मनि वैतानान्समारोप्य यथाविधि । अनग्निरनिकेतः स्यान्मुनिर्मूलफलाशनः । १४ ॥ भा० जप तप से मन और इन्द्रियां सब वशीभूत होजांय तब जो अग्नि आहवनीय गार्हपत्य दाक्षिणात्य सभ्य और आवसथ्य पांच प्रकार का अग्नि होता है और वैतान अर्थात् इष्टियों की सामग्री और अग्निहोत्र की सामग्री उनकी बाह्यक्रिया को छोड़ दे क्योंकि जितनी बाह्यक्रिया हैं वे मन की शुद्धि के लिये हैं, सो जब मन शुद्ध होजाय तब उनके करने का कुछ प्रयोजन नहीं किन्तु केवल भीतर की जो क्रिया अर्थात् योगाभ्यास और विचार इन्हीं को करै ॥ १४ ॥ अप्रयत्नः सुखा-

येषु ब्रह्मचारी धराशयः । शरणेष्वममश्चैव वृक्षमूलनिकेतनः ॥ १५ ॥
भा० शरीर वा इन्द्रियों के सुख की कुछ इच्छा न करे किन्तु उनका त्याग ही करै और ब्रह्मचारी रहै अर्थात् अपनी स्त्री संग में भी हो यतो भी उसमे संग कभी न करै किन्तु स्त्री तो वन में सेवा के वास्ते ही है और भूमि में शयन करै शरण अर्थात् निज घर रहे अथवा वृक्ष के समीप मता कि यह मेरा ही है ऐसा अभिमान कभी न करै किन्तु यदि कोई छीन ले तो उठ के चला जाय दूसरी जगह जा बैठे क्रोधादि कुछ भी न करै, किन्तु प्रसन्न ही रहैं ॥ १५ ॥ तापसेष्वेव विप्रेषु यात्रिकं भैक्षमाहरेत् । गृहमेधिषु चान्येषु द्विजेषु वनवासिषु ॥ १६ ॥ वन में अन्य जितने वानप्रस्थ लोग होवें उनसे अपने निर्वाह मात्र भिक्षा करले अधिक नहीं अथवा ग्राम आदि में और वैश्य ये तीनों शूद्रादि वन में रहते होवें उनसे अपने निर्वाह मात्र भिक्षा करले ॥ १६ ॥ ग्रामादाहृत्य वाऽश्नीयादष्टौ ग्रासान्वने वसन् । प्रतिगृह्य पुटेनैव पाणिना शकलेन वा ॥ १७ ॥ भा० जब दुर्बल इन्द्रिय हो जाय तो भी वन में रहै परन्तु कभी २ ग्राम में जाके भिक्षा करने के वास्ते अपने दोनों हाथ अथवा दोनों में खपर वा पत्ते अथवा ठीकरा में भिक्षा ले जितना कोई देवै उतना लेले परन्तु आठ ग्रास मात्र ले फिर उसको लेके वन में चला जाय जहां कि जल होय वहां बैठके आठ ग्रास खाले अधिक नहीं ॥ १७ ॥ एताश्चान्याश्च सेवेत दीक्षा विप्रो वने वसन् । विविधाश्चौपनिषदीरात्मसंसिद्धये श्रुतीः ॥ १८ ॥ भा० ऋषिभिर्ब्राह्मणैश्चैव गृहस्थैरेव सेविताः । विद्यातपोविवृद्ध्यर्थं शरीरस्य च शुद्धये ॥ १९ ॥ भा० इन दीक्षाओं को और अन्य दीक्षाओं को भी वन में रहता भया वानप्रस्थ सेवन करै नाना प्रकार की जो उपनिषदों की श्रुति उनको आत्मज्ञान अर्थात् ब्रह्मविद्या के वास्ते नित्य विचारै ॥ १८ ॥ ऋषियों ने अर्थात् वेद के मन्त्रों के अर्थ जानने वाले और ब्राह्मणों ने अर्थात् ब्रह्मविद्या के जानने वालों ने और गृहस्थों ने अर्थात् पूर्व विद्यावाले धर्मात्माओं ने जिन २ नियमों का सेवन किया होय उनको नित्य भाव से और ज्ञान दृष्टि से

निवारण हैं क्योंकि विद्या अर्थात् ब्रह्मविद्या और तप अर्थात् योग सिद्धि इनसे बुद्धि के और शरीर की शुद्धि के वास्ते अर्थात् दशों इन्द्रियां पांच प्राण मन बुद्धि, चित्त और अहंकार इन ॥ १९ ॥ तत्त्वों के मिलने से लिंगशरीर कहता है इसके शुद्धि के वास्ते ॥ १९ ॥ आसां महर्षिचर्याणां त्यक्त्वाऽन्यतमया तनुम् । वीतशोकभयो विप्रो ब्रह्मलोके महीयते ॥ २० ॥ भा० इन महर्षियों की क्रियाओं के मध्य किसी क्रिया को करके शरीर छूट जाय तो भी वह विद्वान् शोक भयादिक दुःखों से छूटके ब्रह्मलोक अर्थात् परमेश्वर की प्राप्ति अथवा उत्तम स्वर्ग की प्राप्ति उससे होती है । २० वनेषु च विहृत्यैवं तृतीयं भागमायुषः । चतुर्थमायुषो भागं त्यक्त्वा सङ्गान् परिव्रजेत् ॥ २१ ॥ भा० इस प्रकार से वानप्रस्थाश्रम को यथावत् आयु के तीसरे भाग को सम्पादन करके वनों में विहार करके तब आयु का चतुर्थ भाग अर्थात् ७० सत्तर वर्ष के ऊपर आयु के चतुर्थ भाग में सब संगों का अर्थात् यज्ञोपवीत शिखादिक का त्याग करके परिव्राट् अर्थात् सब देशान्तर में भ्रमण करै किसी पदार्थ में मोह न पक्षपात कभी न करै यह स्त्री अपने पुत्रों के पास चली जाय अथवा वन में तप भी करै ॥ २१ ॥ इसमें कोई शंका करै कि यज्ञोपवीतादि शिखादि चिन्हों के छोड़ने से क्या होता है अर्थात् इनको न छोड़ना चाहिये उत्तर अच्छा यज्ञोपवीतादिक चिन्हों के रखने से क्या होता है पूर्व यज्ञोपवीतादिकों से चिन्ह देख पड़ता है और विद्या के चिन्ह से विद्या की परीक्षा भी होती है इस लिये जब संसार के व्यवहार और अग्निहोत्रादिक बाह्य क्रिया जिनमें गणना इति निवीति और प्राचीनावीति यज्ञोपवीत से क्रिया करनी होती हैं उन अग्निहोत्र बाह्य क्रियाओं को तो छोड़ दिया और कहीं अग्निहोत्र विद्या से करानी बनती नहीं फिर यज्ञोपवीतादिक का रखना उसको व्यर्थ ही है इसमें यह प्रमाण है । प्राजापत्यां निरूप्येष्टिं सर्वस्वं सर्ववेदस हुत्वा ब्राह्मणः प्रव्रजेत् ॥ यह यजुर्वेद के ब्राह्मण की श्रुति है इसका यह अभिप्राय है कि प्राजापत्य इष्टि को करके उसमें सर्व वेदस अर्थात् शिखा भी जो २ यज्ञोपवीतादिक बाह्य चिन्ह सब छुड़ाके होम

सभोंको छुड़ाना सत्यकृत् अर्थात् छोड़के ब्राह्मण विद्याज्ञानध्यानतथा वैराग्यइत्यादिक शुभगुणोंसे परिव्रजेत् परितः सर्वतः व्रजेत् सबसंसार के बन्धनोंसे मुक्त होके संन्यासी होजाय. लोकैषणायाश्च वित्तैषणाया-श्च पुत्रैषणायाश्चोत्थायाथ भिक्षाचर्यं चरन्ति । यह बृहदारण्यक उप-निषद्की श्रुति है इसका यह अभिप्राय है कि लोकैषणा अर्थात् लोक को जन निन्दा करैं वा स्तुति करैं और अप्रतिष्ठा करै तो भी जिसके चित्त में कुछ हर्ष और शोक न होय और जितने लोकके विषय भोग हैं, स्त्री धन हस्ती अश्व चन्दनादिक इनसे उठके अर्थात् इनको तुच्छ जानके जैसे वे हर्ष शोकके देनेवाले हैं वैसे यथावत् समझके सत्यधर्म और मुक्ति अर्थात् सब दुःखोंकी निवृत्ति और परमेश्वरकी प्राप्तिमें स्थिर होके आन-न्दमें रहै और किसीका पक्षपात अथवा किसीसे भय कभी न करै वित्तै-षणा अर्थात् धनकी इच्छा और धनकी प्राप्तिमें यत्न और लोभ कि मुझ को धन अधिक होय और जितने धनाढ्य हैं उनसे धनप्राप्तिके वास्ते बहुत प्रीति करै द्रव्यको वा पदार्थ आनके संचय करना और दरिद्रों से धनके नहीं होनेसे प्रीति न करना और धनाढ्योंकी स्तुति न करना इन सब बातोंका छोड़ना उसका नाम वित्तैषणाका त्याग है पुत्रैषणा अर्थात् अपने पुत्रोंमें मोहका करना वा जैसे अपने लोग हैं उ-नसे मोह अर्थात् प्रीति करना और उनके सुखमें हर्ष का होना और उनके दुःखमें शोकका होना यह का पुत्रैषणा नाम है एषणा नाम इच्छाका तीन पदार्थोंमें होना इन तीनों एषणाओंसे जो बहुनही हैं वही संन्यासी होता है और पक्षपातरहित भी संन्यासी यथावत् हो-ता है क्योंकि जितने ब्रह्मचारी गृहस्थ और वानप्रस्थ हैं उनको बहुत व्यवहारोंके होनेसे बुद्धिमान् होय तो भी भय, शंका और लज्जा कुछ किसी व्यवहारमें रहती ही है और जो संन्यासी होता है उसको किसी संसार मनुष्योंके व्यवहारका करना आवश्यक नहीं वा किसी मनुष्य से शंका, लज्जा, भय और पक्षपात कभी नहीं होता । आश्रमादाश्रमं गत्वा हुतहोमो जितेन्द्रियः । भिक्षाबलिपरिश्रान्तः प्रव्रजन्प्रेत्य-

च्छेत् ॥ २२ ॥ भा० आश्रमसेआश्रमकोजाके अर्थात् क्रमसे ब्रह्मचर्या-
श्रमादिक तीनोंको करके यथावत् अग्निहोत्रादिक यज्ञोंको करके
जितेन्द्रिय जबहोजाय भिक्षादेके और यज्ञ अर्थात् बलिवैश्वदेव करके
परिश्रान्त अत्यन्त अनुभव जबहोय तबसन्यासलेतो उसका सन्यास
यथावत् बढ़ताजाय संविदित नहोय ॥ २२ ॥ ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य म-
नोमोक्षेनिवेशयेत् । अनपाकृत्य मोक्षंतु सेवमानोव्रजत्यधः ॥ २३ ॥
भा० तीनऋण अर्थात् ऋषिपितृ और देवऋण इनको करके मोक्ष के
वास्ते सन्यासमें चित्तस्थिरकरै और इन तीनोंकोनकरके जो सन्यास
की इच्छाकरता है सो नीचे गिरपड़ता है उसकोमोक्षनहीं प्राप्त होता
२३ ॥ वेकौनतीनऋणहैं अधीत्यविधिवद्वेदान्पुत्रांश्चोत्पाद्यधर्मतः ।
इष्ट्वाचशक्तितोयज्ञैर्मनोमोक्षेनिवेशयेत् ॥ २४ ॥ भा० विधिवत् अर्था-
त उक्तप्रकार से ब्रह्मचर्याश्रम कोकरके चारोंवेदोंकोपढ़ैं अर्थ सहित
और अङ्गउपवेद और छःशास्त्र सहित पढ़ैं फिरपढ़केपश्चात् पढ़ावें,
क्योंकि विद्याका लोप इस प्रकारसेकभीनहोगा यहऋषिऋणनिवृत्त
है इसमें जप और संध्योपासनभीजानलेना सब मनुष्यों के ऊपर यह
परमेश्वरकीआज्ञा है कि ब्रह्मचर्याश्रममें विद्याओंकोपढ़ना और प-
ढ़ाना इसके बिना दूसराआश्रमनहीं जैसेकि मूलकेबिनावृक्ष नष्ट हो
जाता है उसप्रकार सेपुत्रोंकोशिक्षा धर्मकी विद्यापढ़ावें और पढ़ाने
कीकरें अपनीकन्या अथवा अपना पुत्र विद्याकेबिनाकभीन रहैं सब
श्रेष्ठगुणवाले होवें ऐसाकरके पितृऋणको करनाउचित है और जो
अपनेसन्तानोंकोश्रेष्ठगुणवाले नकरेंगे तो उनमातापिताओं नेबा-
लकोंकोऐसा मारडाला फिर मारनातो अच्छा परन्तु मूर्ख रखना
अच्छानहीं इसीमेंउक्तप्रकारसेतर्पण और श्राद्ध भी जान लेना यह
दूसरापितृऋणहै फिर गृहाश्रममें यथावत् अग्निहोत्रादिकों का अ-
नुष्ठानकरैं जिससेकिसबसंसारकाउपकार होयइसमें उसकाभी बड़ा
उपकारहै अर्थात्पुण्यकेफलपाता है सो इनतीन ऋणोंको उतार के
मोक्ष अर्थात्सन्यासमेंकरकेचित्तदेवैं अन्यथा नहीं ॥ २४ ॥ अनधी-

नधीत्य द्विजो वेदाननुत्पाद्य तथा सुतान् । अनिष्ट्वा चैव यज्ञैश्च मोक्षमिच्छन्व्रजत्यधः ॥ २५ ॥ भा० द्विज अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य वेदों को विना पढ़के चारों वर्णों से पुत्रों को उत्पन्न किये विना अग्निहोत्रादिक यज्ञ विना करे फिर जो मोक्ष अर्थात् संन्यास की इच्छा करै संन्यास तो उसका नहीं होगा किन्तु संसार से ही गिर पड़ता ॥ २५ ॥ यह बात तो संन्यास के क्रम की हो गई दूसरी यह बात है कि प्राजापत्यां निरूप्येष्टिं सर्ववेदसदक्षिणाम् । आत्मन्यग्नीन्समारोप्य ब्राह्मणः प्रव्रजेद्गृहात् ॥ २६ ॥ भा० प्राजापत्य इष्टि का अर्थ यथावत् निरूपण करके उसमें सर्व वेद अर्थात् यज्ञोपवीत शिखादिक जितने चिन्ह गृहाश्रम के थे उनको दक्षिणा देके और पूर्वोक्त पांच अग्नियों को आत्मा में समारोपण करके ब्राह्मण अर्थात् विद्वान् वानप्रस्थ को भी न करै अर्थात् गृहाश्रम ही से संन्यास लेवे ॥ २६ ॥ यो दत्त्वा सर्वभूतेभ्यः प्रव्रजत्यभयं गृहात् । तस्य तेजोमया लोका भवन्ति ब्रह्मवादिनः ॥ २७ ॥ भा० जो सब भूतों को अभयदान अर्थात् ब्रह्मविद्या का दान देके घर से ही संन्यास लेता है तिसको तेजोमय लोक प्राप्त होते हैं अर्थात् परमेश्वर को प्राप्त होते हैं फिर कभी अ- [illegible] है किन्तु परमेश्वर को प्राप्त होके रहता है ॥ २७ ॥ अगारादभिनिष्क्रान्तः पवित्रोपचितो मुनिः । समुपोढेषु कामेषु निरपेक्षः परिव्रजेत् ॥ २८ ॥ भा० अगार अर्थात् [illegible] मुनि [illegible] इत्यादिकों से [illegible] और पवित्र गुणों से अर्थात् [illegible] सब कामों को [illegible] निरपेक्ष [illegible] ॥ २८ ॥ इस से मुनियों [illegible] ॥ २ ॥ [illegible]

क्षीथ् ति है इसकायहअभिप्रायहैकिजिसदिनपूर्णवैराग्यहोय उसी
दिन सन्यासी होजाय वानप्रस्थाश्रम अथवा गृहाश्रमसे औरजब
पूर्णविद्याऔरवैराग्यऔरपूर्णज्ञान, औरविषय भोग की इच्छा
कुछभीनहोय सोप्रथमचर्याश्रमसेहीसन्यासलेवैसोभीकुछ ठीकन-
हीं पूर्वपक्षयहबातपरमेश्वरकीआज्ञासे विरुद्ध है क्योंकि परमेश्वर
काअभिप्रायप्रजाकीवृद्धिकरनेमें जाना जाता हैऔरप्रजाकीहानिमें
नहीं जो कोईसन्यासलेगा सोविवाहनकरेगा इससे संसारकीवृद्धि
नहोगी इसवास्ते सन्यासकालेनाउचितनहीं जबतकजिये तब तक
गृहाश्रममें रहकेसंसारके व्यवहार औरशिल्पविद्याओंकी उन्नति
करै इससे सन्यासकाकरना उचितनहीं किन्तु जबतकपढ़ेअनेकवि-
द्या पढ़के गृहाश्रम ही में रहना उचितहै उत्तरचर्याश्रमसेसन्यासलेनाउचि-
तनहीं क्योंकिब्रह्मचर्याश्रमसेहीसन्यासोंसेविद्याकी उन्नतिहोगी और
गृहाश्रमनकरनेसे मनुष्यकीउत्पत्ति संसारकाव्यवहारये सब
नष्टहोजावेंगे और वानप्रस्थके नहोनेसे मनभी शुद्ध नहोगा और
सन्यासके नहोने से सत्यशिक्षा और सत्योपदेशकी उन्नतिनहोगी
पाखंडऔरअधर्मकाभी खण्डननहीहोगा इससे संसारकी उन्नतिका
नाशहोगा क्योंकिमनकी शुद्धिहोनेसे सबकर्मोंकी शुद्धिहोतीहै अ-
न्यथानहीं इसलियेऐसाजानना किजो ब्रह्मचारीकोपढ़नेसेसावधानता—
प्रकाशहीनहोसकता औरगृहस्थकोभीबहुतव्यवहारके होने सेचित्त
कभीनहींरहताहै और वानप्रस्थ कानमनहोंमेंविचारहता है और कुछ
विचारभीकरताहै औरसन्यासीहोगा वह विचारकेबिना अत्यन्तपर-
हतहीनरहेगा इससे पूर्वाश्रमोंकेधर्मोंसेपरमेश्वरकीआज्ञाओंकायथा—
र्थविचार करके औरोंकोभी उपदेशकरेगा सबदेशोंमेंभ्रमणकरेगा
इससे सबदेशोंकेमनुष्योंकोउसकेसंग और सत्योपदेशके सुननेसेच
कालाभहोगा जो गृहस्थहोगा उसका कहीं २ घर ; वहां २ प्रायः
रहेगाअन्यत्रभ्रमणनकरसकेगाइससे सन्यासकाहोनाभी उचितहै
परमेश्वरन्यायकारी है और विद्याकीउन्नतिभीचाहताहै जिसको

विषयभोग की इच्छा नहींहो उसकोपरमेश्वरऐसेआज्ञादेवें कि तू विवाहकरजैसे किकोईपुरुषको रोगकुछ नहीं उससेवैद्यकहै कि तू कुछ औषधखाले ऐसीऔषधखोखायगा औरजिसकोभोजनकरनेकी इच्छाहोय उसको कोई नतमे कहैकि तूअवश्यभोजनकर जो यह विनाक्षुधा के भोजन कैसेकरेगा।किन्तुकभी नकरेगाऐसेहीजिसको विषयभोग और संसारकेव्यवहारोंकीइच्छानहीं वह विवाह और संसारकेव्यवहारकैसेकरेगा कभीनकरेगा संसार केजनोंसेकुछप्रयोजन न होने से उनके मुख पर सत्यही कहेगा अपने सामने जैसा राजा वैसाही प्रजा को समुझेगा इस वास्ते जिस पुरुषको विद्या, ज्ञान, वैराग्य, पूर्ण जितेन्द्रियता होय और विषय भोग कीइच्छानहोय उसीको संन्यास लेनाउचित है अन्यकोनहीं जैसे कि आज काल आर्यावर्त देशमें बहुतसे संप्रदायीलोगहैंवे केवल पूर्वआलेपराया धन हरण करलेते हैं औरपराईस्त्रीको भ्रष्ट करदेते हैं औरकुटिलता तथापक्षपातके होनेसे मिथ्या उपदेशकरके मनुष्यों की बुद्धि भ्रष्टकरदेतेहैंऔर अधर्मवेंप्रवृत्तकरादेतेहैंइसेइनका लोभ-ग्रस्तहोना उचित हैक्योंकि इनकेहोनेसे संसारकाबहुत अनुपकार होताहै ॥ कपालंवृक्षमूलानि कुचैलमसहायता । समताचैवसर्वस्मि-न्नेतन्मुक्तस्यलक्षणम् ॥ २८ ॥ भा० कपालअर्थात्भिक्षापात्रवृक्षके मूलमेंनिवास औरकुत्सितवस्त्र औरसबकेऊपर समबुद्धि न किसीसे प्रीति औरनकिसीसे वैर यहमुक्तपुरुष अर्थात् सन्यासीका लक्षण है ॥ २९ ॥ नाभिनन्देतमरणंनाभिनन्देत जीवितम् । कालमेवप्र-तीक्षेतनिर्देशंभृतकोयथा ॥ ३० ॥ भा० औरसन्यासीहोय सो मरने और जीनेमें शोक नाउपेक्षाकरें किन्तुकालकीप्रतीक्षाकियाकरे जब मरण समय आवै तबशरीरछोड़दे शरीरसेमोहकुछनकरे जैसा कि छोटा नौकर स्वामीकी आज्ञा जबहोतीहैतभी कहाउसकरनेकोजाता है अहंकार नहीं रखताजाताहैऔरसन्यासीकोकिसी पदार्थ से प्रिय परमेश्वरकेमोक्षमार्गकोनिश्चयकरै ॥ ३० ॥ दृष्टिपूतंन्यसेत्पादंवस्त्रपूतंज०

जलंपिबेत् । सत्यपूतांवदेद्वाचंमनःपूतंसमाचरेत् ॥ २९ ॥ भा० इसका अर्थ तो पहिले करदियाहै परन्तु सन्यासधर्मकेप्रकरणमें लिखने का प्रयोजनहै कि अज्ञलोग कहतेहैं किसन्यासीकिसीकोउपदेश न करैं इनसेपूछनाचाहियेकि सत्यपूतांवदेद्वाचं सत्य अर्थात प्रमाण औरविचारसे यथावत् निश्चय करके सत्यउपदेश करै अबविचारो जोऐसे विद्वान सन्यासी लोग उपदेश न करैं और जितने पाखण्डी मूर्ख लोग हैं वे उपदेशकरैं तबतो संसारका सत्यानाश होता है जितने मूर्ख पाखण्डी उनकातो ऐसामन्तव्यकरनाचाहिये कि वे उपदेशहीनकरनेपावैं औरजितने विद्वानसन्यासी लोगहैं वे सबउपदेशकरेंजिससे मैं सत्यकोईनहीं सन्यासीमूर्खोंकाहीउपदेश देशकोअ-थार्थ देशमें हीनहोताहै जैसेकिआजकलआर्यावर्त्तदेशकीअवस्थाभईहै ॥ ३० ॥ क्रुध्यन्तंनप्रतिक्रुध्येदाक्रुष्टः कुशलंवदेत् । सप्तद्वारावकीर्णांचनवाचमनृतांवदेत् ॥ ३१ ॥ भा० जोकोईक्रोधकरै उससे सन्यासीक्रोधनकरै औरकोईनिन्दाकरै उसकोभीकल्याणका उपदेशनकरै किन्तुसदाएकुशल कहिके जोवितसेलिख आँख से औरकानकेइसप्रकारमोंमें जोरबोलताहोवै इनसे मिथ्या कभी नकरैक्योंकिसत्यहीसदाधारणकरनेयोग्यहै ॥ ३२ ॥ क्लृप्तकेशनखश्मश्रुः पात्रीदण्डीकुसुम्भवान् । विचरेन्नियतोनित्यं सर्वभूतान्यपीडयन् ॥ ३३ ॥ भा० केशकेकिसीसंस्कारतक औरश्मश्रु अर्थातदाढीमोछ नखोंकोभीकटवावैं अर्थात छेदनकरावैं पात्री एकहीपात्ररक्खैं और एकही दंड रक्खैं इनसे भी अधिकोंका धारना पाखण्ड ही है जैसे साधियकीलोकोंका कुसुंभादिकसे रंग वस्त्रपहिरैं और गेरूवा मृ-त्तिकासेरंगेभये अथवा भगवा वस्त्र धारणकरैं निश्चयबुद्धि होकेसबभू-तोंसेरागद्वेषछोड़केअपनेकल्याणकेअर्थविचरैं ॥ ३३ ॥ एककालंचरे-द्भैक्षंनप्रसज्जेतविस्तरे । भैक्षेप्रसक्तोहियतिर्विषयेष्वपिसज्जति ॥ ३४ ॥ एकवेरभिक्षाकरै अर्थात् भिक्षाकेविस्तारमेंप्रसक्तनहोय क्योंकि जो भोजनमेंआसक्त होताहै विषयोंमेंभीआसक्तहोताहै ॥ ३४ ॥ इन्द्रिये-

सन्नमुसले व्यङ्गारे भुक्तवज्जने । वृत्ते शरावसंपाते भिक्षां नित्यं य-तिश्चरेत् ॥ ३५ ॥ भा० जब गांव में धूम न देख पड़े मूसल चावलों की कांडा-का शब्द न सुन पड़े किसी के घर में अंगार न देख पड़े सब गृहस्थ लोग भोजन कर चुकें और भोजन करके पत्तों और सकोरे बाहर फेंकदेवें उस समय संन्यासी गृहस्थ लोगों के घर में भिक्षा के वास्ते नित्य जाय और जो ऐसा करते हैं कि समय ही में भिक्षा करेंगे यह उनका पाखंडही जानना क्योंकि गृहस्थ लोगों को पीड़ा होती है और जो विरक्त होके बैरागी आदिक अपने हाथ रोटी के करते हैं वे बड़े पाखंडी हैं ॥ ३५ ॥ अलाभे न विषादी स्यात् लाभे चैव न हर्षयेत् । प्राणयात्रिकमात्रः स्या-न्मात्रासंगाद्विनिर्गतः ॥ ३६ ॥ भा० जब भिक्षा का लाभ न होय तब वि-षाद न करै और लाभ में हर्ष न करै प्राण रक्षामात्र भोजन करलेवै भिक्षा में स्वाद न लेय और विषयों के संगों से पृथक् रहै ॥ ३६ ॥ अभि-पूजितलाभांस्तु जुगुप्सेतैव सर्वशः । अभिपूजितलाभैश्च यतिर्मुक्तो-ऽपि बध्यते ॥ ३७ ॥ भा० आदर सत्कार पूर्वक पदार्थ स्तुत्यादिक वचनकी निंदा करै क्योंकि स्तुत्यादिक बन्धन ही करने वाले हैं मुक्त भी होयतो भी इनसे बद्ध ही होजाता है ॥ ३७ ॥ अल्पान्नाभ्यवहारेण रहःस्था-नासनेन च । ह्रियमाणानि विषयैरिन्द्रियाणि निवर्तयेत् ॥ ३८ ॥ इ-न्द्रियाणां निरोधेन रागद्वेषक्षयेण च । अहिंसया च भूतानाम् मृत-त्वाय कल्पते ॥ ३९ ॥ भा० इन्द्रियों का निरोध रागद्वेष और अहिंसा इनको जो धारण करता है सोई मोक्ष का अधिकारी होता है अन्य कोई नहीं ॥ ३९ ॥ दूषितोऽपि चरेद्धर्मं यत्र तत्राश्रमे रतः । समः स-र्वेषु भूतेषु न लिङ्गं धर्मकारणम् ॥ ४० ॥ भा० जिस किसी आश्रम में होय दुष्ट पुरुष भी होय परन्तु धर्म ही को करै और सब भूतों में समबुद्धि रा-गद्वेष पक्षपात रहित होय सोई पुरुष श्रेष्ठ है जितने बाह्यचिन्ह हैं य-ज्ञोपवीत दंड दोनों को धारण करै और धर्म न करै तो आश्रम ही से कुछ नहीं होसकता और तिलक, छापा, माला देते हैं सब पाखण्ड ही के चिन्ह हैं इनको कभी न धारना चाहिये ॥ ४० ॥ फलंकतकवृक्ष-

स्वयमप्यंबुमलाविलम् । नन्नामग्रहणादेवतस्यवारिप्रसीदति ॥ ४१ ॥
भा० यद्यपिकतकनामनिर्मलीहैउसका फल जलको शुद्धकरने वाला है
तोभीउसकेनामलेनेहीसे जलशुद्धनहींहोता है और जो
पीसकेनडालैं [illegible] ऐसा [illegible] कि-
याकरै वा उसकानाम जलकेपासलियाकरै, उससे जलकभीनशुद्ध
होगा वैसेहीनाममात्र से कुछनहींहोताजबतक धर्मनहीं करता ४१
प्राणायामाब्राह्मणस्यत्रयोऽपिविधिवत्कृताः । व्याहृतिप्रणवैर्युक्ता-
विज्ञेयंपरमंतपः ॥ ४२ ॥ भा० ओम्भूः, ओम्भुवः, ओम्स्वः, ओम्
महः, ओम्जनः, ओम्तपः ओम्सत्यं इनमन्त्रोंकाहृदयमें उच्चारण
करैं पूर्वोक्तरीतिसे तीनवारप्राणोंका निग्रहकरैं तोभीउसब्रा-
ह्मणकापरमतपजानना ॥ ४२ ॥ दह्यन्तेध्मायमानानांधातूनां-
हियथामलाः । तथेन्द्रियाणांदह्यन्तेदोषाःप्राणस्यनिग्रहात् ॥ ४३ ॥
भा० जैसेसुवर्णादिकधातुओंको अग्निमेंतपानेसे मैलनष्ट होजाताहै
वैसेहीप्राणोंकेनिग्रहसे इन्द्रियोंकेमलभस्म होजातेहैं ॥४३॥ प्राणा-
यामैर्दहेद्दोषान्धारणाभिश्चकिल्बिषम् । प्रत्याहारेणसंसर्गान्ध्या-
नेनानीश्वरान्गुणान् ॥४४॥ भा० प्राणायामोंसेमनइन्द्रियऔरश-
रीरकेदोषोंकोभस्मकरदे औरधारणाओंसेपापकोभीनिवृत्तकरै उससे
विराग और [illegible] प्रत्याहारसेइन्द्रियों-
केविषयोंसे [illegible] और ध्यानसेकामक्रोधा-
दिक अनीश्वरके [illegible] गुणोंकोछोड़के ईश्वरके [illegible] गुण
सम्पादनकरैं ॥४५॥ उच्चावचेषुभूतेषुदुर्ज्ञेयामकृतात्मभिः । ध्यान
योगेनसंपश्येद्गतिमस्यान्तरात्मनः ॥ ४६ ॥ भा० स्थूलऔरसूक्ष्म-
जगमेंजो परमेश्वरव्यापक है औरअनेकशरीरोंमेंजो जीवात्मा है और
[illegible] ध्यानयोगसे उसको [illegible]
के [illegible] नहीं आती ॥४६ सम्यग्दर्शनस-
म्पन्नःकर्मभिर्ननिबध्यते । दर्शनेनविहीनस्तु संसारंप्रतिपद्यते ॥
४७ ॥ भा० जब [illegible]

नहींहोता और जो ज्ञानसेहीनसन्यासीहै सो मोक्षकोभी नहींप्राप्त होता किन्तु संसारहीमेंगिरपड़ताहै ॥ ४७ ॥ अहिंसयेन्द्रियासङ्गैर्वैदिकैश्चैवकर्मभिः । तपसश्चरणैश्चोग्रैःसाधयन्तीहतत्पदम् ४८ ॥ भा० वैरइन्द्रियोंसेविषयोंका असंगवैदिककर्मोंका करना अत्यन्तउग्र तपश्चर्य्यासेमोक्षपदकोसिद्धलोगप्राप्तहोतेहैं अन्यथानहीं ॥४८॥ अ–स्थिस्थूणंस्नायुयुतं मांसशोणितलेपनम् । चर्मावनद्धंदुर्गन्धिपूर्णं–मूत्रपुरीषयोः ॥ ४९ ॥ म० जराशोकसमाविष्टं रोगायतनमातुर–म् । रजस्वलमनित्यंचभूतावासमिमंत्यजेत् ॥ ५० ॥ भा० हाड़जिसकाखंभाहै नाड़ियोंसेबंधाभयाहै, औरक्षिरका लेपनखालसेढंपाहुआदुर्गन्धयुक्तऔरविष्ठाके पूर्ण ॥४९॥ जराऔरशोकसेयुक्तरोग कातरक्षुधातृषादिकपीड़ाओंसे नित्यआतुरऔरनित्य दोषनस्वरूपअर्थात्जैसीरजस्वलाहोतीहैनित्यमलिनहै स्थिरभी नहीं और सबभूतोंकानिवास ऐसाजोयहदेह इसको सन्यासी योगाभ्याससे छोड़दे ॥५०॥ नदीकूलंयथावृक्षो वृक्षंवाशकुनिर्यथा । तथात्यज–न्निमंदेहंकृच्छ्राद्ग्राहाद्विमुच्यते ॥ ५१ ॥ भा० जैसेनदीकेतटमेंजलकेवेगसे गिरपड़ताहै वैसेहीसमाधियोगसे इसकोछोड़दे तब ग्र–ह भारी जन्म मरण रूप संसार के सब दुःख से छूटके मुक्तहो जाय ।५१। प्रियेषुस्वेषुसुकृतमप्रियेषुचदुष्कृतम् । विसृज्यध्यान–योगेनब्रह्माभ्येति सनातनम् ॥ ५२ ॥ भा० जितनेप्राणी सेवाकरने वाले उनमेंप्यारअंगसेअपनेपुण्यको छोड़देऔर द्वेषकरनेवालेपुरुषों मेंअपनेपापोंकोछोड़दे इससे ध्यानरूपयोगसेब्रह्मशुद्धहोताहै तब सना–तनपरमेश्वरकोप्राप्तहोताहै फिरकभीदुःखसागरमें नहीं आता ॥५२॥ यदाभावेनभवतिसर्वभावेषुनिस्पृहः । तदासुखम–वाप्नोतिप्रेत्यचेहचशाश्वतम् ॥५३॥ भा० जबसबप्रकारसेसन्यासी का अन्तःकरण और आत्मशुद्धहोजाताहै, उसकायहलक्षण हैकि किसीपदार्थमेंमोहनहींहोता तब वह मुक्तहोताभयाऔर मृत्यु के पीछे निरन्तरब्रह्मसुखकोप्राप्त होताहै अन्यथानहीं ॥५३॥ अ-

एवंविधिनासर्वांस्त्यक्त्वासंगाञ्छनैःशनैः। सर्वद्वन्द्वविनिर्मुक्तोब्रह्मण्येवावतिष्ठते। ५३। भा० इसविधिसेजिसनेदेहादिक अनित्यपदार्थहैं इनकीप्रीति के छोड़ औरहर्ष, शोक, सुख, दुःख, शीत, उष्ण, रागद्वेष, मानापमानादिकद्वन्द्वों सेछूटकेजोनिर्भया आत्माऔर ब्रह्मकेआनन्दमेंसदारहता है फिरदुःखसागरमें कभी नहीं गिरता क्योंकि पूर्व सबदुःखों कोभोगके अनुभव किया है फिरवह आप्त और अत्यन्तपरीक्षासेपरमेश्वरकीप्राप्तिभई क्यावहमूर्खहै कि परमानन्दकोछोड़केफिरदुःखसागरमेंकभीनगिरेगा ॥ ५४ ॥ ध्यानिकं सर्वमेवैतद्यदेतदभिशब्दितम्। नह्यनध्यात्मवित्कश्चित्क्रियाफलमुपाश्नुते॥ ५५ ॥ भा० संन्यासकोपरीक्षायोगहै कि निरन्तरध्यानस्थित होके एकान्तमेंसबपदार्थों का यथावत ज्ञानकरना सो इसप्रकरण मेंसबव्याख्यान मात्रसेकहदिया परन्तु इसकायथावत्विधानपातञ्जलदर्शनमेंलिखाहै वहांसबदेखलेवें अन्यथासिद्धकभी नहोगा क्योंकिमाण्डूक्यादिक अध्यात्मविद्याजोकोई नहीं जानताउसको संन्यासग्रहणका कुछफलनहींहोगा उसका संन्यासग्रहणही व्यर्थ है ॥ ५५ ॥ अधियज्ञंब्रह्मजपेदाधिदैविकमेव च। आध्यात्मिकञ्च सततंवेदान्ताभिहितंचयत्॥ ५६ ॥ भा० अधियज्ञब्रह्म जोकोई यज्ञअर्थात्यज्ञकाकर्मजोपरमेश्वरउसको निरन्तरजपाकरे और आधिदैविक इन्द्रियां और अन्तःकरणउनकेदिव्यादिदेवतासंबंधादिकों के उनकापरस्परसंबंधउसकोयोगकेअभ्यासकरै और आध्यात्मिक जीवात्मा औरपरमात्माका यथावत्ज्ञान औरयाज्ञवल्क्यादिकों वाणिशुद्धब्रह्मकोप्राप्तकरैं सबउसपुरुषकामोक्षहोसक्ताहै अन्यथानहीं ॥ ५६ ॥ एषधर्मोऽनुशिष्टो वोयतीनांनियतात्मनाम्। वेदसंन्यासिकानांतुकर्मयोगंनिबोधत॥ ५७ ॥ भा० मुक्त संन्यासीनियतआत्मावालाजिनकाआत्मानिश्चलहोगया है उनकाधर्मऋषिलोग के प्रभुजीकहतेहैं मैंनेकहदिया औरजो वेदसंन्यासिकअर्थात्वेद संन्यासीउसकाकर्मयोगसुनकेआपसुनलेवें ॥ ५७ ॥ ब्रह्मचारीगृ-

गृहस्थश्च वानप्रस्थो यतिस्तथा । एते गृहस्थप्रभवाश्चत्वारः पृथगाश्रमाः ॥ ५८ ॥ भा० ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ और संन्यासी ये चारों गृहस्थाश्रम से उत्पन्न होते हैं, पृथक् २ क्योंकि गृहाश्रम ही से मनुष्य की उत्पत्ति होके फिर ब्रह्मचर्यादिक आश्रम चलते हैं इसलिये सब भिन्न धर्मवाले आश्रमी भिक्षा वस्त्र स्थान और अन्नादिक गृहस्थों से गृहस्थ लोग ही पालन करते हैं इन चारों में गृहस्थ बड़ा कहाता है भिक्षुकों को अन्नादिक से और ज्ञान देने से भी वे हुए ॥ ५८ ॥ सर्वेऽपि क्रमशस्त्वेते यथाशास्त्रं निषेविताः । यथोक्तकारिणं विप्रं नयन्ति परमां गतिम् ॥ ५९ ॥ भा० सब आश्रमी यथावत् शास्त्रोक्त क्रम से अपने वर्णाश्रम के धर्म में चलनेवाले पुरुषों को ये आश्रमों के जितने आश्रम हैं उनसे सब आश्रमी लोग मोक्ष पाते हैं परन्तु बाहर के लोगों से धर्म रहेगा उनका भी इस प्रकार सत्यासत्य एक ही होगा ॥ ५९ ॥ चतुर्भिरपि चैवैतैर्नित्यमाश्रमिभिर्द्विजैः । दशलक्षणको धर्मः सेवितव्यः प्रयत्नतः ॥ ६० ॥ भा० ब्रह्मचारी आदिक सब आश्रमी लक्षण हैं जिस धर्म के उस धर्म को नित्य करना है सो बतलाते हैं ॥ ६० ॥ धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः । धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥ ६१ ॥ भा० एक तो धैर्य सर्वदा रखना [illegible] क्षमा [illegible] होना [illegible] धर्म को छोड़ना [illegible] जो कोई [illegible] प्रवृत्त [illegible] तथा कुल [illegible] परन्तु अधर्म कभी न करे [illegible] अधर्म करने को [illegible] है [illegible] होता [illegible] है [illegible] और [illegible] आप और है

इन्द्रियनिग्रह श्रोत्रादिक इन्द्रियों से अधर्म में कभी न जावैं और इन्द्रियों को सदा धर्म में स्थिर रक्खैं तथा पूर्वोक्त जितेन्द्रियता का करना इसका नाम इन्द्रियनिग्रह है शास्त्राभ्यास पठन, सत्पुरुषों का संयोग अभ्यास अनु-ष्ठान विचार एकान्तसेवन परमेश्वर में विश्वास और परमेश्वर की प्रार्थना स्तुति और उपासना शील संतोष का धारण इन से सदा बुद्धि वृद्धि करनी इसका नाम धी है विद्या नाम पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों का ज्ञान होना जो जैसा पदार्थ है उसको वैसा ही जानना इसका नाम विद्या है सत्य सदा आचरण करना पूर्वोक्त नियम से अक्रोध नाम क्रोध काम लोभ मोह शोक भयादिकों का त्याग इसका नाम क्रोध का त्याग है इनके संक्षेप से धर्म के दश लक्षण लिख दिये परन्तु वेदादिक सत्य शास्त्रों में धर्म इत्यादिक सहस्रों लक्षण लिखे हैं जिसकी इच्छा होय उन शास्त्रों में देख लेवै अब इसके आगे अधर्म के लक्षण लिखे जाते हैं अधर्म नाम अन्याय का अन्याय नाम पक्षपात का न छोड़ना इसके भी य-का अधर्म लक्षण हैं पहिला लक्षण एक हिंसा अर्थात् वैर बुद्धि का करना ॥ ६२ ॥ परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसानिष्टचिन्तनम्। वितथाभिनिवेशश्च त्रिविधं कर्म मानसम्॥ ६२॥ म० पारुष्यमनृतं चैव पैशुन्यं चापि सर्वशः। असम्बद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम्॥ ६३॥ म० अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः। परदारोपसेवा च शारीरं त्रिविधं स्मृतम्॥ ६४॥ म० परद्रव्य पर अन्याय से लेने की इच्छा करना और अन्याय से इच्छा यह दूसरा लक्षण अधर्म का है और तीसरा लक्षण मन से अनिष्ट चिन्तन अन्य जीवों को दुःख देना अथवा दुःख चाहना चौथा वितथाभिनिवेश अर्थात् मिथ्या निश्चय जो जैसा पदार्थ है उसको वैसा न जानना किन्तु विपरीत ही जानना जैसे विद्या को अविद्या और अविद्या को विद्या जानना सत्य और श्रेष्ठ साधु इनको असत्य और अश्रेष्ठ असाधु जानना और पाषाणादिक मूर्त्ति और उनके पूजने से देव बुद्धि और मुक्ति का होना इत्यादिक मिथ्या निश्चय से जानना ये तीन मन से अधर्म के लक्षण उत्पन्न होते हैं पारुष्य नाम कठोर वचन बोल-

[illegible] जैसेकि भागवतकौमुद्यादिक इसप्रकार [illegible] है मिथ्या भाषणं नाम असत्यका बोलना जैसे कोई कहे [illegible] [illegible] नापक [illegible] पैशुन्य नाम चुगली खाना जैसे किसीने धन देनेको कहा था दिया [illegible] उसके समीप जाके उसकी कार्यकी हानि करनी और उनके सामने उसकी निन्दा करनी अर्थात अन्य पुरुषकी प्रतिष्ठा या सुख देखके हृदयसे [illegible] फिर जहां तहां चुगली खाना फिर इसप्रकार पैशुन्य है असंबद्ध प्रलाप नाम पूर्वापर विरुद्ध भाषण और प्रतिज्ञाकी हानि जैसेकि भागवतादिक और कौमुद्यादिक ग्रन्थोंमें पूर्वापर विरुद्ध और मिथ्या भाषण है इसप्रकार असंबद्ध प्रलाप है अदत्तानामुपादानं बिना दिये [illegible] पदार्थ का ग्रहण करना अर्थात चोरी [illegible] विधानके बिना हिंसा नाम पशुओं का हनन करना अर्थात [illegible] और पशुओंका मारना यह राक्षस विधान है और यज्ञके वास्ते जो पशुओंकी हिंसा है सो [illegible] और जिन पशुओंसे संसारका उपकार होता उन पशुओंको कभी न मारना चाहिये क्योंकि इनको मारनेसे [illegible] और [illegible] जाती है और इन्होंसे संसारका पालन होता है [illegible] पशुओंकी स्त्रियोंको कभी न मारना चाहिये और [illegible] पशुओंको मारना इसप्रकार अविधानसे हिंसा है परदारोपसेवन परस्त्रीगमन अर्थात वेश्या वा अन्य किसीकी स्त्रीके संग गमन करना और अन्य पुरुषोंके साथ स्त्रीलोगोंका गमन करना दोनोंको तुल्य पाप है ये [illegible] अधर्म [illegible] हैं इनके अन्यथा वेदादिक शास्त्रोंमें [illegible] अधर्म के [illegible] लिखे हैं सो उनके [illegible] और अर्थ जाननेसे [illegible] नहीं होसकता धर्म और अधर्म सब मनुष्यों के वास्ते एकही है इनमें भेद नहीं जितने भेद हैं सो केवल आपसके हैं क्योंकि सबका ईश्वर एकही है इससे उसकी आज्ञा भी सबके वास्ते एकप्रकारकी निश्चित होनी चाहिये [illegible] है सो सर्वत्र एकही होता है

इसीको जितने बुद्धिमान लोग जानते हैं कि किसी लोभ वा घमंड में नहीं गिरते किन्तु धर्मही करते हैं और अधर्म को छोड़देते हैं यही बुद्धिमानों का मार्ग है और जितने संसार के जाल, फांसा हैं वे मूर्खों के हैं चारों आश्रम वाले पुरुष धर्मही का सेवन करें अधर्म का कभी नहीं ॥ दशलक्षणकं धर्ममनुतिष्ठन्समाहितः । वेदान्तं विधिवच्छ्रुत्वा संन्यसेदनृणो द्विजः ॥९४॥ भा० दशलक्षण और एक योगशास्त्र की रीति से पूर्वोक्त प्रकार से जिस धर्म के लक्षण कह दिये उस धर्म का अनुष्ठान यथावत् करें समाहितचित्त होके वेदान्तशास्त्र को विधिवत् सुनके अनृण जो द्विज नाम ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, वे तीन विद्वान होके यथाक्रम से संन्यास ग्रहण करें ॥ ९५ ॥ संन्यस्य सर्वकर्माणि कर्मदोषानपानुदन् । नियतो वेदमभ्यस्य पुत्रैश्वर्ये सुखं वसेत् ॥९६॥ भा० अग्निहोत्रादिक कर्मों का त्याग करें और अन्तःकरण की शुद्धि के लिये नित्य कर्म सन्ध्योपासनादिक करें इससे सब कर्मदोष अर्थात् अज्ञान से मलिनता रागद्वेष इत्यादिकों को छोड़ दे निश्चित होके वेद का अभ्यास सदा करें और अपने पुत्रों से अपना निर्वाह जब तक होय तब तक नगर के समीप एकान्त में जाके निरन्तर वेदाभ्यास करें हानि वा लाभ में कुछ हर्ष शोक न करें और जो कुछ उसमें भोग होय सो अपनी भुक्ति के लिये संतोष से रहै ॥ ९६ ॥ एवं संन्यस्य कर्माणि स्वकार्यपरमोऽस्पृहः । संन्यासेनापहत्यैनः प्राप्नोति परमां गतिम् ॥ ९७ ॥ भा० इस प्रकार से सब कर्मों को छोड़के स्वकार्य जो मुक्ति का होना उसमें तत्पर होके परमेश्वर की प्राप्ति होना इस कार्य में तत्पर होय इससे भिन्न कोई इच्छा न करें इस प्रकार के संन्यास से सब पापों का नाश करके और परमगति को प्राप्त होता है ...

[illegible] और स्मृति [illegible] जिन ने लिखा है उनका भी खंडन-
[illegible] ॥ अनेकानि सहस्राणि कुमारब्रह्मचारिणाम् । [illegible]
[illegible] ॥ इस श्लोक से यह [illegible] सिद्ध
हुआ [illegible] ब्रह्मचारियों का [illegible] को [illegible]
[illegible] नरक में जाता है ॥ उत्तरपक्ष [illegible]
[illegible] । [illegible]
[illegible] ॥ इससे [illegible] जैसा कि [illegible] श्लोक से
[illegible]
है [illegible] और [illegible] है ऐसा श्लोक
[illegible] ऐसा कि [illegible]
[illegible]
[illegible] इससे [illegible]
कि [illegible] और [illegible] नरक [illegible] नहीं
[illegible] ब्रह्मचारी के [illegible]
[illegible] और [illegible]
ऐसा [illegible] ॥ यदहरेव विरजेत्तदहरेव प्रव्रजेद् [illegible]
[illegible] और [illegible]
[illegible] इससे [illegible]
और [illegible] है [illegible]
[illegible] इससे [illegible]
[illegible] क्योंकि [illegible]
[illegible] कोई नहीं [illegible]
[illegible] नहीं और [illegible]
[illegible] वैरागी, [illegible]
[illegible] और
[illegible] क्योंकि [illegible]
[illegible] नहीं [illegible] चाहिये [illegible]

ज्ञान, वैराग्य, और जितेन्द्रियता, पूर्ण न होजाय तबतक गृहाश्रमही में रहना उचित है इसमें जो कुछ लक्षण देने और लेने में दोष कहते हैं यह बात निश्चय ही है उनको कोई देने और लेने का सब बातों में श्रेष्ठ-पन है इससे कि आजीविका के वास्ते हमेशा देखना चाहिए कि जो वि-द्वान् है सब पदार्थों का गुण और दोष जानता है उसको देने वाला स्वर्ग आपको तो झूठी बात है परन्तु नरक को वह जाता है यह बात अत्यन्त नहीं है वह विद्वान् जो सत्पात्र सत्कार और उत्तम पदार्थों की प्राप्ति से हर्ष न मानेगा असत्कार और अनिष्ट पदार्थों की प्राप्ति में शोक न करेगा सो देने लेने वाले दोनों धर्मात्मा और विद्यावान् लोगों से सब तो उभय पक्ष सुख हो सकता है और जो दोनों कुकर्मी हैं तो पाप ही है जैसे कि चक्रांकितादिक वैरागी और खाकी लिंगे, गुसाई और नानक, फ-किरादिक ये सब सम्प्रदायी लोग हैं और मूर्ख ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ और सन्यासी इनको देने में पाप ही होगा पुण्य कुछ नहीं क्योंकि पुण्य तो विद्वान् और धर्मात्माओं को देने में है अन्यथा नहीं चारवर्ण और चार आश्रम इनकी शिक्षा संक्षेप से लिख दिया और विस्तार से जो देखना चाहै सो वेदादिक सत्य शास्त्रों में देख लेवे इसके आगे राजा और प्रजा के विषय में लिखा जायगा ॥

इति श्री मद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थप्रकाश सुभाषा विरचिते पंचमः समुल्लासः संपूर्णः ॥ ५ ॥

अथ राजप्रजाधर्मान्व्याख्यास्यामः ॥ राजधर्मान्प्रवक्ष्यामि यथावृत्तो भवेन्नृपः । सम्भवश्च यथा तस्य सिद्धिश्च परमा यथा ॥ १ ॥ मनु० राजधर्मों को मनु भगवान् कहते हैं कि मैं कहूंगा जिस प्रकार से राजा को वर्तमान करना चाहिए जिन गुणों से राजा होता है और जिन

कर्मोंकेकरनेसेपरमसिद्धिहोतीहै किराज्यकरैऔर सद्गतिभीउस-
को होय इसकोयथावत्प्रतिपादनआगेश् कियाजायगा ॥१॥ ब्राह्मं
प्राप्तेन संस्कारंक्षत्रियेणयथाविधि । सर्वस्यास्ययथान्यायंकर्त्तव्यं
परिरक्षणम् ॥ २ ॥ भा० जैसाब्राह्मणोंका संस्कारहोता है वैसाही
सबसंस्कारयथाविधिजिसकाहोताहै अर्थात्सबविद्याओंसे पूर्णरक्त
बुद्धि, पराक्रम, तेज, जितेन्द्रियता औरशूरवीरता जिसमनुष्यमेंइस
प्रकार केगुणहोवें और कोईमनुष्य उसदेशमें विद्यादिकगुणोंमें
उससे अधिकनहोय ऐसेपुरुषकोदेशकाराजाकरनाचाहिये तब वह
देशआनन्दितऔर अत्यन्तसुखीहोताहै अन्यथानहीं उसराजाको
उचितयहीधर्महैकिअपनीप्रजाकीयथावत्रक्षाकरै ॥ २ ॥ अराज-
केहिलोकेस्मिन्सर्वतोविद्रुतेभयात् । रक्षार्थमस्यसर्वस्य राजानम-
सृजत्प्रभुः ॥ ३ ॥ भा० जिसदेशमेंधर्मात्माराजाविद्वाननहींहोताउ-
सदेशमेंभयादिकदोष संसारमेंबहुतहोजाते हैं इस वास्तेराजा को
परमेश्वरनेउत्पन्नकियाहै कि यहसबजगत्कीरक्षाकरै औरजगत में
अधर्मनहोनेपावै ॥३॥ इन्द्रानिलयमार्काणामग्नेश्चवरुणस्यच चन्द्र-
वित्तेशयोश्चैवमात्रानिर्हृत्यशाश्वतीः ॥४॥ भा० इन्द्रअनिलनाम
वायुयमकेनामसूर्य, अग्नि,वरुण,चन्द्र, वित्तेशअर्थात्कुबेर इनआठ
राजाओंकीनीतिऔरगुणोंसे मनुष्यराजहोने का अधिकारीहोता
है जैसेहीइन्द्रकागुण प्रत्यक्षहोताहै वैसा इन्द्रभी प्रजा की
रक्षा सबप्रकारसेकरताहै वैसेहीराजा, वायुकागुण बल और दूत
द्वारा सबप्रजाकीवर्तमानकाजानलाहैसाकिसमुद्रपवनके हृदयमें प्रवाह
होनेकारणकर्ताहैऔरसबपर्थोंका जानताहै यमकागुण पक्षपातको
छोड़ना सदान्याययुक्तकरना अन्यायकभीनहो जैसा किभरतराजा
नेअपनेपुत्रजोअन्यायकारी थे तब उनकावध इससे दिखलाकरदूरकर
दिया औरसगरनेअपनापुत्रजोकुमार्गअसंजस थाउसे अपराधसे बनमें
निकालदिया यहबातमहाभारतमें विस्तारसेलिखीहै जिसपने पुत्र
का अवपक्षपात न किया तो औरका कैसेकरेंगे अर्जुनादिकों जैसा

किमनपदार्थों को तुल्य प्रकाश करता है और अन्धकार का नाश कर देता है वैसे ही राजा सत्यधर्म प्रजा के ऊपर तुल्य प्रकाश करै और अधर्म करनेवालों को दण्ड से अन्धकार रूप उनका नाश करदे और जैसे अग्नि में सब पदार्थ दग्ध हो जाता है वैसे ही धर्मनीति से विरोध-करनेवाले पुरुषों को दण्ड अर्थात् न्याययुक्त दण्ड देवे जैसा कि अग्नि सु-गन्धित पदार्थों को भस्म करदेता है और जिस राज्य में जब अधर्म करै तब कभी दण्ड के बिना न छोड़े वरुण का गुण ऐसे है पाश अर्थात् बन्धनों से दुष्टों को बांधे कि फिर वह न छूटने पावैं और कभी छूटे तो ऐसा दुःख पावैं कि उस दुःख का स्मरण रख कभी न होवें जिससे अधर्म में स्वल्प भी न जावें चन्द्रमा का गुण जैसे कि चन्द्रमा सब प्राणियों को तथा स्थावर औष-धियों को शीतल प्रकाश और पुष्टि से आनन्दयुक्त करदेता है और राजा अपनी प्रजा के ऊपर कृपादृष्टि रक्खै और प्रजा को यदि किसी प्रकार से प्रजा दुःखित न होवै सदा प्रसन्न हो रहै कुबेर का गुण जैसे कि कुबेर बड़ा धनाढ्य है धन की वृद्धि और धन की रक्षा यथावत् करता है वैसे राजा भी धन और रक्षा सदा करै जिससे कि राजा के ऊपर दा-रिद्र कमी न होवै अपने वा प्रजा के ऊपर कष्ट आपत्काल आवै तब इस धन से उस प्रजा की रक्षा करलेवे इन आठ गुणों से राजा हो-ता है अन्यथा नहीं ॥ ४ ॥ सोऽग्निर्भवति वायुश्च सोऽर्कः सोमः स धर्म-राट् । स कुबेरः स वरुणः स महेन्द्रः प्रभावतः ॥ ५ ॥ भा० प्रभाव अर्थात् गुणों ही से अग्नि, वायु, आदित्य, सोम, धर्मराज, कुबेर, वरुण और महेन्द्र नाम इन्द्र राजा ही इन गुणों से जब युक्त होता है तब वही राजा पृ-थिवी का पति होता है ॥ ५ ॥ कार्यं सोऽवेक्ष्य शक्तिं च देशकालौ च तत्त्व-तः । कुरुते धर्मसिद्ध्यर्थं विश्वरूपं पुनः पुनः ॥ ६ ॥ भा० सो राजा कार्य और शक्ति आश्रय देश और काल तत्त्व अर्थात् यथावत् इन-को विचार के धर्म कि न्याय के वास्ते अनेक प्रकार के विश्व-रूप धारण करता है ॥ ६ ॥ यस्य प्रसादे पद्मा श्रीर्विजयश्च पराक्रमे । मृत्युश्च वसति क्रोधे सर्वतेजोमयो हि सः ॥ ७ ॥ भा० जिसकी कृपा से

दरिद्र भी ऐसा धनाढ्य हो जाय और क्रोध से दृढ़ दरिद्र हो जाय और पराक्रम में निश्चय करके विजय होय इस से राजा सर्वतेजोमय होता है और जिसके क्रोध में दुष्टों का मृत्यु होय सो करता होय अर्थात् इस प्रकार के गुण और पराक्रम जिसमें हों वही राजा हो सकता है अन्यथा नहीं ॥ ७ ॥ तस्माद्धर्मं यमिष्टेषु स व्यवस्येन्नराधिपः। अनिष्टं चाप्यनिष्टेषु तं धर्मं न विचालयेत् ॥ ८ ॥ भा० जो राजा धर्म को इष्ट अर्थात् धर्मात्मा और विद्वानों के ऊपर निश्चित करै तथा अनिष्ट अर्थात् मूर्ख और दुष्टों के बीच में दण्ड की व्यवस्था करै उस धर्म को कोई मनुष्य कोई [illegible] किन्तु सब लोग करैं जिससे धर्मात्मा और विद्वानों की वृद्धि होय और मूर्ख और दुष्टों की घटी हो इस हेतु अवश्य इस व्यवस्था को करै ॥ ८ ॥ तस्यार्थे सर्वभूतानां गोप्तारं धर्ममात्मजम्। ब्रह्मतेजोमयं दण्डमसृजत्पूर्वमीश्वरः ॥ ९ ॥ भा० उस राजा के लिये दण्ड को ईश्वर ने पूर्व ही रचा है जो ब्रह्म तेजोमय दण्ड है जिस को ईश्वर ने पृथक् करके ईश्वर और विद्या करता है [illegible] [illegible] फिर वह दण्ड कैसा है कि ईश्वर ही से उत्पन्न भया क्योंकि ईश्वर के [illegible] उसकी [illegible] न्याय ही करने की है [illegible] दण्ड है और जो न्याय है कि [illegible] धर्म है [illegible] सब भूतों की रक्षा करने वाला है [illegible] और वह दण्ड [illegible] के आ[illegible] क्योंकि [illegible] समर्थ है [illegible] से अन्य कोई नहीं [illegible] है जिसमें कुछ भी अधर्म नहीं [illegible] उसका कहना [illegible] क्योंकि [illegible] राजा और [illegible] का अ[illegible] वन [illegible] वह राजा [illegible] है कि धर्म का यथावत् स्थापन और अधर्म का खण्डन करै [illegible] राजा का मुख्य पुरुषार्थ है ॥ ९ ॥ तस्य सर्वाणि भूतानि स्थावराणि चराणि च। भयाद्भोगाय कल्पन्ते स्वधर्मान्न चलन्ति च ॥ १० ॥ भा० [illegible] उसके भय से [illegible] जितने जड़ और चेतन भूत हैं दण्ड के विचार से [illegible] आते हैं अपना २ जो पुरुषार्थ अर्थात् अधिकार उस से [illegible]

है अपने स्वधर्म अर्थात् और जिसका व्यवहार करने का अधिकार उससे भिन्न मार्ग में कभी नहीं चलते ॥ १० ॥ तं देशकालौ शक्तिं च विद्यां चावेक्ष्य तत्त्वतः । यथार्हतः संप्रणयेन्नरेष्वन्यायवर्तिषु ॥ ११ प० इस दण्ड को अन्याय करने वाले जो मनुष्य हैं उनमें यथायोग्य अर्थात् यथावत् दण्ड देवे परन्तु देश काल सामर्थ्य और विद्या इन सब का विचार करके दण्ड दे क्योंकि जो दण्ड के योग्य अर्थात् अधर्मात्मा को कभी न दण्ड दिया जाय और धर्मात्मा पुरुष को दण्ड कभी न दिया जाय ॥ ११ ॥ स राजा पुरुषो दण्डः स नेता शासिता च सः । चतुर्णामाश्रमाणां च धर्मस्य प्रतिभूः स्मृतः ॥ १२ ॥ राजा पुरुष नेता अर्थात् व्यवहारों में चलने वाला शासिता अर्थात् यथावत् शिक्षा करने वाला है कि जो राजा और प्रजा से भी मनुष्य सब तुल्य ही हैं जैसा राजा मनुष्य है वैसा ही और सब मनुष्य हैं इस वास्ते मनु भगवान् ने लिखा कि दण्ड ही राजा, दण्ड ही पुरुष, दण्ड ही नेता और दण्ड ही शासिता, जिसमें यथावत् विद्यादिक गुण और दण्ड की व्यवस्था होय उसी का नाम है, अन्य कोई नहीं और ब्रह्मचर्याश्रमादिक चार आश्रम और चार वर्णों का यथावत् व्यवस्थापन करने वाला दण्ड ही है किन्तु प्रतिभूः अर्थात् जामिन है इसके बिना धर्म यथावत् व्यवस्था में दृढ़ होती है कभी नहीं चलती अर्थात् दण्ड के बिना जितने वर्ण आश्रम व्यवहार हैं वे सब नष्ट ही हो जाते हैं किन्तु भ्रष्ट व्यवहार भी हो जाते हैं जैसे कि आजकल आर्यावर्त्त देश की व्यवस्था है ॥ १३ ॥ दण्डः शास्ति प्रजाः सर्वा दण्ड एवाभिरक्षति । दण्डः सुप्तेषु जागर्ति दण्डं धर्मं विदुर्बुधाः ॥ १३ ॥ प० सब प्रजा को दण्ड ही शिक्षा करता है और दण्ड ही सब जगत् का रक्षक है जब प्राणी सो जाते हैं तब भी रक्षक होता है परन्तु दण्ड ही नहीं सोता इससे सब आनन्द से सो सकते हैं इसके अपने २ कामकाज और आनन्द करते हैं और जो दण्ड सो जाय तो जगत् का नाश ही हो जाए इससे जो दण्ड है सो ही धर्म है ऐसा बुद्धिमान् लोग जानते हैं ॥ १४ ॥ समीक्ष्य स धृतः सम्यक् सर्वा रञ्जयति प्रजाः । असमीक्ष्य प्रणीतस्तु विनाशयति सर्वतः ॥ प्रति-

षः । स्वप्रणीतस्तु विनाशयति सर्वतः ॥१४॥ भा० जो दंड को अच्छे प्रकार विचार करके धारण करताहै वह राजा सब प्रजा को प्रसन्न करदेता है और जो विना विचारे दंड देताहै वह राजा, मूर्ख सेवक को छोड़ देताहै वही राजा सब जनता का नाश करनेवाला होता है राजा और दंड से राज्य सिद्ध होताहै दौनों प्रकाश का है जो सब धर्मों का प्रकाश और अधर्म राज का नाश करें उस का नाश जाताहै और जो ऐसा नहीं है उसका प्रजा जानो नही रखना चाहिए किन्तु सब का नाश अधर्म और अन्यकार रखना चाहिये ॥१४॥ दुर्ष्येयुः सर्ववर्णाश्च भिद्येरन्सर्वसेतवः । सर्वलोकप्रकोपश्च भवेद्दण्डस्य विभ्रमात् ॥ १५ ॥ भा० दंड के न चलाने से सब वर्ण दूषित होजाते हैं तथा धर्म की मर्यादा टूट जाती है और सब लोगों में प्रकोप होजाता है इससे दंड को कभी न छोड़ना चाहिए ॥ १६ ॥ यत्र श्यामो लोहिताक्षो दंडश्चरति पापहा । प्रजास्तत्र न मुह्यन्ति नेता चेत्साधु पश्यति ॥ १६ ॥ भा० जिस देश में श्याम वर्ण रक्त नेत्र ऐसा जो पाप का नाश करने वाला दंड विचरता है उस देश में प्रजा मोह को प्राप्त नहीं होती परन्तु दंड का चलाने वाला विद्वान और धर्मात्मा होना चाहिए ॥ १६ ॥ तस्याहुः संप्रणेतारं राजानं सत्यवादिनम् । समीक्ष्यकारिणं प्राज्ञं धर्मकामार्थकोविदम् ॥ १७ ॥ भा० उस दंड का चलाने वाला सत्यवादी विचार करके करने वाला बुद्धिमान धर्म अर्थ और काम का जानने वाला हो उसको दंड चलाने का अधिकारी कहते हैं और किसी को नहीं ॥१७॥ तं राजा प्रणयन्सम्यक् त्रिवर्गेणाभिवर्धते । कामात्मा विषमः क्षुद्रो दंडेनैव निहन्यते ॥ १८ ॥ भा० उस दंड अर्थात धर्म को राजा यथावत् निश्चय से करे तो धर्म अर्थ और काम से राजा की सिद्धि होती है और जो कामी पक्षपाती अधर्मी होय, परन्तु छोटे दुराचार--

स्त्रियोंके साथ क्षमा रखता है तथा नम्रता, प्रीति, नीति, विद्या, धैर्य, बुद्धि, बल, पराक्रम तथा सत्पुरुषोंका संग इनको छोड़के विषम नाम कुटिल अर्थात् अभिमान ईर्ष्या, द्वेष, आलस्य और क्रोध इनसे युक्त होके कर्म विपरीत करनेसे वह राजा विषमपुरुष होजाता है सो बुद्धिहीन संगती कर्म और नीच स्वभाव इत्यादिक दोषोंसे युक्त होगा तब वह दुःखपाता राजा नष्ट होजायगा जब धर्म नीतिसे दंड यथावत् प्रकट न करेगा तब उसीके ऊपर दंड आके गिरेगा सो दंडसे हत हो आपही नष्ट होजायगा अर्थात् शत्रु राजाओंको आप निरन्तर दे-लनेमेंजातीहै ॥ १८ ॥ दंडो हि सुमहत्तेजो दुर्धरश्चाकृतात्मभिः । धर्माद्विचलितं हन्ति नृपमेव सबान्धवम् ॥ १९ ॥ ततो दुर्गं च राष्ट्रं च लोकं च सचराचरम् । अन्तरीक्षगतांश्चैव मुनीन्देवांश्च पीडयेत् ॥ २० ॥ भा० दंड जो है सो बड़ा भारी तेज है उसका धारण करना मूर्ख लोगोंको कठिन है जब वेदोक्त धर्मसे विचलता होवै तब कुटु-म्ब सहित राजाका नाश दंड करदेता है ॥ १९ ॥ तदनन्तर दुर्ग जो किला राष्ट्र देश चराचर सब लोग अन्तरिक्ष में रहने वाले अर्थात् सूर्य चन्द्रादिक लोकों में रहने वाले अथवा मुनि जन विचार करने वाले देवताओं पर्यंत पीड़ा करते उनका नाश और अत्यन्त पीड़ा करता है इससे न्यायाधीश पक्षपात को छोड़के य-थावत् दंड करना चाहिए तभी सुखकी वृद्धि होगी और जो दंड को यथावत् न्यायसे न करेंगे तो जल्दी ही नाश होजायगा ॥ २० ॥ सोऽसहायेन मूढेन लुब्धेनाकृतबुद्धिना । न शक्यो न्यायतो नेतुं सक्ते-न विषयेषु च ॥ २१ ॥ भा० सह श्रेष्ठ पुरुषोंके सहायसे रहित मूढ नाम मूर्ख, लुब्ध नाम बड़ा लोभी, अकृतबुद्धि जिसकी बुद्धि नहीं ऐसो राजा मूर्ख है न्याय करके दंडको धारण नहीं करेगा क्योंकि जो जितेन्द्रिय होता है वही राज्य करनेका अधिकारी होता है और जो विषयासक्त तथा क्षुद्र जो कभी दंड देने का न्याय करनेको समर्थ नहीं होगा ॥ २१ ॥ राजा कैसा होना चाहिए ॥ शुचिना सत्यसन्धेन यथाशास्त्रानुसारि-

णा । प्रणेतुं शक्यते दण्डः सुसहायेन धीमता ॥ २२ ॥ भा० शुचि जो आहार भी तथा आचरण से पवित्र हो सत्यधर्म में सदा जिसका सत्यसन्धान है तथा जैसी शास्त्र में परमेश्वर की आज्ञा है वैसा ही करै सुसहाय अर्थात् सत्पुरुषों का सङ्ग करता है और बड़ा बुद्धिमान वही राजा दण्ड व्यवस्था करने को समर्थ होता है अन्यथा नहीं ॥२२॥ वृद्धांश्च नित्यं सेवेत् विप्रान्वेदविदः शुचीन् । वृद्धसेवी हि सततं रक्षोभिरपि पूज्यते २३ ॥ भा० जितने ज्ञानवृद्ध विद्यावृद्ध तपोवृद्ध, पवित्रान्तःकरण वेदवेत्ता धर्मात्मा धैर्यवान् होवैं उनकी सेवा राजा नित्य करै जो ऐसा करै तो राक्षसों का राजा होने करैगा तो [illegible] पुरुष [illegible] सत्कार और आदर करैंगे ॥ २३ ॥ तेभ्योऽधिगच्छेद्विनयं विनीतात्मापि नित्यशः । विनीतात्मा हि नृपतिर्न विनश्यति कर्हिचित् ॥ २४ ॥ जो राजा विनीतात्मा होवै अर्थात् श्रेष्ठ पुरुषों के सङ्ग से विनीत होवै तो भी सत्यपुरुषों से विनय को ग्रहण करै क्योंकि जो [illegible] से रहित और विद्यावान् [illegible] गुणों से युक्त होता है उसका [illegible] नाश कभी नहीं होता ॥ २४ ॥ त्रैविद्येभ्यस्त्रयीं विद्यां दण्डनीतिं च शाश्वतीम् । आन्वीक्षिकीं चात्मविद्यां वार्त्तारम्भांश्च लोकतः ॥ २५ ॥ भा० तीनों वेदों [illegible] धर्मात्मा [illegible] दण्डनीति [illegible] इनको भी पढ़ै तथा आन्वीक्षिकी [illegible] आत्मविद्या और श्रेष्ठ पुरुषों से कहने पूछने और निश्चय करने के वास्ते वार्त्ताओं का आरंभ इन लोगों से [illegible] और [illegible] करै ॥ २५ ॥ इन्द्रियाणां जये योगं समातिष्ठेद्दिवानिशम् । जितेन्द्रियो हि शक्नोति वशे स्थापयितुं प्रजाः ॥ २६ ॥ भा० राजा रात दिन इन्द्रियों के जीतने में नित्य यत्न करै क्योंकि जो अजितेन्द्रिय राजा होता है वह प्रजा को वश में स्थापन करने में समर्थ नहीं होता है और जो अजितेन्द्रिय अर्थात् कामी होता है आप ही भ्रष्ट होजाता है फिर प्रजा को [illegible] इससे राजा [illegible] होवै, [illegible]

न्द्रिय इनको वशमें रखता है सोई राजा न्यायको धर्ममें करता है अ-न्यथा कभी न्यायधर्मका प्रवर्तक नहीं होवेगा जब तक मनुष्य जितेन्द्रिय न होगा तब तक निश्चल राज्य कभी न होगा इससे जो जितेन्द्रिय होय उस को ही राजा करना चाहिये अन्यको नहीं ॥ २६ ॥ दशकामसमुत्थानि तथाष्टौ क्रोधजानि च । व्यसनानि दुरन्तानि प्रयत्नेन विवर्जयेत् ॥ २७ ॥ भा० जो राजा कामी होगा उसमें दश दुष्ट व्यसन अवश्य होंगे और जो राजा क्रोधी होगा उसमें आठ दुष्ट व्यसन अवश्य होंगे उनको शीघ्र त्याग करदे अन्यथा राजा जो है सो राज्यसहित नष्ट हो जाता है ॥ २७ ॥ फिर क्या होगा कि कामजेषु प्रसक्तो हि व्यसनेषु म-हीपतिः । वियुज्यतेऽर्थधर्माभ्यां क्रोधजेष्वात्मनैव तु ॥ २८ ॥ भा० जो राजा कामके उत्पन्न भये जो दश दुष्ट व्यसन उनमें फंसेगा सो राज्यका अर्थ नाम द्रव्य और राज्यादिक सब पदार्थ तथा धर्म इनसे रहित हो जायगा अर्थात् दरिद्र और पापी हो जायगा और क्रोधसे उत्पन्न होते हैं जो आठ दुष्ट व्यसन उनमें फंसने से तो राजा जो है सो शरीर से भी रहित हो जाता है इससे इन अठारह दुष्ट व्यसनों को राजा छोड़दे जो अपने कल्याण की इच्छा होवे तो उनसे १८ अठारह दुष्ट व्यसन ये हैं ॥ २८ ॥ मृ-गयाक्षो दिवास्वप्नः परिवादः स्त्रियो मदः । तौर्यत्रिकं वृथाट्या च कामजो दशको गणः ॥ २९ ॥ भा० मृगया नाम शिकार का खेलना अक्ष-नाम पासा जो खेलना द्यूत कहाता दिवास्वप्न दिनमें सोना परिवाद नाम किसी की निन्दा करना स्त्री नाम वेश्या और परस्त्रीगमनको व्यसन पूर्वक किन्तु अपनी जो विवाहित स्त्री है उसके भी साथ व्यसनासक्त होके अत्यन्त काम क्रीड़ा करनी मद नाम मद्यादि का पान करना मदकारक पदार्थ सेवन करना, तौर्यत्रिक अर्थात् गाना बजाना नाचना इन तीनों का व्यसनपूर्वक सेवन करना और वृथाट्या वृथा इधर उधर भ्रमण करना ये दश कामसे उत्पन्न हुए दुष्ट व्यसन हैं इनको राजा अवश्य छोड़दे इसको और क्रोधके

गा और वर्ण और धर्म अर्थात् बल सहित राज्य नष्ट होजाता है इसमें कुछ सन्देह नहीं जो यह काम से उत्पन्न हो दुर्व्यसन है ॥ २९ ॥ पैशुन्यं साहसं द्रोह ईर्ष्यासूयार्थदूषणम् । वाग्दण्डजं च पारुष्यं क्रोधजोऽपि गणोऽष्टकः ॥३०॥ अ० पैशुन्यनाम चुगली करना साहस नाम विचार के बिना अन्याय से पर पदार्थ का हरण कर लेना अभिमान न न्याययुक्त होके द्रोह नाम सज्जनों से प्रीति का न करना ईर्ष्या नाम पर सुख न सहना असूया नाम गुणों में दोष और दोषों में गुणों का कहना अर्थदूषण नाम अपने पदार्थों का वृथा नाश करना अथवा अभिमान से दूसरे के बड़े अर्थ के अनर्थ कर देना वाग्दण्डज पारुष्य नाम विना विचारे मुख से बोल देना अथवा कठोर वचन का कहना दण्ड का नाम पारुष्य विना विचारे दण्ड का देना वा अपराध के विना किसी को दण्ड देना अपराध के ऊपर भी पक्षपात से पितादिकों को दण्ड न देना यह क्रोध से आठ दुर्व्यसन उत्पन्न होते हैं इसको अवश्य सर्वदा छोड़ देवे अन्यथा अपने शरीर सहित सो भी राज्य का नाश हो जाता है इन दोनों गणों का जो मूल है सो कहते हैं ॥३०॥ द्वयोरप्येतयोर्मूलं यं सर्वे कवयो विदुः । तं यत्नेन जयेल्लोभं तज्जावेतावुभौ गणौ ॥३१॥ अ० जिस लोभ से काम और क्रोध जो दोनों गण उत्पन्न होते हैं अर्थात् पाप और दुराचारों का मूल लोभ ही है ऐसा सब विद्वान् लोग जानते हैं इस लोभ को यत्न से राजा छोड़ देवे क्योंकि लोभ ही से दोनों गण काम और क्रोधज उत्पन्न होते हैं इससे राजा और सज्जन लोग जो सब पापों का मूल लोभ ही को छोड़कर देवें इसके छोड़ने से सब अनर्थ और पाप नष्ट हो जाते हैं जैसे मूल के छेदन से वृक्ष नष्ट हो जाते हैं ॥३१॥ पानमक्षाः स्त्रियश्चैव मृगया च यथाक्रमम् । एतत्कष्टतमं विद्याच्चतुष्कं कामजे गणे ॥ ३२ ॥ अ० पान नाम मद्यादि का सेवन अक्ष नाम जूआ स्त्री मृगया पूर्वोक्त अर्थ जानो ये चार कामज गण में अत्यन्त दुष्ट हैं ऐसा राजा जाने ॥३२॥ दण्डस्य पातनं चैव वाक्पारुष्यार्थदूषणे । क्रोधजेऽपि गणे विद्यात्कष्टमेतत्त्रि-

कं सदा ॥ २३ ॥ भ० दंडकानिपातन वाक्पारुष्य और अर्थदूषण ये तीन क्रोध के गण में अत्यन्त दुःख हैं १८ अठारह में से ऐसा अत्यन्त दुःख हैं ॥ २३ ॥ सप्तकस्यास्य वर्गस्य सर्वत्रैवानुषङ्गिणः । पूर्वं पूर्वं गुरुतरं विद्याद्व्यसनमात्मवान् ॥ २४ ॥ भ० चार काम के गण में और तीन क्रोध के गण में सातों ये अनुसंगी हैं कि एक होवै तो दूसरा भी होजाय इन सातों में पूर्व २ अत्यन्त दुःख हैं ऐसा विचारवान् को जानना चाहिये जैसे जिस अर्थदूषण से वाक्पारुष्य दुष्ट है वाक्पारुष्य से दंड का निपातन दुष्ट है दंड के निपातन से शिकार शिकार से स्त्रियों का सेवन इससे द्यूतक्रीड़ा और इससे मद्यादिकपान दुष्ट है ऐसा निश्चय सज्जनों को जानना चाहिये ॥ २४ ॥ व्यसनस्य च मृत्योश्च व्यसनं कष्टमुच्यते । व्यसन्यधोऽधो व्रजति स्वर्यात्यव्यसनी मृतः ॥ २५ ॥ भ० व्यसन और मृत्यु इन दोनों में व्यसन ही सो मृत्यु से भी बुरा है क्योंकि जो व्यसनी पुरुष है सो पापों में फंस के नीचे २ गति को चला जाता है और जो व्यसन रहित पुरुष है सो मरजाने पर भी स्वर्ग अर्थात् सुख को प्राप्त होता है इससे जिसका वह दुःख मरके दूर होता है वही दुःख व्यसन से फंस जाता है और जिसका भाग्य अच्छा होता है वह दुःख व्यसनों से दूर रहता है ॥ २५ ॥ मौलान्शास्त्रविदः शूरांल्लब्धलक्षान्कुलोद्गतान् । सचिवान्सप्त चाष्टौ वा प्रकुर्वीत परीक्षितान् ॥ २६ ॥ भ० फिर राजा सात वा आठ पुरुषों को अपने पास रखलेवे कि जो कि स्वदेश में उत्पन्न हुए हों और शास्त्र के जानने वाले हों और शूरवीर, जिन्होंने प्रमाणों से पदार्थ निश्चय किया है श्रीमानों के उत्तम कुल में जिनका जन्म होय उनको यथावत् परीक्षा करके राजा देखे क्योंकि राज्य के कार्य एक से कभी नहीं होसके इससे जितने पुरुषों से काम होसके उतने पुरुषों की परीक्षा करके रखले उनसे प्रधान काम लेवै परन्तु बिना परीक्षा मूर्खों को कभी न रक्खे और जिस जन सभा [illegible] किसी छोटे काम को भी राजा स्वतन्त्र होके न करै और जो स्वाधीन होके कुकर्मी राजा करै तो सब भी सब पुरुष राजा को दण्ड दें फिर दंड से भी न मानै तो उसको निकाल दें

दूसरा राजा वशीभूत होवे ॥३६॥ सेनापत्यं च राज्यं च दण्डनेतृत्व-
मेव च । सर्वलोकाधिपत्यं च वेदशास्त्रविदर्हति ॥ ३७ ॥ भा० सेना
पति राज्य करने के योग्य राजा दण्ड देने वाला सर्वलोकाधिपति अ-
र्थात् राजा के नीचे मुख्य सर्वोपरि जिसका नाम दीवान कहते हैं ये चार
अधिकार वेद और सब सत्यशास्त्र इनमें पूर्ण विद्वान् होवें उनही को देवें
अन्य को नहीं क्योंकि ये चार अधिकार मुख्य हैं बिना विद्वानों के ये चार
अधिकार यथावत नहीं होते और जो मूर्ख काम, क्रोधादिक, दोषयुक्त
इनको देने से ये चार अधिकार नष्ट हो जायगे इस वास्ते अत्यन्त परीक्षा
करके चार पुरुष विद्वानों को चार अधिकार देना चाहिए जिससे कि वि-
जय राज्य वृद्धि धर्म न्याय और सब व्यवहारों की यथावत व्यवस्था होय
अन्यथा सब राज्य और ऐश्वर्य नष्ट हो जाते हैं ॥३७॥ तेषामर्थे नियुञ्जी-
त शूरान्दक्षान्कुलोद्गतान् । शुचीनाकरकर्मान्ते भीरूनन्तर्निवेशने ॥
३८ ॥ भा० उन अमात्यों के समीप राज्य कार्य करने के वास्ते राजा शूर
चतुर, कुलीन पवित्र जो होवें उनको राज्य में रक्खें अमात्य उनसे सब
राज्य कार्यों को सिद्ध करें उनमें से जितने शूर होवें उनको जहां २ शंका-
स्पद युक्त स्थान होवें वहां २ रक्खें और जितने भीरु डरपोक उनको भीतर घर के अधिका-
रों में रक्खें जहां कि स्त्री लोग और कोश वस्त्र रखने वालों को रक्खें और
जहां शूरवीर लोगों का काम होय वहां शूरवीरों को रक्खें ॥३८॥ दूतं-
चैव प्रकुर्वीत सर्वशास्त्रविशारदम् । इङ्गिताकारचेष्टज्ञं शुचिं दक्षं कु-
लोद्गतम् ३९ ॥ भा० फिर राजा दूत को रक्खें वह दूत कैसा होय कि सब शा-
स्त्रविद्या से पूर्ण होय मनुष्य के हृदय की बात मन शरीर की आकृति और
चेष्टा इन से जान लेना जो कि उसके हृदय में होय पवित्र चतुर और
बड़े कुल का जो पुरुष होय ऐसे पुरुष को राजा दूत का अधिकार देवे ३९ ॥
अनुरक्तः शुचिर्दक्षः स्मृतिमान्देशकालवित् । वपुष्मान्वीतभीर्वाग्मी
दूतो राज्ञः प्रशस्यते ॥ ४० ॥ भा० फिर ऐसे को दूत करे कि राजा में बड़ी
प्रीति जिसकी होय दक्ष नाम बड़ा चतुर एक बात कही होय को कभी न
भूले और जैसा देश जैसा काल वैसी बात को जाने वपुष्मान् नाम रूप-

बलऔरशूरवीरता जिसमेंहोय बीतभीनाम किसीसे जिसकोभयन
होय वागमीवड़ावक्ताचतुरऔरधमन्याऽहोवै ऐसाजोदूतराजाका होय
सोश्रेष्ठहोताहै ॥ ४०॥ अमात्येदण्डआयत्तोदण्डेवैनयिकीक्रिया।
नृपतौकोशराष्ट्रे चदूतेसन्धिविपर्ययौ ॥ १ ॥ म० दण्डदेनेकाअि-
तनाव्यवहारबड़ासर्वाआधिकतअमात्य पुरुषोंकेआधीन रक्खै और
दण्डअन्यायसेनहोनेपावै किन्तुविनयपूर्वकहीहोवै. कोशऔर रा
ज्ययहदोनोंराजाके अधिकार में रहैं सन्धिनाम मिलापविपर्यनाम
विरोधयेदोनोंदूतकेआधीनराजारक्खै ॥४१॥ तत्स्यादायुधसम्प
न्नंधनधान्येनवाहनैः। ब्राह्मणैःशिल्पिभिर्यन्त्रैर्यवसेनोदकेनच ।
४२ ॥ म० वहगढ़दुर्गकिलासब प्रकारकेआयुध धनधान्यनामअ
न्नादिवाहनसवारीब्राह्मणविद्वान शिल्पीनामकारीगरलोग नानाप्र-
कारकेयन्त्रयवःघासआदिकचारा और उदकनामजल इनसे पूर्ण
सदारहैकभीकिसीबातकीनहोय ॥ ४२ ॥ तस्यमध्येसुपर्याप्तंका-
रयेद्गृहमात्मनः। गुप्तंसर्वर्तुकंशुभ्रं जलवृक्षसमन्वितम् ॥४३॥म०
उसगढ़केबीचमेंसबप्रकारसेअच्छाअपनारहनेकाघरराजा बनावै सब
प्रकारसेउसकीरक्षाकरैं औरसबऋतुओंमें जिसघरमेंसुखहोवै
शुभ्रनामसुफेदचमकदारहोवै चारों ओरउसके जल औरअच्छे २ वृक्ष
होवैं २ पेड़रहैं जहांसे आपरहैं सबराज्यकोदेखै भ्रमणकरैं औरसब
केऊपरसदादृष्टिरक्खै जिससेकोईअन्यायनकरनेपावै ॥ ४३ ॥ त
दध्यास्योद्वहेद्भार्यां सवर्णांलक्षणान्विताम् । कुलेमहतिसम्भूतांहृ-
द्यांरूपगुणान्विताम् ॥४४॥ म० उसस्थानमेंरहकेअपनेवर्णकीस
श्रेष्ठलक्षणोंसेयुक्तऔरबड़ेकुलमेंउत्पन्नभई अत्यन्तहृदय को प्रसन्न
करनेवाली उत्तमजिसकारूपऔर सर्वविद्यादिकश्रेष्ठगुणोंसेसम्प-
न्नस्त्रीकेसाथराजाविवाहकरै देखना चाहिए किब्रह्मचर्याश्रमसे स
बविद्याकापढ़ना सबराज्यकार्यका प्रबन्धकरना और सबप्रजाके
कोयथावत्जानना पीछेराजाका विवाहमनुभगवान्नेलिखा इस
सेजानाकि ४८ वा ४० चालीसवा ३६ वर्ष में राजाको वि

वाह करना उचित है इससे पहिले कभी नहीं और स्त्री भी २० वर्षसे ऊपर २४ वर्ष तक की होना चाहिए क्योंकि इस से पहिले सन्तान सबल नहीं होय और शरीर भी नष्ट भ्रष्ट हो जाता है ॥ ४४ ॥ पुरोहितं च कुर्वीत वृणुयादेव चर्त्विजम् । तेऽस्य गृह्याणि कर्माणि कुर्युर्वैतानिकानि च ॥ ४५ ॥ भा० सब शास्त्रोंमें विशारद नाम निपुण धर्मात्मा जितेन्द्रिय और सत्यवादी जो कि पूर्वोक्त लक्षण वाला ब्राह्मण उसको पुरोहित करे और ऋत्विज भी वैसेही को करे जो राजाके जितने अग्निहोत्रादिक गृह्यकर्म और इष्टि आदिक उनको नित्य करें ॥ ४५ ॥ यजेत राजा क्रतुभिर्विविधैराप्तदक्षिणैः । धर्मार्थं चैव विप्रेभ्यो दद्याद्भोगान्धनानि च ॥ ४६ ॥ भा० अग्निष्टोमसे लेके जितने अश्वमेध तक यज्ञ हैं उनमें से कोई यज्ञको राजा करे और पूर्ण कि पदार्थ और पूर्ण दक्षिणा से करे जिससे विद्वान और धर्मात्मा होवें उनको नाना प्रकारके भोजन कराके और दक्षिणा भी देवे ॥ ४६ ॥ सांवत्सरिकमाप्तैश्च राष्ट्रादाहारयेद्बलिम् । स्याच्चाम्नायपरो लोके वर्तेत पितृवन्नृषु ॥ ४७ ॥ भा० श्रेष्ठ पुरुषों के द्वारा वर्ष वर्ष के राज्यसे करोंको राजा लिया करे केवल वेद विहित और धर्मशास्त्रोंके आचारमें तत्पर होवें जितनी प्रजामें कन्या पुत्रवती और वृद्ध होवें इनकी कन्या भगिनी और माताकी नाईं भजो और जितने लड़के पुत्र और वृद्ध उनको पुत्र भाई और पिताकी नाईं राजा जाने अधिक वयवाली तरुण जाको पुत्रकी नाईं मानै और अपने पिताकी नाईं वर्तमान करे ॥ ४७ ॥ अध्यक्षान्विविधान्कुर्यात्तत्र तत्र विपश्चितः । तेऽस्य सर्वाण्यवेक्षेरन्नृणां कार्याणि कुर्वताम् ॥ ४८ ॥ भा० अधिकार जैसा राज्यका यहां वहां नाना प्रकारके पण्डितों को रख देवै सब प्रजाके सुखके वास्ते सब कार्यों को देखते रहैं और व्यवस्था करते रहैं जिससे कि अधर्म नहीं होने पावै परन्तु वे मूर्ख नहीं होवें किन्तु सब विद्वान ही होवें ॥ ४८ ॥ आवृत्तानां गुरुकुलाद्विप्राणां पूजको भवेत् । नृपाणामक्षयो ह्येष निधिर्ब्राह्मोऽभिधीयते ॥ ४९ ॥ भा० न तं स्तेना न चामित्रा हरन्ति न च नश्यति । तस्माद्राज्ञा निधातव्यो ब्राह्मणेष्वक्षयो निधिः ॥ ५० ॥ भा० न तस्कर चोर न शत्रु ले सके न नष्ट होय यह ब्राह्मणोंमें धरी हुई निधि राजाकी कभी नहीं नष्ट होती

न व्यथते न विनश्यति कर्हिचित् । वरिष्ठमग्निहोत्रेभ्यो ब्राह्मणस्य मुखे हुतम् ॥ ४९ ॥
भ० जो ब्रह्मचर्याश्रम से गुरुकुलमें गुरुके पास विद्या पढ़के पूर्णविद्वान् होकर आवें उनको राजा यथायोग्य सत्कार करै और यथायोग्य उनको अधिकार भी देवै जिससे कि सत्यविद्या का लोप कभी न होवे किन्तु सब विद्या सब मनुष्यों के बीच में सदा प्रकाशित रहै अर्थात् पुरुष वा स्त्री विद्या रहित न रहने पावैं यही राजाओंका अक्षयनिधि अर्थात् अक्षय पुण्य है जो कि ब्रह्मचारी वेदका यथावत् पढ़ना और यथावत् वेदोक्त कर्मोंका करना इससे आगे कोई पुण्य नहीं है क्योंकि ॥ ४९ ॥ जितने धन हैं सुवर्ण रजतादिक पुत्र दारा और शरीर उनको चोर ले सकते हैं शत्रु भी हरण कर सकते हैं और उनका नाश भी होजाता है परन्तु जो विद्या निधि है उसको न चोर न शत्रु हर सकते हैं और न कभी उसका नाश होता है इससे राजलोगोंको विद्याका पढ़ाना रूप जो निधि उसको विद्वानों के बीच में स्थापन करना चाहिए और नित्य उसका प्रचार करना चाहिए ॥ ५० ॥ जो विद्यानिधि है उसको कोई उठाई गीरा उठा नहीं सकता न उसको व्यथा अर्थात् कभी पीड़ा होती है अग्निहोत्रादिक जितने यज्ञ हैं उनसे बड़ा जो विद्या रूप ओ धर्मात्मा सत्यवक्ता के जानने वाले अथवा पढ़नेवाले के मुख रूपवेदमें होम सर्वोत्तम विद्या का जो स्थापन करना है सो विशिष्ट सब योगों में श्रेष्ठ है इससे राजा लोगों को अवश्य २ चाहिए कि शरीर, मन और धन से अत्यन्त प्रयत्न विद्या के प्रचार में करें इसी से राजा लोगों का ऐश्वर्य पूर्ण आयु, बल, बुद्धि और पराक्रम सदा अधिक होते हैं ॥ ५१ ॥ संग्रामेष्वनिवर्तित्वं प्रजानां चैव पालनम् । शुश्रूषा ब्राह्मणानां च राज्ञां श्रेयस्करं परम् ॥ ५२ ॥ भ० संग्रामों से भी निवृत्त न होना कि जबतक उस शत्रु को न जीत ले तबतक उपाय में हो रहे किन्तु भागने के समय में भाग भी जाना और पराक्रम के समय में पराक्रम करना इसका नाम शूरवीरपना है जो कि पशु की नाईं मारखाना वा मरजाना इसका नाम शूरवीरता नहीं किन्तु बुद्धि ही से विजय होता है अन्यथा कभी नहीं प्रजाओंका पालन करना जितने

विद्वान्सत्यवादीब्राह्मणोंकीशुश्रूषा अर्थात् सत्कविद्वान्विद्या और गुणों
उनकायथावत्सत्कारकरना यही राजालोगोंका कल्याणकारनेवा-
लापरमश्रेष्ठकर्महै अन्यकोईनहीं ॥ ५२ ॥ आहवेषुमिथोन्योऽ-
न्यंजिघांसन्तोमहीक्षितः । युध्यमानाःपरंशक्त्यास्वर्गंयान्त्यपरा-
ङ्मुखाः ॥ ५३ ॥ भ० प्रजाकेपालनकरनेकेवास्ते श्रेष्ठधर्मात्माओंका
यथावत्पालन और दुष्टोंकाताड़नकरनेकेलिये जितना अपनासा-
मर्थ्य उसेयथावत् सबपुरुषमिलके परस्पर जोराजालोगयुद्ध
करतेहैं उसमें अपनेभी मरणसे जोशंका नहीं करते हैं औरयुद्ध में
पीठ नहीं दिखाते हैं अर्थात् कभी युद्धसेभागते नहींपरन्तु औरशूर
वीरता से जोयुद्ध करतेहैं उनकाइसलोकमेंअखण्डित राज्यहोताहै
औरमरजायतो मरनेके पीछे परमस्वर्गको प्राप्तहोतेहैं क्योंकि उन
राजालोगोंका जितना कर्म है सो धर्मकेवास्ते ही है औरशूरवी-
रतासे उत्साहपूर्वक निर्भयसमयमें देहका जो छोड़नाहै स्वर्गजाने
का कारणहै ॥ ५३ ॥ युद्धमेंधर्मसेइननियमोंको राजालोगोंकोअवश्य
मानना चाहिये । नकूटैरायुधैर्हन्याद्युध्यमानोरणेरिपून् । नक-
र्णिभिर्नापिदिग्धैर्नाग्निज्वलिततेजनैः ॥ ५४ ॥ नचहन्यात्स्थ-
लारूढंनक्लीबंनकृताञ्जलिम् । नमुक्तकेशंनासीनंनतवास्मीतिवा-
दिनम् ॥ ५५ ॥ नसुप्तंनविसन्नाहंननग्नंननिरायुधम् । नायुध्य-
मानंपश्यन्तंनपरेणसमागतम् ॥ ५६ ॥ नायुधव्यसनप्राप्तंनार्त्तं-
नातिपरिक्षतम् । नभीतंनपरावृत्तंसतांधर्ममनुस्मरन् ॥ ५७ ॥
भ० कूटआयुध अर्थात् कपट, छल, से कोई भी कभीयुद्धमेंनमारैरिपु
नामशत्रुओंका कर्णिनामकुटिलशस्त्र विषसेयुक्तशस्त्र तथाअग्निसे
तपायेहुएशस्त्रोंसेशत्रुकोकभीनमारै ॥ ५४ ॥ जोआसनमेंबैठाहोय
नपुंसकहोतकोछोड़दे जिसके शिरके बालखुलजांय मैं आपकाहूं
मुझकोमतमारोजोऐसाकहै ॥ ५५ ॥ जोसोताहोय जोयुद्धसेभाग
रहाहोय विषादकोप्राप्तभयाहोय नग्नहोयजोहोय आयुधसेर-
हित किजिसके हाथमेंशस्त्रनहोय जोयुद्धनकरताहोय जोदेखनेको

आगयाहोय अथवादूसरे केसाथलड़ताहो.पीड़ितहोगया होय शस्त्र केप्रहारसेदुःखितहोगयाहोय और शस्त्रोंकेलगनेसे शरीरमें छेदन होगयाहोय भयभीतहोगयाहोय भूमिमेंखड़ाहोवनाम नपुंसक और भयसेहाथजोड़खे इनकोयुद्धमेंराजाकभीनमारै क्योंकिसत्पु- रुषराजाओंकायहीधर्महै जोयुद्धकरनेकोआवैं शूरवीरतासे उसी कोमारैं अन्यकोनहीं किन्तु पकड़के सुखमेंअपनेवशमें उसीरक्तकर ले जोरथीऔर वाजकरैंउनकोमारनेकी इच्छाभी राजा लोगनकरैं क्योंकिजोयुद्धकीइच्छायायुद्धनहीकरते हैं उनकेमारनेमें बड़ा पापहै इससे कभी इनकोनमारैं ॥५७॥ और जोराजाका भृत्यहोयवहयुद्ध नकरैंवायुद्धसेभागजाय अथवाडरजाय, कपट, रचै युद्धमेंउसकोबड़ा भारीपापहोता है । यश्चभीतःपरावृत्तःसंग्रामेहन्यतेपरैः भर्तुर्य- द्दुष्कृतंकिंचित्तत्सर्वंप्रतिपद्यते । ५८ ॥ भा० जोभृत्यभयभीतहोके युद्धसेभागजाताहै और भागेहुएकोशत्रुजोमारडालैं तोवड़ी कृतघ्नताउसनेकिया क्योंकिराजानेउनकापालन औरसत्कारकि- याथा सोयुद्धकेवास्तेहीकियाथा सोयुद्धउनसे कुछकियानहीराजा केलियेकोनाशकरनेसे वहकृतघ्नहोताहै और जो राजाकाकुछपाप उसको वहीप्राप्तहोता है ॥ ५८ ॥ यच्चास्यसुकृतंकिंचिदमुत्रार्थमुपा- र्जितम् । भर्तातत्सर्वमादत्तेपरावृत्तहतस्यतु ॥ ५९ ॥ भा० उसभृत्य नेजोकुछउत्तमकर्म केवास्ते पुण्यकियाथा इसउनपुण्यकोराजालेले- ताहै और उसभृत्यकोवोनरक होताहै सुखकभीनहोयहीधर्मसेत्या- ग और सबलोगोंकापापहै किलोकोंमेंभीजोजिसकाभृत्य होनेपर हितकरतेहीमें मरजायवहतरहै छल और कपटपनसे भाग करै अन्यथादोनोंअधर्मीहोतेहैं ॥ ५९ ॥ रथाश्वंहस्तिनंछत्रंधनं- धान्यंपशून्स्त्रियः । सर्वद्रव्याणिकुप्यंचयोयज्जयतितस्यतत् । ६०॥ भा० रथघोड़ाहाथीछाता, धनधान्यपशुगायबकरी, आदिकस्त्री और सबप्रकारकेद्रव्य घीतेलआदिकुप्य इनको जोयुद्धकरनेवालाजीते जोईलेलेवै उनमेंसेराजाकुछभागले ॥ ६० ॥ राजइसयुद्धकारमित्ये

षावैदिकीश्रुतिः । राज्ञाञ्चसर्वयोधेभ्योदातव्यमपृथग्जितम् ९१ ॥ भा० परन्तु सबभृत्यलोगसोलहवांहिस्सा उनद्रव्योंमें से राजाकोदेवें जोराजाऔर सेनामेंमिलकेजीता होय उसमेंमिलाभयाउसमेंसे राजाभीसोलहवांहिस्साभृत्योंको देवें इसमेंराजाअधिकवान्यूनता कभीनकरै क्योंकिइसकेबिनायुद्धमेंउत्साहकभीकोई न करेगा ९१। अलब्धमिच्छेद्दण्डेन लब्धंरक्षेदवेक्षया । रक्षितंवर्द्धयेद्वृद्ध्या वृद्धं दानेननिःक्षिपेत् ॥९२॥ भा० चारभेदहैं पुरुषार्थ केअलब्धजो रा-ज्यादिकउनकोदंडसे ग्रहणकरै जो प्राप्तभयाउसकी खूबबुद्धिऔर प्रीति सेरक्षाकरै औररक्षितपदार्थोंकाव्यापारादिकउपायोंसे बढ़ावै औरबढ़ाभयाधन उसको विद्यादान धर्मधर्मात्माओं का पा-लनऔरअनाथोंकेपालनमेंलगावै इनपदार्थोंसेभीवैदिक सत्य शास्त्रों केपढ़नेऔरपढ़ानेहीमें बहुधा धन खर्चकरै अन्यमें नहीं ॥ ९२ ॥ बकवच्चिन्तयेदर्थान्सिंहवच्चपराक्रमेत् । वृकवच्चावलुम्पेत शशवच्च-विनिष्पतेत् ॥ ९३ ॥ भा० राजासबअर्थोंकेसंग्रहकरनेमेंबकवत्बुद्धि से विचारकर जैसाकिसत्यादिकग्रहणकरने केवास्ते बगुलाध्याना वस्थितहोकेविचारकरताहै वैसेराजाध्यानावस्थितहोके सब अर्थों काविचार करै युद्धसमयमेंसिंहकी नाईंपराक्रमकरै जिससे विजय होवे औरपराजय कभीनहोय आपत्कालमेंअपनेशत्रुओंपरनिग्रहक-रनेकेवास्ते ऐसाशूर हैजैसा कि भेड़ियाऔर खरहा जैसे अपनेबिलमेंनिकलकेकूदताकूदताचलाजाता है वैसे हीराजाशत्रु कोसेनासे निकलकेभागजाय वाछिपजाय अथवा किला तोड़ने में औरशत्रु ग्रहणकरनेमेंपराक्रमकरै ॥ ९३ ॥ शरीरकर्षणात्प्राणाः क्षीयन्ते प्राणिनांयथा । तथाराज्ञामपिप्राणाः क्षीयन्ते राष्ट्रकर्ष-णात् ॥ ९४ ॥ भा० जैसेशरीरदुर्बलकरनेसेबलादिकजोप्राणकेक्षीण होजाते हैं वैसेहीराज्यकेनाश अर्थात् अरक्षणसे राजालोगोंके भी प्राणक्षीणहोजातेहैं अर्थात राज्यसहितनष्टहोजातेहैं ॥ ९४ ॥ य-थाक्रमाज्ञयमदुर्गस्यार्थं चारैर्गोपनतत्पराः । तथाव्याजन्योगुही-

तथैव राष्ट्राद्राजा हार्य्यः कर: ॥ ६५ ॥ भा० जैसे जोंक बछड़ा और भौंरा थोड़ा २ रुधिर दूध और सुगन्ध को जिनसे ग्रहण करते हैं उनका नाश कभी नहीं करते वैसेही राजा प्रजा से थोड़ा २ कर ग्रहण करै साल २ में । ६५ ॥ परस्परविरुद्धानां तेषां च समुपार्जनम् । कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम् ॥ ६६ ॥ भा० जब सब शास्त्रों के साथ वा प्रजास्थ पुरुषों के साथ कोई व्यवहार के निश्चय के वास्ते राजा विचार करै उसमें जिस बात में परस्पर विरोध हो उसमें से विरुद्धांश को छोड़ के सिद्धान्त में सब की जय एकता होय उस बात का आरम्भ करै अन्यथा नहीं कन्याओं का सोलह में वर्ष से पहिले विवाह कभी न होने पावै तथा चौबीस वर्ष के आगे कन्या विवाह के बिना कभी न रहने पावै जिसको की विवाह की इच्छा होय तथा कुमार पुरुषों का २५ वर्ष के पहिले विवाह किसी का न होने पावै और ४०, ४४ वा ४८, वर्ष के आगे विवाह के बिना पुरुष भी न रहैं उन कन्याओं और पुरुषों को विद्यादान राजा करै और उनसे करावै तथा उनकी रक्षा भी राजा करावै जिससे कि कोई अकुल होवें और विवाह भी कोई कन्या यथावत् करै यही राजा लोगों का परम धर्म और परम पुरुषार्थ है जिससे सब व्यवहार उत्तम होते हैं अन्यथा नहीं और जिस पुरुष वा कन्या को विवाह की इच्छा ही न होवे उसके ऊपर राजा का कुछ बल नहीं ॥ ६६ ॥ दूतसंप्रेषणं चैव कार्यशेषं तथैव च । अन्तःपुरप्रचारं च प्रणिधीनां च चेष्टितम् ॥ ६७ ॥ दूत को भेजना और उससे सब यथावत् व्यवहारों का जानना। कार्यशेष नाम इतना कार्य सिद्ध होगया और इतना कार्य सिद्ध करना बाकी है उसको विचार से यथावत् पूर्ण करै जिस नगर देश और जिस स्थान में रहैं उन मनुष्यों का यथावत् अभिप्राय जान ले प्रणिधी नाम दूती अथवा दासी इनकी भी चेष्टा को यथावत् जानै जिससे कि कोई विघ्न होने न पावै ६७ ॥ कृत्स्नं चाष्टविधं कर्म पञ्चवर्गं च तत्त्वतः । अनुरागापरागौ च प्रचारं मण्डलस्य च ॥ ६८ ॥ भा० ये आठ विध जो कर्म राजाओं के हैं उनको और राज्य के पांच वर्ग हैं जिनमें वर्णों को तत्त्व से जानै और उसकी

रक्षाभीकरैं अपने मैत्रवर्कीप्रीति वाक्सभीनि अथात्पएडलके राजा
ओंकाव्यवहार औरउनकेमनकीइच्छाइनको यथावत् राजाजान-
ताहैजिससेआपत्कालमेंकष्टकभीनआवे ॥ ६७ ॥ मध्यमस्यप्र-
चारञ्च विजिगीषोश्चचेष्टितम् । उदासीनप्रचारंच शत्रोश्चैवप्रय-
त्नतः ॥ ६८ ॥ अपनेऔरपरराज्यकीसीमामें जोराजाहोय विजि-
गीषुनामशत्रु केतरफसेजोजीतनेकोआवै उदासीनजो अपनेवाशत्रु
के पक्षमेंनहोवे औरशत्रु इनचारोंकीचेष्टाऔर अभिप्रायको यथा-
वत्राजाजानलेवे अन्यथासुखकभीनहोगा इससेअत्यन्तप्रयत्न पूर्वक
राज्यकेमूलजितनेहैं उनकोकहें औरउनपरहोकेजानें जानके यथा-
वत्व्यवस्थाकरै ॥ ६९ ॥ इनकोसामअर्थात्मिलाप,दानअर्थातधन
कादेना भेदनामपरस्परसभोंकोतोड़फोड़रक्खै और दण्डये चार
तो माललोगोंकेसाधनहैं परन्तु इनचारोंमें से मिलाप उत्तम है उससे
नीचेदाम और भेदसबसेकनिष्ठदण्डहै इससेतीनउपायसे,जबकार्य
सिद्धिनहोवैतबदण्डकरै इनका लक्षणयेहै कि जिससे बहुतप्रीति
होवै औरदुष्टनहोवें ऐसेउपाय विचारविद्वानोंसे,राजासदाकर-
तारहेइतनो उक्तप्रकारसेब्रह्मचर्याश्रममें ब्रह्मचर्यपूर्वक विद्याकोप-
ढ़केविवाहकाहोना औरपांचवेंवर्षपुत्रवा कन्याको पढ़नेकेवास्ते न
भेजै तोउनकेमातापितादिकोंकेऊपर राजाअवश्य दण्डकरै यथा-
वत्पठन औरपाठनकी व्यवस्थाकरै जोकोईइसमर्यादाको भंगकरै
विद्यादिकगुणप्रकाशनकरै तब उसमनुष्यकोशूद्रका अधिकारदेदे-
वै औरशूद्रादिक नीचोंमेंकोई उत्तमहोवे उसको यथायोग्यद्विजका
अधिकारदेवै जैसेकिब्राह्मण,क्षत्रियवैश्यादिकेपुत्रवा कन्यामूर्ख
होजांय तबउनकोशूद्रकुलमेंरक्खे औरशूद्रादिकोंमें जबद्विजत्वअ-
धिकारके योग्यहोवें तबयथायोग्यद्विजकाअधिकारदेदेवै अर्थातद्विज
बनादेवैं अबजिसब्राह्मणक्षत्रियवैश्यकेपुत्रवाकन्याविद्याहीनहों
जिनकेशूद्रयोग्यहोंय उनकेबदलेपुत्रवाकन्याओंको राजागिन २ के
देवे तथाशूद्रादिकोंको भीक्योंकिजिसकोएकहीपुत्रवाकन्याहै औ र

वह शूद्र होगया अथवा शूद्र का पुत्र ब्राह्मणादि होगया फिर उस का वंश तो शूद्र ही होगया इससे राजा लोगों से यथा योग्य गिन २ के लिये जांय और दिये भी जांय दूसरी बात यह है कि वेदादि सत्य शास्त्रों का अत्यन्त प्रचार करें और जो कोई जान बूझ कर वेदादि न पढ़ावें उसको राजा शिक्षा और दंड देवें जिस से कि कोई विद्या आलस्य न करसके तीसरी बात यह है कि जब कोई जितेन्द्रिय, पूर्ण विद्यावान, पूर्ण ज्ञानवान, सत्यवादी दयालु और सद्बुद्धि वाला विवाह करना और विरक्त होना चाहै उसको राजा यथावत् परीक्षा करके आज्ञा देवे और कहदे कि आप सत्य विद्या सत्य उपदेश का प्रचार संसार में करें उसका आकार स्वभाव और लक्षण पत्र में लिखें और आप २ नगर २ में विदित करदे जिससे कि कोई पुरुष उसका अपमान न करै और उसके देश काल में से कोई फिर लेन पावै चौथी बात यह है कि कोई मूर्ख, धूर्त, अधर्मी और मिथ्यावादी विरक्त न होने पावे क्योंकि इनके विरक्त होने से सब संसार की बुद्धि भ्रष्ट होजाती है जैसे कि इनको भ्रष्ट बुद्धि का गोसांई जी उपदेश करेगा अच्छा कहां से करेगा इसलिये ऐसा प्रबन्ध रखना जो कि पावें आदि कहां गतो उसको दंड देते रहें परन्तु यह बात है कि जो कोई कर्मकांड का अधिकारी होय उसको कर्मकाण्ड में लगावें सो कर्मकाण्ड वेदोक्त लेना तन्त्र पुराणादि का एकवाक्य भी न लेना पूर्वमीमांसा अर्थात् जैमिनि मुनि व्यास जी के शिष्य के किये सूत्रों के अनुसार कर्मकाण्ड की व्यवस्था लेना नित्य कर्म संध्योपासन, अग्निहोत्र से लेके अश्वमेध तक कर्म काण्ड है उसके दो भेद हैं एक सकाम दूसरा निष्काम सकाम यह कहाता है कि विषय भोग ऐश्वर्य के वास्ते कर्म का करना और निष्काम यह है कि कर्मों से मुक्ति ही का चाहना उससे भिन्न पदार्थों की चाहना नहीं ऋग्वेदादि के जो मन्त्र हैं वे ही देव हैं इनसे भिन्न कोई देव नहीं और मन्त्रों के कहने वाले परमेश्वर परमदेव हैं ऐसा ही निश्चय पूर्वमीमांसादिकों और निरुक्तादिकों में किया है दूसरा उपासना काण्ड है सो भी वेदोक्त ही लेना उसके व्यवस्था के निमित्त पातञ्जल मुनि के सूत्र और

ब्रह्मकेऊपरव्यासमुनिजीकाकियाभाष्य तथादशउपनिषद इन्हीकों रक्खै इनमेंजैसी उपासना की व्यवस्थाहै उसी पूर्वक आप और अपनीप्रजाको चलावैं पाषाणादिकमूर्तिपूजनादिक उपासनाही नहीं इससे इसको छोड़नाही उचित है तीसरा ज्ञान काण्ड है उसमेंपृथ्वी सेलेके परमेश्वरपर्यन्त पदार्थोंकायथावत्स्वरूपज्ञान कोहैना इसकाविधानवेदशाउपनिषद् औरव्यासजीकाकिया शारीरकसूत्र उनकीरीतिसेज्ञानकाउपदेशव्यवस्थाकरै इसमेंआपराजा चलें और प्रजाकोभीचलावे और जितनेपूर्वोक्तशैववैष्णवशाक्तादि पाखण्डलिखेहैं उनको कभीनप्रचलितकरै क्योंकि येसबपाखण्डहैं तीनोंकाण्डोंसेविरुद्धहीहैं इनपाखण्डों के चलनेमेंराजा और राज्यनष्टहोजातेहैं सो अत्यन्तप्रयत्नसेइनपाखण्डोंकाअंकुर भीनरहनेपावै जैसेकिआजकलआर्य्यावर्त्तदेशमें पाखण्डोंकी प्रबलताहोरहीहैं लाखों पुरुषोंनेविरक्तताधारणकियाहै यह विरक्तताऐसीहै इनलाखोंमेंकोईएकपुरुष विरक्तताकेयोग्य है और सब पाखण्डमेंरहेहैं इनकी राजा यथावत्परीक्षा करै सत्यवादी, जितेन्द्रिय, सबविद्याओंमेंनिपुण और शान्त्यादिकगुणजिसमेंहोंय उसकोतोविरक्तहीरहनेदे इससे जिनमेंविपरीतहोंय उनको यथायोग्य दण्डप्रदानादिककर्मोंमें राजालगादेवें इसव्यवस्थाको अवश्यकरै अन्यथाकभी सुखनहोगा ॥ सन्धिञ्चविग्रहञ्चैव यानमासनमेवच। द्वैधीभावंसंश्रयञ्च षड्गुणांश्चिन्तयेत्सदा ॥ ६४ ॥ सन्धिनामेमिलापविग्रहनामविरोधयानानामयात्रा शत्रु के ऊपर चढ़ना आसननामयुद्धकानकरना और अपनेराज्यकाप्रबन्धकरके घरमेंबैठे रहनाद्वैधीभावनामदोप्रकारकाबलअर्थात सेनारखना। इनछःगुणोंका विचारकिया है सोमनुस्मृतिमें विचार लेना । और भी बहुतप्रकारकेराजकर्मों का इसमेंविचारकिया है सो देखलेवें॥ समाखानिन्द कर्मोंतरंरविकर्मान्यथोदिनात्। रतन्त्र यज्ञवेर्मेश्वा- न्युपैःसह ॥ ६६ ॥ म० मिंराजाकोनीतिसे इसऐ नियमकरदेकि

अथवा तुमको बोलावें वा जैसी आज्ञा करें उसको यथावत् करना और तुम मेरे अमात्य के तुल्य हो के यथोक्त मेरी आज्ञा करो यथावत् तुम धर्म से सब काम करो अन्याय मत करो पराजय के शोक निवारण के निमित्त राजा और राजा के सब पुरुष मिल के उनको रत्नादिक से उस राजा को प्रसन्न करें जिससे कि उसको पराजय दुःख भया होय उसका सत्कार से निवारण हो जाय फिर उनकी यथावत् आजीविका करते जिससे उनके भोजनादिकों का निर्वाह होसके इतनी जीविका कर दे और जो राजा धर्म से राज्य करें विद्या, बुद्धि, बल, पराक्रम, और रजितेन्द्रिय होय उससे न युद्ध करें न उससे राज्य लेने की इच्छा करें किन्तु उसको बन्धु और मित्र तुल्य जानें ॥ ६६ ॥ महाकुलीनं शूरं च पण्डितं दातारमेव च । कृतज्ञं धृतिमन्तं च कष्टमाहुररिं बुधाः ॥ ६७ ॥ भा० पण्डित, कुलीन, शूर, वीर, चतुर, दाता, कृतज्ञ और धैर्यवान पुरुष से वैर कभी न करैं जो कभी वैर करैगा तो उसको दुःख ही होगा ऐसे पुरुष का पराजय कभी नहीं हो सक्ता ॥ ६७ ॥ एवं सर्वमिदं राजा सह संमन्त्र्य मन्त्रिभिः । व्यायम्याप्लुत्य मध्याह्ने भोक्तुमन्तःपुरं विशेत् ॥ ६८ ॥ भा० इस प्रकार से सब राजकार्यों का विचार मन्त्रियों के साथ करके व्यायाम मध्याह्न में शुद्ध करके सिंह की नाईं अथवा नदी की नाईं अभ्यास करके पश्चात् नमस्कार के पहिले भोजन करें भोजन करके न्याय घर में जाके सब न्यायों को विचार करें जितनी राज सम्बन्धी बातें लिखी हैं ये सब मनुस्मृति के सप्तमाध्याय की हैं यहां तो संक्षेप से लिखी हैं विस्तार से देखा चाहैं तो वहां देख लें एक यह बात अवश्य होनी चाहिए कि जो मनुष्य राजा हो उसी की आज्ञा में चलैं यह बात ठीक नहीं क्योंकि राजा तो प्रतिष्ठा और मान के वास्ते सर्वोपरि है परन्तु विचार करने को एक पुरुष समर्थ नहीं होता जितने देश का अध्यक्ष बुद्धिमान पुरुष होवें उन सब को राजा एक सभा रक्खै उस सभा में आप भी रहै फिर सब पुरुषों के विचार से जो बात ठीक ठहरै उसका प्रकाश करें इससे क्या आया कि जो राजा अन्यायकारी हो जाय तो उस-

क्षानिकालबाहरकरैं और उसीकेस्थानमेंउत्तमकुलवाले क्षत्रियको बैठादेवें क्योंकिराजाभीप्रजाकेभयसेअन्यायनकरसकेगा और प्रजा राजाकेभयसे अन्यायनकरसकैगी राजाजबअन्यायकरैतब उसको यथावत्दण्डदेवे ॥ कार्षापणंभवेद्दण्ड्योयत्रान्यःप्राकृतोजनः। तत्रराजाभवेद्दण्ड्यःसहस्रमितिधारणा ६८ ॥ भ० जिसअपराधमेंसाधारणपुरुषकेऊपरएकपैसादण्ड होय उसी अपराधमें जोराजाकरैउसकेऊपरहजार पैसादण्डहोय यहकेवलउपलक्षणमात्र है कि प्रजासे हजारगुनीदण्डराजाके ऊपर होय क्योंकिराजाजोअधर्मकरेगा तो धर्मकापालनकौनकरेगा कोईभीनकरेगाइससेदोनोंके ऊपर दण्ड कीव्यवस्थाहोनीचाहिए ॥ ६९ ॥ अष्टापाद्यन्तुशूद्रस्यस्तेयेभवतिकिल्बिषम् । षोडशैवतुवैश्यस्यद्वात्रिंशत्क्षत्रियस्यच ॥ ७० ॥ ब्राह्मणस्यचतुःषष्टिःपूर्णंवापिशतंभवेत् । द्विगुणावाचतुःषष्टिस्तद्दोषगुणविद्धिसः ७१ ॥ जिसनापदार्थकोईचोरावैवहमूर्खबालकनहोय किन्तुगुणऔरदोषोंकोजानताहोवे सोजोशूद्रचोरहोयतो उससे आठगुणादण्डलेवै वैश्यसेसोलहगुणा, क्षत्रियसे३२गुणा, और१००वा१२८गुणादण्डराजाब्राह्मणसेलेवै क्योंकिश्रेष्ठोंके नीचकर्मकरै उसको अधिकहीदण्डहोनाचाहिए ॥ ७१ ॥ पिताचार्यःसुहृन्माताभार्यापुत्रःपुरोहितः । नादण्ड्योनामराज्ञोस्तियःस्वधर्मेनतिष्ठति ७२ ॥ भ० पिता आचार्य पिता दाता सुहृत्नाममित्र माता भार्यानामस्त्री पुत्रऔरपुरोहित जबर अपराधकरैं तबर कभीदण्डकेबिनानछोडै क्योंकि राजाकेराज्यमेंकोईअपराधीअदण्डनहीं क्योंकि स्वधर्म में स्थितनरहै ॥ ७२ ॥ अदण्ड्यान्राजादण्डयांश्चैवाप्यदण्डयन् । अयशोमहदाप्नोतिनरकंचैवगच्छति ७३ ॥ भ० जोराजाअन्यायकरके बालेकोदण्डनहींदेता और अनपराधिकोदण्डदेता है उसकीबड़ीअपकीर्ति होती है औरनरककोभी वहजाता है इससे राजाको अवश्यचाहियेकिपक्षपातकोछोड़के यथावत्दण्डव्यवस्थारक्खै किसीकापक्षपातकभीनकरै इसी प्रकार आपाकि किसीनेमनुष्यसृष्टि

षा अन्यत्र ने ऐसे श्लोक कहे कि धर्म जिस सभा में अधर्म से घायल होकर आता है उस के बाण को निकाल नहीं देते उस को सज्जन लोग मिथ्यावादी जानें ॥ ७३ ॥ क्योंकि धर्मो विद्धस्त्वधर्मेण सभां यत्रोपतिष्ठते । शल्यं चास्य न कृन्तन्ति विद्धास्तत्र सभासदः ॥७४॥ भा० धर्म और अधर्म से विद्ध अर्थात् घायल होकर राजा और सभासदों के पास धर्मी और अधर्मी दोनों आवें फिर उस अधर्म के कांटे के समान उस को राजा और सभासद न निकालें जैसे कि वैद्य लोग औषधादि के यत्नों से अच्छा करते हैं वैसे ही धर्मात्मा का सत्कार और दुष्टों के दण्ड न देवें जिस सभा में यथावत् न होगा उस सभा के राजा और सभासद सब मनुष्यों को मुरदा ही जानना तथा जहां २ शिष्ट पुरुषों की अधर्म से सत्य असत्य निश्चय के वास्ते सभा होवे फिर जिस सभा में सत्य का स्थापन न होवे और असत्य का खण्डन न करें भी सब सभासद मुर्दा हैं और क्षुद्र हैं क्योंकि ॥७५॥ सभां वा न प्रवेष्टव्यं वक्तव्यं वा समञ्जसम् । अब्रुवन्विब्रुवन्वापि नरो भवति किल्बिषी ॥७६॥ भा० पुरुष को उचित है कि सभा में प्रवेश ही न करें और जो सभा में प्रवेश करें तो सत्य ही कहें मिथ्या कभी न कहें क्योंकि जो सभा में असत्य पुरुष सत्य को न कहे अथवा जैसा जानता होय उस से विरुद्ध कहे तो भी वह मनुष्य पापी होजाता है इस से क्या आया कि जैसा जो पुरुष देखे सुने जानता हो वैसा ही कहे उस से विरुद्ध कभी न करें क्योंकि सत्य बोलना ही सब धर्मों का मूल है और असत्य अधर्म का मूल है इस में महाभारत का प्रमाण है नास्ति सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातकं परम् । इस का यह अभिप्राय है कि सत्य बोलने से बड़ा कोई धर्म नहीं और मिथ्या बोलने से बढ़ कर कोई पाप नहीं इस से सत्य भाषण ही सदा करना चाहिये मिथ्या कभी नहीं ॥७७॥ यत्र धर्मो ह्यधर्मेण सत्यं यत्रानृतेन च । हन्यते प्रेक्षमाणानां हतास्तत्र सभासदः ॥ ७८ ॥ भा० जिस राजा की सभा में धर्म अधर्म और सत्य का राजा तथा अमात्यों के देखते भी अनृत नाश करता है फिर उस का यत्न न करें तथा सब सभा में उन को भी सज्जन लोग मुर्दा ही जानें क्योंकि ॥७९॥ धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः । तस्माद्धर्मो न हन्त–

स्मान्नो धर्मो हतोऽवधीत् ॥ ७७ ॥ भ० जो पुरुष धर्म का नाश करता है अर्थात् धर्म को छोड़के अधर्म करता है उसको अवश्य ही धर्म नाश करता है उस अधर्मी की रक्षा करने को ब्रह्मादिक देव भी समर्थ नहीं और परमेश्वर भी अपनी आज्ञा को अन्यथा नहीं करते क्योंकि परमेश्वर तो सत्यसङ्कल्प ही है इससे जैसी आज्ञा विचार के यथावत् किया है वही रहती है कि अधर्म करै सो अधर्म का फल पावै और धर्म करै सो धर्म का और जो पुरुष धर्म की रक्षा करता है उसकी धर्म भी सदा रक्षा करता है उसका नाश करने को तीनों लोकों में कोई भी समर्थ नहीं इससे सब सज्जन लोग धर्म का नाश और अधर्म का आचरण कभी न करैं ७७ वृषो हि भगवान्धर्मस्तस्य यः कुरुते ह्यलम्। वृषलन्तं विदुर्देवास्तस्माद्धर्मं न लोपयेत् ॥ ७८ ॥ भ० जो मनुष्य धर्म का लोप अर्थात् धर्म को छोड़के अधर्म करता है वही शूद्र वा भडुवा है क्योंकि वृष नाम धर्म का है और भगवान् भी तीनों लोक में वृष ही है जो आज्ञा करनेवाला है सो आज्ञा से भिन्न नहीं क्योंकि उसके आत्मरूप ही आज्ञा है उस धर्म को जो त्याग करता है उसको देव नाम विद्वान् लोग शूद्र वा भडुवा की नाईं जानते हैं इससे धर्म का त्याग कभी न करना चाहिए ॥ ७८ ॥ एक एव सुहृद्धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः। शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि-गच्छति ॥ ७९ ॥ भ० देखना चाहिये कि सब जगत् में एक धर्म ही सब मनुष्यों का मित्र है अन्य कोई नहीं क्योंकि मरने के पीछे भी साथ देता है और धर्म के भिन्न जितने पदार्थ हैं वे शरीर के छोड़ने के साथ ही छूट जाते हैं परन्तु धर्म का संग सदा बना रहता है इससे धर्म को कोई कभी न छोड़ै ॥ ७९ ॥ पादोऽधर्मस्य कर्त्तारं पादः साक्षिणमृच्छति। पादः सभासदः सर्वान्पादो राजानमृच्छति ॥ ८० ॥ भ० जिस सभा में अन्याय होता है उस सभा में यह बात होती है कि जो अधर्म को करता है उसको अधर्म का चौथा हिस्सा प्राप्त होता है उसके जो मिथ्या साक्षी हैं उनको अधर्म का चौथा अंश मिलता है जितने सभासद हैं कि राजा के अमात्य उनको एक अंश अधर्म का राजा को मिलता है अर्थात् वह

अधर्मके चार विभाग होजाते हैं औरचारोंको उक्तप्रकारसे पृथक् २ हि-स्सा मिलजाता है ॥८०॥ राजा भवत्यनेनास्तु मुच्यन्ते च सभासदः । एनो गच्छति कर्त्तारं निन्दार्हो यत्र निन्द्यते ॥ ८१ ॥ भा० जिस सभामें धर्म औरअधर्मका विवेक यथावत् होता है कि पक्षपात छोड़के सत्य २ ही न्याय होता है उस सभाके राजा साक्षी और अमात्य सब धर्मात्मा होजाते हैं और जिसने अधर्म किया उसीके ऊपर सब अधर्म होता है किन्तु वही अधर्मका फल भोगता है राजादिक आनन्द से पुण्य का फल भोगते हैं दुःख कभी नहीं इससे राजा अमात्य और साक्षी प-क्षपातसे अन्याय कभी न करें ॥ ८१ ॥ बाह्यैर्विभावयेल्लिङ्गैर्भावमन्त-र्गतं नृणाम् । स्वरवर्णेङ्गिताकारैश्चक्षुषा चेष्टितेन च ॥ ८२ ॥ भा० जब कोई वादी प्रतिवादी का न्याय करने लगे तब बाहर के चिन्हों से भी-तरके भावको जानलेवें जलकार स्वर रूप इङ्गित नाम चक्षु नयन हृदय औ-र नाड़ीकी चेष्टा आकृति तथा नेत्र की चेष्टा और अंगों की भी चेष्टा इससे सत्य २ निश्चय करले कि इसने अपराध किया है और इसने नहीं किया एक बात यह भी परीक्षा है जो हाथके मूलमें धमनी नाड़ी और हृदय उनको वैद्यकशास्त्रकी रीतिसे स्पर्श करके यथावत् परीक्षा करे फिर यथावत् दंड और अदंड करे इन १८ अठारह स्थानों में विवाद होता है ॥ ८२ ॥ तेषामाद्यमृणादानं निक्षेपोऽस्वामिवि-क्रयः । संभूय च समुत्थानं दत्तस्यानपकर्म च ॥८३॥ वेतनस्यैव-चादानं संविदश्च व्यतिक्रमः । क्रयविक्रयानुशयो विवादः स्वामिपा-लयोः ॥ ८४ ॥ सीमाविवादधर्मश्च पारुष्ये दंडवाचिके । स्तेयं च-साहसं चैव स्त्रीसंग्रहमेव च ॥ ८५ ॥ स्त्रीपुंधर्मो विभागश्च द्यूतमाह्व-य एव च । पदान्यष्टादशैतानि व्यवहारस्थिताविह ॥ ८६ ॥ एषु-स्थानेषु भूयिष्ठं विवादं चरतां नृणाम् । धर्मं शाश्वतमाश्रित्य कुर्या-त्कार्यविनिर्णयम् ॥ ८७ ॥ भा० ऋणका लेना औरदेना १ नि-क्षेपकेदोभेद हैं जोगिनकेतौलके वा किसीकेपास पदार्थ रक्खे उस-का नाम निक्षेप है दूसरा गुप्त बांधके किसीके पास धरोहर रक्खी और

थाधेरधनसे व्यवहारकरना २ अस्वामिविक्रयनाम अन्यका प-
दार्थ कोईबेचले वा किसीकापदार्थ कोईदबालेवे ३ संभूयसमुत्थाननाम
धर्मार्थयज्ञार्थ वा दक्षिणाकेवास्ते धनदियाजाय इनमें विवाद का
होनावाअन्यथाकरना ४ औरदियेभयेपदार्थकोछिपाले ५ नौकरी
कोदेनावा नदेना अथवालेना ६ प्रतिज्ञाकाभंगकरना ७ वेच-
नाऔरखरीदना ८ पशुओंकास्वामीऔरउनकेपालनेवाले में वि-
वादका होना सीमामें विवादकाहोना १० कठोर वचनऔर विना
विचारे दण्डदेना ११ चोरी १२ साहसनामजबरदस्तस्त्रीपुरुषों का
व्यभिचारऔरडांकृपना १३ किसीकोस्त्रीकोबलसेवाफुसलाकरले
लेना १४ स्त्रीऔरपुरुषोंकेपरस्परनियमवचनकोभंगकरना१५ दाय-
भाग १६ द्यूतनामजूवा१७और जोप्राणिअर्थात्स्त्रीपुरुषकुटुम्बगाय
हस्ती, अश्वादिकपशुओंकोदावाकरद्यूतकाकरना उसकानाम स-
माह्वय है १८ इनअठारहव्यवहारों में प्रजामेंअत्यन्तविवाद होता
है इनकाउल्लंघनउपद्रवमेंपाय और पूछनेसेजानयथावत्न्यायकरै
इनन्यायोंकाविधानयथावत्मनुस्मृतिके अष्टमाध्याय और नवमा
ध्यायकीरीतिसेकरनाचाहिये ॥ ८७ ॥ दातव्यं सर्ववर्णेभ्योराज्ञा-
चौरैर्हृतंधनम्। राजातदुपयुञ्जानश्चौरस्याप्नोतिकिल्बिषम् ८८ ॥
जोप्रजामेंचोरीहोजावेउसमेंजितनेपदार्थचोरीजांय उन सब पदार्थों
कोचोरोंकानिग्रहकरके जोजिसकापदार्थ चोरीगयाहोय उसको
चोरोंसेलेकेपदार्थकेस्वामीकोराजादेदे और जो चोरनपकड़ाजाय
औरपदार्थनमिलें तोअपनेपाससेराजादेदे क्योंकिइसीवास्ते राजा
काहोनाअवश्यकहै प्रजानित्यराजाकोदेतीहै इसवास्ते कि अपना
पालनराजायथावत्करै जोयथावत्पालननकरेगाऔर प्रजासे ध-
नलेगातोवहीराजाचोरऔरडाकूकेपापका भागीहोता जो चोरों से
मिलके चोरीके धनकोहरण करलेनेकी इच्छाकरै वह राजा नहीं है
किन्तु महाचोरऔर डाकू है ॥८८॥ यादृशाधनिभिःकार्याव्यवहा-
रेषुसाक्षिणः। तादृशान्संप्रवक्ष्यामियथावाच्यमृतंचतैः॥ ८९ ॥

भा० राजा और धनिक लोगों को जिस प्रकार के साक्षी व्यवहारों में करना चाहिये उनको यथावत् कहते हैं और साक्षियों को जैसा सत्य २ ही कहना चाहिये ॥ ९८ ॥ गृहिणः पुत्रिणो मौलाः क्षत्रविट्शूद्रयोनयः । अर्थ्युक्ताः साक्ष्यमर्हन्ति न ये केचिदनापदि ॥९९॥ भा० गृहस्थ पुत्रवाले और वे बहुत दिनों के फिर क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, इन वर्णों में से कार्य वाला पुरुष जिनको कहै कि ये मेरे साक्षी हैं और कोई आपत्काल के बिना न होवे ॥९९॥ आप्ताः सर्वेषु वर्णेषु कार्याः कार्येषु साक्षिणः । सर्वधर्मविदोऽलुब्धा विपरीतांस्तु वर्जयेत् ॥१००॥ भा० ब्राह्मणादिक सब वर्णों में जो आप्त बड़े धर्मात्मा, सत्यवादी और जितेन्द्रिय होवें तथा सब धर्म को जानता होय और काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोकादिक दोष जिसमें न होवें सत्य बोलने ही का जिसका नियम होय ऐसे ही को राजा और प्रजा साक्षी करें इन से विपरीत मनुष्यों को कभी साक्षी न करें ॥१००॥ नार्थसम्बन्धिनो नाप्ता न सहाया न वैरिणः । न दृष्टदोषाः कर्त्तव्या न व्याध्यार्त्ता न दूषिताः ॥१०१॥ भा० जिन से परस्पर व्यवहार से सम्बन्ध रखते होंय अनाप्त नाम जिन में काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, मूर्खत्वादि दोष होवें सहायकारी होवें वा शत्रु होवें जो वादी प्रतिवादी के होने वा पुरुषों को जानता होय रोग से आर्त्त होंय वा दुष्ट कर्म को करने वाले इस प्रकार के मनुष्यों को राजा वा प्रजा साक्षी कभी न करें ॥१०१॥ न साक्षी नृपतिः कार्यो न कारुककुशीलवौ । न श्रोत्रियो न लिङ्गस्थो न सङ्गेभ्यो विनिर्गतः ॥ १०२ ॥ भा० राजा कारु नाम शिल्पी कुशील व नाम कुदारी से आजीविका करने वाले श्रोत्रिय नाम वेद पढ़ाने वाला लिङ्गस्थ ब्रह्मचारी और वानप्रस्थ संगेभ्यो विनिर्गत नाम संन्यासी इन को भी राजा वा प्रजा साक्षी न करें क्योंकि कारुक और कुशीलव तो मूर्ख हैं राजा न्याय करने वाला होता है वेदपाठी, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और संन्यासी इन को साक्षी करने से पढ़ना पढ़ाना तप और विचार में विघ्न होगा इस से इन को साक्षी न करना चाहिये । १०२ ॥ नाध्यधीनो न वक्तव्यो न दस्युर्न विकर्मकृत् ।

न वृद्धो न शिशुर्नैको नान्त्यो न विकलेन्द्रियः ॥१०२॥ प० पराधीन वक्तव्य नाम जिसने ऐसा साक्षी होवे ताकूं विरुद्ध कर्म करनेवाला वृद्ध बालक नीच और अजितेन्द्रिय तथा एक ही पुरुष साक्षी इनको राजा वा प्रजा कभी साक्षी न करें ॥ १०३ ॥ नार्तो न मत्तो नोन्मत्तो न क्षुत्तृष्णोपपीडितः । न श्रमार्तो न कामार्तो न क्रुद्धो नापि तस्करः ॥ १०४ ॥ प० दुःखित चित्त नाम भांग मद्यादि पीनेवाला उन्मत्त नाम पागल क्षुधा और तृषा से जो पीड़ित होवे श्रम करके दुःखी होवे कामातुर क्रोधी और चोर इनको राजा और प्रजा साक्षी कभी न करें ॥१०४॥ स्त्रीणां साक्ष्यं स्त्रियः कुर्युर्द्विजानां सदृशा द्विजाः । शूद्राश्च सन्तः शूद्राणामन्त्यानामन्त्ययोनयः ॥ १०५ ॥ प० विद्या सत्य धारण जितेन्द्रिय जो स्त्रियां होवें वे स्त्रियों की साक्षी होवें द्विजों के द्विज सत्यवादी द्विज शूद्रों के सत्यवादी शूद्र चांडालादिकों के सत्यवादी चांडालादिक साक्षी होवें अन्य कोई नहीं और भी मनुस्मृति के अष्टमाध्याय में विस्तार से साक्षी का विधान लिखा है जो देखा चाहे सो देखले ॥१०५॥ साहसेषु च सर्वेषु स्तेयसंग्रहणेषु च । वाग्दण्डयोश्च पारुष्ये न परीक्षेत साक्षिणः ॥ १०६ ॥ जिन्ने बलात्कार से कर्म चोरी परस्त्री से व्यभिचार कठोर वचन कहना बिना विचारे दण्ड का देना इन कर्मों में साक्षी की परीक्षा और राजा न करें किन्तु यथावत् विचार करके इनको दण्ड देना उचित है ॥ १०६ ॥ सत्येन पूयते साक्षी धर्मः सत्येन वर्द्धते । तस्मात्सत्यं हि वक्तव्यं सर्ववर्णेषु साक्षिभिः ॥१०७॥ प० सत्य बोलने से साक्षी पवित्र और मिथ्या बोलने से महापापी होता है धर्म भी सत्य बोलने ही से बढ़ता है इससे सब मनुष्यों को सत्य ही साक्षी देनी चाहिये मिथ्या कभी बोलना नहीं ॥ १०७ ॥ आत्मैव ह्यात्मनः साक्षी गतिरात्मा तथात्मनः । मावमंस्थाः स्वमात्मानं नृणां साक्षिणमुत्तमम् ॥ १०८ ॥ प० साक्षी से पूछना चाहिये कि तेरे आत्मा का साक्षी तू ही है और तेरी अधोगति का करनेवाला भी तू ही है क्योंकि जो तू सत्य बोलेगा तो तुझको कभी दुःख न होगा और मिथ्या बोलने से दुःख

दुःखही रहेगा इसमें कुछ सन्देह नहीं इससे हे मित्र सब साक्षियों में
से जब मन जो साक्षी अपना आत्मा उसका मिथ्या बोलने में अपमान
मत कर और जो तू अपमानरूप वाद साक्षी देगा तो किसी प्रकार से ते-
री सद्गति नहीं होगी किन्तु अन्दसिद्धहोगी इससे सत्यही साक्षी बो-
ली मिथ्या कभी नहीं ॥१०८॥ ब्रह्मघ्नो ये स्मृता लोका ये च स्त्रीबालघा-
तिनः । मित्रद्रुहः कृतघ्नस्य ते ते स्युर्ब्रुवतो मृषा ॥ १०९ ॥ भा० ब्रह्मघ्न
नाम ब्रह्म नित्य पुरुषों का मारनेवाला और वेदोक्त कर्मों का त्यागी स्त्री
और बालकों का मारनेवाला मित्रद्रोही कृतघ्न इनको जैसे कुम्भी
पाकादिक दुःखरूपी लोक और जन्म प्राप्त होते हैं वे तुझको प्राप्त होवैं जो
तू सत्य न बोले ॥१०९॥ जन्मप्रभृति यत्किञ्चित्पुण्यं भद्र त्वया कृतम्
तत्ते सर्वं शुनो गच्छेद्यदि ब्रूयास्त्वमन्यथा ॥ ११० ॥ हे भद्र हे साक्षिन्
जो तू मिथ्या कहेगा तो तैने जितना पुण्य जन्मभर किया है वह सब तेरा
पुण्य कुत्ते को प्राप्त होगा इससे तू सत्य बोल ॥११०॥ एकोऽहमस्मीत्या-
त्मानं यत्त्वं कल्याण मन्यसे । नित्यं स्थितस्ते हृद्येष पुण्यपापेक्षिता मु-
निः ॥ १११ ॥ हे कल्याण तू जानता है कि मैं एकही हूं ऐसा तू मत जान
क्योंकि न्यायकारी सर्वज्ञ अन्तर्यामी परमेश्वर सब जगत में व्यापी नित्य स्थित
है सो तेरे हृदय में भी व्यापक है तेरा जो पाप वा पुण्य है उन सबको य-
थावत् जानता है इससे तू परमेश्वर और अधर्म से भय करके सत्य ही
बोल ॥१११॥ यमो वैवस्वतो देवो यस्तवैष हृदि स्थितः । तेन चेदवि-
वादस्ते मा गङ्गां मा कुरून्गमः ॥११२॥ भा० जो यम नाम यथावत्
न्याय से व्यवस्था करनेवाला वैवस्वत नाम सूर्यादिक सब जगत् का प्रका-
श करनेवाला देव नाम स्वप्रकाश स्वरूप अन्तर्यामी तेरे हृदय में
भी नित्य स्थित है उस परमेश्वर से शत्रुता वा विवाद तुझको न करना
होय तो तू सत्यही बोल और जो तू परमेश्वरही से विरोध रक्खेगा तो
तुझको कभी सुख न होगा और जो तू सत्यही बोलेगा तो गङ्गा वा कुरु-
क्षेत्र में प्रायश्चित्त करना वा स्नान कृच्छ्रादि अथवा परलोक परजन्म
में नरकादिक सब दुःखों की प्राप्ति तुझको कभी नहीं होगी इससे तुझको अ-

वश्य सत्य ही बोलना चाहिये मिथ्या कभी नहीं ॥११२॥ यस्य विद्वान् हि वदतः क्षेत्रज्ञो नाभिशङ्कते । तस्मान्न देवाः श्रेयांसं लोकेऽन्यं पुरुषं विदुः ॥ ११३ ॥ भा० जिस पुरुष का क्षेत्रज्ञ जो हृदयस्थ आत्मा विद्वान् नाम सब पाप पुण्य को जानने वाला सो ई अपना आत्मा जिस कर्म में शंका नहीं करता है जिससे भय शङ्का और लज्जा होवै उस कर्म को कभी नहीं करता किन्तु सत्याचरण और सत्य वचन ही बोलता है उससे अधिक अन्य धर्मात्मा पुरुष कोई नहीं ऐसा देवता विद्वान् लोग निश्चय जानते हैं और भी मनुस्मृति के अष्टमाध्याय में बहुत सा विस्तार लिखा है सो देखलेना व्यवहारों को निश्चय करने के वास्ते बहुत भेजना और बहुत प्रकार से यथावत् निश्चय हो सकता है अन्यथा नहीं ॥११३॥ उपस्थमुदरं जिह्वा हस्तौ पादौ च पञ्चमम् । चक्षुर्नासा च कर्णौ च धनं देहस्तथैव च ॥११४॥ भा० दण्ड के स्थान लिङ्गेन्द्रिय, उदर, जिह्वा, हस्त पाद, चक्षु, नासिका, कान धन और देह ये दश दण्ड देने के स्थान हैं इन्हीं में दण्ड का स्थापन होता है ॥ ११४ ॥ वाग्दण्डं प्रथमं कुर्याद्धिग्दण्डं तदनन्तरम् । तृतीयं धनदण्डं तु वधदण्डमतः परम् ॥ ११५ ॥ भा० प्रथम तो वाग्दण्ड करे कि ऐसा काम कोई दुष्ट न करे दूसरा धिक्‌दण्ड कि तुझको धिक्कार है दुष्ट तैंने नीच कर्म किया तीसरा धनदण्ड कि इससे धन लेलेना चौथा वधदण्ड कि उसको मार डालना ॥ ११५॥ अदण्ड्यान्दण्डनाद्राज्ञो दण्ड्यानां चैव वर्जनात् । दौर्बल्यं ख्याप्यते राज्ञः स प्रेत्येह च नश्यति ॥११६॥ राजा जो निर्दोषी को दण्ड देवे और दोषी को दण्ड न देवे और लेने का अपना जो कर उसमें से एक कौड़ी भी छोड़ दे क्योंकि इससे राजा की दुर्बलता मानी जाती है उस राजा का इस लोक वा परलोक में नाश ही होता है इससे क्या आया कि राजा अपने न्याय और अपने कर को यथावत् लेता है और प्रजा के अंश को कभी ग्रहण नहीं करता सोई राजा श्रेष्ठ है ॥ ११६ ॥ यस्त्वधर्मेण कार्याणि मोहात्कुर्यान्नराधिपः । अचिरात्तं दुरात्मानं वशे कुर्वन्ति शत्रवः ॥ ११७ ॥ भा० जो राजा अन्याय तथा मोह से कार्यों को करता है उस राजा का

शीघ्रही नाश होजाताहै क्योंकिउसकोशत्रुलोग शीघ्रहीवशमें कर लेतेहैं ॥ ११७ ॥ संभोगोदृश्यतेयत्रनदृश्येतागमःक्वचित् । आगमः कारणंतत्रसंभोगइतिनिश्चितिः ॥ ११८ ॥ भा०जिसमेंभोगमात्रव्यवहार का देखपड़े उसको राजा विचार करै कि आमदनी इन को कहां से होती है जो आमदनी निश्चित होय तोकुछ चिन्ता नहीं और जोनौकरीव्यापारादिकुछउद्यमनकरै औरभोग नानाप्रकार का करताहोय उसको पकड़के राजा दण्डदे क्योंकि अवश्ययहचौर्यादिक कुकर्मकरताहोगा इसके पासधनकहांसेआया भोगका का कारण आगमही है और संभोगका कारण संभोगकभीनहीं ऐसीपरीक्षा है इसकोराजाअवश्यपालनकरै ॥ ११८ ॥ यत्रार्थेयेनदत्तंस्यात्कस्मैचिद्याचतेधनम् । पश्चाच्चनतथातत्स्यान्नदेयंतस्यतद्भवेत् ॥११९॥ भा० किसीने किसीकोपठनपाठनअग्निहोत्रादिकशुभकर्मोंको देने के वास्तेवाअन्नभोजनादिकनिर्वाहकेनिमित्तधनदियागया कि इतनेकामकेहेतु हमआपको धनदेतेहैं सो आप इतना ही काम इससे करैं औरजुआपके वास्ते हमनेदिया होय फिरवह वैसाकाम नकरै कि वेश्यागमन,मानसादिकप्रमादइसधनसेकरैतोउसके सबधनलेलिया जाय जिसनेकि दियाथा वहीलेलेऔरजोउसकोवहनदेतोराजा उसकोपकड़केदण्डसेदिवादे ॥ ११९ ॥ धनुःशतंपरीहारोग्रामस्यस्यात्समन्ततः । शम्यापातास्त्रयोवापित्रिगुणोनगरस्यतु ॥१२०॥ भा०गांवकेचारोंओर १०० औरचतुर्थ परिमाणके मैदान रक्खेंमनुष्यहोताहै साढ़ेतीन हाथका अथवा कोई बलवानपुरुषएकडंडा को लेके खूब बलसे फेंकेजहांवहडंडापड़ेउससे फिरफेंके उसस्थान सेभी सौवरी वार फेंकेजहांवहडंडापड़जायवहांतकमैदानरक्खें इस में सौ मनुष्यसेकुछअधिकमैदान रहैगा औरनगरकेचारोंओर तिगुणामैदानरक्खै क्योंकि ग्राम वा नगरमें वायुशुद्धरहेगा इससे रोग थोड़े होंगे और पशुओंको सुखहोगा इसवास्तेअवश्यइतनामैदान रखनाचाहिए ॥ १२० ॥ परस्यपत्न्याःपुरुषःसम्भाषांयोजयन्रहः । स्नेना-

नांनिग्रहादस्ययशोराष्ट्रंचवर्द्धते ।१२१। भ०चोरोंके निग्रहमें राजा अत्यन्तयत्नकरै क्योंकि चारोंओर दुष्टोंके निग्रहसे राजाकी कीर्त्ति औरराज्य नित्यबढ़ते चलेजाते हैं अन्यथा नहीं ।१२१। रक्षन्धर्मेणभूतानि राजावध्यांश्चघातयन् । यजतेऽहरहर्यज्ञैः सहस्रशतदक्षिणैः ॥१२२॥ भ० जोराजाधर्मानुकूलन्यायसेसबभूतोंकीरक्षाकरताहै औरदुष्टोंको दण्डसेमारताहै वह राजासहस्रों वा सैकड़ोंदक्षिणाओंसे अर्थात्लक्ष और कोटिपैसोंसे जानो किनित्ययज्ञहीकरता है क्योंकिराजाकामुख्यधर्मयहीहै श्रेष्ठोंकापालनऔर दुष्टोंकाताड़नकरना । १२२ । अरक्षितारंराजानं बलिषड्भागहारिणम् । तमाहुःसर्वलोकस्यसमग्रमलहारकम् ॥ १२३ ॥ भ० जो राजा धर्मसेयथावत्प्रजाका पालननहींकरता औरप्रजासे धान्यमें षष्ठांशइत्यादिककरोंकोलेताहै वहराज्यकरवालेता है कि सबसंसारके मलोंकोखाताहै औरसबकेमैलोंविष्ठादिकोंकी शुद्धिकरताहै चांडाल जैसाही वह राजा है ।१२३। निग्रहेणहिपापानांसाधूनांसंग्रहेणच । द्विजातयइवेज्याभिःपूयन्तेसततंनृपाः ॥१२४॥ भ० जो राजा पापी पुरुषोंको अत्यन्त उग्रदण्डदेताहै और श्रेष्ठोंकीरक्षा तथा सन्मान करताहैवहराजासदा पवित्रहैऔरस्वर्गकाभागी है जैसेकि द्विजादि लोगविद्या, तपऔरयज्ञोंसेपवित्ररहतेहैं ॥ १२४ ॥ यःक्षिप्तोमर्षयत्यार्तैस्तेनस्वर्गेमहीयते । यस्त्वैश्वर्यान्नक्षमतेनरकंतेनगच्छति ॥ १२५ ॥ भ० जोराजाआर्तजनदुःखीलोगपरक्रोधकरैं तोभीसहनकरताहै सोईराजास्वर्गमेंपूज्यहोताहै औरजो ऐश्वर्यके अभिमान से किसीकासहन नहींकरता इसीसेवहराजा नरकको जाता है क्योंकिजोसमर्थहैउसीको सहनकरनाचाहिये औरजो निर्बल है सोतो अवश्यही से सहन करेगा ॥१२५॥ राजभिर्धृतदण्डास्तुकृत्वापापानिमानवाः । निर्मलाःस्वर्गमायान्तिसन्तःसुकृतिनोयथा ॥१२६॥ भ० जिनकेऊपरअपराध करनेसे राजाओंका दण्डहोता है फिरवेइसलोकमें आनन्द पातेहैं और मरनेके पीछे उत्तम स्वर्ग

को प्रसिद्ध होते हैं जैसे कि धर्मात्मा पुरुष निर्लोभ ॥ १२६ ॥ येनयेनयथाङ्गेनस्तेनोनृषुविचेष्टते । तत्तदेवहरेदस्य प्रत्यादेशायपार्थिवः ॥ १२७ ॥ भा० जिस २ अंगसे जैसा २ कर्म मनुष्योंके बीचमें करै चोर लोग उस अंगको अर्थात् नेत्रसे चोरी करने के वास्ते चेष्टा करै उसका नेत्र निकालदे जो जीभसे चोरीका उपदेश करै तो उसकी जीभ काटले पग और हाथसे किसीकी वस्तु उठावे तो राजा उसका पग, हाथ काटले क्योंकि एकको दण्ड देनेसे सबलोग उस दुष्टकर्मको छोड़देते हैं दण्ड जो होता है सो सब जगत्के मनुष्योंके वास्ते उपदेश है ॥१२७॥ अनेनविधिनाराजाकुर्वाणस्तेननिग्रहम् । यशोऽस्मिन्प्राप्नुयाल्लोकेप्रेत्यचानुत्तमंसुखम् ॥१२८॥ भा० इसविधिसे चोरोंका निग्रह करता है वह राजा इसलोक में अत्यन्तकीर्तिको प्राप्तहोता है और परलोकमें अत्यन्तउत्तमस्वर्गको प्राप्तहोता है इससे चोरोंका निग्रह अत्यन्तप्रयत्न सेराजाकरै ॥ १२८ ॥ वाग्दुष्टात्तस्कराच्चैवदण्डेनैवचहिंसतः । साहसस्यनरःकर्ताविज्ञेयःपापकृत्तमः ॥ १२९ ॥ भा० जो पुरुष दुष्ट वचन कहना सिखलाना वा चोरी का उपदेश करता है और किसीको मरवाडालता है इनकर्म से साहसिक पुरुष कहाता है जैसेकि गुंडे और बैरागी आदिक संप्रदायवाले वेषधारियोंभी बड़े पापी हैं क्योंकि पापी तो आपही दुष्टहोता है और जिनके दुष्ट उपदेश करनेवाले हैं वे सबजगत्को दुष्टकरदेते हैं इससे ॥ १२९ ॥ नमित्रकारणाद्राजा विपुलाद्वाधनागमात् । समुत्सृजेत्साहसिकान्सर्वभूतभयावहान् ॥१३०॥ भा० जितने पुरुष साहसिक अर्थात् दुष्टकर्म करने और करानेवाले होंय अर्थात् अधर्मका उपदेश, चोरी, परस्त्री, वेश्यागमन और जुआ इनको करनेवाले सब साहसिक गिनलेना उनको मित्रकारणसे और उनसे बहुत धनलाभ होताहोय तोभी इनको राजा न छोड़े क्योंकि सबभूतों को भय देने वाले वेही हैं ॥१३०॥ गुरुंवा-बालवृद्धौवाब्राह्मणंवाबहुश्रुतम् । आततायिनमायान्तंहन्यादेवाविचारयन् ॥१३१॥ भा० गुरु अथवा पिता वा बालक वा वृद्ध वा ब्राह्म-

या जिसनेशास्त्रोंको पढ़ाहुआ और बहुश्रुतनाम बहु शास्त्रकोसुनने
वाला वहजो अन्यायीनाम धर्मकोछोड़के अधर्ममें प्रवृत्त भया होय
तोइनपुरुषोंको मारहीडालना उचित है इसमें कुछ विचारनकर-
ना क्योंकि दण्डहीसे सबशुद्धहोजातेहैं बिनादण्डकोईनहीं इससे
सबकेऊपरदण्डकाहोना उचितहै किकोई अपराधीपुरुषदंडके बि-
नारहनेनपावै ॥ १३१ ॥ परदाराभिमर्षेषु प्रवृत्तान्नृन्महीपतिः ।
उद्वेजनकरैर्दण्डैश्छिन्नयित्वाप्रवासयेत् ॥१३२॥ भ० जोपुरुषपर
स्त्रीगमनमेंप्रवृत्तहोवैं वाअन्यपुरुषोंसेस्त्रीजोगमनकरैं उनके ल-
लाटमेंचिन्हकरकेदेशसेबाहरनिकालदे जोपहिलेचोरी करै उसके
ललाटमेंकुत्तेकेपंजाकीनाईं लोहेकाचिन्ह अग्निमेंतपाके लगादे
जिससेलक्षनइसचिन्हसेपहिचानें फिरजोदूसरीवार वहीपुरुष चोरी
करै तोहाथवापगजिसप्रकारसेचोरीकरे उसकोकाटडालै और फिरभीचोरी करैवा
करावै तोपहिलेदिननाककाटले दूसरे दिनकान तीसरेदिन जीभ
चौथेदिनलिंगकाटले पांचवेंदिनआंखछठवेंदिनशिरच्छेदन क-
रदे सबमनुष्योंके सामने जिससे फिरचोरीकीइच्छाभीकोईनक-
रैऔरजोपरस्त्रीव्यभिचारकेपासगमनकरै अथवापरपुरुषोंसे स्त्रीजोग-
मनकरैं उनकेललाटमें पुरुषकेलिंगइन्द्रियकाचिन्हअग्निमेंतपाके
लगादे जिससेकि मालूमपड़जाऔरअभिमान उनकाहोवै ब-
नकरेंगेइसकेओरकोईइनकर्मोंमेंप्रवृत्तनहोवैक्योंकि ॥ १३२ ॥ तत्स-
मुत्थोहिलोकस्यजायतेवर्णसंकरः । येनमूलहरोऽधर्मःसर्वनाशायक-
ल्पते ॥१३३॥ भ० इन्हींकर्मोंसेधर्मकामनुष्य वर्णसंकर औरपापी
होजातेहैं जिससेकिमूलसहित धर्मनष्टहोजाताहै इससे इनके नि-
ग्रहमेंराजाअत्यन्तप्रयत्नकरै ॥१३३॥ भर्तारंलंघयेद्यातुस्त्रीज्ञाति गु-
णदर्पिता । तांश्वभिःखादयेद्राजासंस्थानेबहुसंस्थिते ॥१३४॥ भ०
जोस्त्रीजातिऔरगुणोंकेअभिमान अथवामूर्खतासे ऐसापतिपुरुष
कोछोड़के अन्यपुरुषसेव्यभिचारकरतीहै उसकोनिग्रहनामराजा
कीविचारोंऔरपुरुषोंके सामनेकुत्तोंसेचिथवाडाले इसीरीतिसे उस-

कामरूपहोजाय जिससे किअन्यकोईस्त्रीऐसाकामभीनकरै १३४॥
पुमांसंदाहयेत्पापं शयनेतप्तआयसे। अभ्यादध्युश्चकाष्ठानितत्र दह्येतपापकृत् ॥१३५॥ भा० जोपुरुषपरस्त्रीसेगमनकरै उसको लोहेकेपर्यंक अग्निसेतपा औरनीचेकाष्ठोंसे अग्निकरके व्यभिचार रूपपापकरनेवालेपुरुषकोसोलादे उसीकेऊपर उसकाशरीर दग्ध होजाय और मरजाय यह भी कर्म सबपुरुष और स्त्रियोंके सामनेही होना चाहिये जिससे कि सबकोभय होजाय फिर ऐसा कामकोईपुरुषनकरै ॥१३५॥ यस्यस्तेनःपुरेनास्तिनान्यस्त्रीगोनदुष्टवाक्। नसाहसिकदण्डघ्नौसराजाशक्रलोकभाक् ॥१३६॥ भा० जिसराजाकेपुर वाराज्यमें चोर परस्त्रीगामीदुष्टवचनका कहनेवाला साहसिकऔरदण्डघ्नअर्थात्जोदण्डकोनमाने ये सबनहींहैं वहराजाशक्रलोकअर्थात्स्वर्गकेराज्यकाभागीहोता है अन्यथानहीं ॥१३६॥ एतेषांनिग्रहोराज्ञः पंचानांविषयेस्वके। साम्राज्यकृत्सजात्येषुलोकेचैवयशस्करः ॥१३७॥ भा० जिसराजाकेराज्यमेंपूर्वोक्तपांचदुष्टपुरुषनहीं होवें वहराजासबराजाओंके बीच में सम्राट्चक्रवर्तीहोनेकेयोग्यहै औरलोगोंमेंभीकीर्त्तिकाकरनेवालाहै ॥१३७॥ दास्यंतुकारयन्लोभाद्ब्राह्मणःसंस्कृतान्द्विजान्। अनिच्छतःप्राभवत्याद्राज्ञादण्ड्यःशतानिषट् ॥१३८॥ भा० जोब्राह्मणभीद्विजलोगोंसे सेवाकराते हैं उनकी इच्छाकेविनाउनकोराजा छःसौमुद्रादंडकरै क्योंकिसेवाकरना बुद्धिमान् श्रेष्ठलोगोंकायह नहीं वहव्यवहार शूद्रहीकाहै क्योंकि जोमूर्ख पुरुषहै वह अन्यका कामविनासेवाकेक्याकरेगा १३८। अध्यक्ष स्थवेक्षेतकर्मतान्वाहनानि च। आयव्ययौचनियतावाकरान्कोशमेवच ॥१३९॥ भा० नित्य २ राजा सबराज कर्मोंमें अपने अधिकारी आमात्य चंद्रा वाकर्मशाइल, हस्ति, अश्व, रथ, औरनौकादिक आयव्यय पदार्थोंका आना व्ययनामपदार्थोंकाखर्च पदार्थोंका समूह शस्त्रोंका समूहऔर धनकाकोष इनकोयथावत्देखतारहै किकोईपदार्थका

कोई कर्मेनछन्दोमन्यथाहेय ॥१३९॥ सर्वेसर्वविनाशान्राजाव्यव-
हारान्सनापयन् उद्धोधाकिज्जिषयंशर्वेशस्त्रांतिरस्कांतिम् ॥१४०॥
भ० इसप्रकारअनेकव्यवहारों को न्यायपूर्वक जो राजा करता है वह
सबपापोंसे छूटके परमगतिजोमोक्ष उसको प्राप्त होता है जिस
व्यवहारको किया चाहै उसकोसम्यक् विचारकेकरै जिससे कि वह
कार्यपूर्ण होजाय अपूर्ण कभीनरहै ॥ १४० ॥ अनंशौक्लीबपतितौ
जात्यन्धबधिरौतथा । उन्मत्तजडमूकाश्च येचकेचिन्निरिन्द्रियाः ॥
१४१ ॥ भ० क्लीबनामनपुंसकपतितनामपापीजन्मसेअंधा तथाब-
धिरउन्मत्तनामपागलजड़ नाम मूर्ख, मूक और निरिन्द्रियहीन अज-
जितेन्द्रिय, काम, क्रोधादिकोंमेंसदाफंसनेवालेभागनपावैं क्योंकियेभाग
भागपावेंगे तो सबपदार्थोंकाव्यर्थनाश करदेंगे इससे राजाकोयह
व्यवस्थाकरनी चाहिए अपनेपुत्र बान्धवोंके सन्तानोंको जिनके
पदार्थराज्यऔरधनादिकउनमेंसेकुछ नहिंलावैं और जोकोईमूर्ख-
आदिकहोंउनकोभाग नदेवे तोउसकोराजा रखलेवे और नपुं-
सकादिकोंसेदियेहुएपदार्थोंकोभी राजा रखै क्योंकिमूर्खों
केहाथपदार्थका अधिकारहोनेसे तोसबकानाशकरके आप
भीदरिद्रहोजावेंगे फिर राजाकेराज्यमें भी दरिद्रता होजायगी
फिरराजाकोभीकुछप्राप्ति नहींहोवेगी इससे राज्यऔरधना-
दिकजितने प्रजाओंकेपदार्थ हैं उनपदार्थोंको राजा कभीनदे और
नदिलवावै जोसम्यक्विद्या, बुद्धिऔरविचारसेउनपदार्थोंकीरक्षा
मेंयोग्यहोय उसकी सम्यक्परीक्षाकरके उनपदार्थोंकारक्षाकरानेमें
सकोकरदेअन्यथानहीं ॥१४१॥ सर्वेषामपितुन्याय्यंदातुंशक्त्यामन-
ीषिणा । ग्रासाच्छादनमत्यन्तं पतितोह्यददद्भवेत् ॥ १४२॥ परन्तु
उननपुंसकादिकोंकरनेसामर्थ्य के योग्य भक्षणभागवोंने बासा
भोजन, वस्त्र औरउनकास्थानादिकदेनेमेंकमीमतकरै जोयह
भोजनादिकभीउनको नदेवेंगे तोपतितहोजाय और राजाउसकोदण्ड
भीदे इसलियेआज्ञायहहैकि भोजन और वस्त्रादिकोंकेविनादुःखीनर-

है और जो उनका पुत्र योग्य होय तो उसके पिता के दाय भाग को राजा दिलावै इस बात को राजा अवश्य सेकरै अन्यथा राज्यवृद्धि नहीं होगी राजा अपनी प्रजा की रक्षा और हित में सदा प्रवृत्त रहै और प्रजा भी राजा की रक्षा तथा हित में प्रवृत्त रहै जो प्रजा को आपत्काल आवै तो राजा सब प्रयत्नों से प्रजा की रक्षा करै अर्थात् राजा को आपत्काल किसी प्रकार का आवै तो प्रजास्थ उत्तम मनुष्य राजा या सब प्रकार से सहाय करैं क्योंकि प्रजा राजा के पुत्र की नाईं होती है पिता को अवश्य चाहिए कि अपनी प्रजा की सदा रक्षा करै तथा प्रजा पुत्र की नाईं जैसे कि पिता की पुत्र रक्षा करता है वैसे राजा की प्रजा रक्षा करै और जिस बात से प्रजा को पीड़ा होय उस बात को राजा कभी न करै तथा राजा को जिस बात से दुःख होय उस बात को प्रजा कभी न करै जैसे कि जिन पशुओं वा जिन पदार्थों से सब प्रजा का उपकार होता है उसका राजा कभी विनाश न करै जैसे कि गाय, भैंस, बकरी, बैल और ऊंट तथा गधा आदिक इनको कभी न मारै न मरवावै क्योंकि दुग्ध, घृत, अन्नादिक और अन्य व्यवहार इन्हीं से सब मनुष्यों का चलता है तथा राजा का भी इनका मारना दोनों को अनुचित ही है राजा भृत्य तथा युद्ध से निवृत्त कभी न होवै क्योंकि युद्ध से निवृत्त होगा तो उसी वक्त शत्रु लोग सब पदार्थों को छीन लेंगे तथा मार डालेंगे वा अत्यन्त दुःख देंगे तब युद्ध का सब प्रबन्ध वेतन राजा जल, अन्न, मनुष्य, शस्त्र, यान आदि पदार्थों की पुष्टि रक्खै जिससे कि किसी पदार्थ के बिना दुःख किसी को न होवै और युद्ध में युद्ध का आचार विचार रक्खै युद्ध करते भी जांय और खाते पीते भी जांय कुछ शंका न रक्खै उसी वक्त जूते, वस्त्र, शस्त्र धारण किये रहैं युद्ध और भोजन भी करैं ऐसा न करैं कि वस्त्र, जूते, शस्त्र इत्यादिक सब छोड़ के हाथ गोड़ धोके भोजन करैं तब तक शत्रु लोग मार डालैं देखना चाहिए कि युधिष्ठिर जी के राजसूय और अश्वमेध यज्ञ में [illegible] के सब राजा आये थे वे सब ब्राह्मण, क्षत्रियों के साथ एक पंक्ति में भोजन करते थे और विवाह भी

उनका परस्पर होताथा जैसे कि क्षत्रिय गन्धारकी कन्या गान्धारी,
धृतराष्ट्रसे विवाही गईथी तथा माद्री ईरानदेशकी राजाकी कन्या पा-
ण्डुसे विवाही गईथी अर्जुन केसाथ नाग अर्थात् अमेरिकाके लोगोंकी
कन्या विवाही गई थी इत्यादिक व्यवहार महाभारत में लिखे हैं
और शूद्रही सब ब्राह्मणऔरक्षत्रियादिकोंकेघरमें पाककरनेवाले
थे जिनकानाम सूपशास्त्रप्रसिद्धथा जो शूद्रपाककरनेवाला होता है
उसकीसूदऐसीसंज्ञाहोतीथी क्योंकिब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्य, वेदादिवि-
द्यापठन और पाठनतथा नाना प्रकारके पुरुषार्थ और शिल्प
विद्यासे पदार्थों का रचन इन्हीं में सदा प्रवृत्त रहैं रसोई आदि-
कसेवा सबलोगोंकीशूद्रहीकरैं अर्थात्ब्राह्मण, क्षत्रिय, औरवैश्यइ-
नको भोजन एकसाथ होनी चाहिए जिससे कि परस्पर प्रीति
होवे औरभोजनके बड़े २ बखेड़े हैं वेसबनष्ट होजांय कोईपरदेश
को जाता है तब पाकादिकोंका भार सबकीनाईं उठायफिरताहै तथा
पानीलाना औरचौकादेना अन्न, काष्ठ, अग्न्यादिकका प्रबन्धइससे हो
जाता और वनमें गमनसे बड़ेपीड़ितहोकेआगे किसभी समय के
ऊपरभोजनकानहोना इससे बड़े दुःखहोते हैं इससेब्राह्मण,क्षत्रिय
और वैश्यइनकेएकसाथ भोजनहोनेसे किसीकोकिसीप्रकारकादुःख नहीं
होगा क्योंकिशूद्रहीपाककरैगा औरखिलावैंपिलावैगा परन्तु ब्रा-
ह्मणादिकोंहीके पदार्थसबपात्रादिकहोवैं शूद्रकेघरके नहीं शूद्रहो-
केबनावैं औरब्राह्मणादिक विद्यादिकश्रेष्ठ पदार्थों की उन्नति करैं
जिससेकिसबसुखहोवैं इससे इसबात को राजालोग अवश्य करैं इ-
सकेविना उनकी उन्नतिनहींहोनीहै देखना चाहिए भोजनके पाख-
ण्डोंसे आर्यावर्त्त देशकानाशहोगया ब्राह्मणादिक चौकादेने लगे
ऐसाचौकादिया कि राज्य, धन और स्वकन्यादिक सुखोंकेऊपर
चौकाहीफेरदिया किसबआर्यावर्त्त देशको सफाचट कर दिया इ-
ससे राजालोगोंको चाहिए कि व्यर्थपाखण्डजालमिटादेवैं विवाह
का जिसकालमें जैसापूर्वनियमलिखाहै औरपरीक्षाउसी प्रकार से

राजा करावे ब्रह्मचर्याश्रम कन्या वा पुरुष का जब होजाय तभी वि-
वाह की आज्ञा राजा देवे क्योंकि यही सब सुख और धर्म का मूल है अन्य-
न ही सब देशदेशान्तरस्थ पुरुषों से भोजन विवाह और परस्पर प्रीति
रक्खें प्रजायें जितने धर्मात्मा, बुद्धिमान् पक्षपातरहित और सब वि-
द्याओं में पूर्ण इनकी सम्मति से सब काम और सब नियम किया करें कि
जिसके ऊपर सब प्रजा प्रसन्न होवें वही राजा होय उस देश के सब प्र-
जा उस राजा को प्रसन्न रक्खें ऐसे सब परस्पर प्रिय और सब पु-
रुषों की उन्नति करें अर्थात् राजा और प्रजा की सम्मति के विना प्रजा में
कुछ कर्म न होवे और प्रजा की सम्मति के विना सभा और राजा कुछ कर्म
न करें किन्तु दोनों की सम्मति के विना कुछ राजकार्य न होने पावे क्यों-
कि इनके होने से उस देश में कभी दुःख के दिन न आवेंगे सदा आनन्द
ही रहेगा ॥ १४२ ॥ चोर दो प्रकार के होते हैं एक तो प्रसिद्ध दूसरा अ-
प्रसिद्ध प्रसिद्ध वे होते हैं कि डाका मारें डांकू और पाखण्डी जैसे कि वै-
रागादिक मन्दिर रच के सब मनुष्यों से कुछ ज्ञान वा कुछ उपदेश से बु-
द्धि भ्रष्ट करके धनादिक पदार्थों को हरण करलेते हैं यहां तक कि मनु-
ष्यों को मूड़के चेला बना लेते हैं इनको राजा दण्ड से निवृत्त करदे पूर्व-
पक्ष इनको दण्ड न देना चाहिए क्योंकि ये तो प्रसन्नता से धन देते और
लेते हैं और प्रसन्नता से उनको देते हैं इनके ऊपर दण्ड का होना उ-
चित नहीं उत्तर इनको अवश्य दण्ड देना चाहिए क्योंकि जैसे कोई
पुरुष कोई बालक को फुसला के वा कुछ खुशामद करके वा खाने की चीज कुछ
देके वस्त्र, आभूषण, धनादिक पदार्थों को प्रसन्नता से लेलेता
है और बालक भी उसको प्रसन्नता से देदेता है फिर लेके वह भाग जा-
ता है फिर उसके ऊपर राजा दण्ड करता ही है वैसे ही जितने प्रजा में वि-
द्या, बुद्धि और विचारहीन पुरुष हैं वे बालक की नाईं हैं उनसे भी
प्रसाद चरणोदक, कण्ठी, माला, छापा और तिलक एकादश्यादिक
माहात्म्य सुनाना तीर्थ नामस्मरण और स्तोत्र, पाठ इत्यादिकों को सु-
नाना इत्यादिक छलबलादि से पदार्थों को लेते हैं फिर उनके ऊप-

ऐसा कभी न करना चाहिये किन्तु अवश्यही करना चाहिये जो राजा इनको दण्ड न देगा तो उसकी प्रजा सब अधर्मी होजायगी और राज्य का भी नाश होजायगा क्योंकि ये अधर्म करते हैं और कराते हैं नाम रखते हैं धर्म और वेद का चलाते हैं पाखण्ड को इससे इस काम को राजा अवश्य छेदन करदे कि कोई उसके देश में पाखण्डी न रहै और जो ये पाषाणादिकों की मूर्त्तियां बनाना और मन्दिर को रचके उनमें उन मूर्त्तियों को बैठा के उनका नाम शिवनारायणादिक रखते हैं फिर वस्त्र और देवता अन्य आभूषणों को पहिराके फिर घड़ी, घंटा, नगारा, रणसिंघा और शंखइत्यादिकों को बजाके मूर्खों को मोहित करके सब धनादिक पदार्थों को हरण करलेते हैं जैसे कि डांकू लोग नगरादिक में आके प्रसिद्ध धन हरलेते हैं इन सबों को दण्ड देके शिक्षा भी इनको करना चाहिये क्योंकि ॥ अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति मन्त्रदः । अज्ञं हि बालमित्याहुः पितेत्येव तु मन्त्रदम् ॥ १४३ ॥ म० इसका यह अभिप्राय है कि जो अज्ञानी है सोई बालक कहै और ज्ञानी अर्थात् मन्त्र उपदेश और विचार का करनेवाला सोई पिता होता है इससे यह आया कि जो अज्ञानी है उसको बालक कहना चाहिये ॥ १४३ ॥ जितने दुकानदार लोग हैं उनके ऊपर भी राजा दृष्टि रक्खै कि वे मिलके चोरी कभी न करने पावें ॥ तुलामानं प्रतीमानं सर्वं च स्यात्सुलक्षितम् । षट्सु षट्सु च मासेषु पुनरेव परीक्षयेत् ॥ १४४ ॥ म० तुला नाम तराजू और डंडी और तराजू की परीक्षा करे छः छः मास में हर हर मास क्योंकि दूकानदार लोग बीच में तराजू और डंडी के बीच में छेद करके पारा भर देते हैं जब लेते हैं तब अधिक लेते हैं और देते हैं तब न्यून देते हैं जब बुद्धिमान् जाय तब और भाव जब मूर्ख जाय तब और भाव से ठाक करके मूड़लेते हैं वही ग्रहण अर्थात् पति नाम कटांक आदिक उसका यदा यदा लेते हैं उससे भी अधिक लेलेते हैं और न्यून देदेते हैं फिर महाजन और साहूकार बनेरहते हैं परन्तु चोरडे बनरहे हैं जैसे कि व्याज अर्थात् एक का दो का–

दशादिकोंकी कथा करनेवाले और मन्दिरोंके पुजारी और सम्प्रदाय वाले, वैरागी, शैव, वाममार्गी, आदिक पण्डित महात्मा और सिद्ध योगी ऊपरसे बनेरहते हैं परन्तु उनको यथावत् केजानने वाले जानते हैं कि ये सब प्रसिद्ध चोर हैं इनको दण्ड देसे राजा उपदेश करे ऐसा दृढ़ दण्ड दे कि कोई इसप्रकार का मनुष्य प्रजामें नरहने पावे तभी राजा और प्रजाको उन्नति होगी अन्यथा नहीं पुराणशब्द विशेषणवाची सदा है जैसे कि पुरातन प्राचीन सनातन शब्द हैं इनके विरोधी नवीन अद्यतन अर्वाचीन इदानीन्तन शब्द विशेषणवाची हैं कि यह चीज नवीन है अर्थात् पुरानी नहीं ऐसे परस्पर विशेषण विरोधसे नित्य कहे जाते हैं तथा देवालय, देवमन्दिर, देवागार, देवायतन इत्यादिक नाम यज्ञशालाओंके हैं क्योंकि जिसस्थानमें देवोंकी पूजा होय उसीके ये नाम हैं देव हैं वेदके सब मन्त्र और परमेश्वर क्योंकि परमेश्वर सब का प्रकाशक है और वेदके मन्त्र भी सब पदार्थ विद्याओंके प्रकाश करनेवाले हैं इससे इनका नाम देव है सो ही शास्त्रमें लिखा है ॥ यत्र देवता उच्यते तल्लिङ्गो मन्त्रः ॥ यह निरुक्तका वचन है इसका यह अभिप्राय है कि जहां २ देवता शब्द आवे वहां २ मन्त्रहीको लेना परन्तु कर्मकाण्डमें उपासना और ज्ञानकाण्ड में परमेश्वर ही देव है जैसे कि अग्निमीळे पुरोहितमित्यादिक ऋग्वेद के मन्त्र हैं तथा अग्निर्देवता इत्यादिक यजुर्वेदके मन्त्र हैं इसमें अग्निदेवता है इससे अग्नि शब्द देवता विशेषणपूर्वक जिस मन्त्रमें होगा उसके वो अग्निशब्द वाला मन्त्र होवेगा उसको लेलेना जैसाकि अग्निमीळे पुरोहित मित्यादिक यहीं व्यासजी के शिष्य जैमिनीने कर्मकाण्डके ऊपर पूर्वमीमांसा एकदर्शन शास्त्र बनाया है उसमें विस्तार से लिखी हैं कि मन्त्रही देव हैं और कोई नहीं इसमें इसप्रकारके श्लोक लिखे हैं जैसे ॥ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ॥ इत्यादिक मन्त्रोंसे निश्चय जाना कि ब्रह्मादिक देव उनकेभी पूजन का अत्यन्त निषेध किया है सो नाकहीं किया है क्योंकि ब्रह्मादिक देव नित्य पञ्चमहायज्ञ और अग्निहोमादिक यज्ञोंको करते

है तब वे यजमान होते हैं फिर उनसे अन्य देव कौन हैं किंतु अग्न्यादिकों के यज्ञ में जिनकी पूजा की जाय सो भाग लेते हैं इसको लिखा था अन्य पुरुषों के देवदेहधारी नहीं और कोई कहे कि उन्हीं से अन्य देव हैं तो उनसे पूछा जाता है कि जो यजमान करेंगे तब उनके आगे भी तो सारे देव मानें और जो तीसरे जब यज्ञ करें तो तब भी वे इनसे आगे देव मानें जायेंगे ऐसे ही अनवस्था उनके मत में आवेगी इससे परमेश्वर और अग्न्यादि को देव मानना चाहिए और अन्य जो जैन लोग ब्रह्मादिकों को विद्या, सिद्ध ज्ञान, योग और सत्य वचन, गुण वालों का निषेध जो जिनों ने किया तो पाषाणादिक मूर्तियों की पूजा का निषेध अत्यन्त हो गया क्योंकि पाषाणादिक मूर्तियों को देव मानना यह अत्यन्त पामरपना है इस बात में कुछ सन्देह नहीं और जो कहे कि ये हैं तो पाषाणादिक परन्तु मेरे भाव से देव हो जाते हैं और फल पाते हैं तो उनसे पूछना चाहिए कि आपका भाव सत्य है वा मिथ्या जो कहें कि सत्य है तो दुःख का भाव और सुख का अभाव कोई नहीं चाहता फिर उनको दुःख का भाव और सुख का अभाव क्यों होता है जो अन्य पदार्थ में अन्य का भाव करना है सो मिथ्या ही है जैसे कि अग्नि में जल का भाव करके हाथ डाले तो हाथ जल ही जायगा इससे ऐसा भाव मिथ्या ही है और जो पाषाणादिकों को पाषाणादिक मानना और देवों को देव मानना यह भाव तो सत्य है जैसा कि अग्नि को अग्नि मानना और जल को जल इससे क्या आया कि जो जैसा पदार्थ है उसको वैसा ही मानना अन्यथा नहीं फिर उनसे पूछना चाहिए कि आप लोग मानते हैं पाषाणादिकों को देव तो वे देव होते हैं और उनसे अपनी इच्छा के योग्य फल होते हैं तो उस भाव से आप ही देव क्यों नहीं बन जाते और चक्रवर्त्यादिक राज्य रूप फल को क्यों नहीं पाते तथा सब दुःखों का नाश रूप फल क्यों नहीं होता फिर वे ऐसा कहें कि सुख दुःख और चक्रवर्त्यादिक राज्यों की प्राप्ति कर्मों का फल है अच्छा तो आप लोगों को स्वयं है कि जैसा कर्म करें वैसा ही फल होता है फिर आप लोगों ने कहा था कि पाषाणादिक मूर्तियों से फल मि-

सकता है यह बात आपलोगों की झूठी होगई पूर्वपक्ष जबतक वेद मन्त्रों से प्राणप्रतिष्ठा नहीं करते तबतक तो पाषाणादिक हैं और प्राण प्रतिष्ठा करने से देव होजाते हैं उत्तर यह बात भी आपलोगों की मिथ्या है क्योंकि वेद ब्राह्मण ऋषि मुनियों के किये शास्त्रों में प्राणप्रतिष्ठा का पाषाणादिक मूर्त्तियों में कहीं लेश भी नहीं तो मन्त्र कैसे होंगे फिर मन्त्र से प्राणप्रतिष्ठा कैसे करते हो और मन्त्र का आप लोग अर्थ भी नहीं जानते जैसा कि प्राणदा, अपानदा, उद्बुध्यस्वाग्ने, इत्या दिके और प्रतिष्ठापद्धति कहते हैं सहस्रशीर्षा पुरुषः शन्नो देवी- रभिष्टय मर्यादादाचीतिपापाद्यः परमेश्वरः । इत्यादिक अर्थ मन्त्रों का है इनपाषाणादिक मूर्त्तियों में प्राणप्रतिष्ठा करना इस का लेश मात्र भी सम्बन्ध नहीं और प्राणा इहागच्छन्तु सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वा- हा । यह तो मिथ्या संस्कृत किसी ने रच लिया है और वेदों के सम्बन्ध में भी आपलोगों के कहने की रीति से दोष आता है कि वेद के मन्त्रों से जो प्राण प्रतिष्ठा की जाय फिर प्राणों का मूर्त्ति में लेश भी नहीं देख पड़ता है इससे यह बात भी न करनी चाहिये क्योंकि जो प्राण मूर्त्तियों में आते तो मूर्त्ति चेतन होजाती सो तो जैसी पूर्व जड़ थी वैसी ही जड़ सदा रहती हैं पा- षाणादिक मूर्त्तियों में प्राण के आने और जाने का चिह्न भी नहीं परन्तु मनु- ष्य जो मरता है उसके शरीर में से अच्छी प्रकार प्राण के जाने और आने के ये चिह्न हैं उस में प्राणप्रतिष्ठा करके क्यों नहीं जिलाते हैं कि कोई मनुष्य कभी मरने ही न पावे ऐसा किसी का भी सामर्थ्य नहीं इससे यह बात अत्यन्त मिथ्या है पूजा नाम सत्कार है देवपूजा होम ही से होती है अन्यप्रकार से नहीं क्योंकि मनु आदिक ऋषि लोगों के ग्रन्थों में और वेदों में यही बात लिखी है। स्वाध्यायेनार्चयेतर्षीन् होमैर्देवान्यथाविधि इस पूर्वोक्त श्लोक से होम ही को देवपूजा यथावत् करनी चाहिये ऐसा लि- खा है कि होम को ही देवपूजा कहते हैं और जिन स्थानों में होम होवे उ- न्हीं को देवालयादिक नाम जानना ॥ यद्विश्व वशगोऽस्मादेवस्य व- हिर्दुर्धरः । अनग्निकानां तु यज्ञपात्रं स्वर्गं पश्यते ॥ प्र० जो यह ही

को निश्चयकरताहै उसका जोधन औरदेव शब्दनाकत्वहै जोकोई यज्ञके वास्ते अन्य पुरुषोंको भनलेके भोजनाच्छादनादिकउससेकरै औरयज्ञ कोनकरै उसका नामदेवलहै ॥ कुत्सितोदेवलोदेवलकः कुत्सिते इ-त्यनेनकन्प्रत्ययः। जोगंगाकेधनकीचोरीकरके भोजन,आच्छादनादिक करै उससे परस्त्री गमन वावेश्यागमनादीकरै उसकोदेवल कहते हैं यह देवल ऐसी दुष्टहै इन दोनोंका श्रेष्ठकर्मोंमें देवपितृ कर्मादिक यज्ञोंमेंनिषेधहै कि इन कोनिमन्त्रणादिअधिकारकभी नदेना ऐसे-ही नामरूपग्रन्थब्रह्मवैवर्तादिककाल काश्यपादिकदेश, इनकाको सहस्रमय जिस किसीनेलिखाहै वहसबमिथ्याहीहै क्योंकि वेदादिक सत्यशास्त्रोंमेंइनकाकुछभीलेखनहीं देखनेमेंआता औरवृद्धि ऐसी यह मतिमोपुनरादिककिमिथ्याहीहै ऐसेग्रन्थोंमें राजा और प्रजा कोभ्रमहोताहै इसलियेयह लिखागयाकि राजा और प्रजा इन ग्रन्थोंमेंश्रद्धानहींकरें नकिसीकोहोनेदें किन्तुबुद्धकी विद्या वह जो यथावत्जानें और प्रजाको नानाप्रकारकी पदार्थविद्या तथा शिल्पविद्याभीराजाओंप्रजाकोअत्यन्त प्रकाशकरके पुरुषार्थ-थाकेहोतेहैं एक शब्दविद्या,दूसरीअर्थविद्या शब्दविद्या यहकहा-तीहै किजिसद्वारा वेदशब्दार्थकापढ़ना औरसबशास्त्रोंका यथावत्जानना औरव्याकरणादिअंगोंकाविचारसब करना औ-रकारनेरजानने यथावत्को मानना औरअर्थविद्या यह कहा-तीहै किजो पदार्थोंके परस्परमेलन और गुणोंसे होतीहै जैसाकि अग्नेयास्त्र ऐसेपदार्थोंका रचनकरें कि वायुकेस्पर्शमें उससे अग्नि उत्पन्नहोवै फिरउसकेफेंकने सेजोपदार्थउसके समीप होय उसको भस्मकरी करदेताहै जैसेदीपशलाकाको घसने अग्निउत्पन्न हो-ताहै वैसेहीसबअस्त्रविद्याजाननी इसप्रकार कीआर्यावर्तमें पूर्व ब-हुतपदार्थरचनेकीउन्नतिथी जैसेकिविशल्याएककौषधिथा जो-गरचलेतोथे कैसाही घावशस्त्रसेहोजाय परन्तु उसको अच्छाकरदेता-था। कभी वज्रवत्आघातहोजाय औरउसकेपीड़ाभीअधिकहोती थी

तथा विमान अर्थात् आकाशयान बहुतप्रकारोंके और महाजसमुद्र पारजानेके निमित्त तथा द्वीप, द्वीपान्तरमेंजातेऔर आते थे यह महाभारत तथा वाल्मीकीरामायणमेंलिखाहै आर्यावर्त्त के राजाओं कीआज्ञा और राज्य सबद्वीपद्वीपान्तरमेंथा क्योंकियुधिष्ठिरादिकों केराजसूयतथाअश्वमेधमें सबद्वीपद्वीपान्तरकेराजाआयेथे यह सभा और आश्वमेधिकपर्वमेंमहाभारतमेंलिखीहै जैन और मुसल्मानोंने बहुतसे इतिहास नष्टकरदिए इससे बहुतसा [illegible] मिलती भीनहीं बड़े बलवान् तथा विद्यावान् इस देशमें होतेथे इसीदेशसे भूगोलमेंविद्याआचारसबमनुष्योंनेपढ़ेथे सबस्त्रियांभी आर्यावर्त्तमें विद्यावान होतीथीं सो आजकाल आर्यावर्त्तदेशवालोंकी ऐसीमूर्खता और दशाहै ऐसीकोई देशकीनहोगी फिरभी वेदादिक सत्यविद्याओंकोयथावत्पढ़ें और पढ़ावें धर्माचरण और श्रेष्ठाचार राजा औरप्रजाकीपरस्परप्रीति तथा परस्परगुण ग्रहण करें तभीमनुष्योंकोआनन्दहोगा अन्यथानहीं अष्टमवर्षसे ४८,४४,४०, ३६,३०,२५, वर्षतक होना सब विद्याओंकाग्रहणकरना वीर्यका निग्रह जितेन्द्रियता और धर्मानुष्ठान [illegible] पक्षपातद्रोहके प-थी सब कुलोंके पूजते मनुस्मृतिके सप्तमअष्टमऔरनवम अध्यायोंमें राजा और प्रजाके धर्म विस्तारसेलिखाहैमहाभारतऔरवेदादिकों मेंभी बहुत प्रकारसेलिखाहै राजाऔरप्रजाओंकाधर्मजोदेखनाचाहे सो देखले इसमेंतो हमनेसंक्षेपसे लिखाहै इसकेआगेईश्वर और वेदविषय में लिखाजायगा ॥

इति श्री मद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थ प्रकाशे सुभाषा विरचिते षष्ठः समुल्लासः संपूर्णः ॥ ६ ॥

अथेश्वरवेदविषयं व्याख्यास्यामः ॥ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ १ ॥ इस मन्त्रका अर्थ है कि जो सदा अनादि स्वप्रकाश द्वितीयरहित आनन्दस्वरूप नित्यशुद्ध सबका आधार हिरण्यगर्भ अर्थात् परमेश्वर होता सब भूतोंका जनक और पति है दूसरा कोई नहीं सोई परमेश्वर पृथिवीसे लेके स्वर्ग पर्यन्त जगत्‌ को रचके धारण करता भया उसी एकही परमेश्वरका देवाय हवि-नाम प्रेम भक्ति आदिकों से स्तुति प्रार्थना और उपासना हम लोग नित्य करें ॥ १ ॥ पूर्वपक्ष ईश्वरकी सिद्धि किसी प्रकार से नहीं होसकती और ईश्वरके माननेका प्रयोजन भी कुछ नहीं क्योंकि देखो जल और जलके मिलनेसे एक दूसरा पदार्थ होजाता है ऐसेही पृथिव्यादिक स्थूलभूत तथा इनके परमाणु और परस्पर मिलनेसे सब पदार्थोंकी उत्पत्ति होती है जैसे शिलाजीत और घृतादिक... लाल रक्तादिक पदार्थोंको उत्पन्न करते हैं इनसे भिन्न पदार्थ की अपेक्षा नहीं वैसेही जीव और पृथिव्यादिक भूतोंके मिलने को ईश्वर उनके मानने का कुछ प्रयोजन नहीं स्वभावहीसे सब जगत् होता है और जगत् नित्य है कभी इसका नाश नहीं होता फिर जगत्‌रूप कार्यको देखके कारण जो ईश्वर उसका अनुमान करते हैं सो व्यर्थ है क्योंकि ईश्वरका कोई प्रत्यक्ष नहीं है इससे प्रत्यक्ष ईश्वरके विषयमें नहीं बनता जब ईश्वर प्रत्यक्ष नहीं तो अनुमानभी नहीं बनसकता किन्तु तुल्य ईश्वर है जब प्रत्यक्ष नहीं है तब शब्दप्रमाण भी नहीं बनता शब्दप्रमाण अनुमान ... ऐसेही परंपरा से कहते और सुनते चले आते हैं किसीने किसीसे कहा कि मैंने वन्ध्याका पुत्र आकाशका फूल देखा ऐसा अन्धोंसे अन्धोंने अन्यपुरुषोंसे कहा ऐसेही अन्यपरम्परा से कहने और सुनते चले आते हैं इससे ईश्वरकी सिद्धि किसी प्रकार से नहीं होसकती उत्तरपक्ष ईश्वरकी सिद्धि यथावत् होती है क्योंकि जो स्वभावसे जगत्‌की उत्पत्ति मानोगे इसके मतमें यह दोष आवेगा

जगत् का जितने पदार्थ हैं उनके भिन्न २ संयोग आकृति तथा गुण
और स्वभाव देखने में आते हैं जैसे कि मनुष्य और बानर आम का और ब-
बूर का वृक्ष इत्यादिकों में विलक्षण २ गुण और आकृति देखने में आती है
इन नियमों का कर्ता कोई न होता तो ये नियम कभी न चलते क्योंकि
जड़ पदार्थों से तो मिलने वा जुदा होने की यथावत् सामर्थ्य नहीं किन्तु
न देशान्तर गुणहीन ही जो ज्ञानगुणवाला होता है वही यथावत् निय-
म कर सक्ता है अन्य नहीं जो जीव है सो ज्ञानवाला तो है परन्तु जीव
का जगत् का सामर्थ्य होता नहीं इससे कोई पृथिव्यादि भूत और जीव से भि-
न्न पदार्थ अवश्य है जो सब जगत् का कर्ता और इन नियमों का नियन्ता
ईश्वर अवश्य है किन्तु स्वभाव से जगत् की उत्पत्ति जो मानता है उस-
से पूछना चाहिये कि जो यह पृथिवी स्वभाव से जो होती तो इसका कर्ता
और नियन्ता होता इस पृथिवी से भिन्न दशा में कोश अन्तरिक्ष में
दूसरी आप ही आप क्यों नहीं बन जाती और आजतक नहीं बनी इससे जाना
जाता है कि जो कोई सब भूतों से सर्वशक्तिमान् सब जगत् का कर्ता
और नियन्ता परमेश्वर उसी को ईश्वर कहते हैं दूसरा दोष कि नि-
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
अथवा पृथक् २ क्यों न रहे तथा एक प्रकार के रूपवाले सब पदार्थ
क्यों नहीं हुए भिन्न २ संयोग और रूप के होने से सब जगत् का कर्ता
और नियन्ता अवश्य सिद्ध होता है तीसरा दोष उनके पक्ष में यह है कि
कोई कर्म कर्ता के बिना होता है वा नहीं जो वह कहे कि घटादिकों में
घटादिक पदार्थ आप ही से होते हैं उसका कर्ता और निमित्त कोई
नहीं देखने में आता इससे पूछना चाहिए कि पृथिव्यादिक भाव भूत निमित्त
हैं और सबको भी निमित्त कर्ता और नियन्ता के बिना नहीं बन सकते क्यों
कि [illegible]

अङ्कुरपत्रपुष्पफलकाष्ठऔरस्वादादिरचनेमेंआतेहैंइससेसिद्ध जो कद-
लीतसफेआखनकारवाद आमसे कोईनहीं मिलतेक्योंकिसबपदार्थों
मेंपरमाणुतो वेहीहैं फिररचनेवाले के बिना भिन्न पदार्थकैसेहों
इससे जानाजाताहैकि सबजगतका रचनेवाला कोई पदार्थहै जोचू-
ना, हल्दीऔर जलके मिलानेसे लालीहोती है उसकामेलनकरनेवा-
ला जबमिलता है तबवेमिलके लालीहोतीहैं वे आपसेआप तो नहीं
मिलते इससे यहदृष्टान्त मिथ्याहोगया कुम्हारकाजो दृष्टान्त दि-
या सोकोंहाररथनीआपने जोबकोरचसा क्योंकिईश्वरको तो आप
मानतेहीनहीं सोजीव सर्वशक्तिमान् नहीं क्योंकिपरमाणुआदिकों
कासंयोग वावियोगजीव कभी नहींकरसक्ता सोजीवकरसक्तातो
चाहताकोसूर्य चन्द्रादिकलोकोंकोरचलेता सोरचसक्ता नहीं इ-
ससे जाना जाताहै कि सबजगत्काकर्त्ता औरनियन्ता कोई अवश्य
है जब जगत्रचागयाहै तोनित्य कभीनहींहोसक्ता क्योंकि जब तक
नहीं रचाथा तबतक नहींथा और जोर रचने से भयाहै सोकभीनित्य
भी आपका बिनाकर्त्ताकारके कर्मवाकार्यनहींहोता जो मनुष्य-
नामकारकीरचना और इतनामहाकार्य जगत् कभी नहीं होसक्ता
इससे तीनप्रकारकोअनुमानहै और ईश्वरमेंयथावत्घटता है कि का-
रणकेबिनाकार्य कभीनहीं होसक्ताकार्यसेकारणअवश्य जानाजा-
ताहै औरकर्ताकेबिना कार्य नहींहोता इससे पूर्ववत् शेषवत् और
सामान्यतो दृष्टतीन प्रकारका अनुमान ईश्वरको यथावत्सिद्धकर-
ताहै ईश्वरके सर्वशक्तिमत्त्वादिगुण और व्यापकत्वादिकगुण
जगत्मेंप्रत्यक्षदेखपड़तेहैं स्वाभाविकगुणऔरगुणीका नित्यसंबंध
होताहै जैसाकिरूपऔरअग्निका सो जैसे अग्निका रूपदेखपड़ता
है और अग्निनेत्रसे नहीं देखपड़ता परन्तुहमलोगज्ञान से अग्नि
को प्रत्यक्ष देखतेहैं क्योंकि अग्निको बुद्धिसे प्रत्यक्षहमलोगनदेखते
तो अग्निकोलेआते और अग्निसे भिन्नव्यवहार होतेहैं उनमेंप्रवृ-
त्त कभीनहोते इससे जैसा अग्नि रूपकोप्रत्यक्षहै गुणऔर गुणीके

क्ष नहीं है ज्ञान से परमेश्वर भी प्रत्यक्ष है और धर्मात्मा और योगी पुरुषों को है उनको प्रत्यक्ष जीव और परमेश्वर भी यथावत् प्रत्यक्ष होते हैं जो कोई इसमें संदेह करे सो प्रत्यक्ष देखले उपमान प्रमाण तो परमेश्वर में नहीं हो सकता क्योंकि परमेश्वर के सदृश कोई पदार्थ नहीं जिसकी उपमा परमेश्वर में होसके परन्तु परमेश्वर की उपमा परमेश्वर ही में होसकती है ऐसा जगत् में व्यवहार देखने में आता है कि आप के तुल्य आप ही होवें वैसे हम लोग भी कह सकते हैं कि परमेश्वर के तुल्य परमेश्वर ही है और कोई नहीं वर्त्तमान प्रमाणों से ईश्वर की सिद्धि हो गई और शब्द, प्रमाण भी अवश्य होगा सो शब्द प्रमाण इसप्रकार जानना ॥ दिव्यो ह्यमूर्त्तः पुरुषः स बाह्याभ्यन्तरो ह्यजः । अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रो ह्यक्षरात्परतः परः ॥ २ ॥ दिव्य नाम सब जगत् का प्रकाशक अमूर्त्त निराकार और सदा अशरीर पुरुष नाम सब जगत में पूर्ण होई भीतर और बाहर एकरस अज कभी जिसका जन्म न होता अप्राण जिसको श्वास की चेष्टा नहीं करता अमना जिसका शरीर और इन्द्रिय भी आदिक कोई नहीं है वह अक्षर जो जीव उससे भी परे सूक्ष्म वसे सो परमेश्वर उत्कृष्ट पर है ॥१॥ न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः । तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥ ३ ॥ भा० इस परमेश्वर में सूर्य चन्द्र तारे, बिजली और अग्नि कुछ भी प्रकाश नहीं कर सकते किन्तु सूर्यादिकों को परमेश्वर ही प्रकाशते हैं सब जितना जगत् है इसके प्रकाश से प्रकाशित होता है परमेश्वर का प्रकाशक कोई नहीं ॥ ३ ॥ अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः । स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ ४ ॥ भा० । परमेश्वर निराकार है परन्तु उसमें शक्तियां सब हैं हाथ परमेश्वर को नहीं है परन्तु हाथ की शक्ति ऐसी है कि सब चराचर को पकड़ के धारण करता है तथा पाद नहीं है परन्तु सब से वेगवाला है नेत्र नहीं है परन्तु चराचर को यथावत् सब आप देखता है कान नहीं है पर-

मनुष्य शास्त्रकी बात सुनता है मन, बुद्धि, चित्त और अहङ्कार तो नहीं हैं परन्तु मनन निश्चय और स्मरण अपने स्वरूप का आप ही जानने वाला है और यह सबको जानता है परन्तु इसको कोई नहीं जान सकता कि इतना बड़ा है इस प्रकार का है इतना सामर्थ्य उसमें है ऐसा कोई नहीं जान सकता उस परमेश्वर को ज्ञानी और शास्त्र सर्वोत्कृष्ट पूर्ण और सनातन कहते हैं ॥ ४ ॥ अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथारसं नित्यमगन्धवच्च यत् । अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं निचाय्य तं मृत्युमुखात्प्रमुच्यते ॥ ५ ॥ मन्त्र० वह परमेश्वर अशब्द अर्थात् कहने और सुनने मात्र से नहीं जाना जाता किन्तु उसके आज्ञापालन विज्ञान भक्ति और योगाभ्यास से स्पर्श रूप रस और गन्ध परमेश्वर नहीं इससे परमेश्वर का ज्ञान सहस्रों पुरुषों में किसी को होता है सबको नहीं वह कैसा है अनादि और अनन्त जिसका आदि कारण अथवा अन्त कोई नहीं देख सकता क्योंकि उसका कारण तो अन्त नहीं है तो कैसे कोई देख सके परमेश्वर बुद्धि से भी सूक्ष्म और परे है जो कोई परमेश्वर को जानता है सो जन्म मरणादिक सब दुःखों से छूट के परमेश्वर को प्राप्त होता है फिर कभी उसको दुःख क्लेश जन्म मरण नहीं होता ॥ ५ ॥ समाधिनिर्धूतमलस्य चेतसो निवेशितस्यात्मनि यत्सुखं भवेत् । न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा स्वयं तदन्तःकरणेन गृह्यते ॥ ६ ॥ म० जिस पुरुष का धर्माचरण विद्या और सत्य योग से चित्त शुद्ध होजाता है उसका चित्त परमेश्वर के ध्यान में और स्वात्मस्वरूप में होता है जब समाधि योग में चित्त और परमेश्वर का योग होता है उस समय ऐसा आनन्द उस जीव को होता है कि कहने में भी नहीं आता क्योंकि वह जीव अपने अन्तःकरण अर्थात् बुद्धि ही से ग्रहण करता है वहां दूसरा कोई नहीं है कि जिससे कहै कि फिर जो अनुभव आनन्द कहने में भी नहीं आता क्योंकि वह परमेश्वर उसका आनन्द और उसको जानने वाला जीव दोनों अनुभव पदार्थ हैं इससे वह उस आनन्द कहने में नहीं आता ॥ ६ ॥ यां-

अर्थोऽस्य पदस्याक्रुद्धजीवस्य लब्धा । अथ गोरक्षा [illegible]

॥ ७ ॥ भा० परमेश्वर का वक्ता और ज्ञाता सिद्धि से वा लब्धा दोनों आश्चर्य पुरुष हैं क्योंकि आश्चर्य जो परमेश्वर उसको जानने वाला भी आश्चर्य ही होता है जिसको ज्ञानी विद्वान् पुरुषों का उपदेश हुआ होवे और अपने भी सत्य कर्मों से विद्यावान् शुद्ध और योगी परमेश्वर को जान सकता है सो भी आश्चर्य है अन्य कोई नहीं ॥ ७ ॥ सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत् ॥ ८ ॥ जिस पद अर्थात् परमेश्वर सब वेद अभ्यास से पुनः पुनः उसी ही का कथन करते हैं अर्थात् परमेश्वर ही को कहते हैं और उसके वास्ते ही है जितनी तपस्या इच्छा से मनुष्य लोग ब्रह्मचर्य सेवन करते हैं विद्या पढ़ते हैं जिससे परमेश्वर को जानें उसकी प्राप्ति के बिना धर्म अर्थ काम और मोक्ष की सिद्धि नहीं होती यही [illegible] संक्षेप से कहते हैं कि [illegible] जो ओंकार का अर्थ है सो ईश्वर है ॥ ८ ॥ एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा । कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ॥ ९ ॥ भाष्य एक जो अद्वितीय परमेश्वर है कोई सब भूतों में गूढ़ है [illegible] अज्ञानी लोग उसको नहीं जानते सब भूतों का अन्तरात्मा [illegible] कर्मों का साक्षी है अन्तर्यामी [illegible] और सब भूतों में निवास [illegible] शुभ अशुभ कर्मों का [illegible] [illegible] चेतन स्वरूप और केवल अर्थात् उसमें कुछ भी नहीं मिलता है एकरस चेतन स्वरूप ही है जैसा दूध में जल मिला रहता है वैसा नहीं जितने प्रकृति के जन्म, मरण, हर्ष, शोक, क्षुधा, तृषा, तमोगुण और रजोगुण सत्त्वगुणादिक गुण हैं उनसे सदा भिन्न जो है सो परमेश्वर निर्गुण है और सच्चिदानन्द सर्वशक्तिमत्त्वादि स्वाभाविक गुणों से सदा सगुण है ॥ ९ ॥ न तस्य कार्यं करणं च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते । परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च ॥ १० ॥ भाष्य० परमे-

इसका कुछ रूप है इसको कर्तव्य कुछ नहीं किन्तु जो करने के लिये साधनों की अपेक्षा होती ऐसा नहीं कहना जैसा कि चक्षु के बिना रूप नहीं देखसकता ऐसा भी परमेश्वर में नहीं किन्तु विविध शक्ति स्वाभाविक अनन्त सामर्थ्य परमेश्वर का सुना जाता है कि अनन्त ज्ञान, अनन्त बल और अनन्त क्रिया परमेश्वर में स्वाभाविक ही हैं इस में कुछ सन्देह नहीं क्योंकि परमेश्वर के तुल्य वा अधिक कोई नहीं ॥ १० ॥ एष सर्वेषु भूतेषु गूढोत्मा न प्रकाशते । दृश्यते त्वग्र्यया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः ॥ ११ ॥ यह अन्तर्यामी परमेश्वर सब भूतों में छिपा व्यापक और गुप्त है इससे मूढ़ों अविद्वानों और योगाभ्यास हीन जनों की बुद्धि में नहीं प्रकाशित है जिनको सूक्ष्मदर्शी अर्थात् विद्वान् लोग जो शुद्ध और सूक्ष्म जो बुद्धि, विद्या, विज्ञान, योगाभ्यास से होता है उस से परमेश्वर को देखा जानते हैं अन्यथा नहीं ॥ ११ ॥ तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके । तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥ १२ ॥ सब सोई परमेश्वर आकाशादिकों को चेष्टा करता है और आप अचल ही है वह अज्ञानी और मूढ़ पुरुषों से अत्यन्त दूर है और धर्मात्मा विद्वान् वाले पुरुषों के अत्यन्त निकट अर्थात् उनका अन्तर्यामी ही है सोई इस सब जगत् के बाहर भीतर और मध्य में पूर्ण है ॥ १२ ॥ अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत् । तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥ १३ ॥ सब कम्पना से रहित एक है परन्तु मन से भी वेगवाला है इसको देव अर्थात् चक्षुरादिक इन्द्रियां प्राप्त नहीं होतीं क्योंकि इन्द्रिय और मन का वही आत्मा है सो आत्मा का आत्मा और शरीर सो कभी नहीं देख सकता वह आत्मा सो सब का देखने हारा ही है और मन वेग से जहां २ जाता है वहां २ पहिले ही से परमेश्वर को प्राप्त होता है सो परमेश्वर स्थिर है सब दौड़ते हुए उनको उल्लङ्घन करता है अर्थात् परमेश्वर के जो गुण हैं उनके तुल्य वा अधिक किसी का गुण सामर्थ्य नहीं सो परमेश्वर स्थिर व्यापक और चेतन उसके [illegible] मातरिश्वा अर्थात् वायु जो

आकाश इसमेंचलनेऔररहनेवाला जो गमनागमनादिकसर्वक-र्मोंकाकर्ताहैअन्यथानहीं ॥१३॥ यस्मिन्सर्वाणिभूतान्यात्मैवाभूद्वि-जानतः। तत्रकोमोहःकःशोकएकत्वमनुपश्यतः॥१४॥ यस्मिन्निसप-रमेश्वरके ज्ञानसेसबभूतप्राणिमात्रआत्माकेतुल्यहोजाते हैं किकि-सीभूतसेनरागऔरनद्वेष उसकोकभीरागऔर नहींहोनेक्योंकिएक मुक्तजोअद्वितीयउसपरमेश्वरमेंस्थिर ज्ञानवालाजोपुरुष उसको कि-सीमेंमोहवा किसीसे क्या शोक अर्थात् उसकोकभीमोहनाशोकहोता हीनहीं ॥१४॥ वेदाहमेतंपुरुषंमहान्तमादित्यवर्णंतमसः परस्ता-त्। तमेवविदित्वातिमृत्युमेतिनान्यः पन्थाविद्यतेऽयनाय॥१५॥ मन्त्र कोमैंजानताहूं पूर्णपुरुषसबसेबड़ा प्रकाशस्व-रूप औरसबकाप्रकाश जन्ममरणदुःखदुःख और अविद्या जोतम उससेभिन्नउसपरमेश्वर कोजानताहूं सबदुःखोंसे छूटके परमानन्द उसको जाननेसे यथावत् प्राप्तहोताहूं उसी को जान के अतिमृत्यु जो परमेश्वर किजिसमें जन्ममरणादिक दुःखोंकालेशमात्रभी नहीं उसीमोक्षपदकोप्राप्तहोता है और कोई दूसरे भिन्नमोक्षमार्ग नहीं ॥१५॥ सपर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरंशुद्धमपापवि-द्धम्। कविर्मनीषीपरिभूःस्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वती-भ्यःसमाभ्यः॥१६॥ मन्त्र सोपरमेश्वरसबपदार्थों मेंव्याप्तअ-द्वितीय पूर्णहै सब जगत्कर्ताशुक्ररूप औरअकायअर्थात्स्थूल और सूक्ष्म इनतीन शरीररहित शुद्ध निर्मलसर्वज्ञसर्व दोषरहित जिस को पापका लेशमात्रभीसम्बन्धनहीं सर्वज्ञ सर्वनियन्ता सबका स्वामी अविकारऔर ज्ञान सबके ऊपरविराजमान स्वयंभूनाजि-सकीकभीउत्पत्ति होय आपसेआपहीसदा सनातनहोवें जिसनेवे-दरूपउपदेश विद्याका विषय गर्भादिक शाश्वतनामनित्यकर प्रजा ओंकोअर्थोंका अर्थात् वेदोंका यथावत्उपदेशकिया है उसपरमे-श्वरकीस्तुतिप्रार्थना और उपासनाकरनीचाहिये इसमासंयोग संहि-ता और ब्राह्मणोंके मन्त्रोंसेशब्दप्रमाणलिखदियासे।जानलेना।

जैसे परमेश्वर रागी है वा विरक्त वा उदासीन जो रागी होगा तो दुःखी वा असमर्थ होगा सदा जो विरक्त होगा तो कुछ भी न करेगा और संसार का धारण भी न होगा और जो उदासीन होगा तो अपने स्वरूपस्थ साक्षीवत् रहेगा अर्थात् चाहे जो ईश्वर होगा सो कभी रचना करेगा नहीं मुक्त होगा तो जगत् को ही रचेगा नहीं इससे ईश्वर की सिद्धि नहीं होती उत्तर परमेश्वर रागी नहीं क्योंकि आपने से उत्तम कोई पदार्थ नहीं है कि जिसमें राग करे आपके स्वरूप में अपना राग कभी नहीं बनता सर्वव्यापी के होने से अप्राप्त पदार्थ ईश्वर को कोई नहीं तथा सर्वशक्तिमान् के होने से भी राग ईश्वर में नहीं बन सकता विरक्त भी ईश्वर नहीं क्योंकि पहिले जो बद्ध होता है सोई बन्धन के छूटने से विरक्त कहाता है सो ईश्वर को बन्धन तीनों काल में भी नहीं भया फिर उसको विरक्त कैसे कह सकें उदासीन भी वह होता है कि पहिले बन्धन में होय पीछे शान्त होने से उदासीन हो जाय ऐसा ईश्वर नहीं ईश्वर की अचिन्त्य शक्ति है कि सब ओर है और किसी काल में भी क्लेशमात्र संग होने न लगे इससे ऐसी शंका भी आपकी नहीं बन सकती है ईश्वर में नहीं पूर्वोक्त निश्चय पदार्थ हैं वे सब सन्देहयुक्त होते हैं निश्चय यथावत् एक का भी नहीं होता उत्तर आपने यह बात कही सो निश्चित है वा नहीं जो कहो कि निश्चित है तो सब पदार्थ सन्देहयुक्त नहीं भये आपकी बात निश्चित होने से और जो आप कहें कि यह भी बात भी निश्चित नहीं तो आपकी बात का प्रमाण ही नहीं हुआ क्योंकि लक्षणप्रमाणाभ्यां पदार्थसिद्धिः । लक्षण और प्रमाणों के बिना किसी पदार्थ की निश्चित सिद्धि नहीं होती आपने जो सब पदार्थों में सन्देह सिद्ध रहा सो किस प्रमाण से उसकी सिद्धि होती है किसी प्रमाण से सन्देह को आप ने सिद्ध किया होगे तो उस प्रमाण में भी आपका निश्चय नहीं होगा क्योंकि आपने सब पदार्थों को सन्देहयुक्त कहा है इससे आपका सन्देह ही सन्देहयुक्त होने पर फिर आपकी जीविका व्यवहार भी न होसकेगा जैसे कि शयन भोजन, आसन, ईश्वरभजन आदिक भी सन्देहयुक्त होने से वह-

निर्णय इसमें होना चाहिये यहां तक जो आपका जो है इसमें आपने जो कहा कि सब व्यवहार और सब पदार्थ सन्देहयुक्त ही हैं यह बात आप ही मिथ्या होगई इससे प्रत्यक्षादिक प्रमाण और प्रमाणों से जो निश्चित पदार्थ होता है उसको निश्चित ही मानना चाहिये इसमें सन्देह करना व्यर्थ ही है सो प्रत्यक्षादिक प्रमाणों से ईश्वर की यथावत् सिद्धि होती ही है उसको मानना ही चाहिये प्रश्न पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, इन चारों के मिलने से चेतनता उसमें होती है जब वे पृथक् २ होजाते हैं तब चेतनता बिगड़ जाती है फिर उसमें कुछ नहीं रहता इससे जगत् का रचने वाला कोई नहीं आपसे आपही जगत् और जीव होता है उत्तर आपभी इन चारों के मिलने से जीव और जीव के भिन्न गुण उनको दिखलाइये सो कभी नहीं देख पड़ेंगे क्योंकि पहिले ही से सब स्थूल भूतों के सब परमाणु मिले रहते हैं फिर उनमें ज्ञानादिक गुण क्यों नहीं देख पड़ते इससे जीव पदार्थ इन भूतों से भिन्न ही है जिसके ये गुण हैं इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिङ्गम् । यह गौतम मुनि का सूत्र है इसका यह अभिप्राय है कि इच्छा जिससे पदार्थ का चाहना जिस से गुणों को मानना है उनकी प्राप्ति की चाहना करता है जिस में दोषों को जानना है उन से द्वेष अर्थात् चाहना नहीं करता प्रयत्न नाना प्रकार की क्रिया विद्या से पदार्थों का ग्रहण शरीर तथा भार का उठाना इसका नाम प्रयत्न है सुख नाम अनुकूलता का चाहना और आनन्द दुःख प्रतिकूलता का जानना और छोड़ने की इच्छा करना ज्ञान सब जो पदार्थ हैं उनको जन पर्यन्त यथावत् विवेक करना इसका नाम ज्ञान है ये गुण पृथिव्यादिक जड़ों के नहीं किन्तु जीव ही के हैं लिंग नाम चिह्न जिससे जीव निश्चय करता है बुद्धिरुपलब्धिर्ज्ञानमित्यनर्थान्तरम् । यह गौतम मुनि का सूत्र है बुद्धि उपलब्धि और ज्ञान ये तीनों नाम एक ही पदार्थ के हैं मन जिससे एक पदार्थ को विचार के दूसरे का विचार करता है ॥ युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिङ्गम् । यह गौत० जिससे एक पदार्थ ही एक काल में ग्रहण करता है एक को ग्रहण करके

दूसरे का दूसरेको अनिश्चय करताहै एककाअनेकोंकोनहीं इ-
सकालापर्यन्तचित्त जिससे किसीवस्तुकास्मरण करताहै जोकि
पहिले देखाऔरसुनाथा इसकानामचित्तहै अहङ्कार जिससे अ-
भिमान जीवकरता है ये चार मिलाके अन्तःकरण कहाताहैइनसेजी-
व भीतरमनोराज्यकरताहै येचारोंएकहीहैं परन्तु व्यापारभेद से
चार भिन्न२ नामहैं बाह्यकरणजिससेकि बाहर जीवव्यापारकरता
श्रोत्रजिससे शब्दसुनाता है त्वचा जिससेस्पर्शजानताहै नेत्रजिससेरूप
को जानताहै जिह्वाजिससे रसको जानताहै नासिका जिससेगन्धको
जानताहै ये पांचज्ञानइन्द्रियांहैं इनसे जीवबाह्यपदार्थों को जान-
ताहै वाक्जिससे शब्दबोलताहै पादजिससे गमनकरताहै हस्तजि-
ससे ग्रहणकरता है वायुजिससे मलकात्यागकरताहै लिंगजिससेसुख
और विषयभोगकरताहै ये पांचकर्मेन्द्रियहैं इनसे जीवबाह्यकर्म क-
रताहै प्राणजिससे ऊर्द्ध्व चेष्टाकरताहै अपानजिससे अधोचेष्टाकर-
ताहैव्यान जिससे सबसन्धियोंमें चेष्टाकरताहैउदान जिससे कण्ठऔ-
र कण्ठको कण्ठसेभीतरआकर्षणकरलेताहै समानजिससे नाभिद्वा-
रसबनाड़ियोंको रसपहुंचाके शरीरमेंभाग करदेताहै ये पांचप्राणवायु कहाते
हैं नागजिससे डकारलेताहै कूर्मजिससे नेत्रको खोलता औरमूंदता
है कृकल जिससे छींकताहै देवदत्तजिससे जम्भाईलेताहै धनञ्जय
जिससे शरीर की पुष्टिकरताहै और मरेपीछे शरीरको नहींछोड़ता
जो फिरशरीरको फुलाताहै येपांचउपप्राणहैं ये दशप्रकारकेहैं परन्तु
क्रियाभेदसे दशनामभयेहैं ये २४ तत्त्वमिलकेलिंगशरीरकहाता है
कोई उपप्राण को नहीं मानता उनकेमतमें १९ होतेहैं और कोई
पांच सूक्ष्म भूतकोकि परमाणुरूपहैं और पूर्वोक्तचारभेदअन्तःकर
णकेइनतत्त्वोंको लिंगशरीरकहताहै इस लिंगशरीरमें जोअ-
भिमानकर्त्ताऔरभोक्ता उसकोजीव कहते हैं जोकिएककालमें सब
क्षुधादिकोंके कियेकर्मोंका अनुभवकरताहै चेतनस्वरूप है उसका
नामभीवहै उसको अविद्याख्यायुक्तिके प्रकरणमेंलिखेजायगे सो

जीव भिन्नपदार्थही है चारोंकेमिलानेसे जीवकेगुण और जीवभी नहीं उत्पन्नहोता इसमें यहबातकहीथी कि चारोंके मिलने से जीव भीहोताहै यहबातखण्डितहोगई प्रश्न ईश्वर, सर्वज्ञऔर त्रिकाल दर्शी है जैसा ईश्वरने अपनेज्ञानमेंनिश्चयकियाहै वैसाहीजीवपाप वापुण्यकरेगा फिरजीवको दण्डक्योंहोताहै क्योंकि उससे अन्यथा जीवकुछनहीं करसका जोअन्यथाजीवकरेगा तो ईश्वरकासर्वज्ञा- नतष्टहोजायगा इससे जैसाईश्वरनेपहिलेहीनिश्चयकर रक्खाहै वै- साजीवकरताहै ईश्वरज्ञानवानभीहै फिरआपसे उस कोनिवृत्त क्यों नहींकरदेता जोनिवृत्त नहीं करदेता तो दण्ड क्योंदेता है उत्तर ईश्वर है अत्यन्तदयालु जबजीवोंको ईश्वरनेस्वतन्त्रविचारकरके सबकोस्वतन्त्रहीरक्खाहै क्योंकिपरतन्त्रहोरहनेसेकिसी कोकभीसु खनहींहोता जैसेकिकोई अपनी इच्छासे परतन्त्रकएकस्थानमें रह- ताहै तो भी इसमें उसको कुछदुःखनहीं मालूमहोता उसको जो कोईएकघड़ीभरभीपराधीनकरकेवाबरक्खे तो बड़ा उसकोदुःखहोता है इससेपरमेश्वरने सबजीवस्वतन्त्ररक्खेहैं जीवचाहताहैस्वतन्त्रकभी रहासका परन्तुपरमेश्वरबड़ा दयालु और कृपासागर है इससेसब स्वतन्त्ररक्खे हैं परन्तुआज्ञा ईश्वरकी है किजो जैसाकर्म करैगा वह वैसाफलभोगेगा सो आज्ञा उसकीसत्य होहै इससेजीवपापादि कर्मोंके करने और पुण्योंके फलभोगनेमें जीवस्वतन्त्रहै औरपापों के फलभोगनेमें पराधीनहै जीवकर्मोंकेकरनेवाले और भोगनेवाले हैं जैसाजीवकर्मकरेगा वैसाहीईश्वरने ज्ञानसे निश्चय पहिले ही कियाहै और भोक्तायही है त्रिकालज्ञानमेंईश्वरकेस्वतन्त्र औरअपने कर्मोंकेकरनेमेंतथाभोगनेमेंजीवस्वतन्त्रहैं प्रश्न जीवका निजस्वरू- पक्या ॥ उत्तरः विशिष्टरूपजीवरूपमन्यथान्यथामिटे ज्ञानधार् । पृथक्सिद्ध ध्रुनिजीकायनहीं इसकायहअभिप्रायहै किजैसाअग्न।गिदृहीसेन- नतहै परन्तु शुद्धकेहोनेसे जो अग्निकेसाथरहनेपदार्थहोगा सोउसमें यथावत् देखपड़ेगा जैसालोहेकोअग्निमें रखने से अग्निकेगुणसा-

ता होताहै उनदोनोंमें प्रतिबिम्ब वा अग्निभिन्नहै क्योंकि उनसे पृथक् भीवे देख पड़ते हैं और होभी जाते हैं इससे दर्पण और लोहेसे अतिरिक्तहैं अर्थात् दूरहैं और जोकेवलजुदेहोतेतो उनके गुणदर्पण और लोहेमें नहोते इससे उनमें अन्वयभी उनका देख पड़ताहै वैसेहीलिंगशरीरजो है उसकाअधिष्ठाताहै सोई जीव है दर्पणकेतुल्य अन्तःकरणशुद्धहै स्थूलदेहबाहरकाहै और जिसमें गाढनिद्राहोती है सत्वरजो और तमोगुणमिलकेप्रकृतिकहाती है जिसकानाम अव्यक्तपरमसूक्ष्मभूत औरप्रधानभीहै वह कारण शरीरकहलाताहै सोसबप्राणियोंका व्यापकहोनेसेएकहीहै दोनों केबीचमें मध्यस्थलिंगशरीर है चेतनएकजीव औरदूसरापरमेश्वर हीहै तीसराकोई नहींसोपरमेश्वरहै विभुव्यापकसर्वत्र एकरसजहांर लिंगशरीर विशिष्टजीव रहताहै वहां२ परमेश्वरही पूर्ण है सोलिंगशरीरमेंउसकासामान्यप्रकाशहै और विशेषप्रकाशचेतन हीकाजीवहै जैसेदर्पणमेंसूर्यकाविशेषप्रकाशहोताहै सो परमेश्वर कासदासंयोगरहताहै वियोगकभीनहीं इससेपरमेश्वरके अन्वय होनेसेवहचेतननहींहै वह जीव कहलाताहै औरलिंगदेहसे परमेश्वर भिन्नहोनेसेपृथक्भीहै क्योंकिलिंगशरीरसे युक्त जीवस्वर्गनर्कजन्म औरमरणइत्यादिकोंमें भ्रमणकरताहै परन्तु परमेश्वर निश्चलहै उसकेसाथभ्रमणनहींकरतेहैं और उसकेगुणदोषोंके भोग प्रासंगीकभीनहींहोतेहैं कारणशरीरके अज्ञानलोभ औरक्रोधादिक गुणजीवमेंआतेहैं और स्थूलशरीरकेशीतोष्णक्षुधा तृषादिक गुणभीजीवमेंआते हैं क्योंकिदोनोंशरीरके मध्यस्थवर्तीभीवहैइससे दोनों शरीरोंके गुणकाभीसंगजीवकरताहै इसकास्पष्टअन्यव्याख्यानमुक्तिऔरबन्धकेविषयमेंकियाजायगा प्रश्न ईश्वरव्यापकनहींहो सक्ता क्योंकि जितने परमाणवादिकपदार्थहैं वेसहीरहतेहैं उतने अवकाशको ग्रहणभीकरतेहैं फिरउसी अवकाशमें दूसरे परमाणुवाईश्वरकोस्थिति कभीनहींहोसक्ती औरउसके बीचमें अन्य

पदार्थभीरहै सोवहपरमाणुहीनहींक्योंकि बहुतपदार्थोंके संयोग केविनासंभिन्नपदार्थविभागपेनहीं होसकता सबवियोगकी अन्त्यावस्था जोहै उसकोपरमाणुकहतेहैं किसकाविभाग होसकै उ– त्तर ईश्वरव्यापकहैक्योंकि परमाणुसेभी सूक्ष्महै जैसेपरमाणुकेआ- गेसंयोगवावियोग बुद्धिसेहमलोगजानतेऔरकहतेहैं वैसेही पर– माणुकाविभाग भीबुद्धिसेकरसक्तेहैं और ईश्वर कीविभुताभीज्ञान सेजानसक्तेहैं क्योंकि परमेश्वर विभुनहोवेतोपरमाणुकारचनासं– योगवियोग औरधारणभीनकरसकते फिरपरमाणुका धारणभी कैसे होता जैसे पुष्पमेंगन्ध दुग्धमेंघृतमेंरसादि औरगन्धऔरउन सबपदार्थोंमें आकाशजैसा पोलसे सबव्यापकहै इनसब पदार्थों में वैसेपरमेश्वरभी परमाणुऔरप्रकृत्यादितत्त्वोंमें व्यापकहोरहेहैं प्रश्न अच्छा ईश्वरसिद्ध और व्यापकभीहो परन्तुउसकी उपासनाप्रा- र्थना औरस्तुतिकरनीआवश्यकनहीं क्योंकिकोईकदापिईश्वरके सम्बन्धकाभेदसत्यनहींदेखपड़ता इससे ईश्वर अपनी ईश्वरतामें रहे औरहमजीवलोगअपनी जीवतामें रहैं उत्तर ईश्वर की उपासना प्रार्थनाऔरस्तुति अवश्यसब जीवोंको करनी चाहिये जैसेकिकोई किसीकाउपकारकरै उसकाप्रत्युपकार उसको अवश्यकरना चा– हिये जोप्रत्युपकारनहींकरता सोअवश्यकृतघ्नहोताहै क्योंकि उ– सनेउसकेसाथभलाईकिया और उसनेउसके साथबुराईकी जैसा उसने सुखदियाथा फिर उसनेउसको सुखकुछनहींदिया औरउसने विरोधहीकरलिया इससे वहपुरुष कृतघ्नहोताहै जैसेमाता पिता औरकोई स्वामी जिसकापालनकरतेहैं वेकेवल अपने उपकारके हेतुकरतेहैं किसहमीमेरापालनसमर्थ होकेकरेगा जबवहपुत्रवाभृत्य यथावत् पालननहीं करता संसारमेंसज्जनलोगउसकोकृतघ्नकहते हैं जोमाताऔरपिताअथवास्वामी उनकापालनकरते हैं जिन प– दार्थोंमेंसेपुत्रजलपृथिवी औरअन्नादिकसबपरमेश्वरकेरचे हैं जो जिसकोरचताहै वही उसकामातापिता और मुख्यस्वामी होता है

उनपदार्थों से अपने वा पुत्रादिकों का पालन करते हैं जैसे किसी ने अपने भृत्य से कहा कि तू इसकी सेवा करना और इस पदार्थ को लेके उस को देना जब वह सेवा वा पदार्थ को पहुंचावे तब पदार्थदाता स्वामी के ऊपर वह प्रीति करै वा भृत्य के किन्तु पदार्थदाता स्वामी ही से प्रीति करे गो भृत्य से नहीं कि जिस प्रकार पदार्थ होवे वैसी प्रीति करनी चाहिये जैसे युद्ध में जय वा पराजय राज्य की प्राप्ति अथवा हानि राजा की होती है भृत्यों की नहीं वैसे ही परमेश्वर का जगत् है जगत् में जितने पदार्थ हैं उन का स्वामी परमेश्वर ही है इससे परमेश्वर की अत्यन्त प्रीति से स्तुति प्रार्थना और उपासना अवश्य करनी ही चाहिये अन्य किसी की नहीं सेवा जो माता पिता और विद्या का देनेवाला श्रेष्ठ और सुपात्र की भी करनी चाहिये और जो ईश्वर की उपासना न करेगा वह कृतघ्न हो जायगा क्योंकि ईश्वर ने हम लोगों पर अनेक उपकार किए हैं जितने जगत् में पदार्थ रचे हैं वे सब जीवों के सुख के हेतु रचे हैं और जीवों को स्वतन्त्र कर्म करने में रख दिये हैं इसमें यह यजुर्वेद का प्रमाण है ॥ कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः । एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥ इसका यह अभिप्राय है कि जीव स्वतन्त्र आपही आप कर्म करता है सो इस संसार में आपही आप कर्म कर्त्ता हुआ ॥ १०० सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करै परन्तु अधर्म कभी न करै सदा धर्म ही करै जो जीव कहेगा कि मरना मुझको अवश्य है इस से पाप को न करना चाहिये जैसे जो जीव निश्चय से कर्म करेगा सो पापों में लिप्त अधीन होगा ॥ यन्मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति यद्वाचा वदति तत्कर्मणा करोति । यत्कर्मणा करोति तदभिसंपद्यते ॥ इस श्रुति का अर्थ पहिले कर दिया है परन्तु इसका यही अभिप्राय है कि जो जैसा कर्म करै वह वैसा ही फल पावै ऐसी ईश्वर की आज्ञा है ॥ यथा तु छेत्रा- [illegible] । [illegible] तथा कर्माणि [illegible] ॥ यह [illegible] श्लोक है इसका यह अभिप्राय है [illegible]

जीव अपने २ क्रियाओं को शास्त्रोक्त हैं ? । जो पुरुष ईश्वर की उपासना करेगा वह महाकृतार्थ होगा इसमें कुछ सन्देह नहीं प्रश्न जीव जब विद्यादिक शुद्ध गुण और योगाभ्यास से अणिमादिक सिद्धि-वाला होता है उसी को ईश्वर मानना चाहिए उससे भिन्न स्वतन्त्र ईश्वर मानने का कुछ प्रयोजन नहीं वही सिद्ध जगत् की उत्पत्ति स्थिति धारण और प्रलय करेगा इससे अनादि ईश्वर कोई नहीं किन्तु सा-धनों से ईश्वर बहुत हो जाते हैं उत्तर इनसे पूछना चाहिए कि जब जीव जीव का शरीर इन्द्रियां और पृथिव्यादिक तत्त्वों को कोई बना तब तो विद्यादिक गुण और योगाभ्यास से कोई जीव सिद्ध होगा जो वे ऐसा कहैं कि जन्म ही से कोई सिद्ध हो जायगा तो उनके कहीं साधनों से सिद्ध होती है यह बात मिथ्या हो जायगी और विना साधनों के सिद्ध होवै तो सब जीव सिद्ध क्यों नहीं होते इससे यह बात उनकी मिथ्या होगी सदा सनातन सिद्ध सर्वैश्वर्य वाला साधनों से विना स्वतः प्रकाशस्वरूप ईश्वर है इसमें कुछ सन्देह नहीं प्रश्न जीव कर्म करते हैं और ईश्वर कराता है क्योंकि ईश्वर की सत्ता के विना एक पग भी नहीं चल सकता इससे ईश्वर के सहाय से जीव कर्मों को करता है आपसे आप कुछ करने को समर्थ नहीं उत्तर जीव अपनी आप स्वतन्त्र कर्मों को करता है ईश्वर कुछ नहीं कराता क्योंकि जो ईश्वर कराते तो जीव कभी पाप नहीं करता सो जीव पुण्य और पाप करता है इससे ईश्वर नहीं कराता और जो ईश्वर कराता तो जीव से ईश्वर को अधिक पाप होता जैसे एक मनुष्य चोरी करता है और दूसरा कराता है इसमें करने वाले से कराने वाले को पाप अधिक होता है क्योंकि वह न रखा-उसको नहीं करता तो वह चोरी कभी न करता सो एक मैं रक्षा करने-वाला अनेक मनुष्यों को चोरी करा देता है इससे उसको अधिक पाप होता है इसवास्ते ईश्वर कभी नहीं कराता और जो ईश्वर कराता तो जीव काठ की पुतली की नाईं होता जैसे उसको नचावै वैसा नाचै फिर जीव नहीं परतन्त्रता में जो दोष पाप का होई आजाता इससे ईश्वर स्वत-

यज्ञका करने वाला होताहै परन्तु जीवोंके कर्मोंकोकरानेवाकराने-
वालानहीं प्रश्न जो ईश्वर जीवोंकोनरचतातो जीव क्योंपाप करते
औरदुःखभी क्योंभोगते जैसे किसीनेकूआखोदा उसमेंकोईमनुष्य
भी गिरपड़ता है जोवह कूआ नखोदता तो कोई न गिरता वैसे
ईश्वर जीवोंको नरचतातोजीवक्यों पापकरते उत्तर ऐसानकहना
चाहिए क्योंकि जोकोई राजाभृत्योंकोरखताहै और पुत्रोंकोमनुष्य
उत्पादन करताहै वा गुरु शिष्योंको शिक्षाकरताहैसोसबइसीवास्ते
करतेहैं किसबधर्मकीरक्षाऔरआचरणकरें पापकरने का अभि-
प्रायइनकानहीं और जैसेराजाकवाभृत्यकेहाथमें लकड़ी शिक्षा वा
शस्त्रदेते हैं सोअपनेशरीरकीऔरसबकीकीआज्ञा तथा धर्म की र-
क्षाकेवास्ते देते हैं ऐसाअभिप्राय उनकानहींहैकि उनकेआप अ-
पनेहीको मारके मरजाय वैसेही परमेश्वरने जीव रचेहैं लोकेपक्ष
धर्माचरण औरमुक्तिआदिकसुखकेवास्ते रचेहैं औरजोभीवपापक-
रता है सो अपनी मूर्खता हीसेकरताहैवैसाहीदुःखभोगताहै इत्या-
दिकजीवोंकेवास्ते इन्द्रियरचीहैं सोकेवल जीवोंके व्यवहार सिद्धहो-
वें और उनसे सबसुखकार्योंकोकरें इनमेंसेकोई अपने हाथ से अ-
पनी आंखनिकाललेताहै वाअपनागलाकाटदेताहै सो केवल अ-
पनी मूढ़तासे करता है मातापितादिकों का वैसाअभिप्रायनहीं इ-
ससे यह प्रश्नअच्छानहीं प्रश्नईश्वरसर्वशक्तिमान्हैवानहीं उत्तर सर्व-
शक्तिमान्है प्रश्न जो सर्वशक्तिमान्होयतोअपनानाशभीईश्वर कर
सकताहै वानहीं उत्तर ईश्वर अविनाशीपदार्थहै अत्यन्तसूक्ष्म नि-
राकार किसी प्रकारवाशस्त्रसेनाशनहींहोसकता क्योंकिजिसपदार्थ का
रूपऔरस्पर्शहोवै उसीका अग्नि, जल, वायु अथवाशस्त्रोंसेनाश
होसकताहै अन्यथानहीं नाश शब्दकायहअर्थहै किअदर्शन अथवा
कारणमें मिलजाना सो परमेश्वरकोईइन्द्रियसेदृश्य नहीं कि फिर
अदर्शन उसको होय और इसकाकोईकारणभीनहीं जिसमें ईश्वर
मिलजाय इससे ईश्वरकेनाशकीशंकाकरनीभीअनुचित है और ई-

ईश्वरसर्वशक्तिमान्हैपरन्तु उसकीशक्तिन्याययुक्तहीहै अन्याययुक्त
नहीं इससेईश्वरसदान्यायहीकरताहै किजोनित्यपदार्थ को अ-
विनाशीजानताहै औरउनकेनाशकी इच्छानहीं करता और जो-
विनाशवालापदार्थ है उसका नाशनहोवे ऐसेभी इच्छानहीं करता
क्योंकिईश्वरकाज्ञाननिर्भ्रमहै औ जैसापदार्थहैउसको वैसा जान-
ता और वैसाहीकरताहै प्रश्न कोईश्वरदयालुहै तोन्यायकारी न-
हीं औरजोन्यायकारी है तो दयालुनहीं क्योंकिन्यायउसका नाम
हैकि धर्मकरना और पक्षपातकाछोड़ना इससे क्याआयाकि दण्ड
देनेकेयोग्य को दण्डदेना और अदण्डको कभीदण्डनदेना सोजो
दयालु होगा सोतो कभी दण्डनदेसकेगा क्योंकिदयानामहै करु-
णाकाकरुणाका सोसदाअन्यकेसुखकेलिये उपकारमें रहैगा इससे ई-
श्वर कोदयालमानोतो न्यायकारीमतमानो उत्तर न्यायकारी का
जोबहुत स्थानोंमेंअर्थकरदियाहै औरदयालुकाभी परन्तुन्यायऔ-
रदयालु इन दोनोंकाथोड़ासाभेदहै दण्डकाजोदेनाऔर जीवों को
स्वतन्त्रता रखना और सब पदार्थपृथिव्यादिकोंकादेना सर्वज्ञ सर्व
पदार्थोंकी जिसमेंयथार्थपदार्थविद्याहैउसवेदशास्त्रका प्रकाशकरना
यह बड़ी ईश्वर कीदयाहै कि जोजैसाकर्मकरै वह वैसाही फलपावै
अर्थात्यथायोग्यजोदण्डकादेनाहै सोउसकेओरउससे भिन्न सबजी-
वोंके ऊपर ईश्वरदयाकरताहै किकोईनपापकरै औरन दुःखपावै
जैसेराजअपराधी सोकेवल सब मनुष्योंके ऊपर दयाकाप्रकाशही है
क्योंकिराजाकायह अभिप्रायहोताहैकिकोई अनर्थमें प्रवृत्त न होवै
जो हम दण्डदेंगे तोअन्यमनुष्यअधर्ममेंप्रवृत्त होजांयगे इससे अप-
राधीपुरुषकेऊपर अत्यन्तकठिनदण्डदेनाहै किसबमनुष्यभय मा-
न होनेसे अधर्ममें प्रवृत्तनहोवें वैसाहीईश्वर भी सब जीवों के ऊ-
परदयाहै किएककोदुःखीदेखके अन्यपुरुषपापमें प्रवृत्तनहोवें और
फिरजीवको यहांतक अधिकार दियाहै किअणिमादिकसिद्धित्रि-
कालदर्शनऔर आपजोईश्वरसंयोगसे अनन्तसुखको पाताहै

किकर्मी जिसको फिर दुःख न होवे इससे ईश्वर न्यायकारी और दयालु है इसमें कुछ विरोध नहीं प्रश्न ईश्वर सर्व शक्तिमान् और न्याय कारी किस प्रकार से है उत्तर देखना चाहिए कि जितने जीव हैं उनको तुल्य पदार्थ दिये हैं पक्षपात किसी का भी नहीं किया और जैसी व्यवस्था न्याय से यथायोग्य करनी चाहिए वैसी ही किया है इससे ईश्वर न्यायकारी है जगत् में सूर्य, चन्द्र, पृथिव्यादिक भूत वृक्षादिक, स्थावर और मनुष्यादिक चर इनका रचन हम लोग देख के तथा धारण और प्रलय को देख के आश्चर्य अनन्त ईश्वर की शक्ति को निश्चित जानते हैं। क्योंकि सर्व शक्तिमान् जो न होता तो सब प्रकार का विचित्र जगत् न रच सकता इससे हम लोग जानते हैं कि ईश्वर सर्वशक्तिमान् है इसमें कुछ सन्देह नहीं प्रश्न ईश्वर विद्यावान् है वा नहीं उत्तर ईश्वर में अनन्त विद्या है क्योंकि जो विद्या न होती तो यथायोग्य जगत् की रचना को न जानता जगत् की रचना यथायोग्य करने से पूर्ण विद्या ईश्वर में है प्रश्न ईश्वर का जन्म होता है वा नहीं उत्तर उसका जन्म कभी नहीं होता क्योंकि जन्म लेने का प्रयोजन कुछ नहीं जो समर्थ नहीं होता सोई दूसरे का सहाय लेता है जो सर्वशक्तिमान् है उसको किसी के सहाय से कुछ प्रयोजन नहीं आप ही सब कार्य को कर सकता है प्रश्न राम, कृष्णादिक अवतार ईश्वर के भए हैं या ईसा ईश्वर का पुत्र और मुहम्मद आदि पुरुषों को उपदेश करने के वास्ते भेजा यह बात संसार में प्रसिद्ध है अपने भक्तों के वास्ते शरीर धारण करके दर्शन दिया और नाना विधि लीला किई कि जिसको गा के भक्त लोग तर जाते हैं फिर आप कैसे कहते हो कि जन्म ईश्वर का नहीं होता उत्तर यह बात युक्ति से विरुद्ध है और शास्त्र प्रमाण से भी क्योंकि ईश्वर अनन्त है जिसका देश काल औ वस्तु से भेद नहीं है एक रस है जिसका खण्ड कभी नहीं होता और आकाशादिक बड़े स्थूल पदार्थ भी परमेश्वर के सामने एक परमाणु के योग्य भी नहीं और जो होता है सो शरीर से उत्पन्न होता है जैसे घर में रहनेवालों से घर बड़ा होता है

ईश्वरका शरीर किस पदार्थ से बन सकता है कि जिसमें ईश्वर निवास करै और जो किसी में निवास करेगा तो अनन्त न रहैगा क्योंकि शरीर से शरीरवाला छोटा होता है जब शरीर के सहाय से रावण कंसादिकों को मारै तथा उपदेश भी करै बिना शरीर से न कर सके तो ईश्वर सर्वशक्तिमान् होनहीं और जो रावणादिकों को मारा चाहै और उपदेश करा चाहै तो सर्वव्यापी और अन्तर्यामी होने से एक क्षणमें सब जगत्का मार डालै और उपदेश भी कर देवै तथा अपने भक्तों को प्रसन्न भी कर देवै इससे ईश्वर की ईश्वरता यही है कि बिना सहाय से सब कुछ कर सकता है और जो सहाय के बिना न कर सके तो उसका सर्वशक्तित्व ही नष्ट हो जाय इससे ईश्वर का भी जन्म और किसी का सहाय लेना ऐसी शंका करनी व्यर्थ है प्रश्न जैसे सब जगत् की उत्पत्ति होती है ईश्वर से वैसे ईश्वर की भी उत्पत्ति किसी से होती होगी उत्तर ईश्वर से कौन बड़ा पदार्थ है कि जिससे ईश्वर उत्पन्न होवे पहिले ही प्रश्न के उत्तर से इसका उत्तर हो गया और जो उत्पन्न होता है उसको ईश्वर हमलोग नहीं मानते किन्तु जिसकी उत्पत्ति कभी न होवे और सब संसार की जिससे उत्पत्ति होवे उसीको वेदादिक सत्यशास्त्र और सज्जनलोग ईश्वर मानते हैं और जो नहीं जो कोई ईश्वर की भी उत्पत्ति मानता है उसके मत में अनवस्था दोष आवेगा कि जैसे उसने ईश्वर की उत्पत्ति मानी फिर ईश्वर के पिता की भी उत्पत्ति मानना चाहिए और ईश्वर के पिता के पिता की भी उत्पत्ति माननी चाहिए ऐसे ही आगे २ मानने से अनवस्था आ जायगी अर्थात् जिसकी व्यवस्थिति न मानेगा उसी को हमलोग ईश्वर कहते हैं अन्य को नहीं प्रश्न ईश्वर साकार है वा निराकार उत्तर ईश्वर निराकार है क्योंकि जो निराकार न होता तो न तो सर्वशक्तिमान सर्वव्यापक सबका धारनेवाला और सर्वान्तर्यामी और नित्य कभी न होता इससे ईश्वर निराकार ही है प्रश्न ईश्वर चेतन है अथवा जड़ उत्तर जड़ होता तो सब जगत् की रचना और ज्ञानादिक अनन्त गुण वाला कभी न होता

इससे ईश्वर चेतन होई यह थोड़ासा ईश्वर के विषय में लिख दिया इससे आगे वेद विषय में लिखा जायगा ॥ उसी ईश्वर ने सर्वज्ञ सर्वविद्यायुक्त और सत्य विचार सहित कृपा करके वेदशास्त्र सब जीवों के ज्ञानादिक उपकार के वास्ते रचा है प्रश्न ईश्वर निराकार है उसको मुख नहीं फिर वेद का उच्चारण और रचना कैसे किया उत्तर यह शंका असमर्थों से होती है कि बिना मुख मुख का काम न कर सके ईश्वर बिना मुख से मुख का काम कर सकता है क्योंकि वह सर्वशक्तिमान् है और जो ऐसा न मानेगा उसके मत में यह दोष आवेगा कि हाथ, पांव आंख, शरीर और कान बिना जगत् कैसे रचा जैसे बिना हाथ आदिक के सब जगत् को रचा तो वेद के रचने में कुछ शंका नहीं प्रश्न ओष्ठादिक स्थानों का जिह्वा से वायु की प्रेरणा होने से अक्षर उच्चारण होता है अन्यथा नहीं उत्तर फिर भी वही दोष आवेगा कि ईश्वर सर्वशक्तिमान न होगा क्योंकि ओष्ठादिक के स्पर्श और प्राण बिना ईश्वर उच्चारण नहीं कर सकता तो ईश्वर पराधीन ही हुआ और हाथ आदिकों के बिना ईश्वर ने जगत भी न रचा होगा जैसा कि ओष्ठादिक स्थान और प्राण बिना उच्चारण नहीं कर सकता ऐसी शंका जीव में घट सकती है ईश्वर में नहीं प्रश्न को खरी मसी इससे ककारादि अक्षर रचने हैं लिखाइन के नहीं फिर ईश्वर ने कहां से कागद लेखनी मसी छुरिका बस्ता और पट्टिया यह सामग्री पाई जिससे सब अक्षर रचे उत्तर यह बड़ी शंका आपने किया कि ईश्वर को अनीश्वर ही बना दिया आपलोग में आप से पूछता हूं कि नासिका, आंख, ओष्ठ, कान, नख, लोम, नाड़ी, और इनका सम्बन्ध तथा आकार बिना सामग्री और साधन शरीर तथा अक्षर भी रच लिए प्रश्न फिर यह लिखी लिखाई पुस्तक संसार में कैसे आई और किस प्रकार आकाश से गिरी वा आकाश से आ गई उत्तर आपका शरीर वृक्ष, पर्वत और इतनी बड़ी पृथिवी अन्तरिक्ष में कैसे आगए जैसे ये आगए वैसे पुस्तक भी आ गई इसमें क्या आश्चर्य कुछ भी नहीं अग्नि, वायु और

आदित्य सृष्टि के आदि में भये थे उन ने वेद पाये उनसे ब्रह्मा ने पढ़ ब्रह्मा से विराट् ने विराट् से मनु ने मनु से दश प्रजापतियों ने पढ़े और उनसे प्रजा में फैल गए प्रश्न अग्न्यादिकों ने ईश्वर से वेदों को कैसे पढ़े उत्तर इसमें दो बात हैं ईश्वर ने उनको आकाशवाणी की नाईं सब शब्द सब मन्त्र उनके स्वर अर्थ और सम्बन्ध भी सुना दिए इससे वेदों का नाम श्रुति रक्खा है अथवा उनके हृदय में ईश्वर अन्तर्यामी है उसने उसी हृदय में वेदों का प्रकाश कर दिया फिर उन्होंने अन्यों से पढ़ प्रकाश कर दिए ॥ यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै तं ह देवमात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये यह वेद का प्रमाण है इस का यह अभिप्राय है कि जो ईश्वर ब्रह्मादिक देव और सब जगत् का रचनकर्ता भया इसने पहिले ही वेदों को रच के ब्रह्मा को अग्न्यादि देव नाम हिरण्यगर्भ विद्वानों को पढ़ा दिये क्योंकि विद्या के विना सब जीव अन्धे होते हैं कुछ नहीं जानते जैसे पशु इससे परमेश्वर ने वेद का प्रकाश किया सब मनुष्यों को सब पदार्थ जानने के हेतु प्रश्न ईश्वर ने उन देव अर्थात् विद्वानों के हृदय में प्रकाश वेदों का किया तो लोगों ने यह बात निश्चय जाना है कि परमेश्वर ने दिये पढ़ाये ऐसा हम लोग जानें तो वेदों में सब लोग श्रद्धा करेंगे और उसका प्रमाण भी करेंगे परन्तु अनुमान से यह निश्चय आता जाता है कि उन अग्न्यादिक देव विद्वानों ने ही वेद बना लिए हैं उत्तर परमेश्वर ने आकाश से लोक चन्द्र, सूर्य, पर्वत और जगत् और रत्न के प्रकाश कर दिया और सब उत्तम पदार्थों का जिससे निश्चय होता है उस विद्या को प्रकाश न करे तो यह परमेश्वर में दोष आता है कि परमेश्वर दयालु नहीं और छली भी है क्योंकि ऐसा अनुमान से जाना जायगा अपनी विद्या का प्रकाश इस वास्ते नहीं किया कि सब जीव विद्या पढ़ने से ज्ञानी और सुखी हो जायेंगे फिर मुक्ति को जानके अनन्त आनन्द युक्त भी हो जायेंगे यह दोष परमेश्वर में आवेगा जैसे कोई आजीविका विद्या से करता होय सो पण्डित नहीं वह ऐसी इच्छा करता है

जो कोई पण्डित होगा तो वेदोंमें विद्या और आजीविका गुप्त होजाय-
गी ऐसा क्षुद्रबुद्धि से वह मनुष्य जाता है और जो सज्जन लोग हैं वे तो
सदा विद्यादिक गुणों का प्रकाश किया करते हैं सो परमेश्वर अपनी अ-
नन्त विद्या का प्रकाश क्यों न करेगा किन्तु अवश्य ही करेगा क्योंकि
एक ओर सब जगत् और एक ओर विद्या इन दोनों में से भी विद्या अत्य-
न्त उत्तम है सो ईश्वर पक्षपात आजीविका अर्थ और प्रतिष्ठा के लोभ से वि-
द्या का प्रकाश न करेगा किन्तु अवश्य ही करेगा इसमें कुछ सन्देह
नहीं और जो कोई ऐसा कहै कि पण्डितों ने वेद विचार के लिखा है उ-
नसे पूछा जाता है कि वे बिना शास्त्र के पढ़ने से पण्डित कैसे भए और
जो वे कहैं कि अपनी बुद्धि और विचार से हो गये तो आज
काल भी बुद्धि और विचार से होजाते सो बिना विद्या के पढ़ने से
कोई पण्डित नहीं होता क्योंकि जब सृष्टि रची गई उस समय कोई म-
नुष्य नहीं था बिना परमेश्वर के फिर यह अनुमान से जाना जाता है
वह अनुमान भी यथार्थ कभी न हो सकेगा आजकल बहुत बुद्धिमान प-
दार्थों का विचार करते हैं सो किसी पदार्थ में गुण वा दोष जानते हैं प-
रन्तु इतने इसमें गुण हैं वा इतने ही दोष हैं ऐसा निश्चय उनको नहीं
होता किन्तु अपनी बुद्धि जितना ही जानते हैं अधिक नहीं और प-
रमेश्वर सब पदार्थों को यथावत् जानता है सो अपना ज्ञान और वि-
द्या क्या परमेश्वर गुप्त रक्खैगा ऐसा ईर्ष्यावान परमेश्वर होग-
या कि जिससे अपनी विद्या का प्रकाश न करै किन्तु दयालु के होने से
और ईर्ष्या, कपट, छलादि दोष रहित होने से अवश्य विद्या का प्रकाश
करेगा इसमें कुछ सन्देह नहीं प्रश्न वेद की धारा परमेश्वर से इस लि-
ये मानते हो जैसे अनादि भी सो जैसा जगत् अनित्य है सो वेद भी अनि-
त्य होगा उत्तर वेद के पुस्तक और पठन पाठन जब तक जगत् रहैगा
तब तक वेद की पुस्तक और पठन पाठन भी रहेंगे जब जगत् नष्ट होगा
उसके साथ ये तीन भी नष्ट होंगे परन्तु वेद नष्ट न होंगे क्योंकि वह वि-
द्या परमेश्वर की है जैसे परमेश्वर नित्य है वैसे विद्या इस की भी पर-

मेश्वर केनित्य हैं प्रश्न वेदकी रचना कोई बुद्धिमान होसो रचसक्ता है क्योंकि ॥ घृतशुद्धं सनात्कनं विजानीहि घृतवदा देवानां देवकृपीणामृषिमुनीनाम्मुनिः । ऐसे औरहू शब्दके रचने से वेदकोजैसी संस्कृत वैसी मनुष्य पण्डित भीरचसक्ते हैं जैसाकि यहसंस्कृत हमने रचलिया है फिरआपकैसे वेदकेरचनेका असम्भव मानते हैं कि परमेश्वर विनावेदकोकोईनहीं रचसक्ता उत्तर हमलोग संस्कृतमात्रसे वेदका निश्चय नहीं करते कि परमेश्वर नेरचा है क्योंकि संस्कृततोजैसीजैसी पण्डित रचसक्ता है परन्तु परमेश्वरके गुणउनसंस्कृतमें नहीं देखपड़ते जो मनुष्य होयासो अवश्यपक्षपात किसीका मनमेंकरैगा औरपरमेश्वरपक्षपात किसी प्रकार से कभीनकरैगा क्योंकि परमेश्वर पूर्णानन्दऔरपूर्णकामहै सोवेदमेंकिसीप्रकारसे एक अक्षरसेभी पक्षपात देखने में नहीं आता फिर देखो मनुष्य सबविद्याओंमें यथावत्पूर्ण कभीनहीं होता सो जबकोई पुस्तक रचेगा तब जिस विद्यामेंनिपुणहोगा उसविद्याकीवातअच्छी प्रकारसे लिखेगा परन्तुजिस विद्याको नहीं जानता उसकाविषय जबकुछ आवेगा तब कुछन लिखसकैगा जो लिखेगातो अन्यथा लिखेगा और परमेश्वर सब विद्याओंके विषयोंको यथावत्लिखेगा सोवेदोंमेंसबविद्यायथावत्लिखी हैं मनुष्यजबग्रन्थरचेगाउसमें कोईबुद्धिमानहोगा तोभी सूक्ष्म दोषआवेंगे किधर्मकाकिसीप्रकारसे खण्डनऔरअधर्मकामण्डनथोड़ाभीअवश्यआजायगा परमेश्वरके लिखनेमें धर्मकाखण्डन वाअधर्मकामण्डन किसी प्रकारसे लेशमात्रभीन आवेगासोवेदमें ऐसाही है मनुष्यशब्द अर्थ औरसम्बन्ध इनकोजितनीबुद्धि उतनाहीजानेगा अधिक नहींसोवैसेही शब्द अपने ग्रन्थमें लिखेगा जिनसे एक, दो,तीन,चारपांच प्रयोजन जैसे तैसे निकलसकैं औरपरमेश्वरसर्वज्ञकेहोनेसे शब्दअर्थ औरसम्बन्ध ऐसेरक्खेगें किजिनसेअसंख्यातप्रयोजन औरसबविद्यायथावत्आजांय सो परमेश्वरकाऐसासामर्थ्य है अन्यका नहींसोऐसेवे-

पूरी हैं कि जिनसे असंख्यात प्रयोजन और पदार्थविद्या निकलती है क्योंकि परमेश्वरने सबविद्यायुक्तवेदों को रचाहै इससे सबकार्य वेदोंसे सिद्ध होतेहैं और वेदोंके नामलिखके गोपालतापिनी, रामतापिनी कृष्णतापिनी और अल्लोपनिषदादिक मनुष्योंने बहुतग्रन्थ रचलिएहैं परन्तु विद्वान्यथावत् विचारकरकेदेखें तोउनग्रन्थों में जैसी मनुष्योंकी क्षुद्रबुद्धिहै सोहीउनमें देखपड़तीहै सोपरमेश्वर औरउनकेवचनोंमें दिनऔररातकाजैसा भेदहै वैसाभेद देखपड़ताहै प्रश्न वेदपौरुषेयहैं अथवाअपौरुषेय अर्थात ईश्वरका रचा है वाकिसीदेहधारीका उत्तर वेददेहधारीका रचा कभीनहीं हैकिन्तु परमेश्वरहीने रचाहै परन्तु वेदअपौरुषेय और पौरुषेयभी है क्योंकिपुरुषदेहधारीजीवकानामहै और पूर्णहोनेसेपरमेश्वर का भी अपौरुषेयतो इससे है किकोईदेहधारीजीवकारचानहीं और पौरुषेयइसवास्ते है किपूर्णपुरुषजोपरमेश्वरउसनेरचाहै इससे पौरुषेयभीहै औरपरमेश्वरकीविद्यासनातनहै सोईवेदहै इससे योवेद अपौरुषेयहै क्योंकिपरमेश्वर की विद्याजोवेद उसकी उत्पत्तिवानाश कभी नहींहोती परन्तुपुस्तकरूप औरपठन इत्यादिकोंका जगत्के प्रलयमेंअभावहोजाता है वेईश्वरमेंनित्यरहते हैं इससे वेदकानाश कभीनहींहोता प्रश्न जैसेवेदईश्वरसेउत्पन्न होताहै वैसाजगत्भीईश्वरसेउत्पन्नहोताहै जैसा जगत् विनश्वर है वैसावेद भी विनश्वरहै औरजोवेदनित्यहोगा तो जगत्भीनित्यहोगा उत्तर जगत्जोहैसो प्रकृतिपरमाणु और उनकेपरस्पर मिलानेसे परमेश्वरसे उत्पन्नभयाहै सो कभीकारणजोपरमेश्वर उससेकार्यरूपजगत् नहींहोजायगा परन्तुजेजगत् जैसा कार्यहैवैसानहीं क्योंकिवेद तो परमेश्वर की विद्याहै सोजोनाशहोजायतोपरमेश्वरविद्याहीनहोजैसे अविद्वानहीं होजाय सोपरमेश्वर अविद्वान कभीनहींहोता सदापूर्ण ज्ञानऔरपूर्णविद्यावान रहता है सो जैसा क्रम परमेश्वर की विद्यामेंहै वैसाही क्रमशब्द अर्थ सम्बन्धमन्त्र और संहिताअर्थात् पुस्त-

पदार्थोंका सम्बन्धअंगाङ्ग जिससे पूर्वापरविरोधनआवे चाहिये सो
सबपरमेश्वर हीनेरचेहैं इससे कुछसन्देह नहीं जैसाजगत्काप्र-
योगवावियोगहोताहै वैसावेदविद्याकाप्रयोगवावियोग कभी नहीं
होता क्योंकिपरमेश्वर औरपरमेश्वरके विद्यादिकसबगुणभीनि-
त्यहैं इससेवेदविद्यानित्यहीहै जोऐसानमानेगा तब उसकोयह अन-
वस्थादोषआवेगा कि कोई विद्यापुस्तकस्वयंभू औरईश्वरकारचान
मानेगा तोसबपुस्तकोंके सत्य वा असत्य का निश्चय कैसे करेगा
क्योंकिएकपुस्तकस्वतःप्रमाणहोगा और उसकेप्रमाणसे सबअप्र-
माणसेसत्यवामिथ्यापुस्तकका निश्चयहोसक्ताहै और जोकोईपुस्त-
कस्वतःप्रमाणहीनहींहोगा तोकोईपुस्तकका निश्चयनहींहोसकेगा
क्योंकिएकमनुष्यनेअपनीबुद्धिकीकल्पनासे पुस्तकरचा दूसरेनेउ-
सकाअपनीबुद्धिसे खण्डनकरदिया दूसरेकाओरने मैं तीसरेका
चौथेने ऐसाही किसीपुस्तकका प्रमाणनहोगा किन्तुअनवस्थाप्रस-
के होनेसे सबनष्टहोंगे इससेवेदपुस्तकस्वतःप्रमाणहै क्योंपरमेश्वर
हीकारचाहै अन्यथानहीं क्योंकिऐसीसुगमसंस्कृतललितपद स-
त्यार्थयुक्त अनेकप्रयोजनऔर अनेकविद्यासहित स्वल्पअक्षरसुग-
मवेदहीकोपुस्तकहै अन्यनहीं और जबकिकिसीपदार्थका कुछनि-
श्चयमनुष्य अपनीबुद्धिसेकरसक्ताहै परन्तुईश्वरस्वरूप और उसके
न्यायकारित्वादिक अनन्तगुणवेदपुस्तकमें जैसे लिखेहैं वैसाऔर
कोई संस्कृतवाभाषापुस्तकमेंनहींहै क्योंकिकिसीजीवकी बुद्धिनहीं
होसक्ती किपरमेश्वर का स्वरूपऔरस्वभावगुण लिखसकै सोऐसा
ही जानना चाहिये किहमलोगोंपर अत्यन्त कृपासे परमेश्वरने
अपनास्वरूपऔर अपनेसत्यगुणवेद पुस्तकमेंप्रकाश करदियेहैंजि-
ससे किहमलोगभीपरमेश्वरकाज्ञान और गुणवेदपुस्तकसेजानके
अत्यन्तआनन्दयुक्तहोतेहैं सोपक्षपातकोछोड़केयथावत विद्यायुक्त
पुरुष अत्यन्तवेदार्थका विचारकरेगा सोई अनन्तसुखको पावेगा
अन्यथानहीं मरना ऐसे ही सबमनुष्यएक २ पुस्तककोपरमेश्वरकी

मानतेहैं जैसेकि बाविल्, इञ्जील औरकुरान् वैसे आप लोगों की
भीवेदमें आग्रह है जिसमेंकि अत्यन्त स्तुतिकरतेहैं जोवेदपरमेश्वर
रचा होगा तोवेपुस्तक परमेश्वरके रचे क्योंनहीं इसमें क्या प्रमाण
है किवेदही ईश्वरकारचा है और अन्यपुस्तक नहीं उत्तर सब म-
नुष्योंकाप्रमाण नहींहोसक्ता क्योंकिसबमनुष्य पूर्णविद्यावालेआप्त
औरपक्षपातरहितनहींहोते जिससेकि सबमनुष्यों के कहने का प्र-
माण होजाय जोआप्त और पक्षपात रहित होवें उन्ही का प्रमाण
करनायोग्य है अन्यका नहीं क्योंकि जो मूर्खोंका हमलोग प्रमाण
करें तोबड़ाभारीदोषआजायगा वेअन्यथा भाषणकरतेहैं और अ-
न्यथाकर्मभीकरते हैं इससेआप्तलोगोंका प्रमाणकरना चाहिये और
वेद के आगे इञ्जील और कुरानादि की कुछ गणना ही नहीं
होसक्ती किन्तुइनमेंविद्या की बाततो कुछनहींहै । जैसी कि रक्षा-
से इसवेदादिपुस्तकहैं प्रश्न आप्तकानिश्चय कैसे होसक्ता है वेदवाले
कहतेहैं किहमारी बात सत्यहै अन्यलोग कहतेहैं किहम लोगों की
बातसत्यहै इसमेंक्या प्रमाणहै किवहीबात सत्यहै अन्य नहीं उत्तर
इसका समाधान तृतीयसमुल्लासमेंकरदियाहै किपांचलक्षण वा-
लाआप्तहोताहै औरअष्टप्रमाणोंसे सत्यवाअसत्यकापथा--
र्थनिश्चयहोजाताहै उनमेंनिश्चय करकेसत्यको माननाचाहिये अ-
सत्यको नहीं प्रश्न वेदकिसीदेश विशेष औरभिन्नदेशमें रहनेवाले
मनुष्योंकेहेतुहै वासबमनुष्योंकेहेतुहै उत्तर वेदसबमनुष्यों के वा-
स्ते है क्योंकिजोविद्या औरसत्यज्ञानहोता है सोसबके हेतुहोता है
औरवेदमेंकहींनहींलिखा किइसदेशवा इन मनुष्योंके हेतु वेद ब-
नायागया और अधिकारभीइनकाहै औरइनकानहीं जैसेकि बा-
बिल, मूसाऔरइसराईल कुरानादिकोंकेवास्तेपुस्तकआई औरमु-
हम्मदादिकोंके हेतुकुरान् वहबातमनुष्यों कीहोतीहै अपनेदेशवा-
लेके ऊपरप्रीति और अन्यके ऊपरनहीं जोईश्वर का वचन सोतो
सबकेऔरसबजगत्का स्वामीहै इससेतुल्यकृपाऔर तुल्यदृष्टिहोर--

करेगा अन्यथा नहीं ऐसा पुस्तक वेदही की है अन्य नहीं क्योंकि अन्यपुस्तकोंमें ऐसी विद्यानहीं औरकहानीकी नांई उनमें कथा है और पक्षपात बहुतसे हैं इससे वेद पुस्तक ही ईश्वरकृतहै अन्यनहीं इसमेंकिसीकाजो सन्देहहोय तो पक्षपातको छोड़के दोनों पुस्तकोंकाविद्याप्रीति और सज्जनता से विचारकरें तबपही निश्चयहोगा किवेदपुस्तकही ईश्वरकृतहै अन्यनहीं प्रश्न वेदोंका सबमनुष्योंको पढ़नेऔर पढ़ानेका अधिकारहै वा नहीं उत्तर इसका विचार तृतीयसमुल्लासमें वर्णव्यवस्थाकेकथनमें कियागयाहै वहींजानलेना इसप्रकारसेवहांलिखाहै किजो मूर्ख है वहशूद्रहै उसका पढ़नाऔरउसको पढ़ानाव्यर्थ है क्योंकि उसकोबुद्धि न होनेसे कुछ विद्यानआवेगी अन्यव्यवस्थाचतुर्थसमुल्लासमें देखलेनी प्रश्न शूद्रादिकोंकावेदसुनने का अधिकारहैवानहीं उत्तर जिसकेकानइन्द्रियहै औरउसकेसमीपजोशब्दहोगा उसको अवश्यसुनेगा सोवेदकाशब्दअथवाअन्यशब्दहोवेंगे उनकोसुनेगा परन्तुशूद्रमूर्खहोनेसे सुनकेभीकुछनकरसकेगा इसहेतु जहांकहींनिषेधलिखा है कि शूद्र को वेदनपढ़नाचाहिये किउसकोकुछ लाभनहीं प्रश्न वेदव्यासजी ने वेदरचेहैं इससे उनका नाम वेदव्यासपड़ाहै यहबात भागवत में लिखीहै फिरआपकैसी बातकहते हैं किवेद ईश्वर ने रचे हैं उत्तर यहबात अत्यन्तमिथ्याहै क्योंकिव्यासजीनेभी वेदपढ़ेथे और अपने पुत्रशुकदेवादिकों को पढ़ायेथे और उनका पिता पराशर उसका पितामह शक्ति और प्रपितामह वशिष्ठजी और ब्रह्मदेवादिकों ने पढ़ेथे जोव्यासकेबनाये वेदहोते तो वे कैसेपढ़ते क्योंकि व्यासजीतो बहुत पीछेभये हैं औरजो उनकानामवेदव्यास पड़ा है सो इसरीतिसे पड़ा है कि । वेदेषुव्यासोविस्तारोनामविस्तृताबुद्धिर्यस्यासवेदव्यासः ॥ व्यासजीने वेदोंकोपढ़के औरपढ़ायेहैंजिससेसबजगत्में वेदकापठन और पाठनफैलगया औरउनकी बुद्धिवेदों में विशालथी क्रियावत्सुशब्दअर्थऔरसम्बन्धसे वेदोंकोजानतेथे इ-

यसे इनकानामवेदव्यासहुआगया पहिले इनकानामकृष्ण द्वैपायन था वेदव्यासनाम विद्याकेगुणसेभया है इसी भागवतमें जोबातलिखीहै सोवेदोंकीनिन्दाकेहेतुलिखी है उसकायह अभि- प्रायथा वेदोंकीनिन्दामें कि जिसनेवेदरचे हैं उसीनेभागवत भीर- चा औरवेदोंकेरचनेसे व्यासजीकोशान्तिभीनभई किन्तुभागवतके रचनेसेउनकोशान्तिभई औरभागवत वेदोंकाफलहै अर्थात वेदों सेभीउत्तमहै सोयहबातदुष्टबुद्धिवोपदासइनकी कहीहै क्योंकि व्यासजीकेनामसे उन्होंनेयह भागवतरचाहै इसहेतुकि व्यासजीके नामलिखनेसे सबलोगप्रमाणकरें औरवेदोंकीनिन्दासे मेरे ग्रन्थ की प्रवृत्तिहोनेसे सम्प्रदायककीवृद्धि औरधनकालाभहोय इससे सज्जनलोग इसबातको मिथ्याहीमानें प्रश्न वेदईश्वरने संस्कृतभा- षामेंक्योंरचे क्या ईश्वरकी भाषासंस्कृतहीहै जोदेशभाषामें र- चते तोसबमनुष्यपरिश्रमकेविना वेदोंकोसमझलेते और संस्कृ- तजाननेकेहेतु व्याकरणादिक सामग्रीपढ़नी चाहिए इसके बिना वेदोंकाअर्थ कभीमालूमनहोगा उत्तर संस्कृतमें इसहेतुवेद रचे गयेहैं किजोलोकभाषामें सबविद्याआजाय और जोभाषामें रचते तोबड़ेर ग्रन्थहोजाते और एकदेशहीका उपकारहोता सब देशों कानहीं औरजिनजिनदेशभाषाओंमें रचतेउनहीकोउनकी भाषा- धारहीनहीं होता इससे ईश्वरनेसर्वदेशभाषामें वेदरचे हैं कि कि- सीदेशकी भाषानहीं और सबभाषा जिससेनिकलीं क्योंकिसंस्कृत किसीदेशकीभाषानहीं जैसेईश्वर किसीदेशकानहीं किन्तु सबदे- शोंकास्वामीहै वैसेही संस्कृतभाषाहै किकिसीएकदेशकीनहीं प्रश्न देवलोग और आर्यावर्त्त देशकी प्रथमभाषासंस्कृतथी इसीको मु- सल्मानलोग जिन्नभाषाकहतेहैं क्योंकिजैसीप्रवृत्ति संस्कृतकी प- हिलेआर्यावर्त्तमेंथी वैसीकिसी देशमें नथी जिसदेशमें कुछनहिं- थीभई होगी सोआर्यावर्त्तहीसे भईहोगी अबभीआर्यावर्त्तमें अन्य देशोंसेसंस्कृतकीअधिकप्रवृत्तिहै इससे यह निश्चयहोताहै किसंस्कृ

तभाषाआर्य्यावर्त्तकीक्युंथभाषाथी उत्तर यहदेवलोगकी भाषानहीं क्योंकि बृहस्पतिःप्रवक्ताइन्द्रश्चाध्येता । यहमहाभाष्यका वचन है इन्द्रनेबृहस्पतिसेसंस्कृत पढ़ी औरबृहस्पतिने अङ्गिराप्रजापति से, उसनेमनुसे, मनुनेविराट्से विराट्ने ब्रह्मासे ब्रह्मानेहिरण्यगर्भादिकदेवोंसे, उन्होंने ईश्वरसे, जोदेवलोगकीभाषाहोती तो वेक्योंपढ़ते औरपढ़ाते क्योंकिदेशभाषातोव्यवहारसेपरस्पर आजाती है इससे देवलोगकीसंस्कृत भाषानहीं और जब ब्रह्मादिकोंको भाषा हीं तोआर्य्यावर्त्त देशवालोंकी कैसे होगी कभीनहीं परन्तु ऐसा जानाजाता है किआर्य्यावर्त्तदेशमेंपहिलेप्रवृत्तिअधिककथी सब ऋषि मुनि औरराजालोग आर्य्यावर्त्तदेशवासीलोगोंने परस्परासेसंस्कृतपढ़ा और पढ़ायाहै इससे आर्यावर्त्त देशकीभी संस्कृतभाषाना औरजो मुसल्मान लोगइसकोजिन्नभाषाकहतेहैं सोतो केवलईर्ष्यासेकहतेहैं जैसेकिआर्य्यावर्त्तदेशवासियोंकानामहिन्दूरखदिया सो यहसंस्कृतजिन्नभाषाभीनहीं क्योंकि जिन्नतो भूतप्रेत पिशाचों ही का नाम है भूतप्रेत और पिशाचहोतेहीनहीं और जो होते होंगे तो लोकलोकान्तरमें होतेहोंगे यहांनहीं फिरउनकी भाषा यहां कैसे आसकेगी इससे यहबातअत्यन्तमिथ्याहैक्योंकिउनकोऐसीविद्याईश्वरकी औरधर्माधर्मविवेककी बुद्धिनहीं फिरवे संस्कृत विद्यासवेंसत्यकोकैसे कहसके वारचसके हैं और रचते होते तो अन्यदेशोंमेंभीचलतेतथाकिसी पुस्तकमें अबभीकहतेइससे ऐसीबात सज्जनलोगोंको नमाननाचाहिये प्रश्न देशभाषाभिन्न२ क्योंकर बनगई और किससेबनी उत्तर सबदेशभाषाओंका मूलस्थान है क्योंकिसंस्कृत जबबिगड़तीहै तबअपभ्रंशहोजाताहै फिरअपभ्रंशसेदेशभाषाहोजातीहै जैसेकिघटशब्दसेघड़ा घृतशब्दसे घीदुग्धशब्दसे दूधनवनीतशब्दसे नैनूं अग्निशब्दसे आगकर्णशब्दसे काननासिकाशब्दसे नाकजिह्वाशब्दसे जीभ मातरशब्दसे मादरपुत्रशब्दसे पूत शब्दसे गोधूमशब्दसे गोहूं इत्यादिक जानलेना औरएकपदार्थके

ड़ नामपढ़ेंजैसेकि गौः ग्मा ज्मा, क्ष्मा, क्ष्मा, क्षा, क्षमा, क्षोणी, क्षिति, अवनी, उर्वी, पृथ्वी, मही, रिपः, अदिति, इलानिर्ऋति भूः भूमिः पूषा, गातुः, गोत्रा, ए २१ नामपृथिवीकेनामहैंसो भिन्न २ देशोंमेंभिन्न २, २१ नामोंमेंसेभिन्न २ का अपभ्रंश होनेसे भिन्न २ भाषा बनजातीहै और एकनामबहुत अर्थोंकाहोताहै जैसेकि सिंह, बानर, घोड़ा, सूर्य्य, मनुष्य, देव और चोर इत्यादिकका नाम हरिहै इससे भी भिन्न २ देशमें भिन्न भाषा होतीहै क्योंकि किसीदेशमें सिंह नामसे बनपशुका ग्रहणकिया किसी देशमें हरिशब्दसे बानरका ग्रहणकिया किसीदेशमें हरिशब्दसे घोड़े को लिया किसीदेशमें हरिशब्दसे सूर्य्य को लिया किसीदेशमें हरिशब्दसे चोरको लिया इस हेतु देशभाषा भिन्न २ होगई और मनुष्योंका उच्चारणभेदसे भिन्न २ भाषा होजातीहै जैसे कि उन शब्दोंको उच्चारणमें मिलनेसे अक्षर पलटजाताहै सो आजकाल इसकालमें ऐसा होगया है इस एक अक्षरके अन्यथा उच्चारणसे तीन भेद होगये हैं गुजराती लोग षकार और खकार का उच्चारण करतेहैं महाराष्ट्र दाक्षिणात्य लोग षकार और नकारका उच्चारण करतेहैं और अन्यलोग शकार और षकार का उच्चारण करतेहैं तथा तालव्य मूर्द्धन्य और दन्तस्थ इनतीनों के स्थानमें बंगाली लोग तालव्य शकार का उच्चारण करते हैं पश्चिम और पश्चिमदेशवाले तीनोंके स्थानमें दन्त्य सकारका उच्चारण करते हैं तथा किसीकी जीभ कठिन होतीहै वह भाषा शब्दोंका अन्यथा उच्चारण करतेहैं और जिस देशमें विद्याका लेशभी नहीं रहजाता उनमें अपने व्यवहार करनेके हेतु शब्दोंका कल्पना करलेतेहैं किस शब्दसे इसको जानना और इस शब्दसे इसको जानना जैसे दाक्षिणात्य लोगोंने धीका नाम तूप रखलिया और उत्तरदेशवासियोंने घीका नाम चोखार रखलिया और गुजरातियोंने मक्खनका नाम लोण्या रखलिया इससे भी देशदेशान्तरकी भाषा भिन्न २ होगईहै इसीप्रकारके अन्तरः– खोंकाभी विचारकरना मनुष्य देशमें अपने अपने सिद्धान्त मन्त्रोंकी क्रिया जो

लिखीहै सोजैसी बालकोंकीबातहोय कुछबुद्धिमानपनेकीनहींदीखती क्योंकिकोई को सबजगह फिराते हैं उनकोकोई जो बांधतें उससे फिरयुद्धकरतेहैं सोव्यर्थयुद्धकरनालिखेहैं जिसमेंभीऐसेलोगोंकानाशभी होजाताहै इत्यादिऐसी २ बुरीबात जिसमेंलिखीहैं वहवेदईश्वरका बनायाकभी नहोगा उत्तर ऐसाबचनतोमिथ्याहै वेदमेंएकभीनहींलिखीहैं किन्तुलोगोंनेकहानी बनालियाहै प्रश्न ईश्वरने ऐसा क्योंनहींकिया किविनापढ़ने औरसुननेसे सबमनुष्योंकोयथावत् आजाते तबतोईश्वरकी दयालुताजानपड़ती अन्यथाक्यादयालुता कि बड़े परिश्रमसे वेदकेअर्थों को मनुष्यलोगजानतेहैं उत्तर फिरभीस्वतन्त्रताहानि दोष आजाता क्योंकि परमेश्वरके प्रेरणासेवेदउनकोआजाय अपनेपरिश्रमऔरस्वतन्त्रता से नहीं औरजो परीश्रमबिनापदार्थमिलताहै उसमें प्रसन्नता भी नहीं होती बिना परीश्रमकुछभी कामनहीं होता जैसेकीखानापीना उठना बैठना कहनासुननाआनाऔर जाना इत्यादिकपरीश्रमहीसेहोते हैं अन्यथानहीं परीश्रमकेबिना कुछनहीहोता और इतनी बड़ी भोग्यार्थविषयसेऐसेहोगी जीवकोकानआदिकइन्द्रियबुद्धिऔरपढ़ने औरसुननेकासामर्थ्य भीदियाहै औरविद्याकाप्रकाशभी करदियाहै इससे ईश्वरदयारहितकभी नहीहोते औरजीवकोजो स्वतन्त्रतादियाहै यही बड़ीदयाईश्वर की है और कोईभीनहीं शंका करेउसकासमाधान बुद्धिमानलोगविचारकरलेवें ईश्वर और वेदकेविषयमेंसंक्षेपसेथोड़ासालिखदिया औरजोविस्तारसे देखाचाहें सोवेदादिकसत्यशास्त्रोंमेंदेखलेवें इसकेआगेजगत्कीउत्पत्तिस्थितिऔरप्रलयके विषयमें लिखाजायगा ॥

इति श्री मद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थ प्रकाश सुभाषा विरचिते सप्तम समुल्लासः सम्पूर्णः ॥ ७ ॥

अथ जगदुत्पत्तिं प्रलयं च विषयान्व्याख्यास्यामः ब्रह्मविदाप्नोति परं तदेषाऽभ्युक्ता सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म यो वेद निहितं गुहायां परमे व्योमन् सोऽश्नुते सर्वान्कामान्सह ब्रह्मणा विपश्चितेति तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः आकाशाद्वायुः वायोरग्निः अग्नेरापः अद्भ्यः पृथिवी पृथिव्या ओषधयः ओषधिभ्योऽन्नम् अन्नाद्रेतः रेतसः पुरुषः स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः ४. तैत्तिरीयशाखा की श्रुती है सदेव सौम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयं छान्दोग्य उपनिषद की श्रुति है नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं नासीद्रजो नो व्योमा परो यत् किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गभीरं यह ऋग्वेद की श्रुति है आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीन्नान्यत् किंचन मिषत् स ईक्षत लोकान्नु सृजा इति यह ऐतरेय ब्राह्मण की श्रुति है इत्यादिक वेदादि की श्रुतियों से यह निश्चित जाना जाता है कि एक अद्वितीय सच्चिदानन्दस्वरूप परमेश्वर ही सनातन था और अन्य कोई भी नहीं था उसने इस जगत् को रचा सो इनमन्त्रों के जितने वाच्य हैं वे सब परमेश्वर के ही हैं इनका अर्थ प्रथम समुल्लास में कर दिया है वहां देख लेना जो सत्य ब्रह्म को मनुष्य जानता है वह आनन्दस्वरूप परमेश्वर के साथ मिलके सब कामों से पूर्ण हो जाते हैं यह परमेश्वर एक अद्वितीय था दूसरा कोई नहीं था उस जगदुत्पत्ति की इच्छा जिसकी हुई परमात्मा की सामर्थ्य रूप कारण से नाना प्रकार से जगत् की उत्पत्ति होगई सो इस क्रम से पहले आकाश को उत्पन्न किया कि जो सब जगत् का निवासस्थान है आकाश अत्यन्त सूक्ष्म पदार्थ है जो कि अनुमान से भी कठिनता से जाना जाता है उससे स्थूल द्विगुण वायु उत्पन्न भया उससे अग्नि त्रिगुण भया अग्नि से चतुर्गुण जल भया और जल से पंचगुण भूमि भई भूमि से औषधि औषधियों से अन्न अन्न से वीर्य वीर्य से शरीर इस प्रकार आकाश से लेके शरीर पर्यन्त परमेश्वर ने सृष्टि रचि है सो शब्द और स्पर्शादिक गुणवाला आकाश और वायु आदिक चारों के परमाणु रचे परमाणु उनको मिलाके एक

णुरचा दोअणुसे एकद्व्यणुक और तीनद्व्यणुकसे एकत्रसरेणु और अनेकत्रसरेणुओं मिला के बड़ोदेखपड़ताहै सबजगत इसको रचं दिया प्रश्न परमेश्वर को क्याप्रयोजनथा कि जगत् को रचा उत्तर इससे पूछनाचाहिये कि प्रयोजन क्याकहाता है यमर्थमधिकृत्यप्रवर्त्तते तत्प्रयोजनम् यह गोतम मुनिजी का सूत्रहै इसका यहअभिप्रायहै कि जिसपदार्थको अधिकमानके जीवप्रवृत्तहोवै उसको कहना प्रयोजन सो परमेश्वर पूर्णकामहै इसको कोई प्रयोजन अधिक नहींहै क्योंकि उससे कोई पदार्थउत्तम वा अप्राप्त नहीं फिर प्रयोजन का जोप्रश्नकरनासोअयुक्तहै प्रश्न जगत्केरचनेकी इच्छाकिईसो विनाप्रयोजनसे इच्छानहींहोसकती उत्तर इच्छा के जगत्में तीन कारणदेखपड़ते हैं पदार्थकीअप्राप्ति और वह उत्तम होवै तथा अपनेसेभिन्नहोवै परमेश्वरमें तीनोंमेंसे एकभीनहीं क्योंकि सर्वशक्तिमान्केहोनेसे कोईपदार्थकी अप्राप्ति कभी नहींहोती तथ परमेश्वर से कोईपदार्थ उत्तमभीनहीं और सर्वव्यापकके होनेसे अत्यन्त भिन्नकोईपदार्थनहीं इससे इच्छाकी घटना ईश्वरमें नहीं होसकती प्रश्न जगत्रचनेकी प्रवृत्तिविनाप्रयोजन वा इच्छाके कभी नहींहोसकी उत्तर अच्छा इच्छातोनहींबनसक्ती तथा प्रयोजन भी नहीं बनसक्ता परन्तु इच्छा और प्रयोजन मानोगे जगत्का होना वहीइच्छा और प्रयोजनमानलेओ इससेभिन्न इच्छा वा प्रयोजन कोईनहीं क्योंकि जोऐसामानेंकि अपने आनन्दकेवास्ते जगत् को रचा उससे हमलोगपूछते हैं किजबतक जगत्नहींरचाथा तब परमेश्वर क्यादुःखीथा जोकिआनन्द केवास्ते जगतको रचासो दुःखका परमेश्वरमें लेशमात्रभी सम्बन्धनहीं जोआपऐसेपूछनेमें आग्रह करैं किजगतकेरचनेमें औरभीकुछप्रयोजनहोगा तो आपसे मैं पूछताहूं किजगतके नहीं रचनेमेंक्या प्रयोजनहै जोआपकहैं कि जगतकेरचनेमें जगतकीलीला देखनेसेआनन्दहोताहोगा और जगतके नहिं रचनेमें जगतकी लीलानहींदेखीथी और जग

तुके जीवभक्तिभीनहींकरतेथे तबपरमेश्वर अवश्यदुःखीहोगा इसलिये ऐ-
सा प्रश्न व्यर्थहोताहैइसमें आग्रहनहीकरनाचाहियेरचनासेईश्वरके
सामर्थ्य काफल होताही रचनाकाप्रयोजनहैप्रश्न ईश्वरने जगत्‌र
चासोंजगत्‌रचनेकी सामग्रीथी अथवाअपनेमेंसेहीजगतरचा वा अ
पनेही सब जगत्‌रूपबनगया उत्तर इसकाविचार अवश्यकरनाचा
हियेकि विनासामग्रीसेकोईपदार्थ नहींबनसक्ता क्योंकि कारण के
विना किसीकार्यकी उत्पत्ति हमलोगनहींदेखते सोकारण तीन प्र
कारका होताहै एक उपादान दूसरानिमित्त औरतीसरा साधारण
सो उपादान यहकहाताहैकिकिसीसेकुछलेकेकोईपदार्थबनाना सो
कार्यऔर कारणका इसमें कुछभेद नहीहोता दोनोएकहीरूप होते
हैंजैसे मट्टीको लेके घड़ेकोबनालेतेहैं कपासकोलेकेवस्त्र सोनेको ले
केगहना लोहेकोलेकेशस्त्रऔर काष्ठकोलेकेकिवाड़आदिक सो घ-
टादिक जितनेहैं वेमृत्तिकादिकोंसेभिन्नवस्तुनहींहैं किन्तुवही वस्तु
है इसप्रकारकाउपादानकारणजानना दूसरा निमित्त कारण जो
कि उनकुलालादिकशिल्पीलोग नानाप्रकारके पदार्थोंकोरचने वा-
लेनिमित्तकारण वेजानना क्योंकिबुद्धिआदिकोंका ग्रहण करकेअ
नेकपदार्थोंकोरचतेहैं किन्तु अपनेशरीरसेपदार्थलेके नहीं रचते इ
ससे येनिमित्तकारणहोताहै किजोपदार्थ बनावेउससे भिन्नसदा
रहै और उसपदार्थकोरचले तीसरा साधारणकारण होताहै जै-
साकिप्राण कालदेशचक्र औरसूत्रादिक क्योंकि ये सबकर्त्ताकेउ
पयोग और हेतुरहतेहैं इससे अवश्य विचारकरनाचाहिये परमेश्वर
इस जगत्‌का तीनों कारणोंमेंसे कौन कारणहै अर्थात्‌तीनोंकारण
हैंजो उपादानकारणहोवे तो क्षुधा तृषा शीतोष्ण भ्रम जन्म औ
रमरणादिक दोष ईश्वर में आजायगे क्योंकि उपादान से उपादे
य भिन्न नही होता अर्थात् ईश्वरसे जगत भिन्न नहीं होगा इसी
सेयहदोष अवश्यही आवेंगे इसमें जोकोई ऐसाकहैकि जैसे स्वप्ना
वस्थामें मिथ्यापदार्थ अनेक देखपड़तेहैं और रज्जु में सर्प बुद्धिहो

ती है इत्यादिक सब कल्पित भ्रान्तपदार्थ हैं इनसे वस्तुमें कुछ दो-
षनहीं आसक्ता इसमें जीवको कुछहानि नहीं होती और सर्पके र-
ज्जुकी इनसे पूछना चाहिये सर्प की भ्रान्ति रज्जुमें और स्वप्नमें
हर्ष शोकादिक दुःख किसको भये जो वह कहे कि ब्रह्मको ही भये फि
र वह ब्रह्म शुद्ध नहीं रहा तथा ज्ञानस्वरूप नहीं रहा क्योंकि भ्र
म जो होता है सो अज्ञान से ही होता है विना अज्ञान से नहीं फि
र वेदों में सर्वज्ञ सदा भ्रान्ति रहित ब्रह्मको लिखा है उसकी क्या
गति होगी तथा बन्धमोक्षादिक दोषभी ब्रह्ममें आ जायगे जो वह क
हे कि भ्रमसे बन्ध और मोक्ष है वस्तु से नहीं फिर भी नित्यशुद्ध बुद्ध
मुक्तस्वभाव परमेश्वरको वेदमें लिखा है सो बात झूठी हो जायगी य
ह बड़ा दोष होगा और जो बद्ध होगा सो जगत्को कैसे रच सकेगा
और जो मुक्त होगा सो जगत्रचनेकी इच्छाही न करेगा फिर उस
से जगत कैसे बनेगा और जो कोई केवल निमित्तकारण माने तो
जगत्का साक्षात् कर्ता नहीं होगा किन्तु शिल्पीवत् होगा अथवा उस
को कहां शिल्पी कहो और उसके पास सामग्री भी अवश्य माननी
चाहिये फिर जो सामग्री मानोगे तो जगत्भी नित्य होगा क्योंकि
जिससे जगत बना है वह सामग्री ईश्वरके पास सदा रहती ही है फिर
एक अद्वितीय जगत्की उत्पत्तिके पहिले परमेश्वर था अन्य लेश
मात्र भी नहीं था यह वेदादिक शास्त्रोंका प्रमाणोंसे कहना व्यर्थ
होगा इससे उन निमित्त कारण मानने से भी यह दोष आवेगा और
जो साधारण कारण माने तो भी स्वतन्त्र रचने में असमर्थ ईश्वर
होगा जैसे कुलालादिक के विना घटादिकार्य पराधीन होते हैं क्यों
कि जैसे चक्रादिकके विना कुलालादिक घटादिक नहीं रच सकते हैं फि
र वह ईश्वर पराधीन होने से सर्वशक्तिमान नहीं रहेगा क्योंकि कोई
काम इच्छा किसीका मनोरथ और अपनी शक्ति से सब कुछ करै उसको
कहते हैं सर्वशक्तिमान् सो साधारण कारण जब माना जायगा तो सर्व
शक्तिमान् ईश्वर कभी न रहेगा इससे दोनों प्रकार में दोष आते हैं ।

इसवास्ते अत्यन्तविचार करनाचाहिए जिसमें किसीकोईदोषनआवै
इसमें यह विचार है कि ईश्वर सर्वशक्तिमान्‌है जो सर्वशक्तिमान्
होताहै उसमें अनन्तसामर्थ्य सामग्रीहोती है सोवहसामग्री स्वा-
भाविक है जैसे कि स्वाभाविकगुणगुणीका सम्बन्ध होताहै वह पृथक्
होसक्ती नहीं है और एकभीनहीं उससामग्रीसेसबजगत् को परमे-
श्वरनेबनाया जैसे जो गुणकीनाईंस्वाभाविक सामग्रीहै सोगुणीसे
भिन्नकभीनहीं होती क्योंकि स्वाभाविक जो गुणहै सोगुणीसेभिन्न
कभीनहींहोता इससे स्वाभाविकसामग्रीसहित परमेश्वर जगत्
उत्पन्नकरता उत्तर ऐसानकहनाचाहिए क्योंकिजोजिसका पदा-
र्थहोताहै वह उसीका कहाताहै सो परमेश्वर का अनन्त सामर्थ्य
स्वाभाविकहीहै अन्यसे नहींलिया वहसामर्थ्य अत्यन्तसूक्ष्महै औ-
रस्वाभाविकहोनेसे परमेश्वरका विरोधभी नहीं किन्तु उसी में
वहसामर्थ्य रहताहै उससे सबजगत्‌कोईश्वरनेरचाहै इससेक्याआ-
या कि भिन्न पदार्थनहोनेसे जगत्‌के रचनेसे उपादान कारण ज-
गत् का परमेश्वरही हुआ क्योंकि अपने से भिन्न दूसरा कोई
पदार्थ नहीं है कि जिसे लेके जगत् को रचे सो अपने स्वाभा-
विक सामर्थ्य गुणरूपसे जगत् कोरचा इससे सब जगत्‌का उ-
पादानकारण परमेश्वर हीहै परन्तु आपजगत नहींबनता तथा
अपनीशक्तिसे नानाप्रकारके जगत् रचने से दूसरेके सहायबिना
इससे जगत्‌कानिमित्त कारणईश्वरहीहै अन्यकोईनहीं तथा सा-
धारणकारणभी जगत्‌काईश्वरहै क्योंकिकिसीअन्यपदार्थके सहा-
यसेजगत्‌कोईश्वरनेनहींरचा किन्तुअपनेसामर्थ्यसे जगत् कोर-
चाहै इससेसाधारण कारणभीजगत्‌काईश्वरहै अन्यहैअन्यकोईनहीं
औरजो अन्यकोईहोता तोविरुद्धकार्य जगत् मेंदेखपड़ते विरुद्धका-
र्यों को हमलोगजगत्‌मेंनहींदेखतेहैं इससेजगत्‌केतीनों कारण प-
रमेश्वरही हैं अन्यकोईनहीं प्रश्न परमेश्वरनिराकारऔर व्यापक
है अथवानहीं उत्तर परमेश्वर निराकार और व्यापकही है क्यों-

कि निराकारहोता जोएक देशमें रहता और कहीं देख भी पड़ता सोएकदेशमें नहींहै औरकहीं देखभी नहीं पड़ता इससे निराकार हीईश्वरकोजानना चाहिये और जोनिराकारनहोता तो सर्वव्यापकनहोता तोसर्वात्मा और सबजगत्का अन्तर्यामी न होता सो सबजगत्का आत्मासर्वान्तर्यामीके होनेसे व्यापकही ईश्वरहै अन्यथानहीं प्रश्न सबजगत्कारचनऔर धारणईश्वर किसप्रकारसे करताहै उत्तर जैसाजगत् मेंहमलोगदेखते हैं वैसाही ईश्वरने जगत्रचाहै परन्तुइसमें यहप्रकारहै कि आकाश तो परमाणुसे भी सूक्ष्महै औरवायुकेपरमाणुकायहस्वभावदेखनेमें आताहै किनीचे ऊंचेऔरसबदेशमेंगमनकरनेवाले परमाणु हैं क्योंकि जो त्वचा इन्द्रियसेस्पर्शकरतेहैं वायुको हमलोगवैसाही स्वभाववाला देखते हैं कभीऊर्ध्वकभी नीचे औरकभीतिरछाचलता है इससे हमलोगपरमाणुकाअनुमानकरतेहैं इसमें अन्यभीबहुत कारणहैं क्योंकिवायुमें अनेकतत्त्वमिलेहैं परन्तु हमलोगमुख्यकोगणनासेइसबातको लिखतेहैं यथाअग्निकाऊर्द्ध्वजलकेतथानीचे औरपृथिवीकासमताअर्थात्विभिगतिको देखकेपरमसूक्ष्मपरमाणुरूप जोतत्वउनकाभीअनुमानकरतेहैं किवेभीइसी प्रकारकेहैं सोपरमेश्वरने पृथिवीमें अनेक तत्त्वोंका मेलनकिया है क्योंकिजोमेलनहोता तोतत्त्वोंकेस्वाभाविकगुणपृथिवीमेंनदेखपड़ते जैसे किवायुनहोतातोपृथिवीमेंस्पर्शभीनहोता यथाअग्नि, जल औरआकाश नहोते तोरूपरसऔर शब्दभीनदेखपड़ते इससे क्याजानाजाताहै किसबमें सबतत्त्वमिले हैं सोपृथिवीऔरवायुजलकेपरमाणु अधोगामीस्वभावसेहैंअग्निऊर्द्ध्वगमनऔरवायुतिरछेगमनकरनेवाला है इनसबकेपरमाणु भी न्यूनाधिकमिलनेसे स्थिरतथागमनपदार्थोंकेहोतेहैं जैसे कि पृथिवीऔरजलनीचेजातेहैं औरअग्नितथावायुऊपर और अनेक विधिरचनाकरतेहैं फिरभिन्नभिन्नपदार्थकहींनहींजाता न्यूनाधिकन्यूनतातत्त्वोंके मिलानेसे जितनीजिसकीगति परमेश्वरनेरचीहै

उठानीहीहोती है अन्यथानहीं औरसब से बलवान्वायु है वायुके आधारसेसबलोगोंको हमलोगदेखते हैं जैसे कि इसपृथिवीकेचारों ओरवायुअधिकहैतथावायुमेंअन्यतत्वभीमिलेहुएदेखपड़ते हैं और यहजोवायु ४९ वा ५०कोसतकअधिकहैउसकेऊपरथोड़ाहै सोज्योतिषविद्याकी गणनासेमस्तहै उसवायुका आधारआकाश और आकाशादिकसबपदार्थोंका आधार परमेश्वरहै सो जोसर्वव्यापकनहोता तोआकाशादिकोंका सबभगतसंभवतथाकैसेकर्ता इसपरमेश्वर व्यापकहैइसकारणके होनेसेसबकाआधारबनताहै अन्यथानहीं औरजोसाकारएकदेशस्थपरमेश्वरकोमानेगा उसकेमतमेंधारण सबजगत्का नहोवैगा इत्यादिक बहुतदोषआवेंगे फिर दोसकारकल्पवृक्षहमलोगदेखते हैं कि एकतोलघुवेग और गुरुत्वादिकगुणअधिकअधिकताभीपदार्थोंमेंहै क्योंकि जो हलकापदार्थ होताहै सोऊपरको चलताहै और गुरुताभीसो चलताहै जैसे कि जलके पात्रमें तेलकोडालदेतेहैं सोलघुहोनेसे तैलजलके ऊपर होजाताहै कभीनीचेनहीं रहता इसकायहकारणहै कि जिसमें छिद्रअधिकहोगा उसमेंजलऔरवायुअधिकहोगा वहलघु होगाऔर जिसमें जलऔरवायु थोड़ाहोगा वहगुरुहोगा जोकि सर्वत्र अत्यन्तजुड़ाहुआ वहगुरुहोगा औरजोमिलाहुआवस्तुउसके भीतरकुछअवकाशछिद्र रहेंगे जैसेकिलोहाऔर काठ दोनों काभारतुल्यहोताहै परन्तु जलमें दोनोंकोडालनेसे काठ तो ऊपरहोगा औरलोहा नीचेचलाजायगा तथा वह भीमनेसेनीचेचलाजाताहै इसकायहकारण है कि उसके छिद्रों में जलऊपरचला जाताहै सोऊपरसेभारभार और सूक्ष्म अधिक बढ़ता औरपृथिवीके आकर्षणसे नीचेचलाजाताहै तथाकोईप्राणी अत्यन्त भीगने और नसरेचनादिकके अत्यन्तदिखानेसे वहनीचे चलाजाताहै औरबहुतसीपदार्थोंमें देखपड़ता है जैसे मनुष्य, घोड़ा, हरिण वायुपवनआदिकरेहैं तथाअग्निजीवसूक्ष्म, पदार्थोंके अवयवोंके

भिन्न २ करदेतेहैं और जलतथापृथिवीकेपदार्थोंसे मिलने और भि-
लानेवालेहैं सोजहांजिसका अधिकबलहोगा वहां उसका कार्य
होगा जैसेकिवायुसूक्ष्म और लघुहोनेकेकारणहै तबवायुओ-
रकीपृथिवीभिन्न, त्रसरेणुयुक्त जिसस्थानसेवायुऊपरचढ़ा उसस्था-
नमेंचारोंओरसेंशुष्कवायु गिरता है वहीअधिकचलनेऔर आंधीका
कारणहै और वही सूर्यकाजलकेऊपर आकर्षणकेहोनेसे कारणहै
क्योंकिसूर्य और अग्निसबरसों काभेद करते हैं फिरएकाधिकरस
सब ऊपर चढ़तेहैं परन्तु उनमें अग्निवायु पृथिवी के भीपरमाणु
मिलेहैं औरजलके परमाणुअधिक हैं फिर जबअधिकऊपरजाते
हैंक्योंकि परमाणुचढ़नेसे लघुहोते हैं अर्थात अधिकभारहोता है
फिरवायुधारणउनको नहींकरसका वहां वायुजलके संयोगसे
शीतलचलताहै उससे जलादिकोंकेपरमाणु मिलके बादलहोजाते
हैं उनसेवायुभीचारोंतरफसेचलतेहैं वायुबन्दहोनेसे उष्णताहोती
है फिरवे परस्परभिड़तेहैं और घिसतेहैं इससे गर्जन औरबीजली
उत्पन्नहोतीहै फिरवर्षाजल और बिजली होनेसे जलपृथिवी के
ऊपर गिरताहै तथावायुकेवेग औरजोरसे बिजली नीचे गिरती
है और अग्निजलपरवेग तथाजलकाभीवेगहोताहै सो जलकोपा-
त्रमेंरखके ऊपररखने औरअग्निकोनीचेरखनेसे जब उस जल में
अग्निअधिकहोताहै तबउसमेंवेग और बलहोता है यही रेलआ-
दिपदार्थोंकाकारण है तथाबिजलीअद्भुतविद्या और नाना प्रकार
के यन्त्रोंसेतारविद्याभी होतीहै ऐसेहीविद्या से अनेक प्रकार की
पदार्थविद्याबनसक्तीहै ग्रन्थअधिक होजाय इस हेतु हमअधिकन-
हीं लिखतेहैं क्योंकि शास्त्रोंमेंलिखाहै सोबुद्धिमानलोग विचार
लेंगे थोड़ीथोड़ी २ विद्यासेमनुष्य लोगअनेकप्रकारकेपदार्थरचलेते
हैं फिरसर्वशक्तिमानअनन्तविद्यावाला जो ईश्वर अनेक प्रकार के
पदार्थोंको रचे इसमें क्या आश्चर्यहै इसप्रकारसेजगत् को रचता है
ईश्वरकी अपनीनित्यशक्ति औरगुणउनसे आकाशादिक अनन्त ब्रह्मण्ड-

र प्रकृति और परमाणु एकत्र एकहीकेनामहैं नकोईचेताहै आकाश सेवायुआदिकेपरमाणु बनाताहै उनसे उनपरमाणुसे एक अणुबनताहै दो अणुसेएकद्व्यणुकबनताहै ऐसावायुद्व्यणुकहोताहै इससेपरमाणुरूप नहींदेखपड़ता वायुसेत्रिगुणस्थूल अग्नि रचाहै इसमें अग्नि में रूपदेखपड़ताहै उससे चतुर्गुण जलऔर जलसेपंचगुणपृथिवी रची है तथाउसपरमाणुकेमेलनसेअन्न, घासऔरवनस्पत्यादिकोंके बीजरचे हैं उनमें परमाणुके संयोग इसप्रकारकेरक्खेहैं कि भिन्न से विलक्षण२ स्वाद पुष्प,पत्र,फल और काष्ठादिक होतेहैं सोप्रसिद्ध जगत्के पदार्थोंको देखनेसे हमलोग परमेश्वरकी रचनाका अनुमानकरतेहैं और साकारसबजगत्में व्यापकहोनेसे सब जगत्का धारण करताहै तथागुरुके आधारदूसराऔरपरस्पर आकर्षण सेभी जगत्का धारणहोताहैपरन्तु सबआकर्षणोंका आकर्षण औरधारणकरनेवालोंका धारणकरनेवाला परमेश्वरही है अन्यकोई नहीं प्रश्न इसीलोकमें इस प्रकारकी सृष्टिहै वाअन्यलोकोंमेंऐसी सृष्टिहै उत्तर सब लोकोंमें सृष्टिअनेक प्रकारकीहै जैसीकि इसलोकमें क्योंकि इस लोकमें हमलोग पृथिव्यादिक पदार्थप्रयोजनके हेतु रचेहुए देखतेहैं इनमें एकपदार्थभीव्यर्थनहीदेखते इससे हम लोग अनुमान करतेहैं किकोईलोकपरमेश्वरनेव्यर्थ नहीं रचाहै किन्तु सब लोकोंमें अनेक विधिमनुष्यादिकसृष्टिरचीहै क्योंकि परमेश्वर का व्यर्थ कार्यकभीनहीं होता प्रश्न कितनेलोक परमेश्वरने रचे हैं उत्तर सूर्य, चन्द्र औरजितनेतारेदेखपड़तेहैं तथा बहुत भी नहीं देखपड़ते एसलोकहीहैं सोअसंख्यातहैं प्रश्न ये सबलोक स्थिरहैं वाचलतेहैं उत्तर सबलोक अपनीअपनीरीति औरअपनेर वेगसे चलतेहैं सो अनेक विविधगतिहैं स्थिरतो एकपरमेश्वरही है औरकोई नहीं प्रश्न जब परमेश्वरनेपहिलेसृष्टिरची तबएक २ दो २ मनुष्यादिक जातिमेंरचे अथवा अनेकरचेथे उत्तर एक २ जातिमें परमेश्वरनेअनेकर रचेहैं एकरवादोरनहीं क्योंकिजैसीआदिक जा-

कि एक द्वीप में एक २ दो २ रचने को द्वीपान्तर में ये कैसेजासके-
र्कों इत्यादिक और भी विचार आप लोग करलेना प्रश्न परमे-
श्वरने सब पदार्थ शुद्ध २ रचे हैं वा कोई पदार्थ अशुद्धभीरचाहै
उत्तर परमेश्वर सब पदार्थ अपने २ स्थान में शुद्धही रचे हैं अ-
शुद्ध कोई नहीं परन्तु विरुद्ध गुणवाले परस्पर मिलने वा मि-
लानेवाले अशुद्ध कहते हैं अपने २ प्रतिकूल के होनेसे जैसेकि दू-
ध और नोंन जब मिलतेहैं तबवेदोनोंनष्टगुण होजातेहैं क्योंकि दो
नोंका स्वाद बिगड़ जाताहै परन्तु उन्हीं दोनोंको पदार्थ विद्या की
युक्तिसे तृतीय पदार्थ कोईरचले फिरभी वहउत्तम होसक्ताहै जैसे
सर्पसंखियाभी अपनेस्थानमें शुद्धहैं क्योंकि वैद्यक शास्त्रकीयुक्तिसे
इनकीभी बहुत औषधियां बनतीहैं अनुकूलपदार्थों में मिलाने से
परन्तुवेमनुष्यआदिकोंकोकाटें अथवाभोजनमें खालेनेसे दोष कर-
नेवाले होजातेहैं ऐसेही अन्य पदार्थोंकाविचारकरलेना प्रश्न जब
इस जगत् का प्रलय होताहैतो किस प्रकार से होता है उत्तर जिस
प्रकारसे सूक्ष्मपदार्थों से रचनाऽस्थूलकी होतीहै उसी प्रकार से प्र-
लयभी जगत्काहोताहै जिससे जो उत्पन्नहोताहै वहसूक्ष्म होकेअ-
पने कारणमें मिलताहै जैसेकिपृथिवीकेपरमाणु औरजलादिकों के
परमाणुसे यह स्थूल पृथिवीबनीहै इनपरमाणुकाजबवियोग होता
है तबस्थूल पृथिवी नष्टहोजातीहै वैसेही सबपदार्थोंका प्रलय जा-
नना आकाश सेपृथिवीपर्यन्तकीहै जबएकगुणीयहोगी तबजलरू-
पहोजायगी जल और पृथिवीजबएकरूपहोंगे तबअग्निरूप हो
जायगे जबवे तीनों एक २ गुणयुक्त तब वायुरूपहोजायगे जब वे
भिन्न २ होजायगे तबसबपरमाणुरूपहोजायगे परमाणुकी जबसू-
क्ष्म अवस्थाहोगी तब सब आकाश रूपहोजायगे औरभवआकाश
कीभी सूक्ष्म अवस्थाहोगी तबप्रकृतिरूपहोजायगा जब प्रकृतिलय
होतीहै तबएक परमेश्वर और सबजगत्काकारण औ परमेश्वर का
सामर्थ्य औगुणपरमेश्वरकेअनन्त सत्यसामर्थ्य वाला एकअद्वि-

नामपरमेश्वरका रहेगा और कोई नहीं तो यह सब आकाशादिक जगत् परमेश्वरके आगे कैसाहै कि जैसा आकाशके सामने एक अणु भी नहीं इससे किसीप्रकारकाहोना उत्पत्तिस्थिति औरप्रलय से परमेश्वरमेंनहीं आता इससे सबसज्जन लोगोंको ऐसाही मानना उचितहै प्रश्न जन्मऔरमरणादिक किसप्रकारसे होते हैं उत्तर लिंग शरीरऔरस्थूलशरीरका संयोगसेप्रकटका जो होना उसका नाम जन्महै और लिंगशरीर तथास्थूलशरीरकेवियोग होनेसे अप्रकटकाजोहोना उसका नाममरणहै सो इस प्रकार से होता है कि जीवअपनेकर्मों के संस्कारोंसेघूमताहुआ जल वा कोई औषधि में अथवावायुमेंमिलताहै फिर जैसाकिसकेकर्मों का संस्कार अर्थात सुखवादुःख मिलनाजिसको होनाअवश्य है परमेश्वरकी आज्ञा केअनुकूलवैसेस्थानऔर वैसेही शरीरमें मिलकेगर्भमें प्रविष्ट होताहै फिरजिसमें वहमिला उसके अवयवोंको आकर्षण से शरीर बनताहै जैसीपरमेश्वरने युक्तिरचीहै जिसके शरीर का वीर्य होगा उसवीर्यमें उसकेअवयवयुक्तिसेसूक्ष्मअवयव आते हैं क्योंकिसब शरीरकेअवयवोंसे वीर्यकीउत्पत्ति होतीहै फिरउसवीर्यके अवयवोंमेंउसशरीरके अवयवमिलजातेहैं उनसेशिर,नेत्र, नासिका,हस्त, पादादिक, अवयव बनजाते हैं तबवहशरीर, नख औरशिखापर्य्यन्तपूर्णबनजाता है तबवहजीवशरीर में उनअवयवों सेचेष्टाकरता भया शरीरसहित प्रकटहोता है फिरभी अन्नपानादिक बाहर के पदार्थों के भोजन करने से शरीर के अवयवों कीवृद्धिहोती है सोछःप्रकारवालाशरीरहै अस्तिनाम शरीर है १ जायतेनामजन्मकाहोना २ वर्द्धतेनाम बढ़ना ३ विपरिणमते नाम स्थूलकाहोना ४ अपक्षीयतेनामक्षीण होना ५ विनश्यते नाम नष्टकाहोना नाममृत्युकाहोना ६ ए छः विकार शरीर के हैं फिर जबमरणहोता है तबस्थूल और लिंगशरीरका वियोग होताहै जो स्थूलशरीरसेलिंगशरीर निकलके बाहरका जोवायु उसमें मिल-

रहै किरणोंकेसाथ अन्तरिक्षमें घूमताहै कभी सूर्य्य के किरणोंके साथऊपरऔर चन्द्रकीकिरणोंके साथ नीचेआजाताहै अथवा वायु केसाथ नीचे ऊपर आकाशमें रहताहै फिर उसप्रकार से शरीर धारणकरलेताहै प्रश्न स्वर्ग और नरकलोक है वा नहीं उत्तर सब कुछहै क्योंकिपरमेश्वरकेरचे असंख्यातलोक हैं उनमेंसेजिनलोकों मेंसुखअधिकहै औरदुःखथोड़ा उनको स्वर्गकहते हैं तथा जिनलो- कोंमेंदुःखअधिकऔर सुखथोड़ाहै उनको नरककहते हैं औरजिन लोकोंमेंसुख औरदुःखतुल्यहै उनको मर्त्यलोककहते हैं इसप्रकार केस्वर्ग,मर्त्य और नरकलोकबहुतहैं उनमेंभीअनेकप्रकारके स्था- नऔरपदार्थ हैं किजिनमेंसुखवादुःख अधिकवान्यूनहै सोइसीहेतु परमेश्वरने अनेकप्रकारकेस्थान औरपदार्थरचे हैं किपापीपुण्यात्मा औरमध्यस्थजीवोंकोयथावत्फलमिले अन्यथानहोय जैसेकि रा- जाके उत्तममध्यमऔरनीचस्थानहोतेहैं जिनसेउत्तम मध्यम औ- र नीचोंकीयथावत् व्यवहारकीव्यवस्थाहोतीहै परमेश्वरकायथा- वत्अखण्डित संपूर्णजगत्में राज्यहै औरयथावत् न्यायसे जिसकी व्यवस्थाहै फिर परमेश्वरकेराज्यमें स्वर्गनरक और मर्त्यलोकादि- कोंकीव्यवस्थाकैसेनहोगी किन्तु अवश्यहीहोगी प्रश्न मरणसमय मेंयमराजकेदूतआते हैं उसजीवकोयमलोकमेंलेजाते हैं बांध के मा- रते यमराजकेपासलेजाते हैं और यमराज यथावत्न्यायसे दण्ड देते हैं यहबातसत्य है वा मिथ्याहै उत्तर यहबातमिथ्याहै क्योंकि जीवअत्यन्त सूक्ष्महै उसकोयमदूतलेजानेमें कभीनहीं आता और गरुड़ पुराणादिको में लिखाहैकि पिंडदेनेसे जीवका शरीर बनजाताहै औरवैतरणी नदीके तरनेके हेतु गोदानादिक करनाचाहिये और यमदूतों का कज्जलके पर्वतकीनाईं शरीरलिखाहै वे सबरके मा- र्गऔरघरके दरवाजेमेंभीतर जीवकेपास कैसे आसकेंगे चिवंटी आ- दिकसूक्ष्मजन्तुओंमें एककालमें अनेक जीव मरते हैं वहां कैसे जायेंगे तथा बन वा नगरादिकोंमें अग्निकेलगनेऔरयुद्धसे एककालमेंबहु-

सबजीवोंकाधारणहोताहै एकएकजीवको पकड़नेके हेतु बहुतदूतजाते हैं इतनदूतकहां रहतेहैं तथाउनका होना कैसेवनसकै सोयहवा- तअत्यन्त मिथ्याहै और जोवेदादिक सत्यशास्त्रोंमें यमराज, तथा धर्मराज नामलिखेहैं वेपरमेश्वरकेहैं और वायुतथा सूर्य केभी हैं इसमें प्रमाणयाहै कि जैसी व्यवस्थाजीवोंकीरचनेमें परमेश्वरनेरची है वैसीहीहोतीहै सोवायुऔर सूर्य आधारसे सबजीवोंका जा- नाऔरआनाहोता है तथा यही परमेश्वर की आज्ञा है किजैसाजो कर्मकरै वहवैसा फलपावै ये जोनाम लिखेहैं उनमें ये प्रमाण हैं उत्पत्तिके विषय येतो कुछश्रुति लिखदियेहैं परन्तु फिरभीलिख- तेहैं । यतोवाइमानिभूतानिजायन्ते येनजातानिजीवन्ति यत्प्रय- न्त्यभिसंविशन्तीति तद्विजिज्ञासस्वतद्ब्रह्म ॥ १ ॥ यह यजुर्वेदकी तैत्तिरीयशाखाकीश्रुतिहै । अथातोब्रह्मजिज्ञासा ॥ २ ॥ जन्मा- द्यस्ययतः ॥ ३ ॥ एदोव्यासजीके सूत्रहैं इनकायह अभिप्रायहैकि जिसपरमेश्वरसेसबभूत अर्थात सबजगत् उत्पन्नहोताहै उत्पन्न हो- केउस परमेश्वरके धारण और रक्षासे सबजगत्जीताहै औरप्रल- यमेंउसी परमेश्वरमेंलीनहोजाताहै वही ब्रह्महैउसब्रह्मको जानने कीइच्छाहै भूयोन्तु अन्यही दोनों सूत्रकाभी अर्थहै । सवितारंप्र- सेहनि, इत्यादिमन्त्रयजुर्वेदको संहितामेंलिखे हैं इनका यहअ- भिप्रायहै किजीवअपनाशरीरछोड़ताहै तबसूर्य वायुमें मिलता है फिरजैसापूर्वलिखा वैसहीजाताऔर आताहै सोसब बात यहां लिखीहै देखा चाहै सो देखले । अन्नेनसोम्यशुङ्गेनापोमूलमन्वि- च्छाद्भिः सोम्यशुङ्गेनतेजोमूलमन्विच्छतेजसासोम्यशुङ्गेनसन्मूल- मन्विच्छसन्मूलाः सोम्येमाःप्रजाः । इत्यादिकसामवेदकीछान्दोग्य कीश्रुतिहै इनका यहअभिप्रायहै किजैसी आकाशादिक क्रमसेउ- त्पत्तिजगत्कीहोतीहै वैसेही क्रमसेप्रलय भीहोताहै सूक्ष्म का- र्यतापृथिवीरूपहोजाताहै उसका मूलजलहै सोजबपृथिवीका प्रलय होताहै तब पृथिवीजलरूप कारणमें लयहोतीहै तथाजल, अग्नि

में अग्नि वायुमें वायु आकाशमें और आकाश परमेश्वरमें सो जिस प्रकारसे प्रलयको लिखा उसी प्रकारसे होताहै और हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रेइति यह मन्त्र पहिले लिखाहै और इसका अर्थभी लिख दियाहै सो परमेश्वरही सबजगत्का कारण कर्त्ताहै अन्यकोई नहीं इससे ऐसा सिद्धभया उत्पत्ति स्थिति और प्रलय परमेश्वरहीके आधीन है यह संक्षेपसे जगत्की उत्पत्ति स्थिति और प्रलयके विषयमें लिखा और जो विस्तारसे देखा चाहै सो वेदादिक सत्य शास्त्रोंमें देख लेवै इसके आगे विद्या, अविद्या बन्ध और मोक्षके विषयमें लिखा जायगा ॥

इति श्री मद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थ प्रकाशे सुभाषा विरचिते अष्टमः समुल्लासः सम्पूर्णः ॥ ८ ॥

अथ विद्याऽविद्याबन्धमोक्षान् व्याख्यास्यामः । वेदितव्यप-दार्थानां यथार्थज्ञानं विद्या विपरीतज्ञानमविद्या किजो जैसा पदार्थ है उसको वैसाही जानना है सो विद्या यथार्थ पदार्थ ज्ञान अविद्या जैसा पदार्थ है उसको वैसा न जानना उसका नाम अविद्या है ज्ञान विवेक और विज्ञान इत्यादिक विद्याके नाम हैं अज्ञान भ्रम और अविवेक इत्यादिक सब अविद्याके नाम हैं । अनित्याशुचि-दुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या ॥ ५ ॥ यह पतञ्जलि मुनिका योगशास्त्र में सूत्र है इसका यह अभिप्राय है कि अनित्य अशुचि दुःख और अनात्मा जो हैं उनको वैसा न जानना किन्तु इनमें नित्य शुचि सुख और आत्माकी बुद्धि होती है जैसे कि, स्वर्ग और राजा इत्यादिक पदार्थोंमें नित्यानित्यका जो करना कि स्वर्ग हैं नित्य और ब्रह्मादिक देव नित्य हैं ऐसा ज्ञान बहुत मनुष्यों को है परन्तु वे विचार करके देखें कि जिनकी उत्पत्ति होती है वे नित्य कैसे होंगे कभी

नहीं क्योंकि बहुतपदार्थों के संयोगसेजो पदार्थहोताहै सोउनपदार्थों केवियोगसे वहजो संयोग से बनाथा सोअदृश्यनष्ट होजायगा ब्रह्मादिकों के शरीरऔरस्वर्गादिक लोकोंकेसंयोगसेबनेहैं उनका वियोगभीअवश्यनाशहोताहीहै फिरजो इनअनित्यपदार्थों में नित्यनिश्चयहोना औरनित्यजो परमेश्वर तथापरमेश्वर के नित्यगुण धर्मऔरविद्याउनकोनित्यनजानना कभीउनकेजानने में इच्छा भी नहोनी यहअविद्याकाप्रथमभागहै और अनित्यपदार्थोंको अनित्य जानना तथानित्यपदार्थोंको नित्यजानना यहविद्याका प्रथमभागहै अशुचि अपवित्रनाम अशुद्ध पदार्थों में शुद्धका निश्चय होना औरशुचिजोपवित्रअर्थात्शुद्धपदार्थमें अशुद्धकानिश्चय होना जैसेकियहशरीरइसके सब मार्गोंसे मलही निकलताहै कान, आंख, नाक, मुखतथानीचेकेछिद्र औररोमोंकेछिद्रों सेभीदुर्गन्धीही निकलताहै परन्तुजिनकीबुद्धिविषयासक्तहोतीहै वहशुद्धबुद्धि उसमेंकरताहै तथास्त्रीपुरुषके शरीर में शुद्ध बुद्धि करतेहैं ऊपर केचामको देखकेमोहितहोजातेहैं फिर अपनाबल, बुद्धि, पराक्रम, तेज,विद्या, औरधनउसकेहेतुनाशकरदेते हैं जोउनकोउसमें शुद्धबुद्धिहोती सोऐसेकाममें नष्टक्योंहोते जोबड़ेर राजाऔर बड़े२ धनाढ्यऔरमहाराजालोग तथा विद्यादिकलोगजोहैं वेइसकाममें नष्टहोजाते हैं कभीउनकेहृदयमें इसबातकाविचारभीनहींहोताजैसे अग्निमेंपतङ्गगिरकेनष्टहोजाते हैं वैसेवेभी ऐश्वर्यसहित नष्टहोजाते हैं औरपवित्रजो परमेश्वरविद्या औरधर्मइनमें उनकीबुद्धि कभी नहींआती यहअविद्याकादूसराभागहै औरजोशुद्धको शुद्धजानना औरअशुद्धकोअशुद्धजानना यहविद्याकादूसरा भाग है दुःखमेंसुखबुद्धिकाकरना औरसुखमेंदुःखबुद्धिकाहोना जैसेकि काम,क्रोध,लोभ, मोह, भय शोकऔर विषयों की सेवा इनमें जोक्रोधाग्निकभीनहींआती जैसेकिअग्निमें घीडालनेसे अग्नि बढ़जाताहै वैसेउनकीभी तृष्णा बढ़तीजातीहै परन्तु उस दुःख में

बहुतजीवोंकीसुखबुद्धिदेखनेमेंआतीहै क्योंकिजोदुःख में सुखबुद्धि न होती तो वे इसमें फसते नहीं यह अविद्याका तीसरा भाग है औरजोपुण्यअर्थात्सत्यधर्मकाअनुष्ठान सत्यविद्याका ग्रहण जितेन्द्रियताकाकरना तथावैराग्यसत्संगसद्विद्या औरपरमेश्वरकी प्राप्तिका उपायअर्थात् मोक्षका साधनाइनमें इसकीबुद्धि लेशमात्र भी नहीं आती इनके विनाजीवको कभीसुख नहींहोता परन्तुविपरीतबुद्धि के होनेसे दुःखहीमेंफसेरहतेहैं सुखमें कभी नहींआते यह अविद्याकातीसराभागहै औरसुखमें सुखबुद्धिकाहोना और दुःख में दुःखबुद्धिकाहोना जोविद्याकातीसराभागहै तथा अनात्मा में आत्मबुद्धिऔरआत्मामें अनात्मबुद्धिकाहोना जैसेकि शरीरादिक सब अनात्मपदार्थ हैं इनमेंआत्माकीनाईंनिश्चयमनुष्योंकी बुद्धि है जबदेहादिकोंमेंदुःख होताहै तब इनकी बुद्धिमें यही होताहै कि मैं मरा और मैं दरिद्र दुःखी हूं मैं दुबला होगया मैं पुष्ट हूं मैं धनवान् हूं मैं सुन्दर हूं इत्यादिक निश्चयलोकोंमें देखपड़ता है और जोआत्मा औरपरमात्मादिक नित्यचेतनस्वरूप है औरपरमेश्वरइन नित्यपदार्थोंमें इसकी बुद्धि नहींआती नित्य सुख जोमोक्ष इसकी इच्छाभी कभीनहींहोती इससेजन्म, मरण, क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, हर्षऔरशोक इसदुःखसागरसे कभी नहीं निकलते यही अविद्या का चौथाभागहै औरआत्माको आत्मा जानना अनात्मा को अनात्माजानना यहविद्याकाचौथाभागहै इसलिये आहकि अनित्याशुचिदुःखानात्मसुनित्यशुचिसुखात्मबुद्धिस्तथा नित्यशुचिसुखात्मस्वनित्याशुचिदुःखानात्मबुद्धिरविद्या । यथोऽन्यथाचाविद्येति विज्ञातव्या अन्यथा नाम मिथ्या जोज्ञान जिसवस्तुको वैसा न जानना इसका नाम अविद्याहै औरनिर्भ्रम यथार्थ ज्ञानका होना सो विद्या कहातीहै विद्याअविद्या की उत्पत्ति निश्चयअज्ञानादिदोषोंसे होती है जबयहजीव विद्याहीनहोके बाहरके पदार्थों को सुख के हेतु समझताहै तबमनको बाहरकी ओर प्रेरता है फिर वह मन इन्द्रियों

को बाहरके पदार्थों में लगाकेहृतकरदेता है सो जैसे कोई पुरुष निशानेमेंतीर वा गोलीलगाया चाहताहै तबवहभीतरसेबाहर की ओर ध्यानकरताहै सोनिशको बन्दूकके मुखसेलगाकेनिशानेमेंलगादेताहै वैसेहीजो२ व्यवहारजीवकिया चाहताहै तबउसीप्रकारका व्यवहार जीवमेंभी होताहै फिर बाहरऔर भीतरके पदार्थों को यथावत् न जाननेसे जीवभूलयुक्त होके अन्यथा जानलेता है इससे फिर वहसंस्कार अन्यथाहोनेसे अविद्याकहातीहै सोनअपने स्वरूपकाकभीध्यानकरताहै न परमेश्वरका तथानविद्याका किन्तु जैसे देखेमिथ्यासंस्कारउसकेहैं उसीमेंगिररहताहै क्योंकि जैसाजिसकाअभ्यासकरेगा वैसाही उसजीवकोभानतारहेगा फिर जबतकयह अविद्याजीव में रहेगी तबतक उसको विद्या कभी नहीं होती परन्तु जबकभीअच्छासंग और सद्विद्याका अभ्यास तथाविचार और धर्मकाअनुष्ठान तथा अधर्मकात्यागकभी नहीं वहजीव करसक्ता और यथार्थतत्त्वज्ञानपदार्थोंकाउसकोकभीनहीं होता जब तक यहअविद्याजीवकोरहतीहै तबतकविद्याका भान औरविद्याका ज्ञान नहीं होता क्योंकि जबजीव शुभविचार करताहै तब उसको कुछ२ विवेक उत्पन्नहोताहै किसत्य और असत्यको असत्यजानना फिर अविद्याकेगुण और उनकेकार्यउनमें वैराग्य होताहै अर्थात् उनकोछोड़ताहै औरविद्यादिकको सत्यार्थउनमेंभीनिश्चयकरता है इसमें यहकारणहै कि जबतकपदार्थों का दोषनहींजानता तबतक उनकेत्यागकरनेकी बुद्धिजीवकी कभीनहींहोतीक्योंकित्यागकाहेतु दोषों का यथावत् देखनाहीहै तथा पदार्थोंकेगुणकाजोज्ञानहोना सोई ग्रहणकाहेतु है फिरवहजीवधर्माधर्म कायथावत् निश्चयकरके अधर्मकात्यागऔरधर्मका ग्रहण करेगा फिर जबकालमनशान्त होगा किविद्या, धर्म, सत्सङ्ग, सत्पुरुषोंकासंग, योगाभ्यास, जितेन्द्रियता, सत्पुरुषोंका आचरण, मोक्ष और परमेश्वरहीमें मनवृत्ति युक्तहोनेसेपरहोजायगा इनसे विरुद्धअविद्या अर्थात् कुसंग किछुभ

रूपोंकासंगविषयोंका अत्यन्तअभाव अर्थात् जितेन्द्रियतादुष्टकर्मोंका आचार जिसमें अन्यदोष और परमेश्वरको छोड़के उपासनामा-र्थ नाम औरस्तुतिकाकरना इनसे उसका बहद होजावेगा इनकाना-म शमहै फिरसबइन्द्रियांस्थिरहोजावेंगी इसकानाम दम है फिर अविद्यादिकजितने दुष्टव्यवहार उनकेउनकानाशपूर्वक हो जायगा अर्थात् इनमें कभी न फसेगा उसका नाम उपरति है फिरशीत, उष्ण, सुख, दुःख, हर्ष, शोक, औरक्षुधा, तृषादिकइनका सहनअर्था-त इनमें हर्ष वा शोक नकरेगा इसकानाम तितिक्षाहै फिर वि-द्यादिकउत्तमगुणोंमेंअत्यन्तश्रद्धाअर्थात् प्रीतिजीवकीहोती है अ-विद्यादिकदोषोंमें सदाअप्रीति इसकानाम है श्रद्धाफिरमनबुद्धिचि-त्त, अहङ्कार, इन्द्रियऔरप्राणइनसबकेवशीभूतहोजायगे उन-को जहांस्थिरकरेगावहींस्थिर रहेंगे और अविद्यादिक अनर्थ में कभीनजायेंगे इसकानाम समाधानहै एवं: शमआदिकषट्सम्प-त्तिहै फिरजैसेक्षुधातुर पुरुषकी इच्छा अन्नहीमें रहती है वैसे उसकामन मुक्तिहीमें रहेगाकिमेरी मुक्तिकबहोवेगी इसी निश्चय-वहारोंमें उसकामन लगारहेगासदा इसकानाम मुमुक्षुत्व है ऐसेजब विवेकादिकगुणमनुष्योंमें होते हैं तबवहब्रह्मविद्याका अधिकारी होताहै फिरवहसबसत्यशास्त्रोंकाजो सम्बन्ध पदार्थ इत्यादिकवि-षयउनकोयथावत्जानेगा फिरशास्त्रजिनपदार्थोंके प्रतिपादनक-रते हैं उनपदार्थोंके साथशास्त्रोंकाप्रतिपाद्य प्रतिपादकसम्बन्धको वहजीवयथावत्जानलेगा इसकानाम सम्बन्धहै फिर वह यथायु-क्तिशास्त्रोंका श्रवणकरेगा श्रवणकेअनन्तर उनकायथावत्वि-चारकरेगा इसका नाम मननहै और फिरउनपदार्थों को यथावत् प्रत्यक्षजाननेकेहेतु योगाभ्यास अर्थात्ध्यानआत्मदर्शनकी रीति से करेगा इसकानामनिदिध्यासन है फिर पृथिवीसेलेकेपरमेश्वर प-र्यन्त सबपदार्थोंकाज्ञानजैसाहैवैसाप्रत्यक्षज्ञानकरेगा उसी समय इस-कातो प्रयोजन सिद्धदुःखोंकी निवृत्तिऔर परमानन्द परमेश्वर

भीजोप्राप्ति इसकानाशक्योंजनहै सोजबयहविद्याहोगी तब अवि-
द्यादिकसबदोषनष्ट होजायगें जैसेसूर्यके प्रकाश से अन्धकारनाश
होजाता है विद्याऔरअविद्या यह दोनोंअन्धकार और प्रकाश की
नांई परस्परविरोधीपदार्थ हैं इनकाफलितार्थ यहहै किजो विद्या-
वान्होगा सो अधर्मादिक दोषोंको कभीनकरेगा औरजो अवि-
द्यावान्हुआ उसकीनिश्चितबुद्धि धर्मादिकके अनुष्ठानमें कभीनल-
गेगी प्रश्न विद्याकी पुस्तककोईसनातनहै यासबपीछेरचीगईहैं उ-
त्तर चार वेदोंकोछोड़केरचीगईहैं प्रश्न जैसेअन्यसबशास्त्ररचे गए
हैं वैसेवेदभी रचागयाहोगा उत्तर ऐसा मतकहो जो ऐसा कहोगे
तो आपकेमतमेंएकअनवस्थादोष आजायगा क्योंकिकोईपुस्तकस-
नातनजबतकनहो तबतक किसीपदार्थ अथवापुस्तककासत्य वाअसत्यनि-
श्चय कभी नहोसकेगा जोकोई पुस्तकरचेगा उसकाप्रमाणकैसेहोगा
क्योंकिजोसनातनपुस्तकहोती तोउसपुस्तकसेजांचके सत्यासत्य
जोकोईजानसके फिरउसकाखण्डनकरके दूसराकोईग्रन्थ रच-
लेगा ऐसेदूसरेका करकेतीसरा ऐसेही अनवस्थाआजायगी प्रश्न
जैसे अन्यपुस्तककाप्रमाणवेदसेहोताहै वैसेवेदकाप्रमाण किसपु-
स्तकसेहोगा उत्तर ऐसाकहनेसेभी अनवस्थादोषआजावेगा क्यों-
किवेदकेप्रमाणकेहेतु कोईअन्यपुस्तकरचीजावेतोफिर उसपुस्त-
कके प्रमाणकेहेतु कोईतीसरीभी मानीजायगी ऐसेही २ आगे २
अनवस्थाआजायगी इससेअवश्यएकपुस्तकसनातनमानना चाहि-
ए जिससेकिअन्यपुस्तकोंकीव्यवस्थासत्य रहैसोवेदकेसनातनहो-
नेमें पहिलेलिखदियाहै यहांविचारलेना प्रश्न छःशास्त्रोंमें बड़े २
विरोधहैं किपूर्वमीमांसावाला धर्मअधर्मी और कर्महीं पदार्थ हैं इ-
नसे जगत्की उत्पत्तिमानताहै तथावैशेषिकदर्शन औरन्यायदर्शन
में परमाणुसे क्रमसेजगत्कीउत्पत्तिमानीहै औरपातंजलदर्शनतथा सां-
ख्यदर्शनमें प्रकृतिसे जगत्की उत्पत्तिमानीहै औरवेदान्तदर्शन में
परमेश्वरसे सबजगत्कीउत्पत्तिमानीहै यह बड़ा परस्पर विरोधहै

सब शास्त्रोंमें इसका क्या उत्तर है उत्तर [वेदान्तमें प्रथम सृष्टि का
व्याख्यान है जिसमें पहिले जगत् था ही नहीं और जब अत्यन्त सबका
प्रलय होगा तब एक ईश्वरही में सब होगा अन्यमें नहीं सो यह आ-
दिसृष्टि है क्योंकि पहिले नहीं थी और फिर उत्पन्न भई इससे इस सृ-
ष्टि के आदि होनेसे सादि कहाती है और मीमांसादिक शास्त्रोंमें अ-
नादिसृष्टि का व्याख्यान है क्योंकि प्रकृति परमाणु और सब जीव इ-
नका नाश प्रलयमेंभी नहीं होता इसका नाम महाप्रलय है इस में
प्रकृति परमाणु आदिकोंके मिलनेसे मिलना स्थूलजगत् होता है वह
सब परमाणु आदिकोंके वियोगसे अलग होजाता है परन्तु प्रकृति और
परमाणु आदिक बने रहते हैं फिर भी जब ईश्वर उनको मिलाके जग-
त् को रचता है तब वह स्थूल प्रकट होजाता है फिर उनसे स्थूल जगत् उ-
त्पन्न होता है फिर नष्ट होता है तब प्रकृति और परमाणुरूप हो-
ता है फिर उनसे स्थूल जगत् उत्पन्न होता है ऐसे ही अनेक बार उत्प-
त्ति और अनेक बार जगत् का प्रलय होता है परन्तु प्रकृति और पर-
माणु इस स्थूल जगत् का कारण सो नष्ट नहीं होते इससे आदि
इस जगत् की नहीं देख पड़ती क्योंकि इसका कारण प्रकृति और पर-
माणु सदा बने रहते हैं इससे जगत् अनादि कहाता है कभी कारणरूप
होजाता है कभी कारणसे स्थूल जगत् उत्पन्न होता है ऐसे ही प्रवाह
रूप उत्पत्ति और प्रलय के होने से अनादि जगत् कहाता है कोई ज-
गत् कब उत्पन्न भया ऐसा कोई नहीं कह सकता इससे यह आया कि पां-
च शास्त्रोंमें महाप्रलय की व्याख्या है इसमेंभी अनेक भेद हैं जिस स-
मय गुणोंका साम्य होता है तब धर्म और अधर्म कुछ न प्रसिद्ध रहता है
इस प्रलय की व्याख्या मीमांसा में है और जब अणुपर्यन्त का नाश होता
है तब परमाणुमात्र जगत् रहता है सो भी महाप्रलय भेद है यह व्या-
ख्या वैशेषिकदर्शन और न्यायदर्शनमें है और जब परमाणु की भी सू-
क्ष्मावस्था होती है तब अत्यन्त सूक्ष्म जो प्रकृति सो रहजाती है और पर-
माणु का भी लय होजाता है क्योंकि शब्दादिक तन्मात्राओं को भी सां-

न्यायशास्त्रमें उत्पत्तिलिखीहै औरप्रकृतिकीनहीं इससे यहअनुमान
संभावनाआताहै किप्रकृतिपरमाणुसेभी सूक्ष्महै सोयहव्याख्यानपा-
तंजलदर्शन औरसांख्यदर्शनमें कियाहै और वेदान्तमें प्रकृत्यादि
कोंकीउत्पत्तिलिखीहै और प्रकृतिकालयभी परमेश्वर में होता है
इससे उत्पत्तिकेविषयमें भिन्न२ पदार्थोंके व्याख्यानहोनेसे कुछवि-
रोधपरस्पर इनमें नहींहै प्रश्न पूर्व मीमांसा और सांख्यमें ईश्वर
कोनहींमानाहै और अन्यशास्त्रोंमें मानाहै इससे विरोध आता है
उत्तर इसमेंभीकुछविरोधनहीं क्योंकि मीमांसामें धर्म और ध-
र्मीदोपदार्थमानेहैं इससे हीईश्वर धर्मी औरईश्वरके सर्वज्ञादिक
धर्म्म अवश्य मानलियाहै इसमें कुछ सन्देह नहीं औरवेदकोजै-
मिनीजीनित्यमानतेहैं सोवेदशब्दज्ञानरूपकेहोनेसे गुणहै सो गु-
णीकेविनागुणकिसकेरहेगा इससे ईश्वरको उसने अवश्य मानाहै
औरसांख्यमें ईश्वरासिद्धेः॥ १ ॥ प्रमाणाभावान्नतत्सिद्धिः ॥२॥
सम्बन्धाभावान्नानुमानम् ॥ ३ ॥ उभयथाप्यसत्करत्वम् ॥ ४ ॥
मुक्तात्मनःप्रशंसाउपासासिद्धस्यवा ॥ ५ ॥ एषांसांख्यशास्त्रमेंक-
पिलजीकेकियेसूत्रहैं यहीअनीश्वरवादकेकारणहैं इनको यथाव-
त् नजानके चार्वाक और बौद्धादिक बहुत अनीश्वरवादीहोगएहैं
इनके अभिप्रायनहींजाननेसे इनका यहअभिप्रायहै कि ईश्वर की
सिद्धिनहींहोती किन्तु एकपुरुष और प्रकृतिदोनोंनित्यहैं अन्यन-
हीं ॥ १ ॥ क्योंकिप्रत्यक्षप्रमाणनहोनेसे ईश्वरसिद्धनहीं होताप्र-
त्यक्षप्रमाणसेजो सिद्ध होताहैसोईश्वर माना जाताअन्यथानहीं॥१॥
लिंगऔर लिंगीअर्थात्चिन्हऔरचिन्हवालेका नित्यसम्बन्ध होता
है सो लिंगकेदेखनेसे लिंगीकाअनुमानहोताहै फिरईश्वरका लिं-
गनामचिन्ह कोई जगत्में देखनहींपड़ता इससे ईश्वरमें अनुमान
भीनहींबनता ३ ॥ ईश्वरजोबंधितहोगा तो असमर्थकेहोनेसे ज-
गत्कोंकभीनहीं बनासकेगा औरजो मुक्त होगा सोउदासीनकेहोने
से जगत् केरचनेमें ईश्वरकी इच्छाभी नहीं होगी इससे ईश्वर की

प्राकृत प्रमाणभी नहींबनता ॥४॥ फिर वेदमें सह ईश्वर इत्यादिक श्रु–
तिईश्वरके व्याख्यानमें लिखीहैं उनकी व्याख्यासिद्धांगी वेदश्रुति
शिक्षाऔरयोगाभ्यासऔरधर्मसेसिद्ध जो जीवहोताहै कि अणिमा
दिकऐश्वर्यवाला उसकीप्रशंसा और उपासनाकी वाच्यहैंइसईं–
श्वर कीसिद्धि किसी प्रकार सेनहींहोती ऐसेअर्थकोविपरीतजानके
मनुष्योंकीबुद्धिभ्रमयुक्तहोगईहै परन्तु कपिलजीका यहअभिप्रायहै
किपुरुषही ईश्वरहै और वही चेतनहै सर्वज्ञादिकगुणभी मानहैं
उसपुरुषचेतनसे भिन्नकोईईश्वर नहींहै पुरुषकानामही ईश्वर है
इससेयहआयाकि पुरुषहीको ईश्वर मानना चाहिए दूसरा कोई
नहीं इससे जोकोई कहताहै कि जैमिनी औरकपिलजीनिरीश्वरवा–
दीहैं यह उसकाकहना मिथ्या जानना वेदादिक जितने पुस्तकहैं
उनकापठनपाठन विद्याकासाधनहै और निश्चयअविद्याकी प–
रीक्षा उनके पढ़नेऔर पढ़ानेके बिनाकभीनहींहोती विद्यापढ़ने
वाले तथानहीं पढ़नेवाले इनमेंसे पढ़नेवालोंका जो भाषण और
ज्ञानादिकव्यवहार उनकोहीदेखनेमें आता इसमें सबोंकाजो पढ़–
ना सोविद्याकी प्राप्ति करनेवाला होताहै अन्यथानहीं परन्तु वि–
द्वानवहीहै जोसर्वथा अधर्मकात्यागकरे औरधर्म का ग्रहण क–
रे अन्यथापढ़ना और पढ़ाना व्यर्थहोताहै । अन्धन्तमःप्रविशन्तियेऽवि–
द्यामुपासते ततोभूयइवतेतमोयउ विद्यायांरताः ॥ १ । विद्या
ञ्चाविद्यांचयस्तद्वेदोभयंसह अविद्यया मृत्युंतीर्त्वा विद्यया मृतम–
श्नुते ॥ २ ॥ अन्यदेवाहुर्विद्ययाऽन्यदाहुरविद्यया इति शुश्रुम
धीराणांयेनस्तद्विचचक्षिरे ॥ ३ ॥ येयजुर्वेदकी संहिताकेमन्त्रहैं इ–
नकायहअभिप्रायहै किजोपुरुषअविद्यामेंरतहैं वेअन्धन्तम अन्धका–
रअर्थात् जन्म, मरण, हर्ष, औरशोकादिकदुःखसागरमें प्रविष्ट र–
हतेहैं इससे पृथक नहीं होसके और विद्याअर्थात् नानाप्रकारके
कर्मोंसे विषयभोगोंकीचाहना करना तथायोगाभ्यास, तप और
संयमसे अणिमादिकसिद्धियोंमें फसकेनिग्रासंसारमें और अधि–

ध्यानादिक दोषों से युक्त होना है उसमें जो रत रहते हैं वे उन कर्मी लोगों से भी अत्यन्त अन्धकार में फंस जाते हैं फिर उनका निकलना उससे बहुत कठिन होता है ॥ १ ॥ परन्तु विद्या और अविद्या को एक साथ ग्रहण लेना क्योंकि बन्ध को करनेवाली दो रहैं इन दोनों का नाम अविद्या है जो कर्म धर्म युक्त और योगाभ्यास और उपासना इनके अनुष्ठान से मृत्यु जो मोह और भ्रमतादिक दोष उनसे पृथक् रहना और जीव होके शुद्ध हो जाते हैं फिर यथार्थ पदार्थों का ज्ञान और परमेश्वर की जो प्राप्ति है सो विद्या से अनन्त जो मोक्ष उसको प्राप्त होता है फिर दुःखसागर में कभी नहीं गिरता ॥ २ ॥ इससे विद्या जो नित्य ज्ञान इसका फल भिन्न है अर्थात् मोक्ष है और जो पूर्वोक्त अविद्या जो कि अनात्मक ज्ञान उसका भी फल अन्य है नाम बन्ध है जो विद्या और अविद्या का फल भिन्न है एक नहीं ऐसा हमने ज्ञानियों के मुख से सुना है जो कि यथार्थ वक्ता उन्होंने हमारे सामने यथावत् व्याख्या करदी है इससे हम को इन में भ्रम नहीं है ॥ ३ ॥ सो सब मनुष्यों को यह उचित है कि किस पुरुषार्थ से विद्या की इच्छा करें और अत्यन्त प्रयत्न से अविद्या को छोड़ें क्योंकि इस संसार में विद्या के तुल्य कोई पदार्थ नहीं तथा विद्या के विना इस लोक वा परलोक में कुछ भी सुख नहीं होता और अनेक जन्मपर्यन्त है उनमें अत्यन्त क्लेश होते हैं क्योंकि परमेश्वर की प्राप्ति नहीं होती इस जीव के निःश्रेयस अर्थात् विद्या उत्पन्न करने के लिये हैं उनको नाममात्र यहां लिखता थोड़ा भी करते हैं प्रथम सब उपायों का मूल ब्रह्मचर्याश्रम यथावत् पूर्ण विद्या न होय तबतक जितेन्द्रिय रहके यथावत् विद्या ग्रहण करें और सत्यपदार्थों को यथावत् जानें फिर विवाह करें परन्तु विद्याभ्यास को न छोड़ें और नित्य गुरुसेवा की इच्छा रक्खें परम पुरुषार्थ और नम्रतापूर्वक सत्सङ्ग करते रहें मिलें विद्वानों से सदा पूछके सुश्रवण करें आप भी जितनी बुद्धि उतना निरन्तर विचार करें उसमें पक्षपात रहित होके सत्य का ग्रहण करें और असत्य को छोड़ें एकान्त सेवन से अपनी इन्द्रियों, मन और शरीर आत्मा को-

सुज्ञानमंतिष्ठितरनहीं अथर्ममेंकभी नहीं । यथाखनन्खनित्रेण नरोवार्य्यधिगच्छति तथागुरुगतांविद्यांशुश्रूषुरधिगच्छति ॥ यह मनुजीकाश्लोकहै इसकायहअभिप्रायहै किजो पुरुष अभिमानादिक दोषरहित औरनम्रतादिकगुणयुक्त होके सेवासेदूसरेकाचित्त प्रसन्नकरदेताहै सोई श्रेष्ठगुणोंकोप्राप्तहोता है अन्यनहीं इसमें यह दृष्टान्तहै कि जैसेभूमिकोखोदतारकुदाली से नीचेचलाजाय फिर वहजलकोप्राप्तहोताहै वैसेही शुश्रूषुअर्थात्कपटादिकदोष रहित और दूसरेपुरुषकीपरिक्षाजानता होय किइसमेंगुण है वा नहीं फिर यथावत्गुणोंकाबुद्धिसेनिश्चयकरले किइसमेंसत्यगुणहै पीछेजिसप्रकारसेवेगुण मिलें उनसेवादिकप्रकारोंसे गुणोंकोअवश्य ग्रहणकरैं ग्रहणकरकेगुणोंको प्रकाशकरदे औरजोकोई उन गुणों कोग्रहणकियाचाहै उसकोभीनिष्कपटहोके यथावत्गुणों को देदे क्योंकिगुणोंको गुप्तकरना कोईमनुष्यको उचितनहीं और जो गुणोंकोगुप्तरखताहै वह बड़ामूर्खपुरुषहै और धर्मतथा परमेश्वर का अत्यन्तविरोधीहै वह कभी सुखनपावैगा इत्यादिकविद्याकीप्राप्तिकेहेतुहैं और यही अविद्यानाशकेहेतुहैं अन्यभी अनेकप्रकारके हेतुहैं उनकोविचारलेना और इसकेआगेअन्तःकरण औरशुद्धिकाव्याख्यानकियाजाताहै । पराञ्चिखानिव्यतृणत्स्वयंभूस्तस्मात्पराङ्पश्यतिनान्तरात्मन् । कश्चिद्धीरःप्रत्यगात्मानमैक्षदावृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन् । यहकठवल्लीकीश्रुतिहै इसकायह अभिप्रायहै किपराञ्चिखानिअर्थात्बहिर्मुख इन्द्रियजिसकी होतीं हैं वहजीव बाहरकेपदार्थों हीको देखतारहता है औरभीतरकेपदार्थोंकोवाअपने स्वरूपको कभीनहीं विचारता अथवापरमसूक्ष्म जोपरमेश्वर उसकेविचारमें कभीभीएकाग्रचित्तनहीं होता इससे जीवको पदार्थों कायथार्थज्ञानभी नहीं होता किन्तु अत्यन्तहीमूढ होजाहै उससे आपसे आपहीवद्धहोताहै फिरमोहादिमें वह उसको होता है किजिसकाछूटनाबहुतकठिनहै इससे निःपिथ्याज्ञान होताहै किशीघ्रन

धन, राज्यादिकोंहीमें सुखमानलेताहै फिर उनकेसुधरनेमें अत्यन्तहर्षित होताहै और बिगड़नेसे शोकयुक्त होताहै इसजालमें गिरके अनेकजन्ममरण जीवकेहोतेहैं औरअत्यन्त दुःखपाता है प्रश्न जन्मएक होताहै अथवा अनेक उत्तर अनेक जन्महोतेहैं प्रश्न जो अनेकजन्महोतेहैं तोपूर्वजन्मोंका हमको स्मरणक्योंनहीं होता उत्तर पूर्वजन्मोंका स्मरणनहीहोसक्ताक्योंकिपूर्वजन्मज्ञानके जोनिमित्तहैं वेसब नष्ट होजातेहैं इससे पूर्वजन्मका स्मरणनहीं होसक्ता प्रश्न कौनसे निमित्तहैं और निमि किसको कहतेहैं उत्तर निमित्तइसका नामहै किजो दूसरेकेसंयोगसे उत्पन्नहोताहै जैसेकि जल शीतलहै और अग्निउष्णहै अबअग्निकासंयोगजलमें होता है तब जलउष्णहोजाताहै परन्तुजबअग्निसे जलपृथककियाजाता है तब फिरभी वहशीतल होजाताहै इसका नाम नैमित्तिकगुणहै जोकि जबतक उसका निमित्त रहताहै तबतकवहरहताहै औरजबनिमित्तनही रहता तबउसकानिमित्तसे उत्पन्नभयाजोकिगुण सोभीनष्ट होजाताहै जैसेसूर्य्य औरनेत्रसे रूपका ग्रहणहोताहै जबसूर्य और नेत्रनहीरहते तबरूपकाभी ग्रहणनहींहोता क्योंकिनिमित्तके विना नैमित्तिकगुणनहीहोता इसीप्रकारसेयहांभीहैकि पूर्वजन्मजिसदेशजिसका था औरजोशरीर तथाउसशरीरके सम्बन्धी सबपदार्थनष्टअर्थात उनका वियोगहोनेसे वहांका जोउनको ज्ञानथासोभी नष्टहोजाता हैऔरइसीजन्ममेंजोबाल्यावस्थामें व्यवहार कियाथाउससेसुखवा दुःखपायाथा उसकाभीयथावतस्मरण वृद्धावस्थामेंनहीं रहताऔर जिससमयकिसीसे किसीकीबातहोतीहै तबउसबातमेंअनेक अक्षर, पद,वाक्य, सम्बन्धकहे औरसुनेजातेहैं परन्तु उसके उत्तर कालमें स्मरण कहनायासुनना यथावत्नहींबनता औरकोईबात कण्ठस्थ करलेताहै फिर कालान्तरमें उसकोभी भूलजाताहै एकबातमें जब जीवका चित्तहोता तबदूसरेमें नहींजाता दूसरेमें जबजाता है तब पहिलेकोभूलजाताहै जब ऐसीबातहैतो जन्मान्तरकेस्मरण में शंका

जोकरतेहैं उनकीशंकाव्यर्थहीहै प्रश्न जीवऔरबुद्धि आदिकपदार्थतो
वेहीहैं फिर पूर्वजन्मका ज्ञान क्योंनहीं होता क्योंकिजोकुछ देखता
वा सुनताहै जो बुद्धिहीसे ग्रहणकरताहै फिर उसकाज्ञान अवश्य
होना चाहिए सो नहींहोता इससे पूर्वजन्मनहींहै उत्तर इसका उ-
त्तरतोपूर्वप्रश्नके उत्तरहीसहोगया क्योंकिइसबाल्यावस्थासेलेकेवृ-
द्धावस्थातक यहीजीवऔरबुद्ध्यादिकहैं फिरकहेवासुने व्यवहारों
में अक्षर;पद, औरउनके अर्थादिकोंका यथावत्स्मरण क्योंनहींहो
ता इस व्यवहारको हमलोग प्रत्यक्ष देखतेहैं किजबहमलोगपरस्पर
बात करते और सुनतेहैं तबकुछ कालके पीछेबहुतबातोंके सुनने
वा कहनेमें आनुपूर्वीसे यथावत्स्मरणनहींरहता फिरजन्मान्तर के
स्मरणमें शंका करनीव्यर्थहीहै औरदेखबाल्यादिपञ्च अद्भुतावस्था
में वेहीजीव और बुद्ध्यादिक व्यवहारकरतेहैं यहमेरामाता, पि-
ता,पुत्र,स्त्री,बन्धु, शत्रु, औरमित्रादिकहैं ऐसाउनजीवको यथावत
व्यवहारहै औरफिरअवस्थाकाभावहोताहै तबइनका उसीसमय वि-
स्मरणहोजाताहै फिरजबसुषुप्तिहोतीहैतबइनोंकाव्यवहार विस्मृ-
त होजाताहै वेहीजीव और बुद्ध्यादिक हैं परन्तु भिन्न २ देश
और कालके भेदहोनेसे पूर्वकाव्यवहारविस्मृतहोजाताहै फिर पूर्व
जन्म देशकाल और शरीरादिक पदार्थ सबछूटजातेहैं फिर उनके
स्मरणकीशंकाजोकरतेहैं सोविचारवाननहींहैं प्रश्न यहजन्म जोहो
ताहै सोएकबारहीहोताहै दूसरीबारनहीं क्योंकियहदूसरा जीव है
सोनया २ उत्पन्नहोजाताहै औरशरीरधारणकरताहै क्योंकिपहिले
शरीरधारण कियाथा सोजीवफिरनहींआता उत्तर यह बात मि-
थ्याहै क्योंकिजोदूसराजीवहोता तोउसकोपूर्वके संस्कार नहीं दे-
खपड़ते जैसेकिजिसपदार्थकासाक्षात अनुभवबुद्धिमें अवश्यआता
है फिर संस्कारसेस्मृति उत्पन्नहोतीहै और स्मृतिसेप्रवृत्तिनिवृ-
त्तिहोतीहै जैसेकिकोई संस्कृतकोपढ़े औरकोईअंगरेजीकोजो जि-
सकोपढ़ताहै उसकोउसकाअक्षरादिक्रमसेबुद्धिमें सबसंस्कार हो-

ते हैं साक्षात्देखने औरसुननेसे अन्यथा नहीं फिर कालान्तर में कोईव्यवहारअथवापुस्तककोदेखताहै सोपूर्वदृष्टवाश्रुत के संस्कार सेस्मृतिहोतीहै कि यहप्रकार यथाकार है और इसका यह अर्थ है क्योंकिमैंनेपूर्वइसकाअर्थ ऐसापढ़ाथासुनाथा बिना संस्कारके स्मृतिकभीनहींहोती औरबिना स्मृतिसेयहऐसा होहै था नहीं ऐसी प्रवृत्तिवानिवृत्ति कभीनहींहोती सो एकहीजन्महोता तो जन्म समयसेलेके बालकोंकेअनेकप्रकारके व्यवहारदेखनेमेंआते हैं जैसे क्षुधाकाज्ञानऔरदुग्धादिकोंसे क्षुधा की निवृत्तिकेहेतु इच्छा फिर दुग्धपीनेकीयुक्ति औरतृप्तिहोनेसेदूधपीनेकी निवृत्ति तथामलमूत्रादिकोंकेत्यागकीयुक्ति औरकोई उसकोकुछमारै अथवा डरावे फिरउससे रोदनादिककीप्रवृत्तिऔरप्रीतिवालों से हास और प्रसन्नताकीप्रवृत्तिइत्यादिकप्रवृत्ति औरनिवृत्ति रूपव्यवहार बिना पूर्वजन्मकेसंस्कारसेकभीनहींहोसकता इससे पूर्वजन्मअवश्यमाननाचाहिये प्रश्न ऐसेव्यवहारस्वभावसेहोते हैं जैसेकिअग्निऊपर जलता है औरजलनीचेकोवैसेही देहधजीवको ज्ञानस्वरूपके होनेसे होते हैं उत्तर जोस्वभावसे मानोगेतो पूर्वकहे अनुभव संस्कार और स्मृतिअथवाप्रवृत्तिवानिवृत्तिइसकोहोतीहैं जो औरजो मानोगेतो कोईव्यवहारआपलोगोंका सिद्ध नहोगा फिरतुमना पढ़ाना बुरीबातों के छोड़नेकाउपदेश तथाअच्छीबातोंका उपदेशक्योंकरते और करतेहो औरजोस्वभावसेमानोगे तो उसकी निवृत्तिकभी नहीं होगी जैसेकिअग्निऔरजलके स्वभावकीनिवृत्तिनहींहोती वैसे प्रवृत्तिको स्वभावसेमानोगे तो निवृत्ति कभी नहीं होगी जो निवृत्तिस्वभाव से मानोगेतो प्रवृत्ति कभी नहीं होगी और दोनों को मानोगे तो व्याघातऔर अनवस्थाहोगी फिरआपलोगों में व्यवस्था दोष आआवेगा क्योंकिअग्निकीनीचेचलनेमें प्रवृत्ति कभी नहीं होती तथा जलकीऊर्ध्वजानेमेंकोऊपरकोप्रवृत्तिकभी नहीं होती वैसेही स्वभाव व्यवहार जानो प्रश्न ईश्वरनेजैसाजिसकास्वभावरचाहै वैसाहीहोता

है उत्तर यह बात भी ठीक नहीं जो ईश्वर कारण होता है इन व्यवहारों में तो ईश्वर के दयालु होने से सब जीव पक्षियों का ज्ञान और परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों का बोध तथा धर्म में प्रवृत्ति और अधर्म से निवृत्ति ईश्वर ने सब जीवों में स्वभाव से क्यों नहीं रक्खी और ईश्वर अन्यायकारी भी हो जायगा क्योंकि किसी को राजा और धनाढ्य के घर में जन्म और किसी को असमर्थ और दरिद्र के घर में जन्म तथा एक की बुद्धि बहुत अच्छी और दूसरे की जड़ बुद्धि देता है तथा एक रूपवान् और एक कुरूप तथा एक बलवान् और दूसरा निर्बल एक रोगरहित और दूसरा मूर्ख होता है सो विना अच्छे कर्मों से उत्तम पदार्थों का देना और विना अपराध से भ्रष्ट पदार्थों का देना इससे ईश्वर में पक्षपात आवेगा पक्षपात के आने से ईश्वर अन्यायकारी हो जायगा और कृतहानि अकृताभ्यागम ये दो दोष आ जायंगे क्योंकि अब जो कुछ किया जाता है उस की हानि हो जायगी फिर जन्म के नहीं होने से जो शरीर, इन्द्रियां, प्राण, और मन के नहीं होने से पाप पुण्यों का फल भोगना नहीं हो सकता और जो पूर्व जन्म न मानेंगे तो विना किये सुख और दुःख की प्राप्ति जो होती देखते और भोगते, ये दो दोष ईश्वर में आ जायंगे कि विना कारण से किसी को सुख देवे और किसी को दुःख यह विषमता ईश्वर में आवेगी और जीवों को दुःखी देख के जिस को घृणा नहीं आती इससे ईश्वर का दया जो गुण सो नष्ट हो जायगा और जो पूर्व तथा उत्तर जन्म होगा तो ईश्वर में कोई दोष नहीं आवेगा क्योंकि जैसा जिस का पुण्य वा पाप वैसा उस को सुख दुःख होगा इससे ईश्वर न्यायकारी और दयालु भी यथावत् रहेगा इससे पूर्व और पर जन्म अवश्य मानना चाहिये सो पूर्व जन्मों की संख्या नहीं है क्योंकि जब से सृष्टि उत्पन्न भई है तब से अनेक जन्म धारण करते २ चले आते हैं और जब तक मुक्ति नहीं होगी तब तक स्थूल शरीर अवश्य धारण करेंगे जैसे मनुष्य सुख वा दुःख राजा और दरिद्र को तुल्य ही देख पड़ता है क्योंकि जो राजा को सुख वा दुःख है वैसे दरिद्रों को भी है विचार करके देखें तो सुख

थोडु:खसुखको तुल्यहीदेख पड़ताहै उत्तर ऐसाकहना योग्य नहीं क्योंकि इच्छाकेअनुकूल पदार्थोंकी प्राप्तिकाहोना सुख कहाता है और इच्छाकेप्रतिकूल पदार्थोंकी प्राप्ति काहोना दुःखकहाताहै सो हर्ष और प्रसन्नतासुखके पर्यायहैं औरशोकतथा अप्रसन्नतादुःखके पर्यायहैं जबराजादिक धनाढ्योंके गर्भवासमें जीवआताहै उसीदि-नसे अनुकूलपदार्थोंका सेवन होताहै फिर जन्म जबहोताहै तबअ-नेकऔषधादिक व्यवहारोंकी प्राप्तिहोतीहै और विनाइच्छाकेभी अनेकपदार्थ अनुकूल प्राप्तहोतेहैं तहजब दूधपीनेकी इच्छा कर-ताहै तबविनाइच्छासेभी दुग्ध और सुगन्धादिकसे युक्त दूध[illegible] [illegible]हैं और जब वहकुछ अपशब्दबोलनेलगताहै तब अनेक सं-बन्धियोंकालोग मधुरवचन और खिलौनेसे खीचके प्रसन्नकर देतेहैं और फिर जबवहबड़ाहोताहै तबजिसके ऊपर दृष्टिकरताहै वहहाथजोड़के अनुकूलवचन तथाअनुकूल व्यवहार करताहै सदा प्रसन्नउसको सबलोगरखतेहैं औरवहरहताहै फिर जबकभी दुः-खीभी होताहै तबअनुकूल वचन औरऔषधादिकोंसे उसकोप्रस-न्नकरदेतेहैं औरजोदरिद्रोंकेगर्भवासमें आताहै उसको भीकिं-चित्सुखहोताहै परन्तु कोई कभीउनमेंसेनष्ट बुद्धिके होनेसे दुःखी होजाताहै सोपूर्वजन्मकेपापोंसे और इसजन्मके दुष्ट व्यवहारों से पीड़ितहोताहै औरजोपूर्व का दरिद्र गर्भवासमें जीव आता है उसीसमयसेउसको दुःखहोनेलगतेहैं अथवा [illegible] जो-बर खानेलगतीहै तबगर्भमें भ्रहारके होनेसे जीव पीड़ित होताहै और कभी[illegible]हैं कभी बहुतकुत्सित अन्नको खालेतीहैं इससे भी उसजीवको अत्यन्तपीड़ाहोतीहै फिर जब जन्महोताहै तबकोई प्रकारका औषधवा[illegible] तथाकोई परिचारक उस समय नहीं रहता किन्तु भागेवनवासखेतमें प्रायःपाषाणकी नाईं गर्भसे बालक गिरपड़ताहै फिरवहीस्त्रीउसकोचीथड़ोंके वस्त्रमें बांधके पीठ में बांधलेतीहै फिर कभीउस स्त्रीको [illegible]

होतीहै उस समय बालक दूधपीनेकेहेतु रोताहै सोदूधतो उसको नहींमिलता परन्तु वहस्त्रीउसबालककोथपेड़ा मारतीहै फिर अधिक२ अवरोताहै तब अधिक२ मारतीहै फिर रोतारहताहै परन्तु दूधनहींपिलाती फिरवह जबकुछबड़ाहोताहै तब उसको यथावत् खानेकोभी समयके ऊपर नहींदेता फिर वहजूरी करता है तोभीउसको यथावत् इच्छाके अनुकूलनहींमिलता और सदाउसकोसुखकीतथा उत्तम पदार्थोंकेप्राप्तिकी इच्छा होती है परन्तुप्राप्तिकेनहीहोनेसेसदादुःखी रहताहै जोऐसाकहताहै किसुख वादुःखसबको तुल्यहैंसोपुरुषविचारवान्नहीहैं क्योंकि सुखवादुःखसब कहीअधिकवान्यून देखपड़ताहै प्रश्न जबपहिलेर हीसृष्टिभईथीतब उससे पूर्वजन्मतो किसी कानहींथा फिरउत्तमतथा अधिक वान्यून राजा अथवादरिद्रादिकक्योंभयेथे इससे जानाजाताहै कि जैसे पहिले जन्ममेंभयेथ इससे आजकालपहिलाही जन्महै सोजभिकन्यूनवनजाओ परन्तु एकर जन्मही विचारमेंआताहै बहुत जन्मनही उत्तर आदिसृष्टिमेंसबमनुष्यतरुणभएथे नकोई राजाथाकोई प्रजा वामूर्खवापण्डित इत्यादिकभेदनहींथे इससे आदिसृष्टिमें दोष नहीं आता प्रश्न जैसेआदिसृष्टिमेंदुग्धपानादिकव्यवहार सुखऔरदुःखआदिक प्रवृत्तिवानिवृत्तिभईथी वैसे आजकालभी होतीहै फिर वहजोआपनेकहाकि अनुभवादिकोंसेविना प्रवृत्तिवानिवृत्तिनहीं होती सोबात विरुद्धहोगई उत्तर विरुद्धनहीहोती क्योंकि आदिसृष्टिमेंगर्भवाससे उत्पत्तिनहीभईथी और किसीकीबाल्यावस्थाभी नथी किन्तु सबस्त्री औरपुरुषोंकीयुवावस्थाहीईश्वरनेरचीथीफिर वेउससमयअच्छा वा बुराकुछनहीजानतेथे जहांजिसका नेत्र था अथवात्वचादिक जिसजिसपदार्थमें युक्तभए उसकोदेखकर देखतेथे परन्तु यह अच्छीथाबुरी ऐसानहींजानतेथे परन्तु प्रथम, शरीरअथवा इन्द्रियइनमें चेष्टा गुणथा ऐसानहीं जानतेथेकि ऐसी चेष्टा करनी वानकरनी फिर चेष्टा होनेलगी दःश्चपदार्थों केसाथ स्प-

आदिकव्यवहारहोनेलगे उनमेंसेकिसीने कुछ पत्ता व फूलबांधा म स्तकलिया वा भी भूखेकेकारणउसका फलदांतोंसे चबाने लगे उसमें सेकुछमीठारसलगा फलखाकरनिरखता उसकोदेखके दूसराभी वैसाकरनेलगा फिरवैसे २ व्यवहारबढ़ताचला तथासंस्कारभीहो तेचले होतेर मैथुनादिकव्यवहारभीहोनेलगे सोपांचवर्षतक उस समय किसीकोपापवापुण्यनहीं लगताथा वैसेही आजकालभीपांच वर्षतकबालकोंकोपापपुण्यनहीलगता फिर व्यवहारकरतेर अच्छा बुराभीकहनेजाननेलगे फिरपरस्परउपदेश भी करनेलगे कि यह अच्छाहैयहबुराहै और परमेश्वर ने भी उत्तमपुरुषोंकेद्वारावेदविद्या काप्रकाशकिया वेद द्वारामनुष्योंको उपदेश भी करनेलगे उनके उपदेशको किसीनेसुना औरकिसीनेनसुना सुनकेभीकिसीनेवि- चारऔरकिसीनेनविचारा परन्तु बहुतमनुष्य कुछ २ अच्छाबुरा जाननेलगे फिरवाले २ मैथुनिसृष्टिहोनेलगी फिर उनबालकोंको भी उपदेशऔरसंस्कार होनेलगे सोआजतकअनेकप्रकारकेपरमेंपु- रुषोंकेव्यवहारविस्तार होतेआतेहैं सोहमलोगप्रत्यक्ष देखते हैं इ- सके आगे [illegible] अनुमानकरलेतेहैं और पीछे जोसंस्कारों केव्यवहारहोंगे उनकाभी अनुमान हमलोग करते हैं इस प्रत्यक्ष व्यवहारकोप्रत्यक्षदेखनेसे यह परमेश्वर में विषमतादोषनहींआता है क्योंकिआदिसृष्टिमें बहुत जीवों को मनुष्य शरीरदिए बहुतों को पश्वादिककेशरीरदिए सोमनुष्योंकाशरीरतोउत्तमहै और पश्वा- दिकोंकानीच औरआदिसृष्टिमें मनुष्योंने एकभी कर्मनहीं किया फिर कर्मकरनेसेभी पक्षपात आताहै किजैसेउत्तम शरीरों को दे- ने और कर्मोंकरनेमें विषमताभईथी वैसेआजकालभी होती है इससे ईश्वरपक्षपातीनहीहोसकता और ईश्वरके ऊपरकोई नहीं है इ- ससे जैसीउसकीइच्छाहैवैसाकरता है औरजोचाहताहै सो उत्तम हीकरताहै परन्तु हमारीबुद्धिथोड़ीहै इसके समझनेमें नहीं आता उत्तर आपने २ स्थानमें [illegible] हैं कोई [illegible] -

तानहींरचा परन्तु उनकेपरस्पर मिलने से कहीं शुद्धहोना है क-
हीं दोषहोता है सो जिससमय आदिसृष्टिभई थी उससमयमनुष्यों
और पश्वादिकोंमें कुछविशेष नहींथा किन्तुजब शरीरेन्द्रियादि को
जिनजीवोंकेलिये हैं वेसबजीवोंकेकर्म भोगकरानेकेहेतु रचे हैं सोई-
श्वररचनातो वेशरीर कैसे होवें इससे पश्चात् ईश्वर ने सबव्य-
वस्थाकररक्खीहै कि जैसाजोकर्मकरै सोवैसाही जन्मसुखवादुःख
को प्राप्तहोवै औरएकव्यवस्था सर्गोंमेंभी मनुष्यकाशरीरमि-
लेगा क्योंकिसबशरीरोंसे मनुष्यकाशरीर उत्तमहै औरमनुष्यहीके
शरीरमें पापऔरपुण्य बनताहै अन्यशरीरोंमेंनहीं और अन्यम-
नुष्यकाशरीरहै सबजीवोंकेलियेहै क्योंकिसबको प्राप्तहोताहै वैसेही
सबकीटपतंगादिकोंकेशरीरभीहैं जबमनुष्यशरीरमें जीव अधिकपा-
पकरताहै और पुण्यथोड़ा तबनरकादिकलोकऔरपश्वादिकोंकेश-
रीरोंकोप्राप्तहोताहै जब उसका पापऔरपुण्यतुल्यहोतेहैं तबमनुष्य
का शरीरप्राप्त होता है और जबपुण्य अधिककरताहै और पाप
थोड़ा तबदेवलोकऔरदेवादिकों का शरीर उसजीव को मिलता है
उसमेंभिन्नता अधिकपुण्य उसका फल औरपुण्यफल उसको और जबपाप
पुण्य तुल्यहोजाते हैं तबफिरमनुष्यका शरीर धारणकरताहै इन
कर्मोंमेंतीनभेदहैं एक मनसे दूसरा वाणी से और तीसरा शरीर
सेकर्मकरताहै इनतीनोंमेंसेएकएककेतीनभेदहैं उत्तम और अधो-
गुणकेभेदसे सोजबमैं सत्त्वगुणकिञ्चितआदिकशुद्धोंसे सुखहोके
उत्तमकर्म करताहै तबदेवमनुष्यऔर पश्वादिकोंमें वह जीव रहता
है परन्तु मनमेंसत्त्वगुणहीसे उसकोरहताहै और जोगुण से युक्तहो
के मनमेंराजसगुणयापापकरताहै तबदेवमनुष्यपश्वादिकोंमें मध्यम-
भावकहोताहै उत्तम नहीं फिर उत्तम जो सत्त्वगुण राजा होता है
क्योंकि जोगुणकेकार्य लोभ इत्यादिक होते हैं तमोगुणमनवाणीजिस
पुरुषकोहोताहै उसकोमोह, आलस्य, प्रमाद, क्रोध औरविषयादि-
दिकदोषहोतेहैं वह नानाप्रकार पुण्य अधम ही करेगा इससे देखम-

दुःख और पश्चात्ताप होवेंगे जो जो शरीर में दुःख होगा और जो वचन से पाप करेगा तो पक्ष्यादिक योनि को प्राप्त होजायगा फिर सदा वह शब्दों से चलितही रहेगा क्योंकि जिससे पाप करता है वह उसी से भोग करता है जब शरीर से अधिक पाप करते हैं वे वृक्षादिक स्थावर शरीर को प्राप्त होते हैं इसमें मनुभगवान् के श्लोक लिखते हैं सो जानलेना ॥ मानसं मनसैवायमुपभुङ्क्ते शुभाशुभम् । वाचा वाचाकृतं कर्म कायेनैव च कायिकम् ॥ १ ॥ यह जीव मन वाणी और शरीर से शुभ नाम पुण्य अशुभ नाम पाप करता है सो जिससे करता है उसी से भोगभी करता है ॥ १ ॥ शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः । वाचिकैः पक्षिमृगतां मानसैरन्त्यजातिताम् ॥ २ ॥ अ० जब शरीर से पाप करता है तब वृक्षादिक स्थावर शरीर को प्राप्त होता है वचन से किए पापों से पक्षी और मृगादिक योनि को प्राप्त होता है और मन से किए पापों से नीच चाण्डालादिक योनि को प्राप्त होता है ॥ २ ॥ यो यदैषां गुणो देहे साकल्येनातिरिच्यते । स तदा तद्गुणप्रायं तं करोति शरीरिणम् ॥ ३ ॥ अ० जो गुण जिसके शरीर में प्रधान होता है उससे युक्त उस जीव को उसी स्वभाव का करता है और गुण भी उसको प्रकाशते हैं ॥ ३ ॥ सत्त्वं ज्ञानं तमोऽज्ञानं रागद्वेषौ रजः स्मृतम् । एतद्व्याप्तिमदेतेषां सर्वभूताश्रितं वपुः ॥ ४ ॥ अ० सत्त्व गुण का कार्य ज्ञान है तमोगुण का कार्य अज्ञान और रजोगुण का कार्य राग और द्वेष है ऐसे सत्त्व रज और इनके तीन कार्य सब भूतों में व्याप्त हैं क्योंकि इन्हीं का नाम प्रकृति और कारण शरीर है ॥ ४ ॥ तत्र यत्प्रीतिसंयुक्तं किंचिदात्मनि लक्षयेत् । प्रशान्तमिव शुद्धाभं सत्त्वं तदुपधारयेत् ॥ ५ ॥ अ० जिस पुरुष के चित्त में प्रसन्नता सुख रहै और आत्मा में शान्ति होवै और शुद्ध ज्ञान होवै तब उसको सत्त्वगुण और सत्त्वगुण से युक्त पुरुष को जानना ॥ ५ ॥ यत्तु दुःखसमायुक्तमप्रीतिकरमात्मनः । तद्रजोऽप्रतिघं विद्यात्सततं हारि देहिनाम् ॥ ६ ॥ अ० जिसके चित्त में दुःख युक्त रहै इन्द्रियों में चञ्चलता भी बनी रहै और चित्त जो मनहरणीय विषयों के और

होनेसे लगे और इसीभूतमें होवे वह रजोगुणप्रधानपुरुष होता है ॥६॥ यत्तु स्यान्मोहसंयुक्तमव्यक्तं विषयात्मकम् । अप्रतर्क्यमविज्ञेयं तमस्तदुपधारयेत् ॥ ७ ॥ भा० जो चित्तमोह संयुक्त रहे हृदय में कुछ विचार और सत्यासत्य का न होय विषयकी सेवामें फँसा रहे ऊहापोह जिसमें न होय और जैसा अन्धकारमें पदार्थ वैसा कुछ जाननेमें भी न आवे इस जीवको तमोगुण प्रधान और तमोगुणी जानना ॥७॥ त्रयाणामपि चैतेषां गुणानां यः फलोदयः । अग्र्यो मध्यो जघन्यश्च तं प्रवक्ष्याम्यशेषतः ॥८॥ भा० इन तीनगुणोंका उत्तम मध्यम और नीच जो फलोदय उसके आगे कहते हैं यथावत् ॥ ८ ॥ वेदाभ्यासस्तपो ज्ञानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः । धर्मक्रियात्मचिन्ता च सात्त्विकं गुणलक्षणम् ॥ ९ ॥ भा० वेदाभ्यास, तपमें योगाभ्यास, ज्ञान, सत्यासत्यका विचार, जितेन्द्रियता, धर्मका अनुष्ठान, आत्माका विचार अर्थात् ईश्वरका ध्यान जिसमें गुण होवें उत्तम सात्त्विक पुरुष और सत्त्व गुणका लक्षण है ॥ ९ ॥ आरम्भरुचिताधैर्यमसत्कार्यपरिग्रहः । विषयोपसेवा चाजस्रं राजसं गुणलक्षणम् ॥१०॥ भा० कार्योंके आरम्भमें आसक्तरुचि अधैर्य असत्यकार्योंका स्वीकार और निरन्तर विषयसेवामें फँसा रहे यह रजोगुण अधिक पुरुषका लक्षण है ॥१०॥ लोभः स्वप्नोऽधृतिः क्रौर्यं नास्तिक्यं भिन्नवृत्तिता । याचिष्णुता प्रमादश्च तामसं गुणलक्षणम् ॥११॥ भा० अत्यन्त लोभ अत्यन्त निद्रा धैर्य का होना क्रूरता नास्तिक्य नाम वेद धर्म और ईश्वरको न मानना भिन्नवृत्तिता नाम छिन्नभिन्न जिसकी बुद्धि स्थिर न रहे नित्य याचना और भिक्षा ग्रहणमें रीति और प्रमाद नाम आलस्य प्रकार उपद्रव करना यह तमोगुण और तमोगुण युक्त वाले काल-स्तमाई और इन तीन गुणोंके लक्षण कहे जाते हैं ॥ ११ ॥ यत्कर्म कृत्वा कुर्वंश्च करिष्यंश्चैव लज्जति । तज्ज्ञेयं विदुषा सर्वं तामसं गुणलक्षणम् ॥ १२ ॥ भा० जिसकर्मको करके करता भया और करनेकी इच्छासे लज्जा और भय होता है वह पुरुष और कर्म तमो गु–

होते हैं क्योंकि पाप ही करेंगे ॥ १२ ॥ येनास्मिन्कर्मणा लोके ख्याति-
मिच्छति पुष्कलाम् । न च शोचत्यसम्पत्तौ तद्विज्ञेयं तु राजसम् ॥
१३ ॥ भा० जो इस लोकमें कीर्तिके हेतु इच्छा करता आदि पुरुषोंको पदार्थ
देना और ऐसा काम मैं करूं जिससे कि मेरी इसलोकमें प्रशंसा होय
और विद्या सर्वमान्यता चाहना अन्याय से और उत्तम धन तथा पदार्थ के
नाश होनेमें कुछ भी चिन्ता न करना यह रजोगुणी पुरुष है यह घोर
दुःखमें सदा पड़ा रहता है ॥ १३ यत्सर्वेणेच्छति ज्ञातुं यन्न लज्जति
चाचरन् । येन तुष्यति चात्मास्य तत्सत्त्वगुणलक्षणम् ॥ १४ ॥ भा० जो
पुरुष सब प्रकारोंसे और उत्तम पुरुषोंसे जानने की चाहना है तथा धर्म
के आचरणमें कोई हानि वा निन्दा होय तो भी जिसको लज्जा न
होय और जिस कर्ममें अपना आत्मा प्रसन्न होय अर्थात् धर्माचरण से
उसको भी न छोड़े यह सात्त्विक पुरुष का लक्षण है ॥ १४ ॥ तमसो
लक्षणं कामो रजसस्त्वर्थ उच्यते । सत्त्वस्य लक्षणं धर्मः श्रैष्ठ्यमेषां
यथोत्तरम् ॥ १५ ॥ भा० जो काममें फंसा रहता है वह तमोगुणी पुरु-
ष है तथा धनादिक अर्थहीको परस्पर चाहता है वह रजोगुणी है
और जो धर्मके अनुकूल ही रहे सो जानिये कि वह सत्त्वगुणी पु-
रुष है तमोगुणीसे रजोगुणी और रजोगुणीसे सत्त्वगुण वाला पुरुष श्रेष्ठ है ॥
१५ ॥ इन तीनों गुणवाले आगे कहेंगे कि सत्त्वगुणवाला धर्म करेगा रजोगुण-
वाला पाप पुण्य दोनों करेगा तथा तमोगुणवाला पाप ही करेगा इ-
नको जैसे २ जन्म और सुख वा दुःख होते हैं सो लिखा जाता
है देवत्वं सात्त्विका यान्ति मनुष्यत्वं च राजसाः । तिर्यक्त्वं ताम-
सा नित्यमित्येषा त्रिविधा गतिः ॥ १६ ॥ भा० जो सात्त्विक पुरुष हो-
ते हैं वे देवभावको प्राप्त होते हैं अर्थात् विद्वान् धार्मिक और बुद्धिमा-
न होते हैं तथा उत्तम पदार्थ और उत्तम लोकोंको भी प्राप्त होते हैं
तथा जो रजोगुणी होते हैं वे मध्यम लोक मनुष्यत्व तथा बुद्ध्यादिक प-
दार्थोंको प्राप्त होके मध्यम रहते हैं उत्तम नहीं और जो तमोगुणी
होते हैं वे नीच अवस्थादिक शरीर तथा वृक्षादिक योनी में जन्म पाकर--

हुआ है इन तीनोंकेतीनगुणोंसे उत्तममध्यम औरनीचतासे एक २ गुणकातीनभेदहोताहै और वैसेही उनकोफल मिलते हैं सोआगे २ लिखाजाताहै ॥ १६ ॥ स्थावराःकृमिकीटाश्च मत्स्याःसर्पाःसकच्छपाः । पशवश्चमृगाश्चैव जघन्यातामसीगतिः ॥ १७ ॥ भा० स्थावर, वृक्षादिक, कृमि, कीट, मत्स्य, तथा कच्छपादिक जलजन्तु गायआदिकपशु तथामृगादिकवनकेपशु जिनको अत्यन्त तमोगुण होताहै वह ऐसे शरीरोंको प्राप्तहोताहै ॥ १७ ॥ हस्तिनश्चतुरंगाश्च शूद्राम्लेच्छाश्चगर्हिताः । सिंहाव्याघ्रावराहाश्च मध्यमातामसीगतिः ॥ १८ ॥ भा० हाथीघोड़े शूद्रओरम्लेच्छ नामकमाई आदिक गर्हितनाम जोनिन्दितकर्म करनेवाले सिंहव्याघ्रशूकरकी नीच होतेहैं वे अधमपुरुषहैंपरन्तु ऐसे जोपुरुष मध्य तमोगुणवाला होताहै वह ऐसे जन्मों कोपाता है ॥ १८ ॥ चारणाश्चसुपर्णाश्च पुरुषाश्चैवदाम्भिकाः । रक्षांसिचपिशाचाश्च तामसीषूत्तमागतिः ॥ १९ ॥ भा० चारणनामस्तुतिकर्ता औरगानेवाले जोकि वेश्याओंके पासरहतेहैं सुपर्णनामहंसादिकपक्षीके उत्तमपक्षी दाम्भिकपुरुषअर्थात् सम्प्रदायवाले मिथ्याउपदेशकरनेवाले तथा अहंकार अभिमानादिक गुणयुक्त राक्षस नाम छल, कपट करनेवाले पिशाचनाम अपवित्र मलिन रहें ऐसे जन्मोंकोप्राप्तहोतेहैं जिनमेंकि थोड़ातमोगुण रहताहै ॥ १९ ॥ झल्लामल्लानटाश्चैव पुरुषाःशस्त्रवृत्तयः । द्यूतपानप्रसक्ताश्च जघन्याराजसीगतिः ॥ २० ॥ भा० झल्लनाम तलवारचलाना आदिक खेलनेवाले मल्लनाम पहलवान औरकुश्ती करनेवाले शस्त्रवृत्तिपुरुष अर्थात् शस्त्रोंको बनाने और कुल्हाड़े आदिकसे काम करके जीविका करते हैं और भांग, गांजा, अफीम तथामद्यपीनेमें जोलगेरहते हैं जिनको अत्यन्तरजोगुणहै वेइसप्रकारके होतेहैं ॥ २० ॥ राजानःक्षत्रियाश्चैव राज्ञांचैवपुरोहिताः । वादयुद्धप्रधानाश्च मध्यमाराजसीगतिः ॥ २१ ॥ भा० जिन पुरुषोंमें मध्यरजोगुण होताहै वेराजाहोतेहैं तथा क्षत्रियहोतेहैं अर्थात् शूरवीरआदिकगुणवाले होते हैं राजाओं के पु–

सेहितवादमें प्रधान जो कि नाना प्रकार वादविवाद करते हैं वकील आदिक पुरुष में प्रधान जो कि सिपाही होते हैं यह रजोगुणियों की मध्यमगति है ॥ २१ ॥ गन्धर्वा गुह्यका यक्षा विबुधानुचराश्च ये । तथैवाप्सरसः सर्वा राजसीषूत्तमा गतिः ॥२२॥ अ० गन्धर्व जो कि गानविद्या में कुशल गुह्यक जो सिद्ध और वादित्रों को बजाने में चतुर यक्ष नाम बड़े धनाढ्य तथा विबुधानुचर देवों के गण अर्थात सेवक और अप्सरा अर्थात् रूपादिकगुण और चतुर स्त्री जिनमें बहुत थोड़ा रजोगुण होता है उनको ऐसे जन्म मिलते हैं ॥ २२ ॥ तापसा यतयो विप्रा ये च वैमानिका गणाः । नक्षत्राणि च दैत्याश्च प्रथमा सात्त्विकी गतिः ॥२३॥ अ० तापस तपकर्त्ता कामक्रोधादिक दोषों के बिना कृच्छ्रचान्द्रायणादिक व्रत और योगाभ्यास करनेवाले यति नाम संन्यासी और विचार करने में प्रवीण विप्र नाम वेदपाठ अर्थ और तदुक्त कर्मों के जानने और करनेवाले वैमानिक गण जो कि आकाश में यानों को चलाने वाले और रचनेवाले नक्षत्र जो कि गणितविद्या जाननेवाले और नक्षत्र लोक उपासक लोग कर्म रहने वाले और दैत्य जो कि विद्या शान्ति और शूरवीरतादिक गुणयुक्त जो थोड़े सात्त्विक गुणयुक्त हैं उनमें ऐसे गुण होते हैं ॥२३॥ यज्वान ऋषयो देवा वेदा ज्योतींषि वत्सराः । पितरश्चैव साध्याश्च द्वितीया सात्त्विकी गतिः ॥२४॥ अ० यज्ञकर्त्ते यें जिनको अत्यन्त गौरव ऋषि जिनका नाम धर्म मन्त्रों के अभिप्राय जाननेवाले देव नाम महादेव और इन्द्रादिक दिव्यगुणवाले चारों वेद ज्योतिष शास्त्र और चन्द्रादिक ज्योतिलोक वत्सर काल और सूर्यलोक पितर जो दिन को नहीं सब मनुष्यों के हित करनेवाले और पितृलोक में रहनेवाले साध्य जो अभिमानरहितादिक देव इन्हीं के धर्म और विद्यादिक गुणों को सिद्ध करनेवाले तथा नारायण और विष्णु आदिक देव जो वैकुण्ठादिक में रहते जो मध्य सत्वगुण से ऐसे कर्म करते हैं उनकी ऐसी गति होती है ॥ २४ ॥ ब्रह्मा विश्वसृजो धर्मो महानव्यक्तमेव च । उत्तमां सात्त्विकीमेतां गतिमाहुर्मनीषिणः ॥ २५ ॥

भा० ब्रह्माअर्थात्सर्ववेदविद्याकाजाननेवाला अथवा ब्रह्मलोक का अधिष्ठाता और उस लोक को प्राप्त होनेवाले प्रजापति और विश्वसृज जो कि धर्म और विद्या से सब को पालन करनेवाले योगसिद्ध जो कि परमा- णु के संयोग वा वियोग करनेवाले और उस विद्यावाले अथवा अग्यार- ति लोक के अधिष्ठाता वा उनको प्राप्त होनेवाले धर्म महान बुद्धि अ- व्यक्त नाम प्रकृति यह उत्तम गुणको उत्तम गति है यहां से आगे कर्म औ- र उपासना का कोई फल भोग नहीं है बिना परमेश्वर के ॥२५॥ इन्द्रि- याणांप्रसङ्गेन धर्मस्यासेवनेन च। पापान्संयान्ति संसारानविद्वांसो नराधमाः॥२६॥ भा० इन्द्रियों का प्रसंग अर्थात् अत्यन्त विषय सेवा में फ- सने और धर्म के त्याग से जो जीव अधम और विद्याहीन हैं अत्यन्त दुःखों को पाते हैं दुष्ट शरीरों को प्राप्त होते हैं इस प्रकारों से दुष्ट वा श्रेष्ठ कर्मों के करने से सुख वा दुःख जीवों को होते हैं यही ईश्वर की आज्ञा है कि जो जैसा कर्म करे वह वैसा भोगे इस से ईश्वर में कुछ पक्षपात दोष न- हीं आता क्योंकि जैसा जो कर्म करता है उसको वैसाही फल मिलता है और ईश्वर न्यायकारी है सो सदा न्यायही करता है अन्याय कभी नहीं इससे जैसा चाहै ऐसा करना नहीं बनता ईश्वर में क्योंकि वह सत्य सं- कल्प है और निर्भ्रम उसका ज्ञान है इससे जैसी व्यवस्था न्याय से करनी उचित थी वैसी ही किया है अन्यथा नहीं एकदेशी सब जीव हैं कि- ञ्चित्कर्म और अल्पज्ञ हैं पीछे और अपरों कि जीवों में अधर्म दो- ष होते हैं और कोई व्यवहार में निर्भ्रम भी होते हैं सर्वत्र नहीं और सर्व भ्रमनिर्भ्रमवाले जीव होता है कि जब परमेश्वर का साक्षात् विज्ञान हो- ता है और उसी का नित्ययोग अन्यथा नहीं सर्वज्ञ निर्भ्रम तो सना- तन एक ईश्वर ही है इससे क्या आया कि एक जीव चाहे अनेक धारण करता है यह सिद्ध भया अरु ईश्वर एक जीव को अनेक जन्म की व्यवस्था क्योंकरता है क्योंकि ईश्वर सर्वशक्तिमान् है नित्यनए २ जीवों को उत्पन्नक्यों नहींकरसकता उत्तर ईश्वर अवश्य सर्वशक्तिमान् है परन्तु अन्यायकभी नहींकरता जो जीव दूसरा शरीर धारण नहीं करेगा

तो एक जन्ममें किए पाप वा पुण्य इनका भोग नहीं हो सकेगा फिर उस-
का न्याय भी नहीं होगा कि पाप करनेवाले को दुःख और पुण्य करनेवा-
ले को सुख होना चाहिए सो बिना शरीर से भोग नहीं हो सकता इससे
अनेक जन्म अवश्य मानना चाहिए प्रश्न पाप का फल भोग बिना शरी-
र से भी हो सकता है पश्चात्ताप करने से जो अधर्म से जितने पाप किए होंगे
उनका भोग मन में शोक करके भोग कर लेगा उत्तर ऐसा न कहना चाह-
िए क्योंकि पश्चात्ताप जो होता है सो भविष्यत् पापों का निवर्तक होता
है किए भए पापों का नहीं जैसे कोई पुरुष किसी कूप को दौड़ के चले
जाय फिर कभी कूप के पार के किनारे पर नहीं पहुंचे किन्तु कूप में गिर
जाय उसमें उसका हाथ वा पांव टूट जाय फिर उसको कोई बाहर नि-
काले फिर वह बहुत शोच करै कि मैं ऐसा काम न करता तो मेरी यह
दुर्दशा क्यों होती सो मैं बड़ा मूर्ख हूं इससे क्या जानता है कि आगे को
वह फिर ऐसा कर्म न करेगा परन्तु अंग टूटने का दुःख उसकी निवृत्ति कभी नहीं
होगी सो पश्चात्ताप जो होता है सो भविष्यत् का निवर्तक होता
और जैसे कोई मनुष्य आंख से अन्धा और कान से बहिरा होय उसके
पास से कोई सांप चला जाय अथवा कोई गाली देवे परन्तु उसको
तो भी उसको कुछ दुःख नहीं होता ऐसे ही बिना शरीर धारण से जीव
सुख वा दुःख नहीं भोग सकता क्योंकि जब बुद्धि और मन पदार्थ होता है तब
वह जीव उपयोग इन्द्रियों के व्यवहारों को भोग कर सकता है अन्यथा नहीं इ-
ससे क्या आया कि पश्चात्ताप से कृत पापों की निवृत्ति नहीं हो सकती प्रश्न
जीव निज कर्मों से सुख होय वैसा ही क्यों नहीं करता उत्तर विद्या-
विचारादिक गुणों से युक्त नहीं भया तब तक जानता नहीं विद्यादि गुण बिना
परिश्रम नहीं होते अकस्मात् ऐसा है कि जिसमें अल्प सुख हो-
य और पीछे दुःख को विषय भोग करके जो दुःखित होता है क्योंकि अ-
त्यन्त विषय सेवा से बलबुद्धि और धनादिक नष्ट होते हैं और उन्माद-
क रोगों से युक्त होके फिर दुःखित होता है इस प्रकार का व्यवहार
है कि प्रथम तो दुःख होय और पीछे सुख सो व्यवहार यह है कि विद्या-

जितेन्द्रियता, ब्रह्मचर्याश्रम, विद्याकी प्राप्ति, सत्पुरुषोंका संग, और धर्म का अनुष्ठान, इत्यादिक जानलेना इनकी प्राप्तिके आचरणोंमें प्रथम दुःख होताहै और जब इनकी प्राप्ति होजातीहै तब अत्यन्त सुखको प्राप्त होताहै तीसरा व्यवहार ऐसा होताहै कि जिसमें सदा दुःखही रहै सो मोहहै जो धन पुत्र और स्त्री आदिक अनित्यपदार्थोंमें फसके विद्यादिक श्रेष्ठ गुणोंका त्याग करताहै वह सदा दुःखी रहताहै चौथा यह व्यवहारहै कि जिसमें सदा सुखही रहताहै दुःख कभी नहीं सो मुक्ति है विद्यादिक गुणोंके नहीं होनेसे मुक्तिके अर्थ को जानताही नहीं फिर कैसे कर सकेगा कभी न कर सकेगा और ईश्वरका करना सब अच्छाही है क्योंकि ईश्वर न्यायकारी दयादिगुणयुक्त रहताहै यह हमको दृढ़ निश्चयहै कि ईश्वर अन्याय कभी नहीं करता इसमें हम लोग बुद्धिसे यथावत् जानतेहैं ईश्वर जैसा न्याय है वैसाही करता जो करताहै सो न्याययुक्तही करताहै अन्यथा नहीं सो इससे यह सिद्ध भया कि अनेक जन्म होतेहैं सो जीव अविद्यादिक दोषोंसे युक्त होके निरन्तर फसा रहताहै इससे जीवको विवेकादिक गुण नहीं होनेसे बन्धन भी इसका नष्ट ही होता जब यथावत् परमेश्वर पर्यन्त पदार्थ विद्या होतीहै तब महत् सब दुःखोंसे छूटके मुक्ति को प्राप्त होताहै प्रश्न प्रथम आप कह चुकेहैं कि बिना शरीरसे सुख वा दुःख भोग नहीं होसकता सो मुक्ति में भी जीवका शरीर रहता होगा और जो कहैं कि नहीं रहता तो मुक्ति का आनन्द कैसे कर सकेगा और जो कर सकताहै तो इसने कहाथा कि पाप से पश्चात्तापसे पापका फल भोगलेताहै यह बात मेरी समझ होयगी उत्तर जीवही मुक्ति में रहताहै और शरीर नहीं क्योंकि पहिले जो लिंगशरीर कहाथा वही जीवके साथ रहताहै सो अत्यन्त सूक्ष्महै और सब पदार्थोंसे उत्तम और निर्मलहै जैसे अग्निसे लोहा तप्त होताहै उसमें अग्निभी अधिक प्रकाश होताहै वैसेही एक अद्वितीय चेतन परमेश्वर सर्वत्र व्यापक है उसकी सत्तासे जीव चेतन सदा रहताहै क्योंकि व्यापक संबन्ध का वियोग कभी नहीं होता जैसे आकाश

हैं सब स्थूल पदार्थोंका वियोग कभी नहीं मनुष्य और वायु आदिक
जहां २ चलतेफिरते हैं वहां २ आकाशका संयोग पूर्ण ही है वैसे आ-
काशादिक पदार्थभी परमेश्वरमें व्याप्य हैं और परमेश्वर सबमें व्या-
पक है परमाणु और प्रकृति कि जिससे सब पदार्थोंकी अवधि है इनसे
सूक्ष्म आगे संसारके पदार्थ कोई नहीं हैं परन्तु परमेश्वर इनसेभी अ-
त्यन्त सूक्ष्म और अनन्त है जैसे आकाश किसी पदार्थके साथ चलता
फिरता नहीं वैसे परमेश्वरभी पूर्ण के होनेसे जीवोंके साथ चलता
फिरता नहीं किन्तु जीव सब अपने २ कर्मानुसार चलतेफिरते हैं प-
रमेश्वरकी सत्तामें सर्वत्र चेतन है ॥ दुःखजन्मप्रवृत्तिदोषमिथ्या-
ज्ञानानामुत्तरोत्तरापाये तदनन्तरापायादपवर्गः । यह गौतम मु-
निका सूत्र है मिथ्या ज्ञान जो कि मोह है अनेकप्रकारका होता है य-
थावत् विद्याके होनेसे नष्ट होजाता है तब । अविद्यास्मितराग-
द्वेषाभिनिवेशाः पञ्चक्लेशाः । यह पतञ्जलि मुनिका सूत्र है इस का
यह अभिप्राय है कि अविद्या तो पहिले प्रतिपादन करि दिखाई सोई
सब दोषोंका मूल है द्रष्टा जो जीव दर्शन जो बुद्धि इन्द्रियां इनकी एकस्वरू-
पतासे जो मैं बुद्धि हूं ऐसा अभिमानका होना सो अस्मिता दोष
कहाता है । सुखानुशयी रागः ॥ ३ ॥ प० जिस सुखका पहिले अनु-
भव हुआ था उसकी क्रिया होय उसमें अत्यन्ततृष्णा का नाम लोभ किंवा सु-
खको अवश्य मिलना चाहिये यह दूसरा दोष है क्योंकि अनित्यपदा-
र्थोंमें उत्पत्ति और नाशके होनेसे नित्यपदार्थमें जो कोई इच्छा कभी नहीं
होती दुःखानुशयी द्वेषः ॥ ४ ॥ प० जिस दुःखका पहिले अनुभव
किया होय उसकी स्मृतिके होनेसे उसके हटानेकी इच्छा और उससे
जो क्रोध उत्पन्न होता है यह तीसरा दोष है । स्वरसवाही विदुषोऽ-
पि तथारूढोऽभिनिवेशः ॥ ५ ॥ प० सब प्राणियोंको यह आशा नित्य
बनी रहती है कि मैं सदा रहूं और मेरे ये पदार्थ सदा बने रहैं नाश
कभी न होवें सो कपिलसे लेके सब प्राणियोंको और विद्वानोंकोभी यह
आशा नित्य बनी रहती है यह चौथा अभिनिवेश दोष कहाता है और

अविद्यादि प्रथम दोषहैं एवंरागद्वेषऔरइनसे उत्पन्न अनेकप्रकार दोषजीवोंमें रहतेहैं इससे जीवोंकीमुक्तिभी नहीं होसकी परन्तु वि-वेकादिगुणोंसे जब मिथ्याज्ञाननष्टहोजाताहै तबअविद्यादिक दोष भीनष्टहोजातेहैं । प्रवृत्तिर्वाग्बुद्धिशरीरारम्भइति ॥ ६ ॥ गोतम० व-चनबुद्धिऔर शरीरइनहीसेजीवआरम्भकरताहैसोप्रवृत्ति कहाती है परन्तु जिसके अविद्यादिक दोषनष्ट होजातेहैं वह उनमें प्रवृत्तनहीं होता किन्तुविद्यादिकगुणोंमें प्रवृत्तहोताहै इससे उसकोमिथ्या प्र-वृत्तिकिपरमेश्वरसे भिन्नपदार्थ कोजो इच्छासोनष्ट होजातीहै फिर वह योगाभ्यास विचार औरपुरुषार्थसेयुक्तजबहोताहै तबसेअ-नेक परमाणु पर्यन्त सूक्ष्मपदार्थोंकाज्ञानजैसेयथावत् साक्षात्का-रहोताहै फिर अत्यन्त जबविचार औरयोगाभ्यासकरताहैतबपर-मानन्दस्वरूपप्रकाशस्वरूप जो परमेश्वरउसको अपनेही में यथावत् देखताहै फिर उसकोस्थूल शरीर धारण करनेका आवश्यक नहीं किन्तुएकपरमाणुको भी शरीर बनानेमेंइच्छाकरता है नइसकाजन्म मरणादिक कारण जो अविद्यादिकदोष नष्टहोगये फिरनवीन जो कर्मके भोगतबनष्टहोजातेहैं और आगेजोकर्म कियेजाते हैं परन्तु जन्महो के वास्ते करता है सो अबसे कभी नहीं करता किन्तुधर्मही कर-ता है उससे ज्ञानकाही बढ़जाताहै अन्य नहीं फिर उसके जन्म मरणका जो मूल अविद्यासोज्ञानसे नष्ट होजाता है फिरवह जन्म धारण नहींकरता और उसकी बुद्धि, मन, चित्त, अहङ्कार, प्राण और इन्द्रियसबदिव्यशुद्धपदार्थ होके उसमें अत्यन्तरहजातेहैं औ-रदिव्यज्ञानादिक गुण निश्चलहोके रहते हैं और आपदिव्यशुद्धनि-र्विकार रहजाता है बाधनालक्षणंदुःखम् ॥ ७ ॥ गोतम० जि-सकीबाधना अर्थात् इच्छाविघात वह दुःख कहाता है ॥ ७ ॥ तदत्यन्तविमोक्षोऽपवर्गः ॥ ८ ॥ गोतम० दुःखोंकी अत्यन्त जो नि-वृत्ति उसकोमोक्षकहते हैं किसबदुःखोंसेछूटजाना और सदाआन-न्दस्वरूपपरमेश्वरको प्राप्तहोके रहना फिरजन्ममरण और दुःखसम्बन्ध

कभीनहींहोता सोकेवल एकपरमेश्वर के आश्रयमें वहजीव रहता
है और किसीका सहाय उसकोनहींहोता परमेश्वरकेयोगसेउसजीव
में सर्वज्ञतादिगुणज्ञान सब पदार्थोंका गुण औरदोष इनका सत्य २
योंकभीसदा रहताहै इससे जिसदुःखसागर संसारसे बड़े भाग्यसेछू-
टकेपरमानन्द परमेश्वर को प्राप्तभयाहै सोयथावत् जानताहैकिप-
रमेश्वरके योगसे अन्यत्रदुःखहीहै सुखकभीनहीं फिरवह इसदुःख
मेंकभी नहीं गिरता जैसे चिंवटी अत्यन्तचञ्चल होतीहै फिर वह
नानाप्रकारके कणोंकोलेकर के अपने बिलमें संचय करती जातीहै
उसकोकिसीप्रकारसन्तोषकभीनहींहोता वह कभी भाग्यऔर पुरु-
षार्थसे मिश्रीकेढेलेको प्राप्तहोय उसका स्वादलेके आनन्दितहोजा
तीहै फिर वह अपने घरऔर संचयको छोड़के उसीमें निवासकर
तीहै उसको खींचने कासामर्थ्य नहीं सदाउसको छोड़भी सकतीउस-
की उत्तम पदार्थ केहोनेसे वैसेजीवभी परमेश्वर के निजपदार्थमें
सदा आनन्दरहताहै सुखादिकेसमीपके परन्तु जबपरमेश्वर का उ-
सको योगहोताहै तब सत्वगुणादिक सबपरमेश्वरके नष्टहोजातेहैं नि-
त्यमुक्तज्ञानऔर स्थिरहोकेपरमेश्वर मेंही रहताहै सोमुक्तिमें पर-
मेश्वर काआधार उसको होनेसेसदापरमानन्द मुक्तिकेसुखकोभो-
गताहै और निराधारसेविषयसुखवादुःखऔरमुक्तिकाआनन्दभी
नहींभोगसकता इससे क्याआयाकिनिराश्रयजीवशरीरधारणसेपापसे
युक्त संसार मेंकभीनहींयोग्यहोसकताऔर परमेश्वरकेआधारके
बिनामुक्ति सुखभीनहीभोगसकता सोजोकहताहै किनहींसोपाप
धानुएव भोगताहै वहकहीअन्यहोताहै यह बातउसकी मिथ्याजा
ननी प्रश्न वहमुक्तिप्राप्तजीवसदाबनारहताहै वाकभीनहमोक्षसेछूट
जाताहै उत्तर इसका यह विचारहै कि परमेश्वरने जबसृष्टिरचीहै
कि जब संसारका अत्यन्तप्रलयहोगा तबजीवमुक्तभीरहआनन्दमेंर-
हेंगे और जब अत्यन्त प्रलयहोगा तबकोईनरहेगा इसकासाम-
र्थ्यकत और एक ईश्वरकेबिनाकोई अन्यनरहजाताहै किजब

अथ जीव मुक्त होता भी तो भी वर्णन नहीं तो अत्यन्त फल पर ब्रह्म देता है सें-
भक्त जन होता है कि अत्यन्त फल प्राप्त होगा और उसमें अनेक प्रकार का
मङ्गल होगा और इच्छित भी होगी इससे सब सज्जनों को अत्यन्त मुक्ति
की इच्छा करनी चाहिए क्योंकि अन्यथा कुछ सुख न होगा जबतक
मुक्ति जीव को नहीं होती तबतक जन्म मरणादि के दुःख सागर में डूबा
ही रहेगा और जो जल्दी मुक्ति करलेगा सो अतुल आनन्द को पावेगा।
प्रश्न मुक्ति एक जन्म में होती है वा अनेक जन्म में। उत्तर इसका नि-
यम नहीं क्योंकि जब मुक्ति होने का कारण करता है तभी उसकी मुक्ति हो-
ती है अन्यथा नहीं प्रथम सृष्टि में भी कोई जीव पहिले ही जन्म में मु-
क्त होगया हो इसमें कुछ आश्चर्य नहीं उसके पीछे जो कोई मुक्त भया
होगा वा होता है और होवेगा सो बहुत जन्म ही में होगा मुक्त सो
योग अत्यन्त पुरुषार्थ से होता है अन्यथा नहीं। भिद्यते हृदयग्रन्थि-
श्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः। क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे॥
यह मुण्डक की श्रुति है इसका यह अभिप्राय है कि हृदय ग्रन्थि नाम अ-
विद्यादिक दोष जब जीव के नष्ट हो जाते हैं तब विज्ञान के होने से सब
संशय नष्ट होजाते हैं और जब संशय नष्ट होजाते हैं तब कर्म भी जीव के नष्ट
हो जाते हैं फिर जीव को फिर कर्म बन्ध कुछ नहीं रहता मुक्ति होने के पीछे
सो कर्म तीन प्रकार का होता है एक क्रियमाण जो कि नित्य किया जाता
है दूसरा सञ्चित जो कि बुद्धि में संस्कार रूप होके रहता है तीसरा
प्रारब्ध जो नित्य भोग किया जाता है इसके तीन भेद हैं। सतिमूले त-
द्विपाको जात्यायुर्भोगाः॥ ८॥ पाद २ इसका यह अभिप्राय है कि क-
र्मों के फल तीन होते हैं जन्म आयु और भोग परन्तु जबतक कर्मों-
का मूल अविद्यादिक रहते हैं तबतक कर्मफल भोग भोगता है सो
भोग से पाप पुण्य जैसा जन्म आयु और भोग उसके अनुसार होते हैं जब
जीव पुरुषार्थ से नित्य धर्म और पातञ्जल शास्त्र की रीति से योगाभ्या-
स करता है तब उसको यथावत् विज्ञान होता है तब मूल सहित कर्म छूट
जाते हैं क्योंकि बन्धन मुक्ति के कारण से सब कर्म छूट के जब मुक्ति होती है

तबतक उसको फिर कर्म का कुछ नहीं रहता प्रश्न मुक्तिसमय में जीव परमेश्वर में मिल जाता है जैसे जल में जल वा नहीं उत्तर जो जीव मिल जाता तो उसको मुक्ति का सुख कुछ नहीं होता और मुक्ति के वास्ते जितने साधन किए जाते हैं वे सब निष्फल हो जायंगे और मुक्ति क्या भई किन्तु उसका नाश ही होगया इससे यह बात मिथ्या है कि जीव ब्रह्म में मिल जाता है वह ब्रह्म अर्थात् सब में जो भरे हैं और जो कि अपने स्वरूप में व्याप्त हैं जितना उसको यथावत् साक्षात् जानने से सब दुःखों से छूट जाता है जो बाबी मारके और दैव के भरोसे रहता है और आलस्य से कुछ कर्म अच्छा नहीं करता वही जीव नष्ट है और जो अत्यन्त पुरुषार्थ के ऊपर निश्चय करके उद्यम करता है सोई जीव भाग्यशाली है क्योंकि पुरुषार्थ ही से मुक्ति होती है और यथावत विवेक के होने से हानि वा लाभ में शोक वा हर्ष रहित होता है वह पुरुषार्थी सर्वत्र सुखी रहता है क्योंकि वह विद्या से सब पदार्थों को यथावत् जानता है सो सब मनुष्यों को यही उचित है कि सदा पुरुषार्थ ही करना आलस्य कभी नहीं पुरुषार्थ इसका नाम है कि जितेन्द्रियता, धर्म युक्त व्यवहार, विद्या, और युक्ति जिससे होय और अन्य पुरुषार्थ नहीं क्योंकि पुरुष के अर्थ जो करता है सोई पुरुषार्थ कहाता है और जो अन्याययुक्त व्यवहार करते हैं उसका नाम पुरुषार्थ नहीं और परमेश्वर अत्यन्त दयालु है जो श्रम उसकी प्राप्ति के हेतु तन, मन और धन से श्रद्धापूर्वक पुरुषार्थ करता है उसको शीघ्र ही प्राप्त होता है कृपा से विद्यादिक पदार्थों का उस के पुरुषार्थ के अनुसार प्रकाश होता है फिर सदा आनन्दित मुक्ति में रहते हैं सो सब पुरुषार्थों का फल मुक्ति है इससे मुक्ति की चाहना उक्त प्रकार से अवश्य सब को करनी चाहिए यह विद्या अविद्या बन्ध मुक्ति के विषय में संक्षेप से लिखा और जो विस्तार से देखा चाहें सो वेदादिक सत्य शास्त्रों में देख लेवें इस के आगे आचार अनाचार भक्ष्य और अभक्ष्य के विषय में लिखा जायगा ॥

इति श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिकृते सत्यार्थप्रकाशे सुभाषाविरचिते नवमः समुल्लासः सम्पूर्णः ॥ ९ ॥

अथ आचारानाचारभक्ष्याभक्ष्यविषयान् व्याख्यास्यामः ॥ श्रुतिस्मृत्युदितं सम्यङ् निबद्धं स्वेषु कर्मसु । धर्ममूलं निषेवेत सदाचारमतन्द्रितः ॥१॥ म० श्रुति जो वेद स्मृति जो धर्मशास्त्रादिक सत्यशास्त्र और सत्पुरुष उनमें जो सदाचार उसको सदा सेवन करें और जितना आचार सो सब युक्तिपूर्वक करें सत्पुरुषों के आचरण से विरुद्ध नहीं सो सत्यभाषणादिक आचार धर्म का मूल है इसको सदा श्रेष्ठ मनुष्यों को निश्चय करके सदा सेवन करें सब पदार्थ शुद्ध रक्खें अशुद्ध एक भी नहीं जितने श्रेष्ठ गुण उनके ग्रहण का सदा आचार रक्खें सत्पुरुषों के संग में सदा प्रीति रक्खें और वेदादिक सत्यशास्त्रों को ग्रहण करें जितेन्द्रियता सदा रक्खें इनसे विपरीत जो अनाचार उसको छोड़ें जिससे शरीर का बल तथा विद्या प्राप्त होय उसको सदा मान के आचार से उसको भक्षण करें और अधर्मी पाखण्डी उनको कभी न मानें और मिथ्याभिमान कि जिसका उनको प्रमाद न करें सब शास्त्रों से ब्रह्मचर्याश्रम से विद्या ग्रहण करें बाल्यावस्था में विवाह कभी न करें और नाना प्रकार के शिल्प और पदार्थ विद्याओं से रसायन विद्या द्वीप द्वीपान्तर में भ्रमण करके मनुष्यों के अच्छे बुरे आचरणों की परीक्षा और अच्छे आचरणों का ग्रहण करें और बुरे का नहीं मूर्ख आर्यावर्त्तवासी लोग इस देश को छोड़ के अन्य देशों में जाने में पाप गिनते हैं और कहते हैं कि पतित हो जाते हैं उत्तर यह बात मिथ्या ही है क्योंकि मनुस्मृति में जहां जिसके ऊपर राजा का कर लिखा है सो जो समुद्र पार द्वीपद्वीपान्तर में न जाते होते तो क्यों लिखते । समुद्रे नास्ति लक्षणम् । इत्यादिक वचन मनुस्मृति में लिखे हैं सो भला समुद्र में जब जहाज जाय तब कुछ

करकानियमनहीं किन्तु द्वीपद्वीपान्तरमें जाकेव्यापार करके पदा-र्थोंकोपैदाकेऔरवहां से पदार्थों कोलाके इसदेशमें भरदेतेथे फिर उनको जितनालाभहुआ थे उसमेंसे ४० वांहिस्साराजाले औरराजा भीतीनप्रकारके मार्गको शुद्धिकरे एकस्थल,जल औरवनउसमेंजल के मार्गकेव्यवस्थानमें जहाजोंकोऊपरचढ़के द्वीपद्वीपान्तर में जावें और समुद्रमेंजहाजों परवैठके युद्धकरें यहक्योंलिखा और महा-भारतमें लिखीहै किश्रीकृष्ण और अर्जुन जहाजपैवैठके समुद्रमें चलेगए वहांपातालदेशमेंजामिले आदिको यज्ञमेंलेआए औरराजसूय तथाअश्वमेधमेंसबद्वीपद्वीपान्तरके राजाओंको यज्ञमें लेआएथे सो विना जहाजसेद्वीपद्वीपान्तर में कैसेजासक्ते औरसगरराजसषठिका ने भूमणकरताथा विना जहाजोंसे समुद्रपार कैसेजासक्ता तथाअ-र्जुन,भीम,नकुल,सहदेव,और कर्ण सबद्वीपद्वीपान्तरमें भूमण करते थे विनाजहाजोंमें कैसे करसक्तेथे इक्ष्वाकुसेलेकेदशरथपर्यन्तद्वीप द्वीपान्तर में भूमण करतेथे सोजहाजोंहीमें करतेथे और रामभीस-मुद्रकेपारलंकामेंगएथे सोभीजोएक द्वीपहै इत्यादिकमनुस्मृति और महाभारतादिक इतिहासों में लिखाहै और युक्तिसे विचार करके देखैंतो यहीआताहै किदेश देशान्तर और द्वीपद्वीपान्तर में जाना अच्छाहै क्योंकिअनेकप्रकारके पदार्थजाननेमें अनेक प्रकारके म-नुष्योंसे समागमहोना उनका व्यवहार आपसमुझना औरसंपत्तिहित होतेहैं और उत्तमर पदार्थोंको अपनेदेशमेंलेआने औरलेजानेसेब-हुतलाभहोताहै तथानिर्भयऔरशूर,औरपुरुषार्थीहोने लगतेहैं यहतो बड़ाएकअच्छा आचारहै और कोईअपनेही देशमें रहतेहैं औरदेश मेंजानेके उनकोस्पर्शकरनेमें दोष मानतेहैं वे विचार रहित पुरुषहैं देखनाचाहियेकि मुसल्मान वा अंगरेज केछूनेमें दोषमानतेहैं और मुसल्मानों वा अंगरेजकेदेशोंहीसेसंगकरतेहैं और अपने पास ध-नमें रखलेतेहैं इसमें कुछ भेदनहींरहता यहबड़े अन्धकारकी बात है कि मुसल्मान और अंगरेजआदिभी आदमी उनहींतरहके हैं

और ऐसेस्वार्थियोंसेनहींछूतमानना यहकेवलयुक्तिशून्यबात है और जोउनसेछूतहीमानतेहैं कि इनसेशरीरनलगे नवस्त्र स्पर्शहोय इसीबातसेतो आर्यावर्त्तदेशकानाशभयाहै क्योंकि एकआर्यावर्त्तवासीउनके छूतकेडरसे दूर२ भागतेरहतेहैं और वेसुखसे राज्यसब लेलेतेहैं और हृदयसेसबद्वेषहोनेसे अन्यथाबुद्धिरखतेहैं इससे परस्परसबदुःखपातेहैं यह सब अनाचार है आचार इसकानामहैकि राग,द्वेषादिकदोषोंको हृदय से छोड़देना और सज्जनताधीरतादिकोंकोधारणकरलेना यही आचार पहिले मनुष्योंकाथा किअमेरिकाकीकन्या अर्जुनसेविवाहीगईथी जोकिनागकन्याकरके लिखी है फिर ऐसीबात जोकहतेहैं किद्वीपद्वीपान्तरमें जानेसे जातिपतित और नष्ट धर्महोजाय यहबात मिथ्याहै क्योंकि छून देशदेशान्तरमेंनजाना यहबात आर्यावर्त्तमेंजैनोंकेराज्यसेचली है पहिले नथी क्योंकिजैनबड़े भीरुहोतेहैं और छोटेजीवोंकेऊपर दयारखतेहैं इसीसे मुखकेऊपर कपड़ा बांधलेतेहैं सो चलनें फिरनेमें भी डरगयेहैं फिरजहाजोंपै बैठकेद्वीपद्वीपान्तर में जानाइसमें हिंसाज्यादेहोनेसे और साधारणतयासम्प्रदायीलोगइन्होंनेअपनेमत लगके टूटजानेकाडररखाहै क्योंकिअपना जैसा हमपक्षमानद्वीप द्वीपान्तरमें जायगा लोगोंकी जीविकाकी हानि होजायगी देश देशान्तर औरद्वीपद्वीपान्तर में जानेसेकोईबुद्धिमानका अवश्यसमागम होगा उससे सत्यअसत्यका उसकोबोधभीहोगा फिरउसके साधनेहमारा जालनहींचलेगा और नित्य शनैश्चरादिग्रहकेनामसे तथा सूतमेलादिकनामसे तथामन्दिरादिकोंमें आनेजानेसे शिवनारायण दुर्गादिकेदर्शनकरानेसे उनको ठगके लाखहांरूपयेलेना, कपटसेभिक्षालियाकरतेहैं जोयहद्वीपद्वीपान्तर में चलाजायगा बहुत कालमें आवेगा तबतकउनकी आजीविका बन्द होजातीहै क्योंकि वह उनके लोभसेहीनहींरहेगा फिर उससेकोई क्यालेगा फिरभीएकपापियोंकाडरलगारहताहै जोकोईऐसाहै आवै उसकेऊपरवड़ेपरछेके

लगादेतेहैं क्योंकि उसकी पुर्दे शादेशके कोई जानेकी इच्छा करता सो वह अर्माद्ध के नजान इसहेतु कि हमारी आजीविकासदा बनीर- है यह केवल उनकी मूर्खता है क्योंकि दरिद्र धनाढ्य वा धनाढ्यही दरिद्र बनजायगा ऐसेभीरे २ सब दरिद्र और मूर्खबनजांयगे फिर उनसे आजीविकाभी किसीकी नहोगी परन्तु ऐसा विचार नहीं करते क्यों- कि आपने मतलबमें फसेहैं और विद्याभी नहीं इससे कुछ नहीं जानस- के परन्तु सज्जनलोग इस बातको मिथ्याही जानें और कभी देश देशान्तर वा द्वीपद्वीपान्तर के जानेमें भ्रम न करें क्योंकि जब मनुष्य मि- थ्या भाषणादिक अनाचार करेगा तब वहांभी अनाचारी होगा और जो सत्यभाषणादिक आचार करेगा वह कभी किसी देशमें अनाचारी नहीं होता और जो ऐसा जानते हैं कि चूल्हा न छूना और हाथों को म- लना आचार जानते हैं यहभी बात अयुक्त है क्योंकि जलादी शौच करना उचित है कि जितने से हस्त, पाद, शरीर और वस्त्र दुर्गन्धयुक्त न रहै इससे अधिक करना सो अनाचार है किन्तु जिससे सब पदार्थ शुद्ध- पात्र और स्थानादिक शुद्ध रहैं उतना शौच करना सबको उचित है अ- धिक नहीं अधिक आचार सद्गुणग्रहण सदा करना और विद्याके प्र- चारका आचार सदा करना इसका नाम आचार है सोई मनुस्मृत्या- दिकों में लिखा है और भक्ष्याभक्ष्य दो प्रकार के होते हैं एक तो वैद्यक शास्त्र की रीति से और दूसरा धर्मशास्त्र की रीति से सो वैद्यक शास्त्र की रीति से देश, काल, वस्तु और अपने शरीर की प्रकृति उनसे अनुकूल विचार करके भक्षण करना चाहिए अन्यथा नहीं जिससे बल, बुद्धि, पराक्रम और शरीर में आरोग्य बढ़ै वैसा पदार्थ भक्ष्य है सोई चरक वैद्य- क सुश्रुत शास्त्रों में लिखा है । और अभक्ष्यो ग्राम्यशूकरोऽभक्ष्यो ग्रा- म्यकुक्कुटः । इत्यादिक धर्मशास्त्र से अभक्ष्य का निर्णय करना क्योंकि सूअर गांवका और कुक्कुट गांवका मलही खाता है उसका परिणाम मां- स होगा उसके खाने से दुर्गन्ध शरीर में होगा उससे रोगोत्पत्ति का सं- भव है और चित्त भी अप्रसन्न होजायगा वैसाही धर्मशास्त्र की रीति

होमयज्ञमनन तथा जितनेमनुष्योंके उपकारक पशुहननकार्योंसे अ-
भक्ष्य तथा बिनाहोमके अन्नादिकोंमेंभी अभक्ष्य हैं (प्रश्न) पशुजीवको
मारके अग्निमेंजलाना और फिर खाना यहकुछ अच्छीबात नहीं
और जीवको पीड़ादेना किसीकोअच्छानहीं (उत्तर) इसमें क्या कुछ
पाप होताहै (प्रश्न) पापही होताहै क्योंकि जीवोंकोपीड़ादेके अपना
पेटभरना यहधर्मात्माओंकी रीतिनहीं (उत्तर) अच्छा एक जीव को
मारनेमें पीड़ा होतीहै सोसब व्यवहारोंको छोड़देनाचाहिए क्यों-
किनेत्रकी चेष्टासेभी सूक्ष्मदेहवाले जीवोंकोपीड़ा अवश्य होती है
और तुम्हारेघरमें कोईमनुष्यचोरीकरै तोतुमलोगभीअवश्य उस-
को पीड़ा देओगे औरपक्षीआदिक भोजनके ऊपरसे उड़ादेतेहो
इसमेंभी उसको पीड़ाहोतीहै औरजोकुछ तुमखातेपीते चलते फि-
रतेऔरबैठतेहो इसव्यवहारसेभी बहुतजीवोंको पीड़ाहोती है इ-
ससे तुम्हाराकहनाव्यर्थहै किकिसीजीवकोपीड़ानदेना (प्रश्न) जिसमें
प्रत्यक्ष पीड़ा होतीहै उसलोग उसमें पापगिनतेहैं अप्रत्यक्षमें कभी
नहीं क्योंकि अप्रत्यक्षमें पापगिनें तोहमारा व्यवहार नचलै (उत्तर)
ऐसेही आपलोगजानें किजहां अपनाप्रत्यक्षहोय वहांतो पाप न-
हींगिनतेहो यहआपकी बुद्धिसे विरुद्धहै औरकोईभी मांसनखाय तो
जानवर, पक्षी, मत्स्यऔर जलजन्तु इतनेहैं उनसेशतसहस्रगुने हो
जांय फिरमनुष्योंको मारनेलगें और खेतोंमें धान्यही नहोनेपावै
फिर सब मनुष्योंकीआजीविका नष्टहोनेसे सबमनुष्य नष्टहोजांय
औरव्याघ्रादिक मांसाहारीजीवभी बकरआदिकोंका भक्षणकर्ते हैं
औरगायआदिकोंकोभी किन्तु मनुष्यलोगोंको यह चाहिये किगाय
बैल,भैंसी, छेरी, भेड़ औरऊंटआदिकपशुओंकोकभी न मारें क्यों-
किइन्हींसे सब मनुष्योंकी आजीविका चलती है जितनेदुग्धादिक
पदार्थहोतेहैं सेसब उत्तमही होतेहैं और एक पशुसेबहुतआजीवि-
कामनुष्योंकी होतीहै मारनेसे कहांतो मनुष्य तृप्तहोतेहैं जबगाय
आदिकपशुओंकेबीचमेंसे एकगायकी रक्षासे दसहजार मनुष्योंकी

रक्षा होसक्तीहै इससे इनपशुओंको कभी नमारनाचाहिये प्रश्नइन पशुओंकों नहींमारनेसे इनके बहुत होनेसे सबपृथिवी भर जायगी फिरभी तो मनुष्योंको हानि होनेलगैगी उत्तर ऐसा नकहना चाहिए क्योंकि व्याघ्रादिक जीव उनको मारैंगे औरभीअनेकरोगोंसेभी मरेंगे इससेअत्यन्तनहींहोनेपावेंगे औरमनुष्योंके मारनेसे घृतादिक पदार्थ और पशुओंकी उत्पत्तिभीनष्टहोजातीहै इससेजहांगोमेधादिक लिखेहैं वहांपशुओंमें नरोंका मारना लिखाहै इससे इस अभिप्रायसे नरमेधलिखाहै मनुष्य नरको मारना कहींनहीं क्योंकि जैसीपुष्ट बैलादिक नरोंमेंहैं वैसीस्त्रियोंमें नहींहै और एकबैल से हजारहा गैया गर्भवती होती हैं इससे हानिभी नहीं होती सोई लिखाहै ॥ गौरनुबन्ध्योऽजोऽग्नीषोमीयः । यह ब्राह्मणकीश्रुतिहै इसमें पुल्लिंगनिर्देशसे यहजानाजाताहै कि बैला आदिक को मारना गैया को नहीं सो भी गोमेधादिक यज्ञों में अल्पत नहीं क्यों कि बैला आदि से भी मनुष्योंका बहुत उपकार होता है इससे इनकी भी रक्षाकरनी चाहिए और जो वन्ध्यागाय होतीहै उसकोभीगोमेधमें मारना लिखा है ॥ स्थूलपृषतीमाग्निवारुणीमनड्वाहीमालभेत । यह ब्राह्मणकीश्रुतिहै इसमेंस्त्रीलिंगश्रीरस्थूल पृषती विशेषणसेवन्ध्यागायलीजातीहैक्योंकिवन्ध्यासेदुग्ध औरवत्सादिककी उत्पत्तिहोती नहीं और जो मांस नखायसोघृतदुग्धादिकोंसे निर्वाहकरे क्योंकिघृतदुग्धादिकोंसेभी बहुत पुष्टि होती है जो जोगीतु त्यागमांसखावेघृतादिकोंसे निर्वाहकरे येभी सबअच्छेहोनके सिवा नखाय क्योंकि जीवकोंमारनेके समय पीड़ाहोतीहै उससे कुछपाप भी होताहै फिर जब अग्निमें होमकरैंगेतबपरमाणुसेउसप्रकार सब जीवोंको सुखपहुंचेगा एकजीवकी पीड़ा से पापभयाथासोभी थोड़ा सा गिना जायगा अन्यथानहीं प्रश्न सबको निश्चय अर्थात् कच्चा पक्का अन्न और इस के हाथ का भोजन करना इस के हाथ का खाना और इसके हाथ का न खाना यह बात के-

सीहै अगर इसका यह विचार है अग्न्याधान से लेके अन्त्येष्टि-
दिकोंका यथावत् संस्कारनमानै तथाविधिनजाने उसका भक्षण
न करनाचाहिए क्योंकिउससेरोगहोते हैं औरबुद्धिभीमलिन हो-
जातीहै लवणऔरनिकृष्टपदार्थोंकाभक्ष्यकल्पना है क्योंकि
जोअग्निमेंपकायाजाताहै वहसदाशुद्धरहिताभाता है और शूद्र
हीपाककरनेवालाहोनाचाहिये परन्तु वहशूद्र अपने जिस द्विज के
घरमेंरहे उसीकेघरकेअन्न औरउसीकेघरके पात्रों से पवित्र हो के
बनावे उसकेहाथसे अनेकगुणको भक्षणभी कुछ दोष नहीं ॥
नित्यंशुद्धःकारुहस्तःपण्यंयच्चप्रसारितम्। एतेषामन्त्याज्ञांनां शुश्रूषा-
मनुरुवाच इत्यादिक मनुस्मृति में लिखा है सेवामेंरसोईपकानारसो-
ईकाबनानाहैक्योंकि रसोईकेबनाने में बड़ा परिश्रम होता है और
कालभी बहुतजाताहै इससेरसोईआदिकसेवा का शूद्रहीको अधि-
कार है जोब्राह्मण, क्षत्रियऔरवैश्यहैं वेतोविद्यादिक प्रचार प्रजा
काधर्मसेपालन्यापार औरनानाप्रकारकेशिल्प इनकी उन्नति हो
वें पुरुषार्थकरें क्योंकिजोबुद्धिऔर विद्यायुक्तहैं उनको सेवा करना
उचितनहीं रसोईआदिक जोसेवा सो मूर्ख पुरुष जोशूद्र उसीका
अधिकारहै क्योंकिअग्निकेसामनेबैठना अपनेभाजनादिकको शु-
द्धिकरना नानाप्रकारकेपदार्थबनाना इसमेंबड़ापरिश्रम और का-
ल जाताहै इसकामकेकरनेसेविद्वान्का विद्या नष्टहोजाय इससे यह
कामशूद्रहीकाहै सोमहाभारतमेंलिखाहै कि जब राजसूयऔर अ-
श्वमेध युधिष्ठिरादिकमहात्माओंकेयज्ञहुयेथे उसमें सब द्वीपद्वीपा-
न्तरऔरदेशदेशान्तरोंके ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तथाशूद्र राजा औ-
र प्रजाआएथे उनकीएकहीपंक्तिहोतीथी और शूद्रनामशूद्रही पाक
करनेवाले औरपरोसनेवालेथे एकपंक्तिमेंसबके साथ सब भोजन
करतेथे तथाकुरुक्षेत्रकेयुद्धमें जूते,वस्त्र,शस्त्र, औररथ के ऊपर बैठे
भएभोजनकरतेथे औरयुद्धमेंकृष्णदेवमादेवकुन्ताआदिकोंनेपरभी
धनकाविजयहोताथा औरआनन्दसेराज्यकरतेथे और जो भोजन

में वड़े वखेड़े होते हैं वे भूखके मारे मरजांयगे युद्ध क्या करसकेंगे अब भी जयपुरादिकों के क्षत्रियलोग नाइपितादिकोंके हाथका भोजनक रते हैं सो सत्यसनातनहै और बहुत अच्छी है तथा सारस्वत और खत्री लोगोंका एकही भोजन है सो अच्छीवात है और गौड़ तथा अग र वाले वनियोंका भी एकभोजन प्रायः है सो भी अच्छी वात है और गु- जराती, महाराष्ट्र, तैलंग, द्राविड़ तथा कर्नाटक इनमें भोजन केव- ड़े वखेड़े हैं इनपांचोंमें से गुजराती लोगोंके भोजनका बड़ा पाखण्ड है क्योंकि महाराष्ट्रादिक चारों द्राविड़ जाता एकभोजन है और गुज- राती लोगोंका आपसमें बड़ा भेद है सबसे भोजनमें पाखण्ड कान्य कुब्जका अधिक है क्योंकि वे जलभी पीते हैं तो जुते उतारके हाथ, पैर धोके पीते हैं तब चौका देके चला चावते हैं सो वे दुख पाते हैं और चौका वरतन ही इसमें रहत और कुलक्षी और खुनेवारी में भी बहुधा भोजनमें पाखण्ड है यह केवल मिथ्यापाखण्ड भाइयरसे स्वजाते हैं और सब सो पाखण्ड भोजनचक्रांकितादिक वैरागियोंका अत्यन्त है ऐसा कोई कालही क्योंकि जब जगन्नाथके दर्शनको जाते हैं तबया- त्रा आदिकोंका जूठ खालेते हैं फिर अपनी पंक्ति में मिलजाते हैं उनका मिथ्या पाखण्ड भी नहीं रहा और हलवाई के दुकानका दूधदही और मिठाइ आदिक खाते हैं वह सनका उच्छिष्ट खाते और मलिन शिक्षा से भी होते हैं तथा दोसीलोग मुसल्मान और कमीनादिक होते हैं वे अपने घड़े का जूठा जल पिलाते हैं फिर उसका सब खाते पीते हैं और जानते भी हैं सो सत्यवातही का निर्वाह होना है इस्कालकमीन दीवा- लादिक चमार्थ वैश्यादिकोंको घरमें रखलेते हैं उनसे कुछभेद नहीं रहता उनको कोई नहीं कहता क्योंकि कहें तब जबकि निर्दोष होय सो परस्परदोषोंको छिपाते जाते हैं और गुणोंको छोड़ते जाते हैं यह सब अनाचार है और सत्यभाषणादिकोंका आचरण करना इसी का नाम आचार युधिष्ठिरके साथ बहुत ऋषि, मुनि, ब्राह्मणलोग थे वे राजसूयमें सूद्राकर्मथे और द्रोणादिक परंतु वे वेसब

खातेथे सो खानेपीनेसे किसीका धर्म भ्रष्ट नहीं होता है और न कोई पतित होता है क्योंकि खानापीना और धर्मका कुछ सम्बन्ध नहीं धर्म जो अहिंसादिक लक्षण जो बुद्धिस्थ है खानापीना व्यवहार सम्बन्धी है परन्तु शुद्ध पदार्थका खाना पीना चाहिये कि जिससे शरीरमें रोगादिक न होंय और जगतका अनुपकार भी न होय मद्य, भांग, गांजा, अफीम, और जितने नशे हैं वे सब कभी न खाने चाहियें क्योंकि जितने नशे हैं वे सब बुद्धि के नाश करने वाले हैं इससे इनका सर्वथा ग्रहण भी न करना चाहिए क्योंकि जितने नशे होते हैं वे बिना मर्यादा के नहीं होते फिर मर्यादा से सब धातु और प्राण नष्ट होजाते हैं और विषय जनके संग से बुद्धि नष्ट और विषम होजाती है इससे कुछ काम कभी करना योग्य नहीं है परन्तु औषधके हेतु कि रोगनिवृत्ति होता है उसको थोड़ासा अल्प और एक गुण वा [illegible] ग्रहण लिखा है सुश्रुतादिक वैद्यक शास्त्र में क्योंकि रोगनिवृत्तिके हेतु अभक्ष्य भी भक्ष्य होजाता है और जितने पशुओं के बछड़े को दूध नहीं देते और जब [illegible] हैं वह भी अनाचार है क्योंकि पशु [illegible] नहीं होते जिन बुद्धि के बिना दुःखादिक थोड़े होते हैं और पशु भी [illegible] होते हैं और [illegible] जलको देना चाहिये फिर एक [illegible] और सब [illegible] फिर दो पास [illegible] सब [illegible] दिन [illegible] और [illegible] दुःखादि कभी न होवें [illegible] मनुष्यादिकों की बुद्धि भी हुआ करै इससे खाने और पीनेमें धर्म मानते हैं [illegible] वे बुद्धि हीन मनुष्य हैं ऐसा जो है कि [illegible] व्यवहार और पदार्थों की प्राप्ति होय उनसे खानापीना करै तो तुल्य है और [illegible] प्रकार से खानापीना तो अवश्य पाप होता है [illegible] जितने भेद हैं वे विरोध दुःख और मूर्खता के कारण हैं इनसे [illegible] में पुरुष और स्त्री लोग विद्या, बल, बुद्धि, पराक्रम हीन होगए हैं प्रथम देश देशान्तरों में सब वर्णों में, विवाह आदि होते थे पूर्वोक्त वर्णों के कु-

ऐसे कि भोजनमें कैसे भेद होगा यह भेद थोड़े दिनसे चला है कि जबसे नानाप्रकारके वेदमतादि चले और मनुष्यकी बुद्धिमें परस्पर विरोध होनेसे प्रीति नष्ट होगई और होगया इससे कोई किसीके उपकारमें चित नहीं देता और अपने देश के मनुष्योंके उपकार के हेतु कोई यत्न नहीं होता किन्तु अपने स्वार्थमें रहते हैं सो सबका नाश होजाता है यह बड़ा अनाचार है और तथा विचारसे शुद्ध पदार्थ के खानेसे किसीका परलोक वा धर्म बिगड़ता नहीं परन्तु विद्या और विचारके रहीहोनेसे इन बखेड़े में मनुष्यलोग पड़के सदा दुःखी रहते हैं और जो परस्पर सुखार्थ ग्रहण करें तो सुखी होजांय और देखना चाहिये कि समयके ऊपर भोजन नहीं प्राप्त होता है भोजन के पात्रों को उठाके जाते फिरते हैं वैसोंकी नाईं दरिद्रलोग और धनाढ्यलोग बहुत जो ईश्वर आदिक सत्यशास्त्रों रखते हैं उससे मिथ्याधन बहुत खर्च होजाता है इत्यादि सब व्यवहार बुद्धिमान् लोग विचार से शुद्ध २ व्यवहार करें अशुद्ध कभी नहीं इस समुल्लास में आचारादि के विषय में लिखे इसके आगे आर्यावर्तवासी मनुष्य जैन मुसलमान और अङ्गरेजों के आचार अनाचार सत्यासत्य मतमतान्तरके खण्डन और मण्डन के विषय में लिखेंगे इसमें ग्यारहवें समुल्लास में आर्यावर्तवासी मनुष्यों के मतमतान्तर के खण्डन और मण्डन के विषय में लिखा जायगा दूसरे समुल्लास में जैनमत के खण्डन और मण्डन के विषय में लिखा जायगा तीसरे में मुसलमानों के मत के विषय में खण्डन और मण्डन लिखेंगे और चौथे में अङ्गरेजों के मत के खण्डन और मण्डन के विषय में लिखा जायगा सो जो देखा चाहै खण्डन और मण्डन को सो उन चारों समुल्लासों में देखले इस समुल्लास में खण्डन था। यहां नहीं लिखा क्योंकि जबतक बुद्धि मनुष्यों की सत्यासत्य विवेकयुक्त नहीं होती तबतक सत्यार्थ ग्रहण और असत्य के त्याग करने में समर्थ नहीं होते इसहेतु ग्रन्थ के पूर्वभाग में सब मनुष्यों के हितके हेतु शिक्षा लिखी और इस ग्रन्थ के उत्तरभाग में सत्यमतका मण्डन और असत्य म-

न का खंडन लिखेंगे संस्कृत में रचना करने से सब मनुष्यों के समझ में नहीं आता इस हेतु भाषा में लिखा गया इस ग्रन्थ को दुराग्रह छोड़ और ईर्षा को छोड़ के यथावत् विचारेंगे उनको सत्य २ पदार्थों के प्रकाश से अत्यन्त आनन्द होगा और अन्यथा इस ग्रन्थ का अभिप्राय भी उनके मन में होगा इस हेतु सज्जन लोगों को यह उचित है कि इस ग्रन्थ का अभिप्राय विचार के भूषण वा दूषण करें अन्यथा नहीं और मूर्ख तथा दुराग्रही पुरुषों के कहने पर ध्यान देने के योग्य नहीं ॥

इति श्री मद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थ प्रकाशे सुभाषा विरचिते दशमः समुल्लासः सम्पूर्णः ॥ १० ॥

सत्यार्थ प्रकाशस्य प्रथमभागः समाप्तः ॥

अथार्य्यावर्त्तीयमतखण्डनमण्डने विधास्यामः ॥ सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम् । तं देवनिर्मितं देशमार्य्यावर्त्तं प्रचक्षते ॥ १ ॥ म० सरस्वती जो [illegible] पंजाब के पश्चिम भाग में बहती है उससे लेके नैपाल के पूर्व भाग [illegible] के समुद्र [illegible] के बीच में जो देश है सो आर्य्यावर्त्त कहलाता है और ये देव नदी कहाती हैं [illegible] इनका नाम है जो देश देवनिर्मित है अर्थात् दिव्य पुरुषों से रचित है क्योंकि भूगोल के बीच ऐसा श्रेष्ठ देश कोई नहीं है जिस देश में सब श्रेष्ठ पदार्थ होते हैं और [illegible] वर्त्तमान होते हैं और [illegible] होते इस देश में [illegible] जो भी [illegible] पूर्ण हो जाता है इसलिये इसका नाम आर्य्यावर्त है आर्य नाम श्रेष्ठ मनुष्य और श्रेष्ठ पदार्थों का [illegible] है इस हेतु इस देश का ना

आर्य्यावर्त्त कहते हैं ॥१॥ एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः । स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥ २ ॥ म० इसदेशमें अग्रजन्मा नाम सबके गुणोंसे उत्तम जो पुरुष उत्पन्न होवें उनसे सब भूगोलकी पृथिवीके मनुष्य शिक्षा अर्थात् विद्या तथा संसारके सब व्यवहारोंका यथावत् विज्ञान करें इससे यह जाना जाता है कि प्रथम इस में मनुष्योंकी सृष्टि भई थी पीछे सब द्वीप द्वीपान्तरमें सब मनुष्य फैल गए क्योंकि पृथिवीमें जितने मनुष्य हैं इसदेशवालोंसे विद्यादिक शिक्षा ग्रहण करें और सब देशभाषाओंका मूल जो संस्कृत सो आर्य्यावर्त्त ही में सदासे चला आता है आजकल भी कुछ२ देखनेमें आता है परन्तु फिर भी सब देशोंसे संस्कृतका प्रचार अधिक है जर्मनी और विलायत आदिक देशोंमें संस्कृत के पुस्तक इतने नहीं मिलते जितने कि आर्य्यावर्त्त देशमें मिलते हैं और जो किसी देशमें संस्कृत के बहुत पुस्तक होंगे सो आर्य्यावर्त्त ही से लिए होंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं जो इस देश से भिन्नदेशवालोंने पहिले विद्या ग्रहण की थी उससे यूनान देश उससे रूम फिर रूमसे इंगलिस्थान आदिमें विद्या फैली है परन्तु संस्कृत के बिगड़नेसे ग्रीक लाटीन अंग्रेजी और अरबदेशवालोंकी भाषा बन गई है सो इनमें सविस्तर लिखना कुछ आवश्यक नहीं क्योंकि इतिहासोंके पढ़नेवाले सब जानते हैं और पदार्थ ऐसा ही मिलता है एक मोक्षमूलर साहेबने पहिले ऐसा ही निश्चय किया है कि जितनी विद्या भूगोलमें फैली है सो सब आर्य्यावर्त्त ही से लिई हैं और काशीमें बालेण्टेन साहेबने यही निश्चय किया है कि संस्कृत सब भाषाओं की माता है अथ दाराशिकोह बादशाहने भी यह निश्चय किया है कि जो विद्या है सो संस्कृतही है क्योंकि मैंने सब देशोंकी भाषाओंके पुस्तक देखा तो मेरी शुभको बहुत सन्देह रहा परन्तु जब मैंने संस्कृत देखा तब मेरे सब सन्देह निवृत्त होगए और अत्यन्त सुख मुझको भई और काशीमें मानमन्दिर जो कहाते हैं उसमें महाराज सवाई मानसिंहजीने खगोलके कला और यन्त्र ऐसे रचे हैं कि जिसमें खगोल

कालयन्त्रालय देखपड़ताथा परन्तु आजकाल इसको परस्परलड़ाइयों से बहुतकालपर्यन्त बिगड़गयाहै सोभीकुछर देखपड़ताहै फिरआगे कालमहाराज सवाईरामसिंहजीने कुछमरम्मत स्थानकी कराई है जो उसयन्त्रशालाकीकारीगरीको कुछसंभालगारहेगा अन्यथानहींजबसे महाभारत युद्धहुआ उसदिनसेआर्यावर्त्त कीबुरीदशाआईहैसोनि-रन्तर बुरीहीदशा होतीजातीहै क्योंकि उसयुद्धमें अच्छे२विद्यावान राजा और ब्राह्मणलोग मारेमारेगए फिरकोई राजापूर्ण विद्यावा-ला इसदेशमें नहीं भया जबराजाविद्वान और धर्मात्मानहीं भए तबविद्याराजव्यवहारभी नष्ट होताचला फिरकुछदिनकेपीछे आपसमें लड़नेलगे क्योंकि जबविद्या नहीं होती तबऐसेही बहुत प्रमादहोते हैं जोकोईप्रबलभया उसने निर्बलकाराज छीनके उसकोमारा फिर प्रजामें भीलड़ाईहोनेलगी फिरजहां जिसने जितनापाया उसका वह राजाजागीरदारबनबैठा फिरब्राह्मणलोगोंनेभी विद्याका परिश्र-म छोड़दिया पढ़ना पढ़ानाभी नष्टहोगया तबतो ब्राह्मणलोगविद्या हीनहोतेचले तब क्षत्रिय,वैश्य, शूद्रभी विद्याहीन होतेचले केवल दम्भ, कपटऔर अविद्यासे व्यवहारकरनेलगे फिरजितनेअच्छे२ महात्मापुरुषहोतेथे उन्होंने वेदादिक विद्याकाउपदेश भीबहुत थो-ड़ा होगयाफिर ब्राह्मणलोगोंने विचारकियाकि आजीविकाकी रीतिविद्याकरनीचाहिए सोसम्मतिकरके यही विचारकिया कि ब्रा-ह्मणवर्णमें जो उत्पन्नहोताहै सोई देवहै उसका पूजनहै क्योंकिपूर्व विद्यासे ब्राह्मणवर्णहोताहै यह वर्णाश्रमकी सनातनरीतिहै सोई ऋषिमुनियोंके पुस्तकोंमेंभीलिखीहै सोविद्यादिक गुणोंसेहोनेकीव्य-वस्थानहींरक्खीकिन्तुकुलमेंजन्महोनेसेवर्णव्यवस्थाकाविचारकिया है फिर जन्महीसेब्राह्मणादिक वर्णोंका अभिमान करने लगे फिरवि-द्यादिकगुणोंमें पुरुषार्थसबकाछूटा उसकेछूटनेसेब्राह्मणराजाऔरप्र-जामें मूर्खताअधिकतर होनेलगी फिरउन्होंने ब्राह्मणलोग अपने चर-ण और शरीरकीपूजा कराने लगे जबपूजाहोनेलगीतबअत्यन्तअभि-

मान उनमें होनेलगा उन विद्याहीनब्राह्मणोंको औरक्षत्रियपुरु-
षोंको वशीभूत करनेकेलिये यहांतककि लोभ, डराया और
क्रोध दोको समझाना यहभीब्राह्मणोंकी आज्ञाकेविनानहींकरना
औरजोकोई करेगा सोपापी होजायगा। फिरइन्होंनेश्वरादिक सब औ-
र नाना प्रकारके भूतप्रेतादिकों का जाल उनकेऊपर फैलाने लगे
और वेमूर्खताके होनेसे मानने लगे फिर राजा लोगों को ऐसा
निश्चयउनलोगोंने मिलके कराया किब्राह्मणलोगकुछभीकरैं परन्तु
इनको दण्ड नहींदेनाचाहिये जबदण्डनहींहोनेलगा तबब्राह्मण लोग
अत्यन्तप्रमादकरनेलगे औरलोभियादिकभी फिर बड़े २ ऋषिमु-
निऔरब्रह्मादिक केनामोंसे श्लोक औरग्रन्थ रचनेलगे उनमें प्रायः
यहीबातलिखी किब्राह्मणसबकापूज्य औरसदाअदण्ड्यहै फिरअ-
त्यन्त प्रमादऔरविषयासक्तिसेविद्या,बल,बुद्धि, पराक्रम औरशूर
वीरता नष्ट होगई औरपरस्पर ईर्ष्या अत्यन्तहोगई किसीका कोई
देखनसकै और कोई २ के सहायकारीरहे परस्पर लड़नेलगे यह
हाल <u>चीनआदिक देशोंमें रहनेवाले जैनोंनेसुनीऔरव्यापारादि-</u>
क करनेके हेतु इस देशमें आतेथे सो प्रत्यक्षभी देखीफिर जैनोंने
विचारकिया कियहसमय आर्यावर्त देशमें राज्यस्थापनासे होस-
क्ताहै फिर वे आयेऔरराज्यभी आर्यावर्तमें करनेलगे फिरधी-
रे २ दोचारराजोंमें राज्यजमाके और देशदेशान्तरमेंफैलाने लगे जो
वेदादिकसंस्कृत पुस्तकोंकीनिन्दा करनेलगे और अपनेपुस्तकोंके
पठनपाठनका प्रचार तथाअपनेमतकाउपदेशभीकरने लगे सो इ-
सदेशमें विद्याकेनहींहोनेसे बहुत मनुष्योंने उनके मतका स्वीकार
करलिया परन्तु कनौज काशीपर्वतदक्षिणऔरपश्चिमदेशके पुरुषों
नेस्वीकार नहींकियाथा परन्तु वेभीकुछथोड़ेहीथे वेदादिक पु-
स्तकोंका पठन और पाठनकरते और कराते थे फिरइन्होंने वर्णाश्रम
व्यवस्था और वेदोक्तकर्मोंको मिथ्याजानके अश्रद्धाऔरअ-
प्रवृत्ति बहुतकरादिया फिरयहांधर्मादिविषयकर्मभीप्रायः नष्ट होग-

था और जैन और वेदादिकोंकी पुस्तकनाथः आर्योंके इतिहासोंका
उनकानाशःनाशकरदिया जिससे जिनकोपूर्वअवस्थाका स्मरणभी
नहीं फिर जैनोंकाराज्यइसदेशमें अत्यन्तजमगया तबजैनभी ब-
ड़े अभिमान में होगए और कुकर्म, अन्यायभी करनेलगे क्योंकि
सब राजाऔरप्रजा उनकेमतमेंही होगए फिर उनकोडर था सं-
का किसीकीनरही अपनेमतवालोंकोअच्छे २ अधिकार औरनि-
न्दा करनेलगे और वेदादिकोंको पढ़ें तथा उनके कहेकर्मों कोकरें
उनकीअप्रतिष्ठा करनेलगे अन्यायसेभीउनकेऊपरताड़न स्थापनक-
रनेलगे. अपने मतका पंडित वा साधु उनकीबड़ीप्रतिष्ठाकरनेलगे
सोआजतककभीऐसाहीकरतेहैं औरबहुतस्थानोंमें बड़े २ मन्दिर ब-
नालिए औरउनमें अपनेआचार्योंकोमूर्त्ति स्थापन कर दिया तथा
उनकी पूजाभी आरम्भकरनेलगे सोजैनोंकेराज्यहीसे मूर्त्ति पूजन
चलीहुई है आगेनहीं क्योंकि जितनेऋषिमुनियोंकेकिए शास्त्र ग्र-
न्थहैं महाभारत युद्धके पहिलेतो औरलिखेगए हैं उनमेंमूर्त्ति पूजनका
लेशमात्रभी कथन नहींहै इससे यह निश्चय जाना जाता है कि इस
आर्यावर्त्त देशमें मूर्त्ति पूजननहींथी किन्तु जैनोंकेराज्यहीसे चला
है एक द्रविड़देशका ब्राह्मणआचार्यजीदेखाजोकि ब्राह्मण पंडित थे उ-
नके ब्रह्मचर्यपूर्वक वेदादिकन विद्या पढ़ीथी जिनकानाम शंक-
राचार्य था वेदोक्तपंडितभएथे उनसेविचारकिया किस्यह बड़ा अन-
र्थ भया नास्तिकोंका मत आर्यावर्त्त देशमें फैलगयाहै और वेदादिक
संस्कृत विद्याका प्रायः नाशहीहोगयाहै सोनास्तिकमतका खंडन
और वेदादिकसत्यसंस्कृतविद्याका विचारकेअपनेमनसे ऐसावि-
चारकरके सुधन्वानामराजाथा उसकेपास चलेगए क्योंकि बिना
राजाओंके सहायसे यहबात नहींहोसकेगी सोधन्वाराजाभी संस्कृ-
तमेंपंडित था और जैनोंकेभी संस्कृतमयग्रन्थपढ़ाथा सुधन्वा जैन
केमतमेंथा परन्तुबुद्धि और विद्याके होनेसे अत्यन्त विचारशीलथा
था क्योंकिवहसंस्कृतभीपढ़ाथा औरउसकेपास जैनमत के पंडित

भी बहुतथे फिर शंकराचार्यने राजा से कहा कि आप सभा करावें और उनसे मेरा शास्त्रार्थ होय और आप सुनें फिर जो सत्य होय उसको मानना चाहिए उसने स्वीकार किया और सभा भी कराई उसमें अपने पास जैनमत के पण्डित थे और भी दूर २ से पण्डित जैनमत के बोलाए फिर सभा भई उसमें यह प्रतिज्ञा होगई कि हम वेद और वेदमत का स्थापन करेंगे और आपके मत का खण्डन तथा उन पण्डित लोगों ने ऐसी प्रतिज्ञा किया कि वेद और वेदमत का हम खण्डन करेंगे और अपने मत का मंडन सो उनका परस्पर शास्त्रार्थ होने लगा उस शास्त्रार्थ में शङ्कराचार्य का विजय भया और जैनमत वाले पंडितों का पराजय होगया फिर कोई युक्ति जैनों की नहीं चली किन्तु शङ्कराचार्य की बात प्रमाणों से सिद्ध भई उसी समय सुधन्वा राजा बुद्धिमान था उसकी जैनमत में अश्रद्धा होगई और वेदमत में श्रद्धा होगई फिर सभा उठगई राजा और शङ्कराचार्य जी का एकान्त में विचार भया कि आर्यावर्त्त में बहुत जैन ही होगया है इससे वैदिकों का प्रचार और इन कर्मों का प्रचार होना चाहिए तथा जैनों का खण्डन सो शंकराचार्य ने कहा कि जैनों का आजकाल बड़ा बल है और वेदमत का बल नहीं है इससे शास्त्रार्थ तो हम करने को तैयार हैं परन्तु कोई उपाधि करे अथवा शास्त्रार्थ ही न करे तो हमारा कुछ बल नहीं इसमें आप लोग प्रसहाय कि कोई अन्याय करे उसको आप लोग शिक्षा करें सो राजा ने उस बात का स्वीकार किया कि यह हम करेंगे परन्तु हमारे और राजा सम्बन्धी हैं उनके पास हम चिट्ठी लिखते हैं और आपको भेजेंगे शास्त्रार्थ करने के हेतु फिर वे भी जो मिल जायेंगे तो बहुत अच्छी बात है फिर शंकराचार्य उन राजाओं के पास गए और सभा भई फिर जैनमत के पण्डितों का पराजय होगया फिर वे भी सुधन्वा से मिले और सब की सम्मति से संस्कार भी भया तथा वेदोक्त कर्म भी करने लगे तब तो आर्यावर्त्त में सर्वत्र यह बात प्रसिद्ध होगई कि एक शङ्कराचार्य नामक सन्यासी वेदादिक शास्त्रों के पढ़ने वाले बड़े पण्डित हैं जिनसे बहुत जैन

लोगोंके परिडत द्रष्टव्य होवें फिर उनसब राजाओंने शङ्कराचा-
र्य्यकी रक्षाकेहेतु बहुतमनुष्य उनकेसाथ रक्खे और सवारी भी रखदिया। शं-
कराचार्य्यनेकहा कि आपसब देशमें आर्य्यावर्त्त में भ्रमण करैं और जैनोंका ख-
ण्डनकरैं इसमेंकोई अवश्य स्वीकारेगा अन्यथा उनके बलसे इस लोगमें स-
मक्षा लोंगे शङ्कराचार्य्यजीने जहां जैनोंकेखण्डन और अपना
पक्षस्थापन वहां २ भ्रमणकिया और उनसेसर्वशास्त्रार्थ किया पर-
न्तु जैनलोगोंका सर्वत्र पराजय ही होतागया क्योंकि दो तीन दोष उ-
नकेबड़े भारी थे एकतोईश्वरकोनहीं मानना दूसरा वेदादिक सत्य
शास्त्रोंकाखण्डनकरना और तीसरा जगत्‌स्वभावहीसे होता है इ-
सकारणसेउनका कोईनहीं इत्यादिक अन्यभीबहुतदोषहैं वेजैनमत
के खण्डन मण्डन में विस्तारसेलिखेंगे फिर जितनीजैनोंके मन्दिर
में मूर्त्तियीं उनको बहुत राजाओंने तोड़डाली और कुछ
कोपृथिवीमें गाड़दिया और कोई मूर्त्ति जैनोंने छिपाभी रक्खी उन-
को भी गाड़दिया सो आजतक देखते और जितनी मूर्त्ति जैनों की
पृथिवीखोदने से निकलती हैं परन्तु मन्दिर नहीं तोड़े गये क्योंकि
शंकराचार्य और राजालोगों ने विचार किया मन्दिरों को तोड़ना
उचित नहीं इनमें वेदादिक शास्त्रों के पढ़ने के हेतु पाठशाला करेंगे
क्योंकि लाखरुपयोंके खर्चसे इमारत है इनको तोड़ना उचित
नहीं और इसी समय बहुत जैनलोग जहां तहां रहगये सो आजतक दे-
खनेमें आर्य्यावर्त्त देशमें आते हैं इसके पीछे सबको वेदादिकों के पढ़ने
और पढ़ानेकी इच्छा बहुत मनुष्योंको भई शंकराचार्य और सुधन्वा
दिक राजालोग और आर्य्यावर्त्त वासी श्रेष्ठलोगोंने विचार किया कि
विद्याका प्रचार अवश्य करना चाहिये ये विचार होतेही रहे इतने में
३२ वा ३३, वरसकी उमरमें शंकराचार्यका शरीर छूटगया उनके
मरनेसे सबलोगोंका उत्साह भङ्ग होगया यह भी आर्य्यावर्त्तदेशवालों
के बड़े अभाग्य कि शंकराचार्य दश वा बारह बरस भी जीते तो विद्याका
प्रचार यथावत होजाता फिर आर्य्यावर्त्तकी ऐसी दुर्दशा कभी नहीं

होतीक्योंकिजैनोंका खण्डनतोहोगया परन्तु विद्या प्रचारयथावत् नहींभया इस्सेमनुष्योंकोयथावत्कर्त्तव्य और अकर्त्तव्यका निश्चय नहींहोने से मन में संदेह होरहा कुछतो जैनों के मतका संस्कार हृदयमें रहा औरकुछ वेदादिक शास्त्रोंकाभी यह बात एकईस वा बाइससौ बरसकीहै इसकेपीछे २००।३०० बरसतक ऐसाआचरणप- हुआ और एकसमयमें फिरउज्जयनमेंविक्रमादित्य राजाकुछ प्र- तापीभया उसनेराजधर्मकुछ२प्रकाशकिया औरबहुतकार्य न्याय से होनेलगेथे उसकेराज्यमेंप्रजाको सुखभीभयाथा क्योंकि विक्रमा- दित्यतोभारी बुद्धिमानऔरशूरवीर तथा धर्मात्मा इस्से कोई और अन्यायनहींकरनेपाताथा परन्तु वेदादिक विद्याका प्रचार उसके राज्यमेंभीयथावत्नहींभयाथा उसकेपीछे ऐसा राजा नहीं भया किन्तुसाधारण होनेलगे फिरविक्रमादित्यसे६००वर्षकेपीछे राजा भोजभयाउनकेसंस्कृतकाप्रचारकियासोनवीन ग्रन्थोंकारचना और प्रचारकियाथा वेदादिकोंकानहीं परन्तुकुछ २ संस्कृत का प्रचार भोजराजानेऐसाकराथाकिजोएकचाण्डालभी इसकीनगरीमेंकुछ २ लिखनापढ़ना औरसंस्कृत बोलतेथे ऐसेश्लोकचाहिये कि कालि- दासगड़रियाथा परन्तुश्लोकादिकरचलेताथा और राजाभोज भी नरश्लोकरचनेमेंकुशलथा कोईएकश्लोकभीरचकेलेजाताथा उ- नकोपारितोषिकअर्थात्सत्कारकरतेथे और जोकोई ग्रन्थबनाता था तोउसकाबड़ाभारी सत्कारहोतेथे फिर लोभ से बहुत संसार में अशुद्धलोग नएग्रन्थरचनेलगे उनसेवेदादिक सनातन पुस्तकों की अप्रवृत्ति प्रायःहोगई और संजीवनी नाम राजाभोज ने इतिहास ग्रन्थबनायाहै उसमेंबहुतपंडितों कीसम्मतिहै और यह बात उस- मेंलिखी कि तीनब्राह्मणों ने ब्रह्मवैवर्त्तादिक तीन पुराण बनाये देखनेसे उनकोराजाभोजनेकहाकि औरके नामसेतुमने ग्रन्थ रच- ना उचितनहींथा औरमहाभारत कीबातलिखी है कि विचारे ६- आरश्लोक२० सहस्रकेथीयहव्यासजीकाबनायाथा औरशिष्योंने मिला

दिये हैं ऐसेही पुस्तक के न होने से लोग कुछ इतिहास भी न जान सकेंगे और वे-
सेही लोग दूसरे के नाम से ग्रन्थ बनाते जो बहुत सब लोगों को हो जा-
सगा सो इस संजीवनी ग्रन्थ में राजा भोज ने अनेक प्रकार के धूर्तों दु-
ष्टों के विचार और देशों के वर्त्तमान के विषय में इतिहास लिखे हैं
और यह संजीवनी ग्रन्थ ग्वालियर के राज में भिण्ड पुर एक गांव है उस में
चौबे लोग रहते हैं उनके घर में जिसके पास यह ग्रन्थ है परन्तु किसी को
देखने को वह पंडित किसी को नहीं देता क्योंकि उसमें सत्य २ बात
लिखी हैं उसके प्रसिद्ध होने से पंडितों की आजीविका नष्ट होजाती है
इस भय से वह इस ग्रन्थ को प्रसिद्ध नहीं करता ऐसी ही आर्यावर्त्त वासी
मनुष्यों की बुद्धि तुच्छ होगई है कि अच्छा पुस्तक वा कोई इतिहास उस-
को छिपाने में खुश होजाते हैं यह उनकी बड़ी मूर्खता है क्योंकि अच्छी बात
जो लोगों के उपकार की उसको कभी न छिपाना चाहिये फिर राजा
भोज के पीछे कोई अच्छा राजा नहीं भया उस समय में जैन लोगों ने ज-
हां तहां मूर्त्ति मन्दिरों में प्रसिद्ध किया और वे कुछ २ प्रसिद्ध भी होने लगे
वेदमार्गी लोगों ने विचार किया कि उनके मन्दिरों में नहीं जाना चाहिये
किन्तु ऐसी युक्ति रचें कि इन लोगों की आजीविका जिससे होय फिर उ-
नके पुराण उपपुराणादि इनको रचना पड़ा है उसमें महादेव, ना-
रायण, पार्वती, लक्ष्मी, गणेश, हनुमान्, राम, कृष्ण, नृसिंह, इनों के
स्थल रचे हैं कि इनकी मूर्त्ति स्थापन करके पूजा करें तो पुत्र, धन
बैरीनाश इत्यादि पदार्थों की प्राप्ति होगी जिस २ पदार्थ की इच्छा करेगा
उस २ पदार्थ की प्राप्ति उसको होगी फिर बहुत मूर्खों ने मान लिया
और मूर्त्ति स्थापन करने कोई २ लगा फिर पुजारियों की आजीविका भी
उनकी होने लगी एक की आजीविका देख के दूसरा भी ऐसा करने लगा
और कोई धूर्त्त ने ऐसा किया कि मूर्त्ति को जमीन में गाड़ के बाहर
आन उसके कहा मुझको स्वप्न भया है फिर उससे बहुत लोग पूछने
लगे कि क्या स्वप्न भया है तब उनसे उसने कहा कि देव कहता है मैं
जमीन में गड़ा हूं और दुःख पाता हूं मुझको निकाल के मन्दिर में

स्थापन करें और तूंही पुजारी बैठे होजाओ इसकाम सब मनुष्यों का सिद्ध करेगा फिर वे विद्याहीन मनुष्य उससे पूछते भए कि हम्-रि कहांहै जो तुम्हारा सत्य कहना होगा तो मुझे दिखलाओ तब उसने मूर्त्ति गड़ीथी वहां गयके लोगोंके आगे खोदके उसको निकाली सब देखके बड़ा आश्चर्य किया और सबने उससे कहा कि तू बड़ा भाग्यवान् है और देवता तेरे पर बड़ी कृपा है और हम लोग धन देते हैं इस्से मन्दिर बनाओ उस मूर्त्ति को उसमें स्थापन करो तुम इसके पुजारी बनो और हम लोग नित्य दर्शन करेंगे उसे लोगोंने बहुतसा धन देके वैसाही किया और उनकी ऐसी जीविका को देखके इतर लोगोंने भी वैसी जीवि-का को देखके अन्य दुष्ट भी ऐसी धूर्त्तता करने लगे और विद्याहीन पुरुष उसकी बात मानते गये फिर यह मूर्त्ति पूजन आर्यावर्त्त में फैला एक महा मूर्ख मनुष्य की इस देश में लाया और बहुत सी मूर्त्तियां सो देशों और ग्रामों में रक्खी बहुत पुजारी और पण्डितों को प-कड़लिए और राजों को पिता न रिहाई और दिन में आलस्यादि को लगा करगाड़े और जहां तहां पुस्तकालयों का नाश करदि-या ऐसे इस आर्यावर्त्त में बहुत दिन तक यह और बहुत उपद्रव अन्य-अन्य ने उपद्रव किया इस देश की बड़ी दुर्दशा इसने किया यहां तक कि विद्या के नाश करके बहुतों को कष्ट दिया विना अपराध औरभी, कन्या और बालकों को भी पकड़के दुःख दिया और बहुतों को मार डाला ऐसा इन्ने बड़ा अनर्थ किया सो निष्कपट ईश्वर की उपासना को छोड़के काष्ठ पाषाण, वृक्ष, घास, झाड़, और मिट्टी आदि को पूजा से ऐसा ही फल होता बहुत काल से होगा फिर चार ब्राह्मणों ने एक सोने की सोने की मूर्त्ति रचवाई और उसको गुप्त कहीं रख दिया फिर राजा से कहा हमको महादेव ने स्वप्न दिया है कि इधर आप लोग मन्दिर रचें सो कैलाश को छोड़के आर्यावर्त्त देश में मैं वास करूं और सब को दर्शन देऊं ऐसा सब देशों में प्रसिद्ध कर दिया फिर मन्दिर सब लो-गों ने मिलकर के रचवाया उसमें नीचे ऊपर और चारों ओर भीतों में सु-

चक्रधारणकरके जब मन्दिर पूर्णभया तब सब देशोंमें प्रसिद्ध करदिया
कि अमुकदिन मध्याह्नमें जो इससे पहले इस मन्दिरमें आवेंगे सो दर्श-
न करेंगे उसका बड़ा भारी और पवनके बीच कैलाशको वह चलाजा
यगा फिर उस समयमें राजा, साधु, स्त्री, पुरुष और लड़केवाले उस
स्थानमें जुटे फिर इन चारों धूर्त्तोंने मूर्ति मन्दिरमें कहीं गुप्तरखदि-
ईथी और मेलामें ऐसा प्रसिद्धकरदिया कि महादेव देवहैं सो भूमि
को पगसे स्पर्श न करेंगे किन्तु आकाशहीमें खड़ेरहेंगे ऐसा इसको
स्वप्नमें कहाहै सो अब उसदिन दुपहर बाकिआई तब सबको मन्दिरके बा-
हर निकालदिए और किवाड़बन्दकरके वे चारों भीतर रहे फिर उस
मूर्तिको [illegible] मन्दिरमें लेगए और बीचमें चुम्बकपाषाणके आ-
कर्षणोंसे अधरआकाशमें वह मूर्ति खड़ीरही और [illegible] मन्दि-
रमें दीपजोड़दिए फिर घंटा, झल्लरी, शंख, रणसिंघा और नगारा
बजाए तब तो बड़ाभारी उत्साहभया और उन्होंने द्वार खोलदिए
फिर मनुष्योंके ऊपर मनुष्य गिरे और मूर्तिको आकाशमें अधर ख-
ड़ीदेखके बड़े आश्चर्ययुक्तभए और लाखहां रुपैयों की पूजा चढ़ी अ-
नेकपदार्थ पूजामें आए फिर वे चारों [illegible] बड़े प्रसन्न होगए औ-
र मन्नत होगए फिर नित्य मेला होनेलगा करोड़हां रुपैयोंका भाग्य
होगया सोवह मन्दिर द्वारकाके पास समुद्रतटस्थानमेंथा और उस
मूर्तिका नाम सोमनाथ रक्खाथा फिर महमूदगज़नवीने सुना कि
उसमन्दिरमें बड़ाधनहै ऐसासुनके अपनेदेशसे सेनालेके चढ़ा सो
अपरंजानमें आया तबबड़ा हल्ला होगया और सोमनाथकी ओर चला
तब लोगोंने जाना कि सोमनाथके मन्दिरको तोड़ेगा और लूटेगा
ऐसासुनके बहुतराजा पण्डित और पुजारीसे आके [illegible] सोमनाथकी
रक्षाकेहेतु इकट्ठे भए सोमनाथके पास जबयह [illegible] दोसैकोस दूर
रहा तब पण्डितोंने राजाओंसे पूछा कि मुहूर्त देखना चाहिए हम
लोग आगे [illegible] फिर पण्डितलोग इकट्ठे होके मुहूर्त दे-
खा परन्तु मुहूर्त बना नहीं फिर नित्यमुहूर्त ही देखतेरहे परन्तु

कोईदिनचन्द्रकोईदिन और अन्ननहींखाते थाह्मणलोग शुक्ल कृष्ण- पक्षमें कोई दिनयोगिनी और कोईदिनकालनहींबता सो पण्डि- तोंकी बुद्धिको कालादिकोंके भ्रमोंनेखालिया औरराजालोगबिना पण्डितोंकी आज्ञासे कुछकर्ते नहींथे सो प्रायःपण्डित और राजा लोगमूर्खहीथे जोमूर्ख नहोतेतोपाषाणादिक मूर्त्ति गणोंपूजते और ग्रहकालादिकोंके भ्रमोंसेनाश क्योंहोतऐसेवे विचार कर्तेहीरहे इस- कोसेनादूसरी मंजल परपहुंची तब राजा लोगोंने पण्डितोंसे कहा किअबतोजल्दीमुहूर्त्तदेखो तबपण्डितोंने कहा किआज मुहूर्त अ- च्छानहींहै जो यात्रा करोगे तोतुम्हारा पराजयही होजायगा तब वे ब्राह्मण से डरकेबैठरहे तब महमूदगाजनवीधीरे२पांचकःकोश के ऊपर आकेठहरा औरदूतोंसे सब खबरमंगवाई कि देख्य करतेहैं दूतोंनेकहाकि आपसमें मुहूर्त विचार कर्तेहैं महमूदगजनवीकेपा- स३०हजार सेनाथी अधिकनहीं और उनके पास दो,तीन लाख फौजथी फिर उसकेदूसरे दिनप्रातःकाल राजापण्डित पुजारीमि- लकेमन्दिरमें औरश्रीमहादेवजीके पुजारीलोग और पण्डित पुजारीमि- लकेमुहूर्त्त विचारने लगे सोसब पण्डितोंने कहाकि आज चन्द्रमा आगेआकेशिरपड़े और अत्यन्त रोदन किया हेमहाराज इस दुष्ट म्लेच्छको और आपनेसेवकोंका सहायकरो परन्तु वहतोपाषाण क्या करसक्ताहै और सबऐसेकहनेलगेकि आपलोगकुछचिन्ता मत करो महादेवइस दुष्ट कोऐसे हीमार डालेंगे नारदमहादेव केभयसे य- हांहीसेभागजायगा उसका क्या सामर्थ्य है किसाक्षात् महादेव के पासआसके और सन्मुख दृष्टिकरसके ऐसे सबपरस्पर बक रहेथे फिर कुछ लड़ाईभई और मुसल्मान जीतगये फिर भिजयहोगयाअपरा- जय उससमयमेंऔर पुस्तकमें भी लिखे बहुत से मन्त्रोंका जप औरपा- ठकरतेथे औरकहतेथे किअबदेवता औरमन्त्र हमारा पाठ सिद्धहो- गाई सोवह दशाही.अच्छा होजायगा सोदशा पण्डितोंकी मंडली जप, पाठऔर पूजाकरतीथी और मूर्त्तिकेसामनेबांधेशिरकेपुकार

होते एकसभाजगरहीथी राजा और पंडित विचारतेथे मुहूर्त्तको उसीसमय में उसके निकट एकपर्वतथा औरमहमूदगजनवीनेएकतो पलगाई और सभाके बीचमें गोलामारा उससमयकोईदंतधावन करताथा कोईसोताथा औरकोई स्नानकरताथा इत्यादिव्यवहा-रोंमेंलगरहेथे सोउस गोलेमें सबने दिन लोग पोथी पत्रा छोड़के भागे औरराजा लोगभी भागउठे तथासेनाभी अपनेरस्थानोंसेभा गउठी और वह महमूदगजनवी सेनासहित धावाकरके उसस्थान पर आपहुंचा उसको देखके कंपमानहोके भागेभए पंडित पुजारी सिपाही तथाराजाओंको उसने पकड़लिया और बांधलिया और बहुतसी मारपड़ी उनके ऊपर तथाभारीहल्ला किसीको औरब-हुत भागगए क्योंकि उनपंडितोंके उपदेशसे [illegible] करतेथे और कथासुनीथी किमुसलमानोंके स्पर्शनहोकरना औरउनकेदर्श-नसे धर्मजाताहै ऐसीमिथ्याबात सुनके भागउठे फिरमन्दिरकेचा-रोंओर महमूदगजनवीकीसेनाहोगई और आपमन्दिर केपास प-हुंचा तबमंदिर के महंत और पुजारीहाथ जोड़के खड़े भए उनसे पुजारियोंने कहा किआपजितनाचाहैं उतनाधन लेलीजिए परन्तु मन्दिर और मूर्त्ति कोनतोड़िए क्योंकिइससे हमलोगोंकी बड़ीआ-जीविकाहै ऐसासुनके महमूदगजनवी बोलाकि हम बुतकेबेचनेवाले नहीं किन्तु उनको तोड़नेवालेहैं [illegible] और कहाकि एक करोड़रुपैया आपलेलीजिए परन्तु इसको मततोड़िये ऐसे कहने सुननेसेतो नकरोड़तक कहापरन्तु महमूदगजनवीनेनहींमाना और उनकोपकड़लिया फिर उनकोलेकेमन्दिरमें गया और उनसे पूछाकि खजानाकहांहै सो कुछतो उसनेबतलादिया फिरभीउसको लोभआया कि और भी कुछहोगा फिरउनको मारापीटातबउनने सबखजाना बतलादिया फिर मन्दिरमेंआके सबलीलादेखी फिर महंत और पुजारियोंसेकहाकि तुमने दुनियाकोऐसी धूर्त्ततासेठ-गलिया क्योंकिजोदेखो मूर्त्ति बनाईहै इसकेचारों औरचुम्ब

चुम्बकपाषाणरखनेसे आकाशमें अधरखड़ीहै इसकानाम रखदिया है
महादेव अधरखड़े यहीचमत्कार कियाहै फिर उसमन्दिरका शिखर
उसनेतोड़वादिया जब ऊपरका चुम्बक पाषाण अलगहोगया तब मूर्त्ति
जमीनमें चुम्बकपाषाणोंमें लगगई फिर सबभीतें तोड़वाडाली सब
चुम्बकोंकेनिकलनेसेमूर्त्ति जमीनमेंगिरपड़ी फिरउस मूर्त्ति को म-
हमूदगजनवीने अपनेहाथसेलोहेके घनको पकड़ के मूर्त्ति केपेट में
मारा उससे मूर्त्ति फटगई उससे बहुत जवाहिरात निकला क्योंकि
हीराआदिरत्नअच्छे२ जोवेपातेथे सबमूर्त्ति ही में रख देते थे फिर
उनमहंतऔरपुजारियोंकोबहुत तंगकिया और फुसलाया भी फिर
उन्होंनेभयसेसबबतलादिया उनसेकहाकि जोकुछ सबसब२ बतला-
देओगे तोतुमकोहम छोड़देंगे तब उन्होंने सोना, चांदी के पात्रोंको
भीबतलादिए जोकुछथा औरउनने सबलेलिया सो अठारह क-
रोड़कामालउसमन्दिरसेउसनेपाया फिर बहुतसी गाड़ीऊंट औ-
र मजूरउनकेपासथे औरभीवहांसेपकड़लिए उनकेऊपर सब मा-
लको लादकेअपनेदेशकोओरचला थोड़े से थोड़े पण्डित महंत
और पुजारीतथाक्षत्रिय,वैश्य,ब्राह्मण औरशूद्रतथास्त्रीबालक इत्या-
दिकोपकड़केअपनेदेशकोलेगया उनका यज्ञोपवीत तोड़ डाला मुखमें
थूकदिया औरउनसे २ खोदनेनिकम्मेकामोंकोदेताथा और जाजरू
सफाकरावें जितनेदिन घास छिलवावें और घोड़ों की लीदउठवावें
औरमुसलमानोंकेजूतेमरदनकरवावें औरसबप्रकारकी नीच सेवा
उनसेलेतेरहे क्या२ उनको क्लेशसहनापड़ा क्योंकि मुसल्मानों ने
कहाकि इनकाफरोंकाआदररखना उचितनहीं फिर उनको बुरी द-
शासेमारडाला क्योंकिउनकेकुरानमें लिखाहै कि काफरों को लूट
ले उनकीस्त्रीबन्दीकरले फूटकरेचाहेजबउनकासदमाल लेले और उनको
मारडालें तोभीकुछदोषनहीं किन्तुउस मुसल्मानको बिहिश्त अ-
र्थातवसकोस्वर्गवासमिलताहै यहखुदाकेघरमें बड़ा मान्य होता है
फिरकाफरयहकहलाताहै जोकिमुहम्मदके कलमाको न पढ़े और

कुरानकेऊपरविश्वासनलेश्रावै उसकोविवाहदेवे औरमारने में कुछदोषनहीं ऐसामुसल्मानोंके मतमें लिखाहै इससे उनको अन्याय करनेमें कुछभयनहींहोता औरजोकुछपापहोताहै सोतोबाशब्द से छूटजाताहै इससे बेपरवाहकरनेमेंभय क्योंकरेंगे ऐसे ही बारह से बह आयाहैऔर सोमनाथमथुराकीभीदुर्दशा देखीकिईथी और जहां २ बहगयाथा वहां २ ऐसीही उसदेशकीदुर्दशाकिईथी और बहुतोनाईवहआताथा औरकेजो कुछपाताथा सोअपनेदेश में ले जाता था उसदिनसेमुसल्मानलोगदरिद्रलेयनाइश्य होगएहैं सोआर्यावर्त्त प्रतापसेआजतकभी धनचलाआताहै औरआर्यावर्त्त देश अपने ही दोषोंसेनष्टहोताजाताहै सोहमकोबड़ाअफसोसहै कि ऐसा जोदेश औरइसप्रकारकाधनजिसदेशमेंहै सोदेशबाल्यावस्थामेंविवाह विद्याकात्याग मूर्त्तिपूजनादिक पाखण्डों की प्रवृत्ति नानाप्रकार के मिथ्यापन्थोंकाप्रचार विषयासक्तिऔरवेदविद्याकालोप इत्यादिक दोषहैं इसकारणआर्यावर्त्तदेशवालोंकी अधिकदुर्दशा होगी औरजोसत्यविद्याभ्यास तथासुनियम, धर्मऔर एक परमेश्वर कीउपासना इत्यादिकगुणोंको ग्रहणकरें तोसबदुःखनष्ट हो जांय औरअत्यन्तआनन्दमेंरहें फिरधर्मात्माओं ने विचारकिया कि कोई क्षत्रियराजाइसदेशमें अच्छानहींहै इससे कुछ उपाय करना चाहिए वेदाध्ययनाचारीं अच्छे हैं क्योंकि मनुष्योंके ऊपर कृपा करके अच्छीबातविचारनी यहअच्छे पुरुषोंका काम है नीचका नहीं फिर उनने क्षत्रियोंकेबालकोंमेंसे चारअच्छे बालकछांटलिए और उन क्षत्रियोंसेकहाकि तुमलोगखाने पीनेका प्रबन्ध बालकोंका रखना उननेस्वीकारकिया और सेवकभीसाथरखदिए वे सब आबूराजपर्वतकेऊपरजाकेरहे औरउनबालकोंकोअक्षराभ्यास औरशुभव्यवहारोंकीशिक्षाकरनेलगे फिरउनका यथाविधि संस्कार भी उनने किया सन्ध्योपासन और अग्निहोत्रादिक वेदोक्तकर्मों की शिक्षा उननेकिया फिरव्याकरणछंदःदर्शनधर्मशास्त्रसूत्रऔर सनातन

कोश यथावत् पदार्थविद्या उनको पढ़ाई फिर वैद्यकशास्त्र तथा गान
विद्या, शिल्पविद्या, और धनुर्विद्या अर्थात् युद्धविद्या भी उनको अ-
च्छे प्रकार से पढ़ाई फिर राजधर्म जैसा कि प्रजा से वर्तमान करना औ-
र न्याय करना दुष्टों को दण्ड देना श्रेष्ठों का पालन करना यह भी उन
को पढ़ाया ऐसे जब सीता २६ बरस की उमर उनकी भई और इन प-
ण्डितों के स्त्रियों ने ऐसे ही चार कन्या कुल गुण रूप युक्त उनको अपने पास
रख के व्याकरण, धर्मशास्त्र, वैद्यक, गानविद्या, तथा नाना प्रकार के
शिल्प कर्म उनको पढ़ाए और व्यवहार की शिक्षा भी किया तथा युद्ध
विद्या की शिक्षा गर्भ रक्षा बालकों का पालन और पतिसेवा का उपदेश
भी यथावत् किया फिर उन दुलहों की परस्पर चारों का युद्ध करना औ-
र कराना यथावत् अभ्यास कराया ऐसे जब सब वर्ष के पुरुष पच
चीस बरस की कन्या भई तब उनकी परीक्षा और गुण परीक्षा ले एक
से एक का विवाह कराया जब तक विवाह नहीं भया था तब तक उन पु-
रुषों की और कन्याओं की यथावत् रक्षा किई थी इससे उनको विद्या
बल, बुद्धि, पराक्रम, क्षमादि शुभ गुण भी उनके शरीर में यथावत् भए थे
फिर उनसे दासों ने कहा कि तुम लोग हमारी आज्ञा करो तब उन
सबों ने कहा कि जो आपकी आज्ञा होगी सोई हम करेंगे तब उनसे
ऋषि ने कहा कि हमने तुम्हारे ऊपर परिश्रम किया है सो केवल जगत्
के उपकार के हेतु किया है सो आप लोग देखो कि आर्यावर्त में बहुत
मत चलता है सो मुसल्मान लोग इस देश में आके बड़ा दुर्दशा करते हैं
और मतादि मत के लोग भी हैं सो इस देश की निरन्तर दुर्दशा होती जा-
ती है सो आप लोग अच्छा पराक्रम से पाखण्डों और दुष्टों को य-
थावत् दण्ड देओ परन्तु एक बात सदा हृदय में रखना कि जब तक
वीर्य की रक्षा और जितेन्द्रिय रहोगे तब तक तुम्हारा सब कार्य सिद्ध
होता जायगा और हमने तुम्हारा विवाह जब जो कराया है सो केवल
परस्पर रक्षा के हेतु किया है कि पुरुष और कुमारी स्त्रियां संगम न होने
तो बिगड़ेंगे नहीं और केवल सन्तानोत्पत्ति विवाह का प्रयोजन

जानना और मनसे भी परपुरुष अपर स्त्रीका चिन्तन भी नहीं करना और विद्या तथा परमेश्वर की उपासना और सत्यधर्ममें सदा स्थिर रहना जबतक तुम्हारा राज्य न जमै तबतक स्त्री पुरुष दोनों ब्रह्मचर्याश्रममें रहो क्योंकि जो क्रीड़ा सङ्ग करोगे तो बलादिक तुम्हारे शरीरसे न्यून हो जायगे तो युद्धादिकोंमें उत्साह भी न्यून हो जायगा और हम भी एक २ के साथ एक २ रहेंगे सो इस और आप लोग चलें और उनके यथावत् राज्यका प्रबन्ध करें फिर वे सदा मिलके चार इन नामोंसे प्रसिद्ध भये-चौहान पवार सोलंकी इत्यादिक इनने दिल्ली आदिकमें राज्य किया था कुछ २ सम्बन्ध भी भया था जब राज्य करने लगे कुछ काल के पीछे सहाबुद्दीन गोरी एक मुसल्मान था सो भी इसी प्रकार इस देश में आया था कन्नौज आदिकमें उस समय कन्नौजका बड़ा भारी राजा था सो इसके भयके मारे अपने ही जाके उनको मिला और युद्ध कुछ भी नहीं किया फिर अन्य अन्य युद्ध जहांतहां किया सो उनका विजय भया और आर्यों सहित राजाओंका पराजय भया फिर दिल्लीवालोंके कोई दत्तक उसका पुत्र भया उस कुलमें पृथिराज महाराज भया और उसने करना सेनाध्यक्ष दिल्ली में रक्षाके हेतु रख दिया उसका नाम कुतुबुद्दीन था कुछ काल वहां रहा तब कुछ दिनके पीछे उन राजाओंको निकालके पराजय भया उस दिनसे मुसल्मान लोग यहां राज्य करने लगे और अपने कुफर जुलुम किया परन्तु उनके बीचमेंसे अकबर बादशाह अच्छा भया और न्याय भी संसारमें होने लगा सो अपनी बहादुरीसे और बुद्धिसे सब गदर मिटा दिया उस समय राजा और प्रजा सब सुखी थे परन्तु आर्यावर्त्तके राजा और धनाढ्य लोग विक्रमादित्यके पीछेसे विषय सुखमें फसरहे थे उससे उनके शरीरमें बल, बुद्धि, पराक्रम और शूरवीरता नाममात्र होगई थी क्योंकि सदा स्त्रियोंका संग गाना बजाना, नृत्य देखना, अच्छे कपड़े और आभूषण को धारण करना नाना प्रकारके अतर और अञ्जन नेत्रमें लगाना इससे उनके शरीर बड़े कोमल होगये थे थोड़े से ताप या शीत अथवा वायुका

बहुत नहीं होसकता था फिर वे युद्ध क्या करसकते क्योंकि जो नित्य स्त्रि-
योंकासंगकरेंगे और विषयभोगउनकाभीशरीरआदिशक्तियोंकीनष्ट-
ई होजाता है वेकभीयुद्ध नहीं करसकते क्योंकि जिनकेशरीरदृढ़ गु-
रहित बल, बुद्धि और पराक्रम तथा वीर्यकीरक्षा और विषयकोत्यर्थ
नहीं पालना नाना प्रकारकीविद्याकापढ़ना इत्यादिकके होनेसे सब
कार्य सिद्ध होसकतेहैं अन्यथा नहीं फिर दिल्लीमें औरंगजेब एकबाद-
शाह भया। उसने मथुरा,काशी अयोध्या और अन्य स्थानोंमें
जाकरके मन्दिर और मूर्त्तियोंको तोड़डाला औरजहां२ बड़े२ म-
न्दिरथे उन२ स्थानपर अपनी मसजिद बनवादिया अर्थात् काशीमें
मन्दिर तोड़नेको आया तब विश्वनाथ कुएमें गिरपड़े और माधव
एकब्राह्मणके घर जाबैठे ऐसा बहुत मनुष्य कहतेहैं परन्तु हम-
को यहबात झूठ मालूम पड़तीहै क्योंकि वह पाषाणादि जडपदार्थ
कैसे भाग सकते कभी नहीं होसकता भया किजब औरंगजेब आकर
उन पुजारियोंने भयसेमूर्त्ति उठाके और कुएमें डालदिया और मा-
धवकी मूर्त्ति उठाके दूसरेके घरमें छिपादिया फिर कहतेहैं कि सो
आजतक उसकूएका जल पुजारी लोग बेचतेहैं और उसी [illegible]
ण के [illegible] मूर्त्तिकी आगतक [illegible] हैं इससेयहीसिद्ध
कियाहै जो सोना, चांदीकी मूर्त्तियां बनातेथे [illegible] और मा-
णिककी आंख बनातेथे सो मुसलमानों के भयसे और दरिद्र-
ता से पाषाण, मिट्टी, पीतल, लोहा, और काष्ठादिकोंकी मूर्त्ति
बनवातेहैं सो अबतक भी [illegible] कर्मकाण्डीको-
छूटे क्योंकि जोहैंसो सबलोगोंकी अच्छीदशा आवै इसलिये इन
कर्मोंसेदूरहोना चाहिये जबतक इनको नहीं छोड़ते और
महाभारत युद्धके पहिले आर्यावर्त्त देशमें अच्छे२ राजा होतेथे उ-
नकीविद्या, बुद्धि, बल पराक्रम तथा धर्म निष्ठा और शूरवीरादिक
गुण अच्छे२ थे इससेउनकाराज्य यथावत् होताथा सोई राजा,सग-
र, रघु दिलीप आदि चक्रवर्त्ती हुएथे और किसीप्रकारकाउपद्रव

उनमें नहीं था सदा विद्या का उद्धार और स्वच्छ २ कर्म आप करते थे तथा प्रजा को पालते थे और कभी उनका पराजय नहीं होता था तथा अधर्म से कभी नहीं युद्ध करते थे और युद्ध में निकम्मे नहीं होते थे उस समय के लोग जैन राज्य के पहिले तक इसी देश के राजा होते थे अन्य देश के नहीं सो जैनों ने और मुसलमानों ने इस देश को बहुत बिगाड़ा है सो आज तक बिगड़ता ही जाता है सो आज काल अंगरेज के राज्य होने से उन राजाओं के राज्य से सुख भया है क्योंकि अंगरेज लोग धर्म पक्षपातान्तर्गत मत में हाथ नहीं डालते और जो पुस्तक अच्छा पाते हैं उसको अच्छी प्रकार रक्षा करते हैं और जिस पुस्तक के सौ रुपये लगते थे इस पुस्तक का छापा होने से पांच रुपये में मिलता है परन्तु अंग्रेजों में भी एक काम अच्छा नहीं हुआ क्योंकि चित्रकूट पर्वत महाराज अमृतराय जी की पुस्तकालय को जला दिया उसमें करोड़ों रुपये के लाखहों अच्छे २ पुस्तक नष्ट कर दिये जो आर्यावर्त्त वासी लोग इस समय सुधर जाय तो सुधर सक्ते हैं और जो पक्षपात ही करेंगे तो अधिक २ ही नाश होगा इनका इसमें कुछ सन्देह नहीं क्योंकि इस देश आर्यावर्त्त देश के रईस और धनाढ्य लोग ब्रह्मचर्य और विद्या का प्रचार धर्म से सब व्यवहारों का करना और वेश्या तथा परस्त्रीगमनादि कों का त्याग करें तो देश के सुख की उन्नति होती है परन्तु जबतक पाषाणादि मूर्ति पूजन वैरागी, पुरोहित भट्टाचार्य और कथा कहनेवाले लोगों को छोड़ें तबतक आशा अच्छी होसकती है अन्यथा नहीं प्रश्न मूर्तिपूजनादिक सनातन से चले आये हैं उनका खण्डन क्यों करते हो उत्तर यह मूर्तिपूजन सनातन से नहीं किन्तु जैनों के राज्य ही से आर्यावर्त्त में चला है जैनों ने पारसनाथ, महावीर, जैनेन्द्र, ऋषभदेव, गोतमस्वामिआदि मूर्तियों के नाम रक्खे थे उनके बहुत २ चेले भये थे और उनमें उनका अत्यन्त ही विरोध था इसने उनके चेलों ने अपने गुरुओं की मूर्ति बनाके पूजने लगे मन्दिर बनाके फिर अनन्तर शंकराचार्य के पराजय होने के पीछे इनको भी उक्त प्रकार से ब्राह्मणों ने मूर्तियां रचीं

और उनका नाम महादेवआदिक रखदिए उनमूर्त्तियोंसे कुआजि-
लभ्य बनानेलगे और पुजारीलोग जैन तथा मुसल्मानोंके मन्दिरों
की निन्दा करनेलगे । न वदेद्यावनीं भाषां प्राणैः कण्ठगतैरपि । ह-
स्तिना ताड्यमानोऽपि न गच्छेज्जैनमन्दिरम् ॥ १ ॥ इत्यादिक श्लोक
बनाएहैं कि मुसल्मानोंकी भाषा बोलनी और सुननीभी नहीं चाहिए
और मत्त हस्ती अर्थात् पागलोंके मारनेकोदौड़े सो जैनके मन्दिर
में जानेसे बचसकताभीहोय तोभी जैनके मन्दिर में नजाय किन्तु हाथी
के सन्मुख मरजाना इससे अच्छा है ऐसी २ निन्दा के श्लोक बनाए ऐसे
पुजारीपण्डित और सम्प्रदायीलोगोंने चाहाकि इनके खण्डनके बि-
ना हमारी आजीविका नहीं बनेगी यह केवल उनका मिथ्याचार है कि
मुसल्मानोंकी भाषा पढ़नेमें क्या कोई देशकी भाषा पढ़नेमें कुछ दो-
ष नहीं होता किन्तु कुछ गुणही होताहै । अपशब्दज्ञानपूर्वके शब्द-
ज्ञाने धर्मः । यह व्याकरण महाभाष्यकावचन है इसकायह अभि-
प्रायहै कि अपशब्दज्ञान अवश्य करना चाहिए अर्थात् सब देशदेशा-
न्तरकी भाषा पढ़ना चाहिए क्योंकि उनके पढ़नेसे बहुत व्यवहारों
का उपकार होताहै और संस्कृतशब्दके ज्ञानका भी उनको यथावत्
बोध होताहै जितनी देशोंकी भाषा जानें उतनाही पुरुषको अधिक
ज्ञान होताहै क्योंकि संस्कृतके शब्द बिगड़के देशभाषा बनजाती है
इससे इनके ज्ञानोंसे परस्पर संस्कृत और भाषाके ज्ञानमें उपकारही
होताहै इसीहेतु महाभाष्यमें लिखाकि अपशब्दज्ञानपूर्वक शब्दज्ञा-
नमें धर्म होताहै अन्यथा नहीं क्योंकि जिस पदार्थका संस्कृत शब्द
जानेगा और उसके भाषा शब्दको नजानेगा तो उसको यथावत् प-
दार्थका बोध और व्यवहारभी नहीं चलसकेगा तथा महाभारत में
लिखाहै कि युधिष्ठिर और विदुरादिक अरबीआदिक देशभाषाको
जानतेथे सो जब युधिष्ठिरादिक लाक्षागृहकी ओर चले तब विदुर
जीने युधिष्ठिरजीको अरबीभाषामें समझाया और युधिष्ठिरजीने अ-
रबीभाषासे प्रत्युत्तरदिया यथावत् उसको समझलिया तथा राजसू-

य और अपनेर यज्ञमें देशदेशान्तर तथा द्वीपान्तर केराजा और प्रजास्थ आर्योंका परस्पर देशभाषाओंमें व्यवहार होता था तथा द्वीपद्वीपान्तरमें यहांकेलोगजातेथे औरवे इसदेशमें आ-तेथे फिर जो देशदेशान्तर कीभाषा नजानते तोउनका व्यवहार सिद्धकैसेहोता इससे क्या आयाकि देशदेशान्तरकी भाषाके पढ़ने और जाननेमें कुछ दोष नहीं किन्तु बड़ा उपकारहीहोता है और जितनेपाषाणमूर्ति के मन्दिरहैं वेसबजैनोंहीके हैं सोकिसीमन्दिर मेंकिसीकोजाना उचितनहीं क्योंकिसबजगहवही लीलाहै जैसीजैन मन्दिरोंमें पाषाणादिक मूर्त्तियांहैं वैसी आर्यावर्त्त वासियोंकेम-न्दिरोंमें भी सब मूर्त्तियां हैं कुछ नाम विलक्षण २ इन लोगों ने रखलियेहैं औरकुछ विशेष नहीं केवल पक्षपात हीसे ऐसा कहते हैं किजैन मन्दिरोंमें नजाना और अपने मन्दिरोंमें जाना देखसब लोगोंने अपना २ मतलब सिद्धकरलिया है आजीविकाके हेतुअपने वेदशास्त्रमें मूर्त्ति पूजन लिखाहै और वेदमन्त्रोंसे प्राणप्रतिष्ठा हो-तीहै उसमें देवकीशक्तिभी आजातीहै फिरआपखण्डन क्योंकरतेहैं उत्तर वेदशास्त्रमें मूर्त्ति पूजन कहींनहीं लिखा और नप्राणप्रतिष्ठा औरनकुछ उसमेंशक्तिआतीहै प्रश्न सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ इत्यादि मन्त्रोंसे षोडशोपचारपूजा और प्राणप्रतिष्ठाभी होती है तथा प्रतिष्ठा मयूखग्रन्थ और तंत्रग्रन्थों में आत्मेहागच्छतु सुखंचिरन्तिष्ठतुस्वाहा, ॥ प्राणाइहागच्छन्तु सु-खंचिरन्तिष्ठन्तु स्वाहा ॥ इन्द्रियाणीहागच्छन्तु सुखंचिरन्तिष्ठ-न्तुस्वाहा ॥ अन्तःकरणमिहागच्छतुसुखंचिरन्तिष्ठतुस्वाहा ॥ इ-त्यादिकलिखेहैं फिरकैसे खण्डन करतेहो उत्तर इनग्रन्थोंके अ-र्थनहीं जाननेसे आपलोगोंको भ्रमहोताहै क्योंकिपुरुष नामपूर्णई-श्वरकाहै सहस्रशीर्षादि इत्यादिक पुरुषके विशेषणहैं सोपुरुषके निरा-कारहोनेसे शिरादिक अवयव कभीनहीं होसकते और जो साकार उनतानेरूपादिकनहीं बनसकता । तथाविधमैत्यावरुणः । इत्यादि-

क निरुक्तमेंअर्थकियाहै सोवसका सहस्रशीर्षाइत्यादिक विशेषणहैं उसकाअर्थइसप्रकारकाहोताहै । सहस्राणिशिरांसियस्मिन्सहस्राण्यक्षीणि तथासहस्राणिपादाः असंख्यातानियस्मिन्पूर्णेपुरुषेसःसहस्रशीर्षासहस्राक्षः सहस्रपात्पुरुषः ॥ जितनेशिर, जितनेआंख, और जितनेपग, असंख्यात वेसब पूर्ण जो परमेश्वर उसीमें वासकरते हैं क्योंकिसबजगत् का अधिकरण परमेश्वर ही है और बहुव्रीहि समासही अन्यपदार्थके होनेसे होताहै तथासहस्रपात शब्दके होने से बहुव्रीहिनिश्चित होताहै व्याकरणकी रीति से कोई अर्थमन्त्रके अक्षरोंहीं में स्पष्टहै सभूमिं सर्वतःस्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् । पुरुषएवेदंसर्वंयद्भूतंयच्चभाव्यम् ॥ इत्यादिउत्तर मन्त्रोंसे यही अर्थनिश्चितहोताहै औरसबजगत्की उत्पत्तिभी पुरुषसे किसीहै विना परमेश्वरके किसीमें नहींहोसकती इससेजोकोईकहैकिइन मन्त्रोंसे षोडशोपचार पूजाहोतीहै उनकीबात मिथ्याजाननी और प्राणप्रतिष्ठा शब्दकायह अर्थहैकिप्राणकी स्थिति औरस्थापन का होना जो मूर्तिमें प्राणजाते तो मूर्ति चेतन ही होजाती सो जैसा पहिलेपत्थर था वैसाहीरहताहै क्योंकिचलना, फिरना, खाना, पीना, देखना, बोलना और सुननाइत्यादिक व्यवहारपत्थर कभी नहीं करता इससे जोकोईकहे किप्राणप्रतिष्ठाहोतीहै यहबातउसकीमिथ्या जाननी और मूर्ति जड़ होतीहै उसमेंप्राणकेआनेजानेका चिह्न कभीहोतानहीं फिरप्राणउसमें कैसेप्रवेशकरे और जोकहें कि हम प्राण प्रतिष्ठा करते हैं उनसे कहना चाहिये कियापलोग मुरदेके शरीरमेंक्योंनहींप्राणप्रतिष्ठा करतेहैं किसीराजा, साहूकार मन जनके मनुष्यों को मुरदेमें प्राणप्रतिष्ठा करके जिलादियाकरो तो तुमलोगोंको बहुत धनमिलेगा और बड़ी प्रतिष्ठाहोगी फिरक्यों नहीं ऐसीबातकरतेहो जोयेकहैंकि जैसा परमेश्वरने नियम कर दियाहै वैसाही मरने जीनेका होताहै उसको मरेपीछे कोईभी जिला सकता तो उनसे हमलोगपूछतेहैं कि जिन पदार्थों कोपरमेश्वर ने

प्राण और चेतनतारहित जड़पदार्थ हैं उनको तुम चेतन और प्राण सहित कैसे बना सकोगे कभी नहीं और जो कहते हैं कि देव और सिद्धपुरुष मृतकको जिला देते हैं उनसे पूछा जाता है कि वे देव और सिद्ध क्यों मरजाते हैं इससे प्राणप्रतिष्ठाकी सब बात झूठी है प्राणदा अपानदा इनका अर्थ पूर्वार्द्धमें कर दिया है वहीं देखलो और उद्बुध्यस्वाग्ने इसकाभी अभिप्राय वहीं देखलेना। आत्मेहाग च्छतु चिरं सुखं तिष्ठतु स्वाहा। इत्यादि संस्कृत मिथ्याही लोगोंने रचलिया कोई सत्य शास्त्रमें नहीं है देखना चाहिये कि। शन्नोदेवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥१॥ अग्निर्मूर्द्धा० उद्बुध्यस्वाग्ने इत्यादिक मन्त्रोंमें कहीं शनैश्चर, मङ्गल और बुधादिक ग्रहोंका नाम भी नहीं है परन्तु विद्याहीन होनेसे आजीविकाके लोभसे ब्राह्मणने जालरच रक्खा है कि ये ग्रहोंके हैं सो किसीने ऐसा विचारा कि ग्रहोंका मन्त्र पृथक् निकालना चाहिये सो मन्त्रोंका अर्थतो नहीं जानता किन्तु अटकलसे उसने युक्ति रची कि शनैश्चरशब्दके आदिमें तालव्य शकार है। और शन्नोदेवी इस मन्त्र केआदि में भी तालव्य शकार है इससे यही शनैश्चरका मन्त्र है तथा पृथिव्यग्रणस् इससे परमेश्वर काग्रहण होता है इसशब्दसे मङ्गलको लिया और उद्बुध्यस्व क्रियासे बुधको लिया देखना चाहिये कि यहां शुक्रका नाम उद्बुध्यस्व बुध अवगमने धातुकी क्रिया है इससे बुधको लिया इत्यादि भ्रमके ग्रहोंको ग्रहण किया है सो यह कथा केवल लालबुझक्कड़की नाई है जैसे कि किसी गांवमें एक मूर्ख पुरुष रहता था उसका नाम लालबुझक्कड़ था कभी किसी राजाका हाथी उस गांवके पाससे चलागया था और किसीने देखा नहीं था फिर जब प्रातःकाल लोग उठके बाहर चले तब खेत और मार्गमें हाथीके पगके चिन्ह देखके बड़े आश्चर्य में भये और लालबुझक्कड़को बुलाके पूछा कि ए क्या है तब उसने रोने लगा फिर रोके हंसा तब सबने उससे पूछा कि तू रोया क्यों और हंसा क्यों उसने उनसे कहा कि जब मैं मरजाऊंगा तब ऐसी २ बातोंका उत्तर

कौनहुआ इसहेतुमैं रोया और हसाइसहेतु कि इसका उत्तर बड़ा कठिनहै सोभी तुमने नहीं जाना इसहेतुमैं हंसा तबउनसे पूछा कि इसकाक्या उत्तरहै तब वहबोला कि लालबुझक्कड़ बूझिया और नबूझै कोइ । पांवमें चक्कीबांधके हिरणाकूदाहोय ॥ हिरना अपने पग में चक्कीकेपाट बांधके कूदता२ चला गयाहै उसके पगके ए चिह्न हैं तबतोवेसुनके बड़े प्रसन्नभए और उनने कहाकि लालबुझक्कड़ बड़े पण्डित औरबुद्धिमानहैं वैसेहीपाषाणमूर्त्तिकेपूजनविषयऔर स्वयंदमन्त्रोंकेविषयमें इनपण्डितलोगोंने मिथ्याकोलाहल कर रक्खाहै इससे वेदकी निन्दा और अप्रतिष्ठाकर रक्खीहै वेदोंमेंऐसी२मूर्तिस्थापनहोती तो वेदहीसबोंनेरोसकते इससे यहीनिश्चयकरना कि अपने२ मतलबकेहेतु मिथ्या२ कल्पनालोगोंनेकरदियाहैऔर वेदमें सम्बन्धनहीहैं इनबातोंका लेशभीनहींहै प्रश्न वेद अनन्त हैं क्योंकि यजुर्वेदकीशाखा १०१ सामवेदकी १००० ऋग्वेदकी २१ और अथर्ववेदकी ९ शाखाहैं सोबहुतशाखा लुप्तहोगईहैं उनमें पाषाणपूजनादिक लिखाहोगा तुम क्याजानतेहो । उत्तर वैसेसा तुम्हारातर्कभीहै इसका यह अभिप्रायहै कि वेदअनन्त हैं अर्थात् अनन्तशाखाहैं उनमें शाखाओंमेंसेकोई लोप होतीहीहैं क्योंकि जिसवृक्षकीशाखाहोतीहैं उसवृक्षके मूलस्कन्ध,पुष्प,फल, फूल और स्वाद तथा रूपवैसेही जोर शाखामेंसिद्धहैं उनशाखाओंकी लुप्तशाखाभी अवश्यहोगीकिजैसाइनमें सत्यसत्यार्थप्रतिपादनहै वैसा उसमें भी होगा इससे जाना जाताहै किइन प्रसिद्ध शाखाओंमें मूर्त्तिपूजन कालेशनहीहै तोलुप्त शाखाओंमें भीनहीं होगाऐसाजोकोईकहै कि आपने सब वेदशाखा देखीहैं फिर आप लोगक्योंकहतेहो किउनलुप्तशाखाओंमें लिखा होगा और आप लोग अनुमानभी नहींकरसकते क्योंकिइनशाखाओंमें थोड़ासाभी प्रतिपादनहोता तो उनशाखाओंमेंभी अनुमानहोसकता अन्यथा नहीं औरजोआदरसेमिथ्याकल्पना करतेहो तो इसभी कारणहैं कि

उनशाखाओंमें चोरी, मिथ्या भाषण, विश्वासघातक, कन्यागामी भगिनी, इनसे समागमकरना वेश्यागमनपर स्त्रीगमनकरना और वर्णाश्रमव्यवस्थानहोगी इत्यादिक अनुमानमिथ्याकरसक्तेहैंऔर किन्तुमनेभी वेदशाखाईसीमई वा कोई नहीं देखसक्ता फिर कैसे निश्चयहोगा कर्मानहोगा क्योंकि कभी भ्रमकी निवृत्ति नहोगी न जानेउनशाखाओंमें ब्राह्मण कानाम चांडाल होय औरचांडालका नामब्राह्मण होय इससे ऐसा आपलोग मिथ्याअनुमाननकरें और उनशाखाओंका मूलभीतो कोईहोगा और जोमूलनहोगातोशाखा कैसी इससे जोवेद पुस्तकहैं वेईसब शाखाओंकेमूलहैं औरशाखा व्याख्यानोंकीनाईं ब्रह्मादिक ऋषिमुनिने किएहैं। जैसे, मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य। ऐसा पाठ शुक्लयजुर्वेदमेंहै और तैत्तिरीय शाखामें। मनोज्योतिर्जुषतामाज्यस्य। ऐसापाठहै। जूति कोय-का विशेषणथा ज्योतिः। शब्द सेस्पष्टार्थहोताहै जोसर्वकेविशेषणका यथायोग्य भेदहै जो विशेष्यका भेदहोताजोपरस्परविरोध देखनेसे मिथ्यात्वआजाएगा इससे विशेष्यका भेदकभीनहींहोता विशेष्यभेदसे पूर्वापरविरोध होजायगा फिरकिसकोसत्यमानेंकिसको मिथ्या इससे वेदोंमें ऐसादोष कहीनहीं इससे ऐसाभ्रमकभी नहीं करना चाहिये औरजो वेद अनन्त होंगेतोकोईभ्रमनकरेगा कुछ चाहेसोबोलसकेगा और पूर्णविद्वान भीकोईनहोसकेगा फिर सबभ्रमही रहेगा भ्रमकेरहनेसे किसी पदार्थका दृढनिश्चयन होगा और लड़ाई बखेड़ाभी होजायगा किवेदकाअन्तजानेनहीहै हम लोग कैसे पढ़सकेंगे इससे सबलोगों को भ्रमहीबनारहेगा इसमेंवेदशब्द कायह अर्थहै जिससेजानाजायपदार्थ उसका नामवेदहै और वेत्ति अनेनवेदः। जोजाननेवालाहैउसका नाम वेदहै सो अनन्त नाम असंख्यातजीवहैं वेहीजाननेवालोंके होनेसे उनकानाम वेदहै और विदन्तियैस्तेवेदाः। जिनसे पदार्थ जाना जाय उनकानामवेदहै। सोसर्वशक्तिमत्व और सब जगत्कारकता ईश्वरमेंसदाहैअनन्त

हुआहै जैसेपरमेश्वरके आगमे बाजे हैं इसमें उनका सामवेद है इसके आनन्तवैभेद: । देखा आज्ञाज्ञवश तिसे अभिप्रायमालनकियाहै परन्तु पाषाणादिक मूर्त्तिपूजन वेदादिकोंमेंनहीं है फिर कैसे परम्परा-से चली आई और इनकीबड़ी प्रवृत्तिभई आजतककिसी ने नहीं खण्डनकिया जैसेकि खण्डनकरते हैं उत्तर आपलोगसर्वज्ञन-हींहैं वाचिकज्ञानवाले हो कि परम्पराकाठीकर निश्चय करें देखना चाहिए जिसरचनारायण शीघ्रबोध,कौमुद्यादिकनए२रचेगये नी-न२ तीर्थ तथामन्दिरआदिक होतेहोआते हैं और इनको परम्परा मानलेते हैं औरवेअबकेभये हैं सब औरजबमातापिता ऐसा करने-ताहै वैसाहीउसकापुत्र परम्परा मानलेताहै फिर कोई चौर्यादिक अन्यायमेंप्रवृत्तहोजाताहै औरकोईकुलअन्यायसेडरताभीहै सोजो-कभी परम्परा आपलोगमानेंगे तो बहुतदोष आजांयगे औरकभी न होसकेगी क्योंकिकिसीकापितादरिद्रहोवे और उसकेकुलमें भूखा-दिकथनाढ्यहोते हैं फिरपरम्परासेभीदरिद्रता उसको क्यों छोड़ते हैं किसीकापिता अन्धाहोय उसकापुत्रआंखको क्यों नहीं निकाल डालताहै औरजिसकापितामूर्खहोताहै वा पण्डितउसका पुत्र पू-र्णपण्डितविद्वान्क्योंनहींहोता किसीकापिता चोरी करताहोय औरमहाकुकर्मकरताहोय उसकापुत्रचोरीव्यभिचारक्यों न-हींकरे जिसदिनउसकापितामरे उसीदिनआपभी क्यों नहीं मर जाय अथवा अङ्गरेजोंकेदेशमें पढ़ाई नहीं जाती थी अब क्यों पढ़ी जातीहै रेलपरपहिलेचढ़नानहीं होता था और तारपर खबर न-हीं आतीजातीथी फिरवेरेलपरचढ़ते और तारपर खबर भेजते भे-जातेक्यों हैं इत्यादिकबहुतदोषआजाते हैं ऐसामाननेमें और परम्परा का निश्चयतो सत्यनादिक अर्थात् औरवेदसत्यशास्त्रोंही से होता है अन्यथाकभीनहीं यहपाषाणादिकपूजनकी विशेषप्रवृत्ति बड़ी भई है सोकेवलअविद्या,धर्म,विचार,ब्रह्मचर्याश्रम, सत्सङ्ग औरश्रेष्ठ रा-जाओंकेनहींहोनेसेभईहै क्योंकिसत्यविद्या जबमनुष्योंमें नहीं हो-

री जब अनेक मूर्खों में बुद्धि नष्ट होती है तब बहुत मूर्ख, अधर्मी, पाखण्डी तथा मतवालों के उपदेश लोक मानने लगते हैं फिर बड़े भ्रमजाल में पड़के वे मूर्ख जैसा उपदेश करते हैं वैसाही मान लेते हैं और लोगों की बुद्धि विपरीत होजाती है फिर बड़ा अन्धकार होजाता है । उनको बुद्धि से कुछ नहीं सूझता ॥ गतानुगतिको लोकः न लोकः पारमार्थिकः । वालुकापिंडदानेन गतं मे ताम्रभाजनम् ॥ इस में यह दृष्टान्त है कि एक कोई पंडित ताम्बे का भाजन लेके तर्पण और स्नान के हेतु गया उस के संग बहुत पुरुष भी बहुत जाते और आते थे उस पंडित को शौच की इच्छा भई तब ताम्बे का भाजन बालू में गाड़ दिया और उसके ऊपर थोड़ी बालू का पिण्ड धर के निशान के हेतु शौच को फिर चलागया अन्य स्नान करने वालों ने यह चरित्र देखा देख के पण्डित से तो किसी ने नहीं पूछा किन्तु जैसा पण्डित ने पिण्ड बनाके रक्खा था वैसा पिण्ड सैकड़ों आदमियों ने बनाके रखदिया उसके पास २ उन के हृदय में ऐसा विचार आया कि पण्डित ने जो यह काम किया है सो पुण्य के वास्ते ही किया होगा इस हेतु हम भी ऐसा ही करें तब तक पण्डित भी शौच होके आया और उसने देखा कि बहुत पिंड वैसे धरे हैं और बहुत मनुष्य पिण्ड बनाके रखते भी जाते थे सो पण्डित ने उनसे पूछा कि आप ऐसा काम क्यों करते हैं तब उनने पंडित से कहा कि आप का देख के हम लोग भी करते हैं तब पंडित ने पूछा कि इसके करने का क्या प्रयोजन है तब उनने कहा कि जो आपका प्रयोजन होगा सो हमारा भी है पण्डित ने विचारा कि मेरा ताम्रपात्र भी नष्ट होगया तब पण्डित ने कहा कि आप बार २ पिण्ड मत बिगाड़ो नहीं तो तुमको बड़ा पाप होगा तब उनने पण्डित से कहा कि आपको भी पिण्ड बनाने से पाप भया होगा तब पण्डित ने कहा कि तुम अपना २ पिण्ड बिगाड़ डारो तब मैं भी अपना बिगाड़ डालूंगा तब तो सब अपने २ पिंड तोड़ डाले तब पण्डित का पिण्ड रहगया पंडित ने जाके पिंड तोड़ा और नीचे से भाजन निकाल लिया और उनसे कहा कि मैंने इस हेतु निशान धरा था

तुमने पूछाभी नहीं और पंडितजनसे लगगए खंडनकरनेकोकि आप
का काम देखके हमभीकरनेलगे वैसेही पाषाणादिक मूर्त्तिपूजन
एकका देखके दूसरेभीकरनेलगे ऐसेकामोंके प्रवाहकीभांई लोगग-
तानुगतिक होतेहैं जैसे एकभेड़ आगेचले उसकेपीछे सबभेड़चलने
लगतीहैं और जैसे एकसियार वाएककुत्ताभोंकनेवाभूंकनेलगे उ-
सकाशब्दसुनके अन्यसियार वाकुत्ते बहुतबोलने वाभूंकनेलगतेहैं
वैसीही विद्याहीन मनुष्योंकी अन्धपरम्पराचलतीहै उसमें बड़े २
आग्रह करकेनष्टहोते चलेजातेहैं औरपरमार्थ विचार सत्य २ कोई
नहींकर्त्ता इससे हम लोगभी मिथ्या व्यवहारकाखण्डनकरतेहैं पक्ष-
पात छोड़के क्योंकिसत्यन्यायादिप्रमाणोंसे औरवेदादिक सत्यशास्त्रों
सेदृढ़निश्चय करके जानागयाहै किमुक्तिकेहेतु वासव्यवहारसुखके
हेतु परमेश्वरहीकी दृढ़उपासनाकरनीयोग्यहै पाषाणादिक मूर्-
त्तियोंकीकभीनहीं प्रश्न आजतकबहुतपण्डित होगए औरब-
हुत पंडितभीहैं फिर खंडननहीं कोई करता और मूर्त्तियों का पू
जन नहीं करतेहैं सोआप एकबड़े पंडित आए जोखंडनकरते हैं सो
आपका कहना कौन मानताहै उत्तर मैंआपसे पूछताहूं कि
पंडितकौनहोताहै जोआपकहें शिघ्रबोध, शीघ्रबोध, मुहूर्त्त चि-
न्तामणि, आदिक सारस्वतचन्द्रिका, कौमुद्यादिक तर्कसंग्रह,
कुण्डाकल्पादिक, भागवतादिक, पुराणमन्त्रमहोदध्यादिक, तंत्रग्रंथ
और तुलसीकृत रामायणादिक भाषा पढ़नेसे क्या पंडित होताहै
किन्तु अविवेकीही बनजाताहै क्योंकि सदसद्विवेकनीबुद्धिःपंडा
पंडासंजाताअस्येतिसपंडितः ॥ जोबुद्धिसदसद्विवेककरने वाली
होय उसका नाम पंडाहै और वहीपंडानामविवेकयुक्त बुद्धि जि-
सकोहोय वही पंडितहोताहै सोआपलोग विचारके देखें कि य-
थावत्धर्म और अधर्म तथासत्य औरअसत्यका विवेकइनपंडितोंको
हैवानहीं जिनको आप पंडित कहतेहो औरजो मूर्खहैं वेतो आज
कालकोईर खण्डनकरतेभीहैं किन्तु पंडितलोग प्रायः नहीं करते

किन्तु कोई पंडित संस्कृतमेंएकअक्षरभीहै परन्तु उसपरकोईवेधूर्त लोग आवही चलने नहीदेते क्योंकहसत्यशास्त्रभीहै तोभीमें सत्यनहींरहताहै क्योंकिवह सत्यकहैतो अनभिज्ञ उसकीदुर्दशा करदेतेहैं इस भयकामाराजवभीमौनकरलेताहै परन्तु उनसत्य पं- डितोंको मौनधारणकरना उचितनहीं क्योंकिमौनऔर भयके र- हनेसे देशकाअकल्याण धर्मकानाश और अधर्मकीवृद्धि और इन धर्तोंकीप्रबलहोगी इससेकभीमौन धारण सत्यकरनेवाकहने में न- हींकरनाचाहिए क्योंकिजोअच्छे पंडित औरबुद्धिमान् भयवाभी- नकरेंगें तोउस देशका नाशहीहोजायगा औरवेद विद्यादिक नहीं रहनेसे बहुतोंकोसत्य २ निश्चयभीनहींहै इससेवेखंडननहींकर्ते हैं लोकके भयसेऔर कि हमारी आजीविका नष्ट होजायगी और हम खंडन करेंगे तोहमारी निन्दा होगी और आजीविकाभी नष्ट हो जायगी इससे ऐसा कहना वाकरना नचाहिए जिससेकि संसारमें विरोधहोजाय परन्तु मैंकहताहूंकि भयको छोड़पुरुषोंकोएकपरमे- श्वर और धर्मके आचरणहीसे करना चाहिए औरजोमैं खंडन करताहूं सोनम्रतादिकप्रमाण औरवेदादिक सत्यशास्त्रोंहीसेकरताहूं सोआजतककिसीनेवेदोक्तप्रमाणपूर्वकउत्तरयुक्तिनहींदिया क्योंकिप्र- माणऔरयुक्तिसेसत्यकाखंडनहोसक्ताहै असत्यकाभीनहीं और इस सेखंडनको आजतक कोई देभीनहींसकेगा इसमेंकुछसन्देहनहीं प्रश्न अनेकसंन्यासी, उदासीवैरागी औरगोसाईआदिक खंडननहींक- रतेहैं और पूजा करतेहैं उनके भी वैसेही संसार की निन्दा और आजीविका से डरतेहै इससे वेखंडन नहींकरते वापूजा नहीं करा- वते। प्रश्न उनको क्याआजीविकाकाभयहै औरसंसारका जिससे कि वेडरतेहैं क्योंकि उनको विवाहकरनेमें द्रव्यकाव्ययकरनाहै नहीं जिसमें धनकीचाहनाहो और माता, पिता, स्त्री, पुत्रादिक, कुटुम्ब और घरकोछोड़के स्वतन्त्रहैं इससे उनको भयनहीं है परन्तु वेभी खंडन नहीं करते और पूजाकरतेहै फिरआपही यह विरुद्ध आचरण

कि इन बातोंका खण्डन करते हैं । उत्तर यह बात तो सत्य है कि उनको सत्यभाषणादिक का छोड़ना और पाषाणादिकका [illegible] उनको का उचित नहीं परन्तु वैरागी लोगोंमें कोई एक महात्मा भी एक [illegible] है अन्य जैसे गृहाश्रममें थे वैसे ही बने रहते हैं और कितने ही गृहस्थों से भी नीचकर्म करते हैं क्योंकि उनने केवल खाने पीने और विषयभोग के हेतु विरक्तका भेषधारण करलिया है परन्तु विरक्तता उनमें कुछ नहीं मालूम पड़ती क्योंकि धर्मकी रक्षा और मुक्तिकरनेके हेतु विरक्त नहीं होते हैं किन्तु अपने शरीर और इन्द्रियभोगके हेतु विरक्तोंकी नांई बनगए हैं कोई धर्मात्मा राजा होय और इनकी यथावत् परीक्षा करै तो इन लोगोंमें एक विरक्त भी न निकलेगा बहुत नकली और छलग्रहण करनेके योग्य निकलेंगे क्योंकि जबतक विद्या, जितेन्द्रियता, ज्ञान, कपटादिक दोषरहित होके सत्य उपदेश तथा सबके ऊपर कृपाकरके वैराग्य, ज्ञान, और परमेश्वरका ध्यानकरें तथा काम, क्रोध, लोभ, मोहादिक दोषोंको छोड़ें और सत्यधर्म, सत्यविद्या, सत्य उपदेशकी सदा निष्ठा होनेसे विरक्त होता है अन्यथा नहीं है इसपर चाहिये कि गोकुलस्थ गोसाईं आदिक कैसे पूर्वोक्त आचरण करके धनाढ्य बनगए हैं बहुत चेले और चेलियां बनाई हैं उनसे समर्पण कराते हैं कि तन मन धन शरीर, मन और धन गोसाईंजीके अर्पण करो सो बड़े २ मन्दिर उन्होंने बनाए हैं और नानाप्रकारकी मूर्त्तियां रखलिया हैं और नानाप्रकारके वस्त्र, सोनेके आभूषणों से ऐसा आडम्बर किया है कि देखने ही से मोहित होके उसमें फंस जाते हैं प्रायः स्त्रीलोग उस मंदिरमें बहुत आती हैं जितनी व्यभिचारिणी स्त्री और व्यभिचारी पुरुष बहुधा मन्दिरों में जाते हैं क्योंकि वहां परस्पर स्त्री पुरुषोंका दर्शन होता है और जिससे जो चाहे उससे समागम विना परिश्रम से करले उसमें शयन आरती और शृङ्गारादि बहुत व्यभिचार के मूल हैं क्योंकि उस समय पर आरतीमें भीड़ रहती है इससे आनन्दपूर्वक निर्भय होके क्रीड़ा करते हैं परस्पर मिलके और उसमें दर्शन-

ईंगिनते क्योंकिएक श्लोकबनारक्खाहै ॥ अहंकृष्णस्त्वंराधाश्च–
रन्योरस्तु संगमः ॥ परस्त्री औरपरपुरुष कापरस्परगमनकरातेहैं
जोइसकोपढ़ले तो कुछ परस्त्रीगमन वा परपुरुष गमनमें कुछपाप
नहीं होताहै जब वेपरस्पर सन्मुखहोवें तब पुरुषकहैकिमैंकृष्णहूं
तू राधाहै तब स्त्री बोलीकिमैंराधाहूं आपकृष्णहैं ऐसा कहकेकु–
कर्म करनेको लगजातेहैं उनकेदोमन्त्रहैं श्रीकृष्णःशरणंमम यह
इन्होंने मिथ्या संस्कृतबनालियाहै इसकायहअभिप्रायहैकिजोकृष्ण
सोई मेरा शरण अर्थात् इन्होंनेकिश्रीभागवतकीकथामेंरासमंडलकी
लीलासुनके ऐसा निश्चयकरतेहैं किहम लोगोंके इन्होंने जैसी लीला
कियाहै वैसी हमभीकरें कुछदोषनहीं और इसका ऐसाभीअर्थबन
सकताहै किजोश्रीकृष्णहै सोमेरे शरणको प्राप्तहो अर्थात्मेरासेवक
श्रीकृष्णबनजाय ऐसाअनर्थ भीअशुद्धसंस्कृत से होसकताहैसोयहम–
न्त्रसबहै लोगस्त्रियों, कङ्गाल और साधारणपुरुषोंकोदेतेहैं और
जो बड़े आदमीहैं उनकेहेतु दूसरा मन्त्र बनायाहैवहीसमर्पणका
मन्त्रहै ॥ क्लीं कृष्णायगोपीजनवल्लभायस्वाहा ॥ इसमन्त्रकोस–
मझतेहैं किजोशरीर मन, औरधनगोसाईंजीके अर्पणकरतेहैं और
गोसाईं जीउन अपनेको कृष्णार्पणकरतेहैं औरअपनी चेलियोंकाजगत्
की कन्यादिसमर्पणकरातेहैं जो कन्यास्त्रीभीगोसाईंजीसेसमागमकरलेंत–
नको पापनहीं लगता और उनके समर्पणजोचेले होतेहैंवेअपनी
प्रसन्नतासे गोसाईंजीको प्रसादीकरातेहैं अर्थात्स्त्रीवापुत्रकीस्त्री
तथा कन्या उनको गोसाईंजीकी सेवाके लिये एकान्तमेंभेजतेहैंजब
गोसाईंजी एकबार अपनी सेवामें प्रथम रखलेतेहैंतबइसकोपवित्र
होजातीहैं और यहस्त्री अपनेकोधन्यमानतीहै तथा उनकेसेवकभी
अपनेको धन्यमानतेहैं जिनका गुरुइसप्रकारका व्यभिचारी होता
उनका शिष्यवर्ग व्यभिचारीक्योंनहीं होगा औरऐसे अनर्थहोतेहैं
जबके सम्प्रदायमें जो अहंत योग्य नहींवेदानभीइनकेसमर्पणोक
हाथदेतेहैं जो इसको उनकेचेले बड़ी प्रसन्नता सेखालेतेहैंऔरअ–

पनेको बड़ा धन्य मानलेते हैं कि हमको गोसाईं जी महाराज की प्रसा-
दी मिलगई जबकोई धनाढ्य उनको मन्दिर में लेजाता है उसको ना-
म पधरावनी कहते हैं जबवे वहां जाते हैं तबवहां एक पाटलाके वा
लोटेका रखलेते हैं उसकेबीच स्नानकेहेतु एक चौकी को रखदेते हैं फि
र गोसाईं जी एक धोती सहित उस पाटके बीच में चौकी पै बैठजाते हैं
फिर अनेक सुगन्ध केसरादिक पदार्थों से उनके शरीर को मींजके और पु-
रुषमलते हैं फिर अच्छे गर्म जलसे उनको स्नान कराते हैं फिर
जबस्नान होजाता है तबसूखा पीताम्बर को धारलेते हैं और गीली
धोती उसकटाही के जल में छोड़देते हैं फिर गोसाईं जी निकल आते
हैं तबउनके सेवक लोग उसजल को पीते हैं और अपने को धन्य मानते
हैं फिर गोसाईं जी, बहूजी, बेटीजी, लालजी, ठाकुरजी, पुजारी, मु-
खियाजी, इन सातों से इसमत के बहुत धन हरलेते हैं इससे इनके
पास बहुत धन होगया है उससे रातदिन विषयसेवा और प्रमाद में रह-
ते हैं उनके चेले मानते हैं कि हम मुक्ति को प्राप्त होंगे परन्तु इन कामों
से मुक्ति तो नहीं होती किन्तु नरक अवश्य होगा क्योंकि इन प्रमादों में
जिनका धन जाता है उनका भला कभी न होगा और इन कुकर्मों का भी
और इनने एक अनाचार चला रखा है कि जब एक मनुष्य अपनी स्त्री से तंग था
उसने काशी में आके संन्यास लेना चाहा तब उससे पूछा कि आपके मा-
तापिता आदि किसी की आज्ञा तो चाहिये नहीं है तब उसने कहा कि
मेरे घर में कोई नहीं है मुझको संन्यास देदीजिये फिर उनने संन्यास
देदिया कुछ दिन के पीछे उसकी स्त्री काशी में खोजती हुई आई और वह
वहीं आके मिला सो उसके पीछे चली गई वह अपने गुरु के पास
जाके बैठ रही थी और उसके गुरु से कहने लगी कि महाराज मुझ-
को भी आप संन्यास देदीजिये क्योंकि मेरे पति को तो आपने संन्यास दे
दिया अब मैं क्या करूंगी तब तो उस संन्यासी ने बहुत क्रोध करके उ-
सको दण्ड और कमण्डलु लेलिये और उससे कहा कि तू क्यों चे-
ला है तैंने बड़ा अनर्थ किया ... और कहने

ओ कि सायरहो औरउनकेगुरुनेआशीर्वाददिया कितूमहाराज्य व-
हाओ हुडोगा लोकनकेपाण्णाग्रन्थमें ऐसी बातलिखी है सो हमको
अनुमानसेमालूमपड़ताहै किमहन्तअनेकाज़ी में संन्यासलिया फिर
स्वतन्त्र होनेलगे तब कामातुरहोके किसी स्त्री से फस गए फिर
जब काशीमेंनिन्दाहोनेलगी तबकाशीछोड़के दक्षिणदेशमेंचले गए
परन्तु कोई उनकेस्वजाति ब्राह्मणोंनेपंक्तिमेंनहीं लिया सो आज तक
तैलंग ब्राह्मणोंकी और गोकुलस्थोंकी एकपंक्तिवा एकविवाह नहीं हो-
ता जोकोईतैलंग,ब्राह्मण,गोसांईओंकोकन्यादेताहै वहभी जातिबा
हर हो जाताहै फिर ये दोनों इधरउधर घूमने लगे और उनका एक
पुत्रभया [illegible] इत्यादि [illegible]
[illegible] बालकको वनमेंछोड़के चलेगएसो उस बा-
लककी चारों ओर अग्नि जलता रहता था। इसमें उस बालक
कोकोई जानवरनहींमारसका जब वे पांचवर्षकेभए तब विष्णुस्वामी
[illegible] उनकोजातकरलिया पांच बर-
स की [illegible] क्योंकि वे वनमें
बालककोफेंकने [illegible] और पांच
[illegible] फिर वे [illegible] पराक्रम करोगे
[illegible]
[illegible] आते हैं बन
में [illegible] इससे वे बड़ा पण्डितों
[illegible] कहते हैं कि श्रीकृष्णनेवल्लभजी से
कहाकि हमारे [illegible] उनकाउद्धार करो फिर वल्ल-
भजीफिरतेघूमतेगोकुलमें आकेरहे औरयहां [illegible] था-
या कि [illegible] भए और उन्होंनेविवाह किया उससे
सातपुत्रभए जोआजतकगोकुलस्थोंकी सातगद्दीचलतीहैं फिर वे-
[illegible] कि जोकोईगोसाईंजी का चेला होगाव-
[illegible] और [illegible] नहीं होता यह-

आसुर नाम दैत्य और राक्षस संज्ञक जीव हैं ऐसे प्रसिद्ध होनेसे बहुत लोग चेले होगये और बहुत व्यभिचार तथा विषयभोगके हेतु चेले होते हैं पश्चात् इनने मिथ्या कथा रचीहै कि जब गुसाईं इ-न्होंने श्रीवल्लभजीने एक चेलेसे कहा कि तू दही बेंचि प्रसाद लेले था वह चेला दहीबेंचनेके हेतु बजारमें गया वहां एक दहीवाले बुढ़िया की बेटीथी उसने उसने कहा की इस दहीका क्या तू मूल्य लेगी तब बुढ़ियाने जाना कि यह वल्लभजीका चेलाहै इसलिये बोली कि मैं इस दहीके बदले मुक्ति लेऊंगी तब उसने दही लेलिया और बुढ़िया से कहा कि तुमको मैं । मुक्ति देदी सो उस बुढ़िया की मुक्ति होगई और श्रीवल्लभजी का नाम रक्खा है महाप्रभु सो ऐसे और झूठ कथा बनाके जगत् को ठगते हैं एक घासकी कंठी देते हैं उसका नाम रक्खा है पवित्रा और रागी भी हो देखा श्रुतके तुल्य ललाट में अनवाते हैं फिर कहते हैं कि तुम गोसाईं जीके समर्पण होजाओ और इनसे तुम्हारा कल्याण हुआ करेगा तुम लोग दैवीजीव और वैष्णव कहाओगे इस लोकमें आनन्द भोग करो और मरनेके पीछे तुम लोग गोलोक स्वर्ग में जाओगे जहां राधिका सखी और श्रीकृष्ण नित्य रासमंडल और आनन्द भोग करते हैं वैसे तुम भी अन्तमें उनके साथ आनन्द भोग करोगे ऐसी बातें सुनके स्त्री और पुरुष मोहित होके चेले होजाते हैं फिर इनने ऐसी मिथ्या कथा रचीहै कि विट्ठल साक्षात् श्रीकृष्णका अवतार हुआहै और इनको साक्षात् कृष्णके स्वरूप हैं सो बहुतसे धनदेनेके अभिलाषी और पुजारी गोसाईंजी की सेवामें रहआते हैं तब उनके चेले और चे-लियां उनसबोंसे कहती हैं कि तुम भी गोसाईं जीको अपने तनमनधनका समर्पण करके लगालिया क्योंकि इस धर्मकायही प्रयोजन है कि गोसाईं जी को शरीर मन और धनको चाहैं सो करें उनके चेले और चे-लियोंका जब समर्पण होता है तब उनका धनसब गोसाईं जी लेलेते हैं क्योंकि उनकि चेलोंका तनमनधन उनकि परतन्त्रता या स्त्री आनन्द का संप्रदाय उन का है कि चेलेचेलीनोंके चाकर सब विषयभोग आनन्द है सब इन्हीं का।

निमग्नहोजातेहैं औरगोसाईं लोगभीइसप्रकार से बनठने रहाकरते
हैं जिनकोदेखके स्त्रीलोगमोहितहोजातीहैं औरउसदिन स्त्रीलोग घेरेर-
हतीहैं और रसोईके कार्यध्वजियोंकेकुण्डकेकुण्डरक्रीडाकरते
रहतेहैं क्योंकि गोसाईं लोग अपनेकोकृष्णमानतेहैं औरइनकीस्त्रि-
यां अपने को गोपास्वरूपस्त्रीमानतीहैंसबस्त्रीलोगधनदेतीहैंऔर
अपनी इच्छापूर्वक क्रीड़ा करतीहैं केवलधनकेपामरहोजातेहैं इ-
ससे पशुकीनाईं अर्थात् कामसुखकेवास्तेजैसेक्रीड़ा करतेहैंवैसेही
पशुहैं इसमें कुछसन्देह नहीं जितने सम्प्रदायी, वैरागीहैं उन-
का भीप्रायःऐसाही व्यवहार है ऐसेस्थलोंकितलोग जोकिआचारी
कहातेहैं उनका ऐसामतहैकि । तापःपुण्ड्रंतथा नाम माला मन्त्र-
स्तथैवच । अमीहिपञ्च संस्काराः परमैकान्तहेतवः ॥ यह उनका
श्लोकहै शङ्ख, चक्र गदाऔर पद्मकेहेचांदीआदिकोंसेचारचिन्हब-
नारखतेहैं औरकोई इनकाचेला बननेकी होतीहै पहले स्नान करके
आतेहैं तबपहलेउस पंक्तिउनकी देखतीहैं और इनचिन्होंकोअग्नि
मेंतपाके उनके हाथकेमूलमेंलगाकर लगादेतेहैं उससमय जिस अग्नि
से तपायाजाताहै उससमय बालकभी जोरसेरोताहै अब उनके हाथमेंलगाकर
देखतेहैं तब बड़ा दुःखउनको होताहै क्योंकि चमड़ा, लोम और
मांसके जलनेसे उनको बड़ी पीड़ाहोतीहै और दुर्गन्धभी उठता है
फिरउनके हाथमें लगाके चमड़ा, मांस, कुछर्जुड़ के लगारहताहै
और एक पात्र में जलवादूधरखदेतेहैं उसमें उनचिन्होंकोबुझादेते
हैं फिरकोईभ उससबको बादमेंको पीलेतेहैं देखना चाहिये यह बात
कौन धर्म और किस मुक्तिकोपी केवल मिथ्याही मानना क्योंकि
जीतेशरीरको जलानेसे एकपृथक संस्कारमानतेहैं और जितनेसं-
प्रदाय वालेहैं ऐसाही पुण्ड्रादिकुछएकसंस्कार भी मानते हैं उन
शैव, वैष्णव आदिक अपने हृदयमें अभिमान करतेहैं ऊर्ध्वपुण्ड्र
नारायणकेचरणकी आकृतिलिखकेमानतेहैं तथा शैवशाक्तादिक
ललाटमेंत्रिपुण्ड्रललाटमें जो चन्द्रहै उसकी आकृति मानतेहैं फिर यको

किसीद्विक बीचमें रेखा करतेहैं उसका नाम श्री रखलियाहै इस में विचारना चाहिये कि जिनके ललाट में हरिमंदिरका चिन्ह लक्ष्मी और चन्द्रमाकाचिन्हहोवै वेभीदरिद्र दुःखी औरज्वरादिक रोग उ-नको क्योंहोतेहैं फिरवे कहतेहैं कि विनातिलकके चाण्डालकेतुल्य वह मनुष्य होताहै उनसे पूछनाचाहिए कि चाण्डालजोतुम्हारातिलक लगालेतो तुम्हारे तुल्य होसकताहैवानहीं जोवेकहैं कि होसक्ताहै तो राजा वाकुलके ललाटमें तिलक लगानेसे वहमनुष्यभीहोजाताहै वानहीं सोतिलकका ऐसासामर्थ्य नहींदेखपड़ताहै कि श्रीरकाश्री-र होजाय और लक्ष्मीचन्द्र इनके ललाटमें तिलकपानसेभी उदर का पालन होना कठिनदेखपड़ताहै इससे ऐसा निश्चय होताहै कि यहलक्ष्मी औरचन्द्रमानहीं है किन्तु दरिद्रता और उष्णता जाननी चाहिए फिरवे तिलकके विषयमें एक दृष्टान्तकहतेहैं कि कोई मनुष्य एक वृक्षके नीचेसोताथा बड़ारोगी सोमरणसमय उसका आगया वृक्षकेऊपरएक कौआबैठाथा उसनेविष्ठाकियासोगिरी उसकेललाट केऊपर सोतिलक कीनाईं चिन्ह होगया फिरयमराजकेदूत उसको लेनेकोआए तबतकनारायणनेअपनेभीदूतभेजदिए यमराजकेदू-तोंने कहाकि यह बड़ा पापीहै सोअपनेस्वामीकीआज्ञासे इसकोहम नरकमें डालेंगे तब नारायणके दूतबोलेकि हमारे स्वामीकीआज्ञा हैकि इसको वैकुण्ठमें लेआओ देखोतुमअन्धेहोगए इसके ललाट मेंतिलकहै तुमकैसे लेजासकोगे सोयमराजकेदूतोंकी बातनहीं च-ली औरउसको वैकुण्ठमें लेगए नारायणनेबड़ीप्रीतिसे प्रतिष्ठाकि-या और उसनेकहाकि आनन्दकर वैकुण्ठमें ऐसेर प्रमाणोंसे तिलक को सिद्ध करतेहैं औरलोगमानतेहैं यहबड़ा आश्चर्य है क्योंकि ऐसी मिथ्या कथाको लोग मानतेहैं गोकुलस्थलोग केवल हरिपदाकृति ही तिलकमानतेहैं निम्बार्कसम्प्रदायके एककालाबिन्दुतिलक के बीचमें देतेहैं उसको कैसेमन्दिरमें श्रीकृष्णबैठाहोय ऐसा मान-तेहैं तथा माध्वाचार्य सम्प्रदायके एककालीरेखाखड़ी लगातेहैं कहे

है उसको भी ऐसा मानते हैं तथा वैष्णवसंप्रदाय में कोई ठेकेदार के ऐसा विश्वास करते हैं हरिपद कृति मानते हैं और रामानन्दी भी बिन्दुको रामानन्द मानते हैं कबीरके मतवाले दोनोंको मिलाके यह तिलकको मानते हैं और पंडित लोग विप्रत्व के पक्ष की नाई कोई २ तिलक करते हैं सो केवल मिथ्या कल्पना लोगों ने चलाई है जो तिलक के बिना चांडाल होता हो तो देखो चांडाल होजांय क्योंकि अकस्मात और दुराचारादि करते हैं उनको मनके भी तालाबमें तिलक नहीं रहने पाता फिर वे चांडाल क्यों न बन जांय और जो फिर तिलक लेकर देने से ब्राह्मण बन जाय तो चांडाल उत्पन्न न होवे परन्तु क्योंकि- तों के अपने स्वार्थ सिद्धि ... , भक्त, भला और ... भक्तमा- लादिकोंमें यह भी लिख दिया है कि जो नक्षत्रों का सूत्र आचार्य पद कोई नीचों के ऊपर और शूद्रों के कुल में उत्पन्न भये हों कोई अन्य भी ... कि ... चांडाल ... । यह वचन है इसका इससे यह अभिप्राय है कि ... देखो पहिले इनके ... भयाथा कि यह पूजनारे वाले के कुल में उत्पन्न भया था उन्होंने चक्र ... किया ... क्योंकि ... भये हैं उनके पीछे ... ऐसी कथा जगन्नाथ में है कि ... और ... स्थान है उनमें बहुत से उनके संप्रदाय के ... रहते हैं वहाँ एक चांडाल था वह ... पूजा ... दर्शन करूँ परन्तु मन्दिर में जाइ नहीं सकता था ... पुजारी ... उसको नहीं आ- नेदेते थे ... रात्रि रहे तब पुजारी लोग स्नान को दर- वाजा खोलके चले गये तब वह चांडाल छिपके मन्दिर में जाइ के निकल गया कोई उसको देखे नहीं परन्तु पुजारियों ने विचार किया कि झाड़ू कौन दे जाता है रात में छिपके दो चार पुजारी बैठे रहे कि इसको पकड़ना चाहिए जब प्रातःकाल और पुजारी स्नान को चले गये तब वह चांडाल मन्दिर में झाड़ू देने लगा जब उनने देखे

चाण्डालकड़के ऐसामारा कि मूर्छित होगया तब उन वैरागियोंनेउ कड़केमंदिरके बाहर उसको डालदिया जबवेचाण्डालकेपुजारीलोग आए ठाकुरका किवाड़ खोलनेलगे सोनखुला क्योंकि ठाकुरजी ने उसको मारनेसे बड़ाक्रोधकिया तबबड़े आश्चर्यभयेकिकिवाड़क्योंनहीं खुलतेहैं फिरएक वैरागीको ठाकुरजीने स्वप्नदिया कि किवाड़ी तबखुलेगी आपसबलोग इसचांडालको पालकीमेंबैठाके अपने कंधेपर सब नगरमें उसको फिराओ औरपालकी सहितमंदिरको परिक्रमा करो फिर उसको मंदिरमें लेआओ वहीमेरी पूजाकरै औरइस मंदिरका अधिष्ठाता और सबकागुरुबनै जबवह किवाड़को आके स्पर्शकरेगा तबकिवाड़ खुलेगा अन्यथा नहीं ऐसाही उनने किया और सब बातहोगई उसकानाम उसदिनसेमुनिवाहन रक्खागया क्योंकि मुनिलोगोंने पालकी उनके वाहनरूप पालकी उठाई इससे उसकानाम मुनिवाहनपड़ा उनका चेला एकमुसलमानभया उनकानाम यवनाचार्य इसको अब चक्रांकितोंने तिरूपाझ्यचार्य नामरक्खाहै उनकेचेला रामानुजभये यह आख्यान रामानुजके विषयमेंये लोगकहतेहैं किशेषजी का अवतार है शंकराचार्य शिवका निंबार्कमाधव रामानन्द और नित्यानन्द येचारों सनकादिकके अवतारहैं नानकसनकजी का अवतार है कबीरब्रह्माका यहबातसब उनकी मिथ्याहै क्योंकिअपनेसंप्रदाय के हेतुमिथ्याकथा लोगोंने रचलिईहै तीसरा संस्कार माला और चन्दना उसमें रुद्राक्षतुलसी धारणकरनाहै इत्यादिक जानलेना. इनविषयमें संप्रदायी लोगकहतेहैं किजिनमाला करठी औररुद्राक्षकेधारण के जल पीवें और भोजनकरैं सोमद्यपान औरगोमांसकेतुल्यहै इनसे पूछनाचाहिये कि जलक्यों नहींहोता औरमांसका स्वादक्यों नहींआता इससेयह बात केवल मिथ्या आजीविकाकेहेतुलोगोंने रचलिईहै इनमें श्लोकभी बनारक्खेहैं यथा॥ विना दात्रप्रकोपि मद्यपस्पृष्टः ॥ कष्टजल्पंनिरर्थं स्वाजिपुंङ्गविद्धदि

इत्यादिक श्लोक शिवपुराण और देवीभागवतादिक ग्रन्थोंमें शैव शा-
क्तोंने अपने संप्रदायोंके बढ़नेकेहेतु लिखेहैं औरवैष्णवादिकोंके
खंडनके हेतु व्यासादिकों के नामसे बहुत श्लोक रचरक्खेहैं।
लाघवमें वसग्रथांडाल ब्राह्मणोवद्र्ध पुंड्रवरथं व विनाशंनजातहूतम्
इनके विरुद्ध इत्यादिक वैष्णवोंने बनायेहैं रुद्राक्षधारणेनैवनरकंभा
मुयाद्ध्रुवम् भस्मधारणमात्रेण शिवलिंग शक्तस्य च द्वादशकोटि
प्राणांतफलं भवत्यवै॥ विष्णोर्हिपद्मया मुकुन्द विष्णुनाभ पा-
दारविन्दविमुखाच्छ्वपचं। वरिष्ठम् अभाग्य तस्य देहस्य तुलसीयत्र
नास्तिवै। आभ्यन्तरेच्छ्वपो स्तुतुलसीगतवनादिविद्वि॥ दोनोंके वि-
रोधी वाममार्गी अपनेग्रन्थोंमें भैरवीचक्रे सर्वे वर्णा द्विजातयः। निवृत्ते
भैरवीचक्रेसर्वेवर्णाः पृथक्पृथक्॥ मद्यंमांसंचमीनंचमुद्रामैथुनमेव
च। एतेपंचमकाराश्चमोक्षदाहियुगेयुगे॥ पीत्वा पीत्वापुनः पीत्वा
यावत्पततिभूतले। उत्थायचपुनः पीत्वापुनर्जन्मनविद्यते। करस्थ
भगदर्शनमात्रेण मुक्तिर्भवति ... । मातृयोनिं परित्यज्य विहरेत्सर्व
योनिषु ... मुक्ति ... विचारणा। कारणामृत-
पानान्मुक्तिः ... इत्यादि वाममार्गियोंने बनालियेहैं ...
... शिवशक्तिआदि ... । गु-
प्तरूपे सर्वेषां ... ॥ अभ्येत्य सकलं ...
... कन्या ... ॥ बहुधाद-
इत्यादिकवर्णोंका माहात्म्य बनालिया है ऐसेही ...
... महात्म्य बना लिया है और इसप्रकारके विरोध करके अपने
मतलबके हेतु लोगोंने बना लियेहैं और परस्पर खंडनके जाल
रचेहैं तथा अत्यन्त विरुद्ध और परस्पर निन्दा होती है क्योंकि शैवादिक
रच लिया है उनको एक लोकभी नहीं होती जो सत्य बात है सो सबके
बीचमें एकही है चक्रांकितादिकोंने अपने संप्रदाय के मन्त्र बना लिये
हैं। अब वैष्णवाय ओम् श्रीमन्नारायण चरणौ शरणं प्रपद्ये
ओं नमो नारायणाय नमः येदोनों चक्रांकितोंके मन्त्र हैं और मनमोहन

धेनवागुरुदेवाय ओम् कृष्णायनमः ओम् राधाकृष्णाभ्यांनमः ओम् गोविन्दायनमः ओम् राधावल्लभायनमः ये निम्बार्कादिकों के मन्त्र हैं ओम् रामायनमः ओम् सीतारामाभ्यांनमः ओम् रामायनमः ये रामोपासकों के मन्त्र हैं ओम् नृसिंहायनमः ओम् हनुमतेनमः ये खाखी आदिकों के मन्त्र हैं ओम् नमः शिवाय यह शैवों का मन्त्र है ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः बगलामुख्यै फट् स्वाहा इत्यादिक वाममार्गियों के मन्त्र हैं सत्यनाम आपनही कबीरसंप्रदायका मन्त्र है दादूराम यह दादू संप्रदायका मन्त्र है रामराम यह रामसनेही सम्प्रदायका मन्त्र है वाहगुरु । एक ओंकार सत्य नामकर्त्ता पुरुष निर्भय निर्वैर अकालमूर्त्त अयोनीसम्भं गुरुप्रसाद जप । यह नानकसंप्रदायका मन्त्र है इत्यादिक कहांतक हम मत गिनावैं कि लाखहां प्रकार के मिथ्याकल्पना लोगोंने कर लिये हैं केवल अपनी जो परमेश्वरका मन्त्र इसकेछोड़ाने के वास्ते धूर्त्तता लोगोंने रचरखी है और जैसे गड़रिया अपने भेड़ और बकरियोंकी चिन्हताई उनसे मनचाहे तब दूध दुहलेता है अपना दखल सिद्ध करलेता है दूसरे के उनसे । एक भेड़ बकरी कोई लेले अथवा भागजाय तब उस गड़रियेको बड़ा दुःख होता है सो दिवसभर चराके एकस्थान में इकट्ठाकरदेता है बंद्या चाहता है इसअभिप्रायसे एक भी पृथक् न होजाय किन्तु अन्य भेड़ बकरी मिलाके बढ़ाया चाहता है क्योंकि उनसेही उसका आजीविका चलती है वैसेही आजकाल मूर्खमनुष्योंको धूर्त्त गुरुलोग नानाप्रकारके छल कपट धनादिक लूटते हैं और बहुत अनर्थ करते हैं क्योंकि सबलोग भूले हैं इससे जैसा वे कहते हैं वैसा ही मानलेते हैं जो इन गुरुओंको विद्या और बुद्धि होती तो ऐसी आपने वाले नरककी जान हीक्यों करते तथा ऐसे लोगोंको विद्या और बुद्धि होती तो इन धूर्त्तों के जालमें फंसके क्यों नष्ट होते देखना चाहिये कि नानक जी कबीर जी और दादूजी इनके संप्रदाय में पाषाणादिक मूर्त्ति पूजन तो नहीं है परन्तु उनने भी संसार में धनादिक हरने के वास्ते मन्त्र आदि रची के

इससेभी अधिकपूजाकरते हैं यहभीएकमूर्त्ति पूजनहीहै पुस्तकपूजन-
हीहोताहैक्योंकि जैसी पाषाणादिकोंकीपूजा वैसीपुस्तकोंकीभी पू-
जाजानली इसमें कुछभेदनहींयहकेवल परपदार्थ हरनेके वास्ते ही
लोगोंनेयुक्तिरचलिईहै अपने २ संप्रदायमें ऐसाआग्रहहै उनकीकि
वेदादिकसत्य पुस्तकोंकी ऐसीपूजा वाउनमेंप्रीति कभीनहीकरतेजै
सीकीअपने भाषापुस्तकोंमेंप्रीति करतेहैं औरसंन्यासियोंने एकशं
करदिग्विजयरचलियाहै उसमें बहुत २ मिथ्याकथा रचरखीहैउसमें
दण्डीलोग और गिरीपुरी आदिकोंमेंइसग्रंथमें अत्यन्तप्रीतिकरते
हैं अर्थात् रामानुजदिग्विजय निंबार्कदिग्विजय माधवार्कदिग्विज-
यवल्लभदिग्विजयकबीर दिग्विजय औरनानकदिग्विजयादिकअप
नीरबड़ाईके वास्ते लोगोंने मिथ्या२ ग्रन्थ रचलियेहैं शंकराचार्य
कोईसंप्रदायकेपुरुष नहींथे किन्तु वेदोक्तचार आश्रमोंकेबीचसंन्या
साश्रमपेथे परन्तु उनके पिछलेलोगोंने संप्रदायकीनाईं व्यवहार
कर रक्खाहै इसप्रकार लोगोंने पीछेसेकल्पित करलियेहैं जैसे कि
किसीका नामदेवदत्तहोय इसके अन्तमेंदश प्रकारके शब्दरखतेहैं
किदेवदत्ताश्रमएक१ देवदत्ततीर्थ २ देवदत्तानन्द सरस्वतीऔ-
रइसीकाभेदहुआ किदेवदत्तेन्द्रसरस्वती ३ देवदत्तगिरि ४ देवद-
त्तपुरी ५ देवदत्तपर्वत ६ देवदत्तसागर ७ देवदत्तारण्य ८ देवद-
त्तवन ९ देवदत्तभारती १० येदशनामरचलिये हैं फिरइनमें शृं-
गेरीशारदागोवर्द्धन औरज्योतिमठये चारप्रकारके मठ मानते
हैं औरद्राविड़ोंने दामोदर नृसिंह नारायणइत्यादिकदण्डीकेना-
म रखलियेहैं उसमें यज्ञोपवीत बांधतेहैं इसका नामशंखमुद्रादीक्ष
रखतेहैं ऐसेहि बहुत कल्पनादण्डियोंनेभी किईहैकिन्तुजोबाल्या
वस्थामें नाम रहताथा सोईसबआश्रमोंमें रहताथा जैसाकि जैगीष
व्य आसुरिपंचशिख औरबोध्यऐसे २ नाम संन्यासियोंकेमहाभा
रतमेंलिखेहैं इससे जानाजाताहै कियहपीछेसे मिथ्याकल्पनादण्डी
लोगोंनेकरलियाहै परन्तु दण्डीलोगसनातनसंन्यासाश्रमी हैं क्यों

किंतु दुर्गापाठादिक पंडितका व्याख्यान देखनेमें आता है और गोसांई लोगोंने भी दुर्गापाठ इत्यादिक मद्दी शब्द कल्पित कर लिया है जैसे कि वैरागी आदिकोंने नारायणदास इत्यादिकसे बड़ा भारी बिगाड़ भया कि नीच और उत्तमकी परीक्षा ही नहीं होती क्योंकि सब का एक सा-ही नाम देखपड़ता है तापः पुंड्र नाम मंत्र और यज्ञ ये पंच संस्का-र चक्रांकितादिक मानते हैं और रामानुज होना भी इनसे मानते हैं पर-न्तु इसमें विचार करना चाहिये कि संस्कार नाम है पवित्रता का सो पवित्रता दो प्रकारकी होती है एक मनकी दूसरी बाह्यपदार्थों की इ-नमें मन की पवित्रता होने से बाह्य पवित्रता भी होती है जिन का मन अधर्म करनेमें रहता है उनको बाह्यपवित्रता सब व्यर्थ है सो उन-संस्कारों से मनकी पवित्रता कुछ नहीं हो सकती देखना चाहिये कि गो-कुलस्थों के मन्दिरों में रोटी और दाल तक लोग बेचते हैं और बाहर के प्रसिद्ध रखते हैं कि ठाकुर को इतना बड़ा भोग लगता है सो जितने लोग उनके मन्दिरों में रहते हैं उनको मासिक धन नहीं देते किन्तु इसके बदले प्रसाद रोटी दाल कढ़ी देते हैं उनके हाथ गोसांई और अ-[illegible] बेचते हैं और वे उसको हाथ बेचते हैं जैसे हलवाई की दुकान में बेचा जाता है और रामानुजी भी उनके यहां भेजते हैं सब मन्दिर वाली [illegible] जिस से कुछ प्राप्ति होती हो मन्दिरों में जब दर्शन के हेतु जाते हैं तब जो उनको कौड़ी वा रुपया, सेवक भेंट देनेवाले उनका बड़ा सत्कार क-रते हैं अन्य का नहीं इन मिथ्याचारों के होने से देश का बड़ा अनुपका-र होता है क्योंकि बाहर से तो महात्मा की नांई बने रहते हैं और हृ-दय में कपट, काम, क्रोध, लोभादिक दोष भरे चले जाते हैं देखना चा-हिये कि बड़े २ मन्दिर, मठ, गांव, राजद्वार [illegible] करते हैं और नाम र-खते हैं वैष्णव, आचारी, उदासी, निर्मले [illegible] जटाजूट बने रहते हैं तिलक, छापा, माला, ऊपर से धारण करते हैं और उनका हृदय का व्यवहार हम लोग देखते हैं कि [illegible] भी यथावत् कहना [illegible] इससे [illegible] धर्म विद्यादिक [illegible]-

सत्यग्रहण करना चाहिए और इन नष्ट व्यवहारों को छोड़ना चाहिए तथापि इन पुस्तकों का उदाहरण उपकार होने का है अन्यथा नहीं वाम-मार्गी लोग एक भैरवी चक्र रचते हैं उसमें एक नंगी स्त्री करके उसके हाथ में शीशा तलवार देते हैं और बीच में एक आसन के ऊपर बैठा देते हैं फिर उसकी भी पूजा करते हैं यहां तक गुप्त इन्द्रिय की भी फिर उस जल को सब लोग पीते हैं और उसको देवी मानते हैं फिर वह साक्षात् देवी है और ब्राह्मण से लेके और चाण्डाल तक उस स्थान में सब बैठते हैं फिर एक पात्र में मद्य का पूजा करके मद्य रखते हैं अर्थात् उस पात्र से वह भी पीती है फिर उसी जूठे पात्र से सब लोग मद्य पीते हैं और मांस भी खाते जाते हैं रोटी और बड़े खाते जाते हैं फिर जब मद्य पी के मस्त हो जाते हैं तब उसी स्त्री से भोग करते हैं जिसको कि देवी मानी थी और नमस्कार किया था और मनुष्य का उच्छिष्ट भी करते हैं कोई २ उस का भी पी जाते हैं मुर्दे के ऊपर बैठके जप करते हैं और उसी के समीप मद्य मांस जप करते हैं। यदा लिंगसमास्थाप्य नग्नेन अन्यमतं जितः । और यह भी उन का मत है कि एक माता को छोड़ के कोई स्त्री अगम्य नहीं फिर उन के लिए इसका तो विधान ला है वह ऐसा कहता है कि मातरं अपि लब्ध्वा तु माता को भी नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि उत्कृष्ट रीति का व्रत है और माता को भी नहीं छोड़ना जैसे ये भी मानते हैं ऐसे दक्षिणाचार्य उन लोगों ने बनाए हैं उन में से एक चोली मार्ग है उसका ऐसा मत है कि स्त्री और पुरुष सब एक स्थान में इकट्ठे होते हैं एक बड़ा भारी कुम्भ का घड़ा वहां रखते हैं उसमें सब स्त्रियां अपने हृदय के वस्त्र अर्थात् जिसका नाम चोली है उस को उस घड़े में डाल देती हैं फिर उन वस्त्रों को घड़े के बीच में मिला देते हैं फिर सब मद्य पीते हैं और मांस खाते हैं जब वे बड़े उन्मत्त हो जाते हैं फिर उस घड़े में हाथ डालते हैं जिसके हाथ में जिसका वस्त्र आवे वह उस की स्त्री होके रह जाता, कन्या, भगिनी वा पुत्र की भी हो स्त्री चाहे ऐसे व्यभिचार का व्यवहार करते हैं और मानते हैं कि मुक्ति होगी यह बड़ा आश्चर्य है ऐ-

से कभी ऐसे कभी नहीं मुक्ति होगी परन्तु विद्याहीन जो पुरुष हैं वे ऐसे २ जालों में फस जाते हैं और इन लोगों ने अपने २ मत की पुष्टि के हेतु अनेक प्रकार आपस में स्मृति ब्रह्मवैवर्तादिक पुराण तन्त्र उपपुराण परस्पर विरुद्ध ऋषि और मुनियों के नामों से रच लिए हैं एक का दूसरा खण्डन करता है अपनी २ पुष्टि के हेतु क्योंकि असत्य बात और भ्रम जो होता है सो परस्पर विरुद्ध से ही होता है और जो सत्य बात है सो सब के हेतु एक ही है जो सज्जन होते हैं वे सदा श्रेष्ठ कर्म ही करते हैं क्योंकि वे सत्यासत्य विचार से असत्य को छोड़ते हैं और सत्य को ग्रहण करते हैं और किसी के जाल में विचारवान् पुरुष नहीं फसता सब के उपकार में ही उसका चित्त रहता है ऐसे जो मनुष्य हैं वे धन्य हैं इससे क्या आया कि श्रेष्ठ गृहस्थ का निरक्षो हैं वे सदा श्रेष्ठ कर्म ही करते हैं और पुनः ही इस जाल के फसे स्वार्थी लोग अपने मतलब में फस के सत्यासत्य नहीं जान सकते हैं क्योंकि उनको भय अंधकार से कुछ नहीं सूझता जगन्नाथादिक में बहुत चमत्कार देख पड़ता है तथा नाना प्रकार के तीर्थ जो गंगादिक वे पापनाशक और मुक्तिप्रद हैं या नहीं उत्तर नहीं क्योंकि जगन्नाथ की मूर्त्ति चंदन आदि की काष्ठ की बनाते हैं उसकी नाभि में जो उदर रखते हैं उसमें कोनेक संपुट में एक शालग्राम रख के धर देते हैं उसको महातेजवान् कहते हैं फिर ऊपर भूषण वस्त्र पहिरा देते हैं उसमें कुछ प्रमाण कारण नहीं है किन्तु पुजारियों ने आजीविका के वास्ते बात और महात्म्य पुस्तक बना लिया है वे एक तो यह चमत्कार कहते हैं कि छत्तीस वर्ष में जो आषाढ़ लगता है सो जगन्नाथ को कलेवर देते हैं क्योंकि ३६ वर्ष में मूर्त्ति पुरानी हो जाती है फिर दूसरी बना के रख देते हैं और कृष्ण तथा बलदेव की मूर्त्ति के बीच में सुभद्रा की मूर्त्ति बना रक्खी है इससे विचारना चाहिये कि एक के वामभाग दूसरे के दाहिने भाग में मूर्त्ति रखना धर्मशास्त्र और युक्ति से विरुद्ध है और दूसरा चमत्कार यह कहते हैं कि एक बड़ा आंधड़ी और पण्डा लोगों में उसी समय मर जाते हैं यह बात उनकी मिथ्या है क्योंकि अकस्मात् कोई उस दिन मर गया होगा

अथवा शत्रु लोगों को विषदान देके कभी मार डालते होंगे सो पाखण्डियों की ऐसी बात को लोगोंने मिथ्या चला दिया है तीसरा चमत्कार यह कहते हैं कि आपसे आपही रथ चलता है यह भी उनकी बात मिथ्या है क्योंकि हजारहां मनुष्य मिलके रथ को खींचते हैं और कारीगर लोगोंने उस रथ में कला बना दिई हैं उनके घुमाने से जब रथ खड़ा होता होगा और सूध घुमाने से कुछ चलता होगा जैसे रहट खड़ा होके घूमता है ऐसे अद्भुत पदार्थ विद्या से होते है चौथा चमत्कार यह कहते हैं कि एक चूल्हे के ऊपर सात पात्र धर देते हैं उनमें से ऊपर के पात्रों का चावल पहिले चुर जाते हैं यह भी उनकी बात मिथ्या है क्योंकि उन पात्रों में चावल पहिले चुरा लेते हैं फिर जल के पेंदे को बांध देते हैं फिर ऊपर २ पात्र रख देते हैं और नीचे के चूल्हे में थोड़ी सी आंच लगा देते हैं फिर दरवाजा खोल देते हैं और अज्ञ = अनाड़ी अथवा शजा लोगों को दूर से ऊपर ऊपर से निकाल के दिखा देते हैं और कहते हैं कि देखिये महाराज कैसा चमत्कार है कि नीचे का चावल कच्चा है क्योंकि वहां कभी चावल कहीं भी कच्चे रहे हैं उसको देखके विचार रहित पुरुष भोले लोगों के बड़ा आश्चर्य गिनते हैं और हजार हजार रुपैया दे देते हैं यह केवल उन मनुष्यों की धूर्तता है और चमत्कार कुछ नहीं है पांचवां चमत्कार यह कहते हैं कि जो पापी होय उसको उस मूर्ति का दर्शन नहीं होता यह भी उनकी बात मिथ्या है क्योंकि किसी के नेत्र में दोष होने से आंख के सामने तिमिर आजाते हैं और वे पुजारी लोग ऐसी युक्ति रचते हैं कि उसको अन्यथा रूप करके पा देना रक्खे हैं उनके दोनों ओर पुजारी लोग खड़े रहते हैं और फिरते भी रहते हैं सो किसी प्रकार से उस मूर्ति को आड़ कर देते हैं फिर नहीं देख पड़ती उस पर ऐसा कहते हैं कि तुम लोग पापी हो जब तुम्हारा पाप छूट जायगा तब तुम को दर्शन होगा उनमें बुद्धिहीन पुरुष भेंट रुपैये धर देते हैं फिर उनको दर्शन करा देते हैं यह सब मनुष्यों की धूर्तता है चमत्कार कुछ नहीं है छठवां यह चमत्कार कहते हैं कि अन्धा या कुष्ठी होजाता है जो कि

यहांका प्रसाद नहीं खाता यहभी उनकी बात मिथ्या है क्योंकि इस बात
से कभी कोई कुष्ठी वा अंधा नहीं हो सकता है किन्तु रोग से और अनेक
दिनका सड़ाभया अन्न तथा पत्रावली और हड्डियोंके खपरे जिन
को कौवे कुत्ते चमार और चांडालादि स्पर्श करते हैं और भूमी लग
जाती है सबका उच्छिष्ट खानेसे कुष्ठरोगभी होसक्ता है और परस्पर
सबका जूठ सब खाते हैं और फिर अन्य जगह जाके किसी का जलका अन्न न-
ही खाते यह देखना चाहिये कि इनका आश्चर्य व्यवहार कि सबका स-
बजूठ खाते भी हैं फिर कहते हैं कि यह किसी का नहीं खाते यह केवल इ-
नका अविचार ही है सो जिनकी वा जो जीविका है वे ऐसा और मिथ्या
बात सदा रचते रहते हैं कलिकत्ता में एक मृत्तिका की मूर्ति बनार-
क्खी है उसका नाम रक्खा है काली यहांभी ऐसी २ मिथ्या जाल र-
च रक्खी हैं कि काली मद्यपी है और मांस खाती है सो वह जड़ मूर्ति
क्या पीवेगी और क्या खावेगी परन्तु उन पुजारियों को खूब मद्य पीने
और मांस खानेको मिलता है वे लोग स्वाद के हेतु और धन हरने के हेतु
नाना प्रकारकी झूठ बात बनाते हैं वहां एक मंदिर में पाषाण
का लिंग स्थापन कर रक्खा है उसका नाम तारकेश्वर रक्खा है इस
विषय में उन्होंने ऐसा बना रक्खी है कि रोगियों को स्वप्नावस्थामें महादे-
व औषध बतलाते हैं उस औषध से उनका रोग छूट जाता है यह बात
सब ही मिथ्या है क्योंकि उनका जो पुजारी है वही वैद्य और डाक्टरों
से औषधी लिखा करता है और ऐसी औषधि कोई नहीं स्वप्नावस्था
में महादेव कह देता है कि जिसके खानेसे किसी को कभी रोग ही न हो-
इसमें यह बात झूठ है कि यह पाषाण क्या कह सकता है कभी न-
हीं ऐसे बनारस में विश्वेश्वर के विषय में ऐसा लोग कहते हैं कि जब गंगाजल
चढ़ाते हैं तब वह लिंग बढ़ जाता है यह बात मिथ्या है क्योंकि उसमें दि-
न में दिनको भी अंधकार रहता है इसी से चार कोने में चार दीप सदा
जलते रहते हैं उस मंदिर में किसी को घुसने देते नहीं उनके हाथ से गंगा
जल लेके उस मूर्ति के ऊपर जल चढ़ाता है अंदर पुजारी जी के से-

ऊपर हाथकरताहै अबमूर्त्तिकेऊपर हाथतक गंगाजीकी एकधाराब-
नाईहै उसधारामें भारोंद्रीपके प्रकाशके पड़नेसे जलबिजलीकी
नाईं चमकताहै तब अल्पबुद्धियोंको पुजारीलोग कहतेहैंकि इनलो-
गोंके ऊपर महादेव की कृपाहै देखो महादेव का लिंगबड़ा गया
सो तुमदेखो चढ़ाओगेसे बड़काएके स्वयम्भू दरशनकरतेहैं औरक-
हतेहैं कि रामनेयहमूर्त्ति स्थापनकिई है सोयहबातमिथ्याही है क्यों
कि वाल्मीकी रामायणमें इसकालेखभी नहींहै केवलतुलसीदासके
झूठलिखनेसे लोग कहतेहैं क्योंकि तुलसीदासकीमिथ्याबातवि
चारना चाहिये मारीनासकी भाषादेश के लोगोंकेहित नहींहोती
फिरसीताके स्वयंवर में लिखाहै किजबस्वयंवरमेंसीताजी आईंतब
नर और नारी सब मोहित होगये सीताजीकोदेखके यहबातभूलो
पर उसकी निरुद्धहै और अपने ग्रंथमें उनने लिखाहै किअठारहपद्म
सूर्यवानरके सोमकर बानरन कोमकाशरीरलिखाहै तथा कुंभक-
र्णकीभोजनाहार कोसकोशकी लिखीहै १६ कोसकीनाककी नाक
६४कोस काहाथ लक्ष्या ६६कोसकाबड़ा ऐसा भोकुंभकर्णहोताजो-
लंकामें एकभी नहींसमाता और अठारह पद्मवानरपृथिवीभरमें भ
ही समाते तथा बंदरमनुष्यकी भाषा नहीं बोलसकते फिरहनुमानादि-
कवानर कैसे बोलसकेंगे रामकाकरना औरविवाहपशुओंमेंकभी
नहींहोसकता ऐसीर बहुत तुलसी कृतरामायणमें झूठबातलि-
खीहै सोइसके कहनेकाक्या प्रमाण फिर पाषाणके ऊपररामना-
मलिखदिये इससे पाषाण समुद्रके ऊपर तरतेहैं यह बातइसकी मिथ्या-
है क्योंकि ऐसाहोता तो इनलोगनभी पाषाणके ऊपररामनाम लि-
खके इसकालमें तारदेखने सोनहीं देखनेमें आता इससे झूठबातको
मानना नचाहिये वैसीयह बातझूठहै उसकोनैसी रामेश्वरकीलिखी
भी झूठहै किसीदक्षिणकेधनाढ्यनेमंदिरबनायाहै उसकानामरामे-
श्वर उसको सा॰४००० बरसभयेहोंगे और एकदक्षिणमेंकालिया
कंसकामंदिरहै इसविषयमें लोगोंने ऐसी बात बनाईहै किवहम्-

ती हुक्का पीती है सो झूठ है क्योंकि वह भी एक मूर्त्ति हुक्का पीने की सी भई है इ-
सके लोगों ने मूर्त्ति के मुख में छिद्र बना रक्खा है उस छिद्र में नाली लगा
के और मनुष्य छिपके धूआं खींचता है फिर वे पुजारी कहते हैं देखो सा-
क्षात् मूर्त्ति हुक्का पीती है ऐसा बहका के धन हर लेते हैं ऐसे ही जयपुर-
के राज्य में एक जीन देवी पर्वत है वह मद्य पीती है सो भी बात झूठ है
क्योंकि वह मूर्त्ति पोली बना रक्खी है उसके मुख में छिद्र है मद्य के पात्र-
को मुख से लगा के उलका देते हैं वह मद्य अन्य स्थान में चला जाता है
फिर उसी को ले के बेचते हैं तथा द्वारिका के विषय में लोग कहते हैं कि
द्वारिका सोने की बनी है उसमें एक पीपा भक्त के समुद्र में डूब के चला गया-
था उनको श्रीकृष्णजी मिले उनसे बातचीत भई पीपा ने कहा कि मैं
तो आपके पास रहूंगा तब श्रीकृष्ण ने कहा कि मृत्यु लोक का आदमी य-
हां नहीं रह सक्ता सो तुम हमारा शंख चक्र गदा पद्म के चिन्ह द्वारका में
लेजाओ और सबको कहदेओ कि इन चिन्हों का दाग तप्त करके लोग-
गवा लेंगे सो वैकुण्ठ में चले आवेंगे ऐसे ही चक्रांकित लोग भी कहते हैं
सो सब मिथ्या है क्योंकि जो तप्त शरीर को जलाने से कोई वैकुण्ठ में न-
हीं जा सक्ता है और जो जा सक्ता तो मरे भये शरीर को भस्म कर देते हैं
इससे वैकुण्ठ को अवश्य जायगा फिर जीते शरीर को क्यों जलाना यह
बात केवल मिथ्या है पूर्व ज्वालामुखी जी का मंदिर है उसमें अग्नि
निकलता रहता है उस को कहते हैं कि साक्षात् भगवती है इनसे
पूछना चाहिये कि तुम्हारे घर में जब रसोई करते हैं तब चूल्हे में भी
ज्वाला निकलती रहती है जब चूल्हे में लकड़ी जलाने से निकल-
ती है और यहां आपसे आपही निकलती रहती है उत्तर ऐसे ही
अनेक स्थानों में अग्नि निकलती है सो पृथिवी में अथवा पर्वत में गन्ध-
कादि धातु हैं उनमें किसी प्रकार से अग्नि उत्पन्न होके लग जाता है सो
पृथिवी को फोड़के ऊपर निकल आता है जबलग गन्धकादिक धातु
रहती है तबलग अग्नि जलताही रहता है यही पृथिवी के हिलने का कारण
भी है क्योंकि जब भीतर से बाहर वेग से अग्नि निकलता है तभी पृथिवी

में कंपहोजाताहै सोवहपालकेपलपन्नुष्योंनेअपनीआजीविकाकेवा-
स्ते मिथ्याबनालिई है एकऐसाऐसाकदनेकेदारऔरबद्रीनारायणमें
होरवानमकिद्धहैं इसविषयमेंलोगऐसाकहतेहैं कि बद्रीनारायणकी
मूर्तिपारसपत्थरकीहै और शङ्कराचार्यने स्थापितकिई है सोयहबा-
तमिथ्याहै क्योंकि जोवहपारसपत्थरकी रहती तो पुजारीलोगद-
रिद्रक्योंरहते और यहबातभूठमालूम होती है किपारसपत्थरसेलो-
हाछुआनेसे सोनाबनजाताहै इसकोकिसीनेदेखाहोइ नहीं सुनतेसु-
नतेचलेआतेहैं इसबातका क्याप्रमाण और शङ्कराचार्यतो मूर्ति-
योंकेतोडनेवालेथे वेस्थापनक्योंकरते केदारकेविषयमें ऐसी बात-
लोगकहतेहैं किजबपाण्डवलोग हिमालयमें गलनेको गये तब महा-
देवकादर्शनकियाचाहतेथे सोमहादेवने दर्शन नहींदिया क्योंकि-
वेगोत्रनाशकरनेकेदुष्ट वके पुरुषोंको मारकेयुद्धमेंआयेथे सो महादे-
वपार्वती और सबउनकेगणोंने भैंसेकाऔरऔरमहिषियोंकारूपधरलिया सो-
नारदजीनेंकहाकिमहादेवादिकोंनेभैंसाका रूपधारणकर लिया है
तबकेसबभैंसोंके वास्ते इसकीयह परीक्षाहैकिमहादेवकिसीकीटां-
गकेनीचेसे नहींनिकलतेसोभीमसेनीनकोटाकेछोरे होपडेगयेथे उनके
ऊपरकोटांगरखदिई थककर के ऊपरफिर सबभैंसेतोउनकेनीचे से-
निकलगये परन्तुएकभैंसानहीं निकला तबभीमनेनिश्चयकर लिया
कि यही भैंसाहै उसकोपकडनेकोभीमदौडातबवहभैंसापृथिवीमेंघु-
सहोगया उसकासिरनेपालमें निकला जिसका पशुपतिनाथ रक्खा
है तथाउसकापनकाशरीरमेंनिकला उसकानाम अमरनाथ रक्खा
और चूतडवहींनिकला जिसकानामकेदारहै और अंगजहां निक
ले उसका नामतुंगनाथादिकरक्खाहैऐसेपंचकेदार लोगोंनेरक्खलि
येहैं इसमेंविचारनाचाहिये कि नेपालमें भैंसेकाशिरनाकिकान कुछ
नहींदेखपडताहै तथाकाश्मीरमेंकुछभीनहीं देख पडते ऐसे अन्यत्र
कहींभीनहींभैं सेका चिन्हदेखपडताकिन्तु सर्वत्र पाषाणही देखप-
डताहै परन्तुऐसी २ मिथ्या बातेंभी मनुष्यलोगमानलेतेहैं यहके-

चलमिथ्या और मूर्खताकागुण है क्योंकिजोइतना लंबा चौड़ा होतातो उसकाघर कितना लंबाचौड़ाहोता और नगरमें बाजा-रमें कैसे चलसकताथा और पाण्डवादिक उनकोजो कैसे उनकेऊपरम-हादेवको क्याडर पड़ाथा कि भैंसा होजाय फिरइतना लंबाचौड़ा क्योंबनजाता औरक्याअपराध पाण्डव महादेवने कियाथा कि वे-उनकेडरसे बनजाय इससेयहबातसब मिथ्याहै एक कमाख्यास्थानर-चरक्खाहै उसमेंएक कुंड बनारक्खाहै उसकानाम योनिरक्खा है और वहरजस्वला होतीहै यहसबबात उनपुजारियोंने आजीवि-का केहेतुमिथ्याबनलिईहै एकबौद्धगयास्थानहै उसमेंबौद्धकीमूर्ति बनारक्खीहै उसकी पूजा और दर्शन आजतक करतेहैं वह मूर्ति जिनजैनोंकीहीहै सोऐसा जानलाचाहियेकि जितनापाषाण पूज-नहै औरजो जड़पदार्थोंकापूजन सोसबजैनोंकाहीहै एकगया स्था-नबनारक्खाहै उसमेंबड़ासंसारका धनलूटाजाताहै गयाकेपण्डा-ओंकामुफ्तकाबहुतधन मिलताहै सोवेश्यागमन मद्यपान औरमां-साहारमें होजाताहै केवल प्रमादमें अच्छेकाममें कुछनहीं फिर य-जमानलोग जानतेहैं किगयाके श्राद्धमेंही पितरोंकाउद्धार होजाता है सोपिंडोंसे उद्धारतो किसीकाहोतानहीं परन्तु नरक होनेका संभव होताहै फिरइस विषयमें ऐसा कहतेहैं किरामचन्द्रने गयामें श्राद्धकियाथा सोराजादशरथजी उनकेपिता उननेहाथनिकालके लेगयामेंपिण्डले लियाथा उसदिनसेगयाका महात्म्य बढ़ाहै औ-रवहस्थानगयासुरकाथासोयहबातसबमिथ्याहै क्योंकि वेलोगआ-जकालभी हाथ निकालके क्योंनहीपिण्डलेलेतेकिसीसमय कोई धू-र्त फल्गु नदीमें भूमिमेंगुहा बनाके भीतर बैठरहा होगा और-उनोंनेसंकेत बनारक्खाथा ऐसेही उसनेभूमिमेंसे हाथ निकालके-पिण्ड लेलियाहोगा फिर ऐसीबात प्रसिद्धकरदिई किसाक्षात् पित-लोग हाथनिकालके पिण्डलेलेतेहैं उसस्थानका पंडितोंने महा-त्म्यबनालिया फिरप्रसिद्धहोगई औरसब माननेलगेसोगया ना-

अमुकस्थानमें श्राद्धकरें और अपने पुत्रपौत्रतथाराज्यजिसदेशमें-
अपने रहना होय उनकानाम गयाकेपंडोंकेनिकटपुस्तकमें लिखाहै इस-
कारणसे आपगयामें जानानहीं फिरयह पाखण्ड रचकियाकाशि-
राजने महाभारतमेंलिखाहैकि इसनेनगर बसायाथा इसी उसका
नामकाशीपड़ा और वरुणा तथा असीनदीके बीचमें होनेसेवा-
राणसीनाम रक्खागया इसकाऐसा झूंठ माहात्म्यबनालियाहै-
कि साक्षात महादेव की पुरीहै और महादेवने मुक्तिका सदाव्रत
बांधरक्खाहै तथाऊखरभूमिहै इसमेंपापपुण्य लगताहीनहींसबदेव-
ताईश्वर कलासेकाशीमें रहतेहैं औरएककलासे अपनेस्थान
मेंरहतेहैं एकमणिकर्णिकाकुंड रचरक्खाहैकि महादेवपार्वती के कान
कामणिगिरपड़ाथा। तथाकालभैरव यहांका कोतवालहै सो सबको
दण्डदेताहै पापपुण्यकीव्यवस्थासे इसकाशीका महाप्रलयमेंभीध्व-
सनहींहोगा क्योंकिकालभैरव त्रिशूलकेऊपरकाशीको रखतेहैं
और भूचालमें इसकीभीनहीं पंचकोशीकेबीचमें जोकोई कीटपतंग
तकभी मरेतो उसको महादेव मुक्ति देदेतेहैं अन्नपूर्णा सबको अन्न
देतीहै अन्नदाही औरदेवताओंके करनेसे सबपापछूटजातेहैंइत्या-
दिक मिथ्यारजालरचकेकाशीरहस्य औरकाशीखण्डादिग्रंथब-
नालियेहैं और कहतेहैंकि बारहज्योतिर्लिंगहोतेहैंउनमेंसे एक यह
विश्वनाथहै उनसे पूछना चाहियेकि ज्योतिर्लिंग होतोमंदिर में
कभीअन्धकारनहोता और वह पाषाण मुक्तिवाबन्धकभी नहींकर
सक्ताक्योंकि उसको कारीगरोंने मंदिरकेबीच गढ़में छिपाके बं-
धकररक्खाहै फिरअपनेही बंधनेसे नहींछूटसक्ता फिरअन्यकोमु-
क्तिक्याकरसकेगा सोयह केवल पण्डितोंने बातबनालीहैकिका-
शीमेंमरनेसे मुक्तिहोतीहै क्योंकि इसबातको सुनके सबलोगकाशी
में मरनेकेहेतु आवेंगे इससे हमारी आजीविका बहुतअच्छा चलेगी
इत्यादिऐसी २ बातरचाकरतेहैं प्रयागमें गंगायमुना के संगममें स-
रस्वतीकीझूंठ सरस्वती मानरक्खीहै कि तीसरीसरस्वती भी यहांहै

औरइसस्थान मेंमरनेसे सिद्धहोजाताहै सोऐसा अनुमानकिया जाताहैकियहांके कोईनीचाशायइसनेअपने कुलकी आजीविका कर लिईहै औरसंगमस्नानकरनेसे मुक्तिहोजाती है यहकेवल आजी- विकाकेवास्ते झूठरचाहैऔर झूठपुस्तक लोगोंनेबनालिएहैं कि प्रयागतीर्थराजहै ऐसेहीअयोध्यामें हनुमानजीको रामजीगद्दी दे- गये हैं औरअयोध्यामें निवाससेभीमुक्तिहोतीहै यहभी उनकीबात मिथ्याहीहैतथा मथुराऔरवृन्दावनमें यहीरमिथ्या बातरचा लि- ई हैं कियमद्वितीयाको स्नानसेयमके बंधनसेजीव छूटजाताहै क्यों- कियमुनायमराजकी बहिनहैऔरवृन्दावनकेविषयमें मुक्तिभी हो- तीहै किऐसीमुक्तिकौनसेहोयगी मुक्तियुक्तिकेवास्ते वृन्दावनकी गलि योंमेंआहुईनोहै औरमंदिरोंमेंनानाप्रकारके भगदों में व्यभिचा- रादिककरते हैं तथा अनेकप्रकार के जालोंसेलोगोंकाधन हरणक- रलेते हैं एकचक्राङ्कितोंने मंदिरबनायाहै उनके दरवाजोंका ना- म बैकुण्ठद्वाररक्खाहै औरसम्वत् में ... दरखुलातेहैं ... किसको पहली जो मनुष्य जिसप्रकार का ... जितने शिष्यहैंउनकीपंक्ति ... इनकेहाथ के बीचमें थोड़ासा जल ए- दर्शनकोदेते हैं औरप्रशंसा करते हैं इनमेंसेकोई उससे हाथ धो- डालताहै औरकोईउससे मोंछलेताहै औरठाकुरजीको गुलाब दे- ते हैं इनमेंभीबड़ेर धनाढ्यगनेमेंआते हैं औरएकरातयमुनाके घर ठाकुरजी जाते हैं फिर उनकोवापिस कराते हैं और यमुना जी में डुबाकेस्नानकराते हैं यहकेवलउनकामिथ्याप्रपंच है पर धन हरने केवास्ते औरमूर्खोंको बहकानेकेवास्ते फिरउसमंदिरमें बहुतलो- गोंकोभोजनकरादिक तरहकेदानदेदेते हैं ऐसेर मिथ्या छलप्रपंच से अपनीआजीविकाकरते हैं इनमेंकुछसत्यता चमत्कारनहींतथा गं- गादिकतीर्थोंके विषयमें सबपापकाछूटना वैकुण्ठकाजाना मुक्तिका होनाऔरअक्षय तथा साक्षात् भगवती का मानना यह सब मि-

(उत्तर) जो कि हिमवतः प्रभवति गंगा यह व्याकरण महाभाष्य का व-
चन है इसका यह अभिप्राय है कि हिमालय से गंगा उत्पन्न होती है
तथा यमुनादिक नदियां बहुत हिमालय से उत्पन्न भई हैं और वि-
न्ध्याचल से तथा पहाड़ों से भी बहुत नदियां उत्पन्न होती हैं केवल गंगा
सत्य है उस जल में उत्तमत्व और नीचता भूमि के संयोग गुण से
है इससे अधिक कुछ नहीं सो जल होता है वह जड़ क्या पाप को छोड़ा स-
केगा और मुक्ति को भी दे सकेगा कुछ भी नहीं जैसा जिस जल में गुण है
और दुष्टता निर्मलता वैसा ही उसमें होता है इससे अधिक गुण
नहीं वे ज्वरादिक गुण भूमि के संयोग से है अन्यथा नहीं गंग-
स्य दर्शनान्मुक्तिर्न जाने स्नाने किं फलम् इत्यादिक नारदादिकों के
नाम से मिथ्या श्लोक लोगों ने बना लिये हैं और दर्शन से मुक्ति हो-
ती तो सब संसार की ही मुक्ति हो जाती और मुक्ति में कोई अधिक फ-
ल नहीं कि संसार से स्नान में कुछ अधिक होवै यह केवल मिथ्या क-
ल्पना उनकी है कि काश्यां मरणान्मुक्तिः गंगेश्वरदर्शनान्मुक्तिः सह-
स्रमदर्शनान्मुक्तिः हरिश्वरणान्मुक्तिः ॥ इत्यादिक मिथ्या श्रुति
लोगों ने बना लई हैं किन्तु ऋतेज्ञानान्न मुक्तिः यह सत्य श्रुति है कि
बिना ज्ञान से किसी की मुक्ति नहीं होती क्योंकि सत्यासत्य विवेक के बिना
आत्मा के दोषों का ज्ञान नहीं होता और ज्ञान के बिना मिथ्या व्यवहार
और मिथ्या पदार्थों से कभी नहीं छूटता इससे मुक्ति के वास्ते सत्या-
सत्य का विवेक परमेश्वर की भक्ति धर्म का अनुष्ठान अधर्म का त्याग स-
त्संग ब्रह्मचर्य विद्या जितेन्द्रियतादिक शुभ गुण इनसे अत्यन्त पुरुषार्थ से मुक्ति
हो सकती है अन्यथा नहीं और जिसको इस बात का निश्चय करना होवे
वह इस बात को करे कि जितने तीर्थों के पुरोहित और मंदिर स्थान के
पुरोहित उनके प्राचीन पुस्तकों के देखने से सत्य २ निश्चय होता है
क्योंकि वह वर्त्तमान देश गांव जाति दिन मास और संवत्सर इनका
यथावत् पुस्तक में वही लिखते जाते हैं उसमें लिख रखते हैं उनके देखने से लो-
क दिन मास और संवत्सर का निश्चय होता है कि इस तीर्थ का इस सं-

दिरकामकारंभ इससंवत्सरमेंभयाहै क्योंकिजबजिसकाआरंभहोता है तबउसकेपहिले और पुजारी तथापुरोहित उसीसमयबनजाते हैं देखनाचाहिये कि विंध्याचलमूर्त्ति के विषयमें लोगकहतेहैंकिएक दिनमें देवीतीनरूप धारण करतीहै अर्थात्प्रातःकालमें कन्या मध्याह्नमें जवान और संध्याकालमेंबुड्ढीबनजातीहैइनसेपूछनाचाहियेकि रातमें उसमूर्तिकी कौन अवस्थाहोतीहै सोकेवल पुजारी लोगोंकी धूर्त्तताहै क्योंकिजैसाबस्त्रआभूषणधारणकरैंवैसाहीस्वरूपदेखपड़ताहै और कहतेहैं किइसमंदिर में मक्खीनहीं होतीपरंतु असंख्यातमक्खी होती हैं सोकेवलभक्तजनकहतेहैंआश्चर्यकीबातें तथा बैजनाथके विषयमेंकहतेहैंकिकैलाससेरावणलेआयाहैयहसब मिथ्याकल्पना लोगोंकीहै क्योंकिआजतक नयेर मंदिरबनेर मूर्त्ति योंके नाम धरतेहैंऔरसंप्रदायी लोगोंनेअपनेरसंप्रदायके पुष्टिके वास्ते बनालियेहैं उनकानाम एकदिनपुराणऔरऐसा भी येकहतेहैं कि अष्टादशपुराणानांकर्त्तासत्यवतीसुतः इसकायहअभिप्रायहै कि अठारह पुराणोंकेकर्त्ताव्यासजीहैंजोकिसत्यवतीके पुत्रहैं यहबात मिथ्याहै क्योंकि व्यासजीबड़ेपंडितथेऔरसत्यवादी सत्पुरुषथेविद्वान् धर्मात्मा थे उनकाकथनवेदादिशास्त्रप्रमाणयुक्त हीहोताहै क्योंकि उनके बनाये शारीरक सूत्रहै औरमहाभारतमें जोर श्लोकहै वेभीयथावत् सत्यहीहैंपरंतुमहाभारतमेंअन्यभीश्लोक हैं अथवा सबअध्यायजोकेबनाये हैंउसरकईभारतश्लोकसंप्रदायीलोगोंने महाभारत में मिलादियेहैं अपनेर संप्रदायकेप्रमाण केवास्ते क्योंकि शांतिपर्वमेंविष्णुकी बड़ाई लिखीहैऔर सबसेन्यूनताऔर उसीमें सहस्रनाम लिखेहैं इससे विरुद्ध उसीपर्वमें शिवसहस्रनामभीलिखेहैं वहांविष्णु कोतुच्छकरदियाहै तथाजहां विष्णु की बड़ाईहै वहांमहादेवको तुच्छकर दियाहै औरजहांगणेशऔरकार्तिकस्वामी कीस्तुतिलिखीहै वहां अन्यसबको तुच्छबनादियेहैं तथा भीष्मपर्व और विराटपर्वमें महादेवीकी कथालिखीहैयहांअन्यसब

तुच्छगिने हैं एक भीम और धृतराष्ट्र की कथा लिखी है कि धृतराष्ट्र के श-
रीर में १०००० हाथी का बल था तथा भीम के शरीर में दश हजार हा-
थी का बल था और एक गरुड़ पक्षी का बल ऐसा वर्णन किया कि जिस-
का भोजन नहीं हो सक्ता उस गरुड़ का बल विष्णु के आगे तुच्छ गिना-
तथा उन विष्णु का पक्ष और भद्र के आगे तुच्छ कर दिया है और भद्र का
रुद्र के आगे और रुद्र का विष्णु के विष्णु का वीरभद्र के आगे ऐसी प-
कार मिथ्या कथा व्यासजी की बनाई महाभारत में नहीं बन सक्ती
और भी ऐसी २ कथा लिखी हैं कि भीम को दुर्योधन ने विषदान दिया-
जब वह मूर्छित हो गया तब उसको बांध के गंगाजी में गिरा दिया सो व-
ह पाताल को चला गया वहां सर्पों ने बहुत काटा फिर जब उसका वि-
ष उतर गया तब सर्पों को मारने लगा उससे सर्प भाग गये वासुकी राजा
से जाके फिर कहा कि एक मनुष्य का लड़का आया है सो बड़ा पराक्र-
मी है तब वासुकी भीम के पास गया और पूछा कि तू कौन है कहां से
आया है तब भीमने कहा कि मैं पाण्डु का पुत्र हूं और युधिष्ठिर का भाई-
तब तो वासुकी बड़े प्रसन्न भये और भीम से कहा कि जितना तुझ से इ-
न कुंडों में से जल पीया जाय उतना पी क्योंकि ये जल कुंड अमृत से भ-
रे हैं ऐसा सुन के वह और उन कुंडों का सब जल पी के सो गया और आ-
ठ हजार हाथी का बल उसने पाया इसमें विचारना चाहिये कि विष देने से वह
भीम मर क्यों न गया और जल में एक पहर भर नहीं जी सक्ता और पा-
ताल का मार्ग वहां कहां हो सक्ता है और जो हो सकता तो गंगा का जल
सब पाताल में चला जाता ऐसी २ मिथ्या कथा व्यासजी की भी
नहीं हो सक्ती और जितनी सत्य कथा हैं सो सब महाभारत में व्यास
जी की ही कही हैं और जितने पुराण हैं उनमें व्यासजी का किया एक
श्लोक भी नहीं क्योंकि शिव पुराणादिक सब शैव लोगों के बनाये हैं
उनमें केवल शिव को ही ईश्वर वर्णन किया है और नारायणादिक
शिव के दास हैं फिर रुद्राक्ष भस्म नर्मदा का लिंग और मृत्तिका का
लिंग बनाके पूजने बिना किसी की मुक्ति नहीं होती इत्यादि केवल शै-

थों की मिथ्या कल्पना है और इनबातों से कभीनहीं मुक्तिहोती
बिनाधर्मानुष्ठान विद्याऔर ज्ञान से फिर वही शिव जिसको कि
ईश्वर वर्णन कियाथा पार्वती के सहने में सन्देह होगा फिर ऐसी
कथा भी दुष्टों की कभीनहींहोती किन्तुयहकेवल शैवसंप्रदाय-
वालोंकीबनाई है तथाशाक्तलोगोंने देवीभागवत तथा मार्कण्डेय
पुराणादिकबनाएहैं उनमेंभीएककथाझूठलिखी है किश्रीपूर्वए-
कभगवती पराब्रह्मरूपथी उसनेसंसार रचनेकीइच्छाकिईतबउस-
ने ब्रह्माकोउत्पन्नकिया औरकहाकितू मेरेसेभोगकरतबब्रह्माने क-
हाकितू मेरीमाताहै मुझसेयह अधर्म नहीं करसकता तबकोपसेभ-
गवतीनेब्रह्माको भस्मकरदिया और दूसरापुत्र उत्पन्नकिया जि-
सकानामविष्णुहै उससेभीऐसाहीकहा फिरविष्णुनेभी यथापूर्वक-
ही कियाइसकोभीभस्मकरदिया फिरतीसरापुत्र उत्पन्न कि-
या जिसकानाममहादेवहै उससेभीकहाकितू मुझसे समागमकर तब
महादेवनेकहा कितूमेरीमाता है मेरे से ऐसाआचरणनहीं कर स-
कता परन्तु अगरअपना एकऔरदेहधारकर उससेमैंसमागमकरूंगा
फिरउसने वैसाकिया औरदोनों का विवाहभी किया फिर महादेव
नेदेखाकियेदोभस्मपड़ेहैं तबदेवीसेकहाकितेरेभाई है इनदो-
नोंनेमेरी आज्ञा नहीं मानी इससे इनको मैंने भस्मकर दिया फिर
महादेवनेकहा किमेरेभाई है इनकोजिलादेओ तबभगवतीने जि-
ला दिये औरफिरकहाकिओर दोकन्या उत्पन्नकरो कि मेरे भाई
काभीविवाह होजाय सबइनतीनोंकी उत्पत्तिकिई विवाह होगया एकका
नामउमा दूसरीका नाम लक्ष्मी तीसरी सावित्री इनके विषय में
ब्रह्मानारायणकी नाभिसेउत्पन्नभया कहीं लिखा कि ब्रह्मासेरुद्र
औरनारायण उत्पन्नभये कहींलिखाकि उमादक्षकी कन्या कहीं
लिखाकिहिमालय कीकन्याहै लक्ष्मी समुद्रकी कन्या है कहीं लिखा
किवरुणकीकन्या कहींलिखाकिसावित्री सूर्यकीकन्याहै कहींलि-
खाकिब्रह्मासे जगतउत्पन्नभया कहींनारायणसे कहीं महादेव से-

कहींगणेशारे कहींस्कंदसेऐसीझूठर कथापुराणोंमेंबना रक्खी है
प्रश्न इसमेंविरोधनहीं क्योंकि ऐसाकथाकल्पकल्पान्तरकीहै उत्त-
र यहबातमिथ्या है क्योंकि सूर्याचन्द्रमसौधातायथापूर्वमकल्पयत्
जैसीसूर्यादिकसृष्टिपूर्वकल्पमेंभईथी वैसी सबकल्पमें होतीहै ऐसा
जोकहोगेतोकिसीकल्पमें पगसेभीखातेहोंगे औरमुखसेचलते हों-
गेनेत्रसेबोलतेहोंगे जीभसेनबोलतेहोंगे इत्यादिक सब प्रश्न लेना
लोगोंनेमार्कण्डेयपुराणान्तर्गत जो दुर्गास्तोत्रहै जिसकानामरक्खा
है सप्तशती उसमेंऐसीर झूठकथा लिखी है किरुधिरौघपरिप्लुता
सद्यस्तत्रभवन्त्यसुः रक्तबीज और देवीकेयुद्धमें रुधिरकीबड़ीर न-
दियांचली इनसेपूछना चाहिये कि रुधिरवायुके स्पर्शसेजम जा-
ताहै उसकीनदीकभीनहींचलसकती रक्तबीजइनसेयह किसब जग-
त् पूर्णहोगया उनकेशरीरसे उनसेपूछनाचाहिये कि उत्तनगर गां-
व पर्वतभगभी भगवतीकासिंह कहां रहेथे यस्याःप्रभावमतुलंभ-
गवाननन्तो ब्रह्माहरश्चनहिवक्तुमलंबलंच। सा चण्डिकाखिलजगत्प-
रिपालनाय नाशायचाशुभभयस्यमतिंकरोतु इसश्लोकमें ब्रह्मावि-
ष्णुऔरमहादेवको तोमूर्खबनाया क्योंकि चण्डिकाकाअतुलप्रभाव
और बलकोनेनहीं जानते हैं अर्थात् मूर्ख ही भये यहिऐसेइसप्र
तु में चण्डिकाशब्द सिद्धहोताहै औरजोयहस्तवहै यहत्वमेककारणरू-
पहीहै विष्णुःशरीरग्रहणमहमीशानएवच कारितास्तेयतोऽत-
स्त्वांकः स्तोतुंशक्तिमान्भवेत् ब्रह्माविष्णु औरमहादेवमैंनेईश-
रीधारणभीकिये हैं फिरतेरीस्तुतिकरनेको समर्थकौन हो स-
कताहै ऐसाकहके त्वंस्वाहा त्वंस्वधा त्वंहि इत्यादिक स्तुतिकरने
सेलगा यहबड़ीभारी प्रमादकीबातहै किजिसका निषेधकरै उसी
कोआपसेकरनेलगजाय सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः
मनुष्योमत्प्रसादेन भविष्यतिनसंशयःपूछनाचाहिये उस भगवती
कीभक्तिहैकिमेरेइसस्तोत्रका पाठऔरमेरी भक्ति करेगा अर्था-
त् सबदुःखोंसेछूटजायगा औरधनधान्यपुत्रोंसेयुक्तहोताहै सो यह

महात्मोंने ज्ञान कहा है कि इस पाठ करने और करानेवाले अनेक दुःखों से पीड़ित देखने में आते हैं धन धान्य पुत्रों की इच्छा भी अत्यन्त होती है और मिलता कुछ नहीं यहां तक कि पेट भी नहीं भरता ऐसी २ मिथ्या कथाओं में विद्याहीन पुरुषों को विश्वास होजाता है यह बड़ा एक आश्चर्य है ऐसे ही विष्णुपुराण ब्रह्मवैवर्त और पद्मपुराणादिकों में अनेक २ झूंठ कथा लिखी हैं तथा भागवत में बहुत मिथ्या कथा लिखी हैं कि शुकाचार्य व्यासजी के पुत्र परीक्षित के जन्म से सौ १०० बरस पहिले मर गया था परीक्षित का जन्म पीछे भया है सो मोक्षधर्म में महाभारत के लिखा है फिर जो मनुष्य कहते हैं कि शुकाचार्य ने सप्ताह सुनाया था सो केवल मिथ्या बात है क्योंकि उस समय शुकाचार्य का शरीर ही नहीं था और शृङ्गी का शाप था कि यमलोक को परीक्षित जाय फिर भागवत में लिखा कि परीक्षित परमधाम को गया यह उनकी बात पूर्वापर विरुद्ध और मिथ्या है और चतुःश्लोकी सब भागवत का मूल मानते हैं सो नारायण ने ब्रह्मा से ब्रह्मा ने नारद से नारद ने व्यासजी से व्यासजी ने शुक से शुक ने परीक्षित से फिर भागवत अठारह श्लोक निकस सो यह बड़ा आश्चर्य रच लिया है क्योंकि ज्ञानं परमगुह्यं मे यद्विज्ञानसमन्वितम्। सरहस्यं तदङ्गं च गृहाण गदितं मया॥ इत्यादि चार श्लोक बना लिये हैं क्योंकि परम और गुह्य दोनों ज्ञान के विशेषण होने से यही विज्ञान कहा जाता है फिर यद्विज्ञानसमन्वित यह जो उसका कहना सो मिथ्या होजाता है और गुह्य विशेषण से रहस्य मिथ्या होता है क्योंकि रहस्य नाम एकान्त और गुह्य का ही है परमज्ञान के कहने से तदङ्ग अर्थात् मुक्ति का अंग है यह उसका कहना मिथ्या ही है क्योंकि परमज्ञान जो होता है सो मुक्ति का अंग ही होता है जैसा यह श्लोक मिथ्या है वैसा सब भागवत भी मिथ्या है क्योंकि जय विजय की कथा भागवत में लिखी है सनकादिक चार वैकुण्ठ को गये थे उस समय नारायण लक्ष्मीजी के पास थे जय और विजय दोनों वैकुण्ठ के द्वारपालों ने उनको रोक दिया तब उनको क्रोध भया और शाप-

ऋषिजनको दियाकि तुमजाओभूमिमेंगिरपड़ोतबतोउनको बड़ाभय भया और उनको प्रार्थनाकिई कि महाराज मेरे शापका उद्धारकैसे होगा तब सनकादिकोंने कहाकि जो तुमप्रीतिसे नारायणकी भक्तिकरोगेतोसातवें जन्ममुमारा उद्धारहोगा और जोवैरसेभक्तिकरोगे तो तीसरे जन्ममुमारा उद्धारहोगा इसमें विचारना चाहिये किसनकादिकसिद्धथे वेवायुवत् आकाशमार्गसे जहांचाहैवहांजातेथे उनकाविरोधकैसे होसक्ताहै तथाजयविजयनेबालकरूपदेखा-रौ केरस्योंरोका क्योंकिवेद्वारपालदोनों मूर्खथेऔर वेसाज्ञातक्रोधान्धथे उनकोक्रोध क्योंहोता और कोई किसीको भांतिसे रोका करै और दूसरा उसको दण्डलेमारे उनयेतोकिसके ऊपरवहभसहोना जो किसेन्यायकर्ता हैं और जोदण्डामारताहैवहसबके ऊपरकर्मीकिसीको प्रसन्नतानहीहोसक्तीफिरवे हिरण्याक्षऔर हिरण्यकश्यपहोनोंभये एकको वराहनेमारा और दूसरेको नृसिंहनेउसकापुत्रप्रह्लादउसकोविपदसेबहुत. ऐसे कथाभागवतमेंलिखीहैकिउसकोकूएमेंगिराया और पर्वतसेगिरायापरन्तुवहनमराफिर लोहेकाखंभअग्निसेतपाया और प्रह्लादसेकहा किनूंइसको पकड़ नहीं तोतेराशिरकाटडारूंगा फिर प्रह्लादखंभके सामनेचला और चित्तमें डरा भी कुछ कि मैंजलजाऊंगा सोनारायणने चिवटीउसकेऊपरचलाई उनकोदेखके प्रह्लादनिडरहोके खंभेको पकड़ा तब खंभाफटगया और बीचमेंसेनृसिंह निकलेसो उसके पिताकोपकड़केपेटचीरडाला और नृसिंहकोबड़ा क्रोधभयासोब्रह्मामहादेवकश्यपतथाइन्द्रादिकदेवोंसे नृसिंहकेक्रोधकी शान्तिनहीं भई फिरप्रह्लादसे सबने कहाकि तूंही शान्तिकर सो प्रह्लाद नृसिंहकेपासगया और नृसिंहशान्तहोगया सोप्रह्लादको भीअपनेचाटनेलगा और कहाकि वरमांग तब प्रह्लादनेकहा कि मेरेपिता का मोक्षहोय तब नृसिंहजीने कि मेरेवरसे २१ कुलों का मोक्ष होगयाहै पितादिकोंकाइसमेंपूछना चाहिये कि नारायणने शूकरऔरसिंहकाशरीरक्योंधारणकि

था और कैसे धारण करसके हिरण्याक्ष पृथिवीको चटाईकीनाई ध
रके सिराने धरके सोगया सोकिसके ऊपर सोया और पृथिवी तो गोल है
सो किसके ऊपर खड़ा होके और पृथिवीको कोई उठाभी सकता है
और कोई नारायणके भक्तको पर्वतसे गिरावे आकूपमें डाल देवे तब म
रजायगा अथवा हाथ पांव टूट जायगा फेर कोई नहीं करेगा खंभे में
से नृसिंहका निकलना यह बात बड़ी मिथ्या है और नृसिंह जो नार-
यणका अवतार और सर्वज्ञ होता तो पहिली बात भी मिथ्या भूल आगे
जो सनकादिकोंने शाप दिया तीन जन्ममें सद्गति होती थी बतौर पहिलेही
जन्ममें सद्गति क्यों देदिई और प्रथमही उनका जन्मना उनकी २१वीं
हीनहीं बन सकी और लोकदश मरीचि ब्रह्मातक विचारे तो भी था-
व्योंही होसकी है २१ तक भी नहीं फिर उसने लिखा कि हिरण्या-
क्ष हिरण्यकशिपु रावण कुम्भकर्ण शिशुपाल और दन्तवक्र होते भ
ये फिर सद्गति किनको भई यह कैसी मिथ्या कथा है अजामीलकी कथा
में लिखा है कि अपने पुत्रको मरणसमयमें बोलाया उसको भी नार-
यण आये सो नारायणने इतना भी नहीं जाना कि मैंने तो पुकार-
ता है या अपने पुत्रको और उसे बहकाया था परन्तु इस प्रकार नारायण
के नाम से सब पाप छुटजाते हैं यह बड़ी भारी अन्याय किया-
एकरे और दण्ड न होगा ऐसी कथा सुनके लोगोंको अशुद्धि होजाती
है क्योंकि इस प्रकार नारायणके नामसे सब पाप छुटजाते हैं फिर कोई
पाप करनेसे भय क्यों न करेगा व्यासजीने सब वेद वेदांग विद्याओं
को पढ़लिया और परमेश्वर पर्यन्त यथावत् पदार्थोंका साक्षात्कार-
किया था तथा अणिमादिक सिद्धि भी भई थी फिर भी तृप्त नहीं के
तटमें एक हृदयके नीचे उदास होके जैसे शोकातुर होवे वैसे बैठे थे उ-
स समयमें वहां नारद आये और व्यासजीसे पूछा कि आप ऐसी उप-
दशामें क्यों बैठे हैं तब व्यासजी बोले कि मैंने सब विद्या पढ़ी और उप-
कारका ज्ञानभी मुझको भया परन्तु मेरे चित्तकी शान्ति नहीं भई तब
नारदजी बोले कि तुमने भगवत्कथा नहीं किई और ऐसा ग्रन्थ भी को

है नहीं पुनः। जिसमें भागवतकथा होवै सो क्या भागवत वचन है क्या
अर्थ के गुणयुक्त न व आरकाचित शास्त्र होगा। इसलिये विचार करना चाहि-
ये कि व्यास जी जो नारायण का अवतार होते तो उनको अज्ञान शो-
क और मोह क्यों होता। और जो उनको अज्ञानादिक थे तो अज्ञानी-
का बनाया जो भागवत उसका प्रमाण नहीं हो सकता। फिर इस कथा में
वेदादिकों की केवल निन्दा आती है क्योंकि वेदादिकों के पढ़ने से व्या-
स जी को ज्ञान नहीं भया तो हम लोगों को कैसे होगा। फिर भी निग-
म कल्पतरोर्गलितं फलं इत्यादिक श्लोकों से केवल वेदों की निन्दा ही
किई है क्योंकि वेदादिक सत्य शास्त्रों का यह निन्दा न करता तो इसप
र मिथ्या जालरूप जो भागवत ग्रन्थ उसकी महिमा ही नहीं होती। फि-
र इसने नृगराजा की कथा लिखी कि यावत्यः सिकता भूमौ यावन्त्यो दि
वि तारकाः। यावन्त्यो वर्षधाराश्च तावतीरददं स्म गाः॥ नृगराजा ने इ-
तनी गाय दिई हैं कि जितने भूमि में कणिका हैं इससे पूछना चाहिये कि इ-
तनी गाय कहां खड़ी रहती थीं क्योंकि एक गाय तीन चार हाथ के
जगह में खड़ी रहती है और भूमि के कणों को सब भूमि के मनुष्य करो-
ड़ हां लाख हां वर्ष तक गिने तो भी पारावार नहीं होवैं फिर भी इस
मिथ्यावादी को संतोष नहीं भया मिथ्या कहने से कि जितने आकाश
में तारे और जितने वृष्टि के बिन्दु उतने गोदान नृगराजा ने किये फि-
र भी वह दुर्गति को प्राप्त भया क्योंकि एक गाय एक ब्राह्मण को पहिले
दिई थी फिर भूल के दूसरे को दे दिई फिर दोनों ब्राह्मण लड़ने लगे-
कि एक कहे यह मेरी गाय है दूसरा कहे कि मेरी तब नृगराजा ने कहा
कि दोनों तुम समझ के एक तो इस गाय को लेलेओ दूसरा इसके बद-
ले में सौ हजार लाख करोड़ और सब राज्य ले लेओ परन्तु वह दो भक्त
वे दोनों ऐसे मूर्ख कि जिद करते ही रहे किन्तु शान्त न भये और फिर राजा
को शाप देदिया कि तू दुर्गति को जा इसमें विचार करना चाहिये कि एक-
दा इसने कर्मकाण्ड की निन्दा किई कि थोड़ी भी भूल हो जाय तो दुर्ग-
ति को जाय इससे कर्मकाण्ड में कुछ फल नहीं है ऐसा इसकी मिथ्या बुद्धि

थीकिइसप्रकारकी मिथ्याकथाउसनेलिखीऔर आभीरोंकीनिन्दा लिखीकिसदाहठीहोते हैं औरराजाने उनको दण्ड भी नहीं दिया ऐसेदुष्टोंको दण्डदेनाचाहिये राजाको फिर कभी इठदुरा अग्रण करें औरराजाका अपराधक्याभया था किउसको शाप लगा एक गोदानके व्यतिक्रमसेदुर्गतीकोप्राप्तगया औरअसंख्यातगोदान का पुण्यउसका कहांगयायह अन्धकार की बात उनकीकिइतने उसने गोदानकिये परन्तु सबइसकेनष्टहोगये बहुतगोदानोंके पुण्यनेकु- छ सहायतानहींकियी फिरउसनेएककथालिखीकि रथेनवायुवेगेन अगामगोकुलं प्रति जबकंसनेअक्रूरजीकोश्रीकृष्णकेलेनेकेवास्तेभेजा तबमथुरासे सूर्योदयसमयमें वायुवेगरथके ऊपर बैठ के चले दो- कोस गोकुलथा सोचारपहर में अर्थात् सूर्यास्त समय में गोकुल कोआपहुंचे इसमें भूलगयाहियेकि रथकावायुवेगकहां नष्टहोगया कोकोईकहेकि अक्रूरजीकोमंगहुआ सोदेर से पहुंचे परन्तु घोड़े- को औरसारथीको भ्रमकहासे आया और उसका वायुवेग कहाँ गया क्योंमिथ्यालिखा फिरपूतनाको श्रीकृष्णने मारके गोकुल मथुरा के बीचमें उसकाशरीरडालदिया सोछः कोस तक उस शरीर की स्थूलतालिखी फिरकंसको मालूमभी नहीं भया कि पूतना मारी गई सानहींजोछःकोसकी स्थूलताहोतीतो दो कोसके बीच में कैसे समाता किन्तु गोकुल मथुरा येदोनोंचूर्णहोजाते औरगोकुलमथ- राके चारकोस२ तकघरोंमेंगिरताकोऐसी २ झूठकथा लिखी हैं परन्तु कथाकरनेऔरकहनेवाले सबभांगपानकरके मस्तहो गये- हैं किऐसेझूठकोभीनहीं जानसकते ब्रह्माजीको नारायणजीनेवर दियाकि । भवान्कल्पविकल्पेषु विमुह्यतिकर्हिचित्जबतकसृष्टि है इसकानामहै कल्पऔरजबतक प्रलयबनारहे उसकानामहै वि- कल्पसोनारायणनेब्रह्माजीसेकहाकितुमको कभीमोहनहोगा फि- र वत्सहरणकथामेंलिखा किब्रह्माजीमोहितहोगये औरबछड़े को हे- र लियाऔरइनीभक्तानेतोकहाया किश्रापवासुदेवऔरदेवकीकेउदर

मेंजन्मलीजिये फिर कैसी गाढ़ी भागवतकी लीला है कि ऋषभदेव भूलगये कि यह गोपदैनराविष्णुकाअवतारहै और भागवत बनाने वाले ने ऐसा नशा कियाहै कितना अन्धकार इसके हृदयमेंहै कि ऐसा बड़ा पूर्वापर विरुद्ध लिखताहै और जानताभी नहीं प्रियव्रतकी कथा इसनेलिखी कि सो-तदिनतक सूर्योदय नहीं भया तब प्रियव्रत रथपै बैठके सूर्यको नहीं प्र-काशितहोके घूमनेलगा सो उस रथके पहियेके लीकसे सातदिन तक घूमनेसे सातसमुद्र सातद्वीप बनगये इससे पूछनाचाहियेकि रथ के चक्र को इतनीबड़ी स्थूलताकि भई तो उसरथके चक्रका क्या प्रमाण रथ अश्वऔर प्रियव्रतके शरीरका क्याप्रमाणहोगा दूसरा इस कथा से इतनादृष्टान्तहोगा कि पृथ्वीके ऊपर अवकाश नहीं होसकता औरसूर्य आकाशमें भ्रमणकर्ता है प्रियव्रतनेपृथ्वीकेऊपर भ्रमण किया फिर जितनासूर्यकाप्रकाश उतना उससे कभी नहीं होसकता और सूर्य लोकके इतनास्थूलभी कभीनहींहोसकता भूगोलके विषय में जैसा इसनेलिखाहै वैसा उन्मत्तभी नलिखेगा तथा खगोलदर्शन के विषय में जैसालिखाहै वैसाबालकभीनहींलिखेगा सोऐसीअसंभवऔर मि-थ्या कथाभागवतका करनेवालालिखताहै श्रीकृष्णविद्वान्धर्मात्मा और जितेन्द्रियथे ऐसामहात्माजनकी कथासे पश्चात् निश्चय होता है जो श्रीकृष्णजी जैसीनिन्दा इसनेकराई वैसीकिसीकी नहोगी क्योंकि इसनेरासमंडलकीकथा लिखी उसमेंदेखो २ बात लिखी जिससेपश्चात् श्रीकृष्णकी निन्दाहोय जैसेकिवृन्दावनके समीपवन था कोईहै वृन्दावनमें वंशीबजाई उसकाशब्दनिकट २ गांवऔर मथुरामेंकिसीनेनहींसुना किन्तुजैसाइंद्रदरबारकेआपवैसाशब्द य-हकेवृन्दावनमेंकैसेभयाहोगा फिर उस शब्दको सुनके मथुरावन की स्त्रियां व्याकुलहोगईं फिरउनकेपतियोंनेनिरोधभीकिया तोभीकि-सीने न माना फिर उलटाआभूषणऔरवस्त्रधारण करकेवहांसे चली सो रासकोवृन्दावनमेंनजाने क्योंकीनाई छड़गई होंगी पगका आ-भूषणनाकमेंनाकका आभूषणपगमें ऐसेधारणकरलेगी फिर श्रीकृ-

ष्णनेगोपियोंसे कहाकितुमने दयाकुलकामकियाइससेतुमअपनेघ
रकोचलीजाओ और अपनेर पतिकी सेवाकरो पतियोंकीआज्ञा
भंगमतकरो फिरगोपियां बोलीं किहमकृष्णपतिहैं अन्य पतितोआ-
पही हैं हम उनके पासक्योंजायं आपकोछोडकेतबतोश्रीकृष्णजीप्र-
सन्नहोगये और हाथसेहाथ पकडके भटक्रीड़ा करने लगे सोब्राह्म
मासकी रात्रिकरदिई क्योंकिस्त्रियां बहुतथीं औरकामातुरथींफि-
रश्रीकृष्णजीने भी विचाराकि इनमें थोड़े कालमें तृप्तिनहींहोगीइससेब्राह्म
मासकाक्रीडाके वास्ते कालबनाया फिर क्रीडाकरतेर अन्तर्धान
होगए फिरस्त्रियां बहुत व्याकुल होनेलगीं औररोनेलगीं तबश्री
कृष्णफिरप्रसिद्ध होगये तबफिरगोपीप्रसन्नहोगईं फिरभीसबमि-
लके क्रीडा करने लगे फिरयहकथासुनकेराजापरीक्षितश्रीकृष्णकेपरलो-
कगमन में आगगए यह स्त्रीकारणीय आदहोनयाइसमैंविचारना चाहि
येकि श्री कृष्णकभी ऐसीबातनकरेंगे इससेबहुतजगत्काअनुपका-
रहोताहै क्योंकि स्त्रीलोग गोपियों का दृष्टान्तसुनके व्यभिचारणी
होजायगी तथा पुरुषभीश्रीकृष्णकादृष्टान्तसुनकेव्यभिचारीहोजा-
यगे ऐसीकथा से बहुत जगत्का अनुपकार होताहै फिरराजापरी-
क्षितने प्रश्न कियाकि धर्मकाउल्लंघनश्रीकृष्णनेक्योंकियाउसका
शुकने उत्तर दियाहै ॥ धर्मव्यतिक्रमोदृष्टईश्वराणांचसाहसम्तेजी
यसांनदोषायवह्नेः सर्वभुजोयथा इसकायह अभिप्रायहै कि जोई-
श्वर होताहै सोधर्मका उल्लंघन करताहीहै किन्तु जैसाचाहे वैसा
करें पर स्त्रीगमन करले तथापिभी करले उनको दोष नहीं जैसे
तेजस्वीपुरुष जोचाहेसो करले जैसी अग्निसबकोजलादेतीहैऔ-
र दोषनहीं लगताहै वैसे कृष्णादिक समर्थथे उनकोभी दोषन-
हीलगता इसमें विचारना चाहिये किश्रीकृष्णजीआदिकऐसाका-
मकभी नहींकरेंगे और जो श्रीकृष्ण ऐसाकरेंतोकुम्भीपाकसेकभी
नहिंनिकलते इससे श्रीकृष्णजीने कभीऐसा कामनहीं कियाथाक्योंकिवे
बड़े धर्मात्माथे ईश्वराणांवचः सत्यं तथैवाचरितंक्वचित् इसका यह

अभिप्रायहै कि ईश्वरका वचनकहीं २ जैसेसत्यहोताहैवैसेआचरणभी सत्यकहीं २ होताहै सर्वथाईश्वरअसत्यबोलताहै औरअधर्मको हीकरताहै किन्तु कदाचित् सत्यवचन बोलताहैईश्वरऔरसत्यआचरण इनसे पूछना चाहिये की यह ईश्वरकीबातहैंवाजन्मसाक्षीनेकहते हैंकि जिसके कण्ठमें रुद्राक्ष वातुलसीकीमालाजनहोय वाललाट में तिलक उनके मुख देखनेसेपापहोताहैउनसेकहोकि उनकी पीठ देखनेसे जो पुण्य होताहोगा और वेकहतेहैंकिउनकेहाथसेजललेनेमें पाप होताहै तो उनसे कहोकि बदनसेजललेवे फिरतोकुछ पाप नहीं होगा ऐसीर बातें लोगोंने मिथ्या बनालिइहैं औरभागवत के विषयमें हमने थोड़ेसे दोषदेखाहैं परन्तु भागवत दोष रूपही है वैसेही अठारह उपपुराणअठारहसबपुराणऔरसबतन्त्रग्रन्थवेदनष्टहीहैं इनसे कुछजगत् का उपकार नहींहैता सिवाय अनुपकारके अरुनब्रह्माविष्णु महादेवादिक देवउनका निवासस्थानकहाहैउत्तमहाभारतकी रीतिसे औरयुक्तिसे भी यह निश्चयहोताहै किब्रह्मादिक सब हिमालयमें रहतेथे क्योंकि इस भूमिमें उनके चिन्ह पाये जातेहैं खाण्डव वन इन्द्रका बागथा पुष्कर में ब्रह्मानेयज्ञकियाकुरुक्षेत्रमेंदेवोंने यज्ञ कियाअर्जुन और श्रीकृष्णसे इन्द्रादिकोंकायुद्ध होनातथा पाण्डवोंसे गान्धर्वोंका युद्ध होनाइन्द्रप्रस्थीकेस्वयंवरमेंइन्द्रादिकोंका आना अर्जुन कामहादेवसेपाशुपतास्त्रकोलालनातथा देवलोकमें जाके विद्या कापढ़ना भीष्मका कुबेर पुरीमें जाना तथा दशरथ और कैकेयीका रथकेऊपर चढ़के देवासुरसंग्राम में जानासर्वयुद्ध देखनेके वास्ते विमानोंपरचढ़के देवोंकाआनाइस देवऋषियोंका अनेकबार समागमका होना महोदधि और गंगा का ब्रह्मलोकसे आना स्वर्गारोहिणीका कैलाससे निकलनाअलकनन्दाकाकुबेरपुरीसे आना वसुधाराकावसु पुरीसे निकलनाऔर नारायणका बदरिकाश्रममें तपका करना युधिष्ठिरका शरीर सहितस्वर्गमें जाना नारदका देव लोकसे इसलोककी आनाजाना है

देवोंके निमन्त्रणदेना और उनोंका यहांपैआना नहुषकेइन्द्रका
होना युधिष्ठिरऔर यमराज का समागमकाहोना इसतरह तरह-
अलोक कैलासबैकुंठ इन्द्रवरुणकुबेर वसुअग्नि चन्द्रादिक आठवसुपुरि
योंकाइनसबकेधाम तक उत्तराखण्डमेंपसिद्धविद्यमानोंका होना
महाभारतऔर केदारखण्डादिकोंमें जगह २ लिखाहुवाहै उन
के अस्त्रशस्त्रकाहोनाहिमालयकी कन्यापार्वतीसेमहादेवकाविवाहहो
नाब्रह्माकी कन्यासे नारायणका विवाहोना इत्यादिक हेतुओंसे
हिमालयमेंहीदेवलोक निश्चित था इसमें कुछ संदेहनहीं सोप्रथम
जबसृष्टिभईथी इससे क्या आयाकि प्रथमसृष्टिमनुष्योंकी हिमालय
में भईथीफिरधीरे २ बढते चलेगये २ सब भूगोलमेंमनुष्य वासकरते
चले और फैलतेभीचले सोजितनेपुरुषहैं मनुष्यसृष्टिमें वेसबहि-
मालयहीसेउतरकरफैलेहैं यही हैं सोउत्तराखण्डमें ३३ करोड़मनु-
ष्यप्रथमथे सबपर्वतोंमें मिलके फिरजब बहुतकाल बीतगये औरम-
नुष्यउनमेंसेजोविद्यावान बुद्धिपराक्रमादिक गुणोंसेजोयुक्तथे
देवतादिकवेंही कहातेथे और उनलोगोंपर जो बैठताथा उनका
नामइन्द्रपदवाथा वैसेही महादेवविष्णुइन्द्र कुबेरऔरवरुणादि-
क नामपदवीथे जैसेविलायतमें ओगदी पर बैठता था उसका नाम
कनकरहता था तथा कोईराज्याभिषेकहोके राजपर बैठे हैं उ-
नका नाम पड़ताहै अबतक पडाजाई जैसे अमीरोंकानाम-
गवर्नरजनरलकमांडरइनचीफ इत्यादिकनाम अबतक पडतेहीहैं परन्तु
वेहिमालयवासीदेव पदार्थविद्याकोहस्तक्रियासहित अच्छीप्रका-
रसे जानतेथे उनमेंसे विश्वकर्माविशेषपदार्थ विद्यायुक्तथे अनेकप्रकार
के यन्त्रअग्नि जलवायु इत्यादिकेयोगसे विमानादिकरथचलतेथे
पर्वतोंतथा जितेन्द्रियादिक श्रेष्ठगुणवाले होतेथे और बड़ेशूरवी-
रथेनाना प्रकारके आकाशपृथिवी और जलमेंफिर जिनकेवास्तेयन्त्र
होतेथेआकाशमें जोयानरचतेथे उसका नामविमान रखते थे सो
उन मनुष्योंमेंसे बहुतदुष्टकर्मकरनेवाले थे उनको हिमालयसे नि-

काशादि देश थे सो हिमालय से दक्षिण देशमें आकर रहते थे फिर वहां कु-कर्म करने को लगगये उनका नाम राक्षस पड़ा था और कुछ उन ब्राह्मणों में से श्रष्ट थे उनका नाम दैत्य पड़गया था इन दैत्य और रा-क्षसों से हिमालयवासी देवों का वैर बनगया था जब इन देवों का बल होता था तब इनको मारते थे और उनका राज्य छीनलेते थे जब दैत्या-दिकों का बल होता था तब देवों का राज्य छीनलेते थे और मारते भी-थे एक शुक्राचार्य दैत्यों का गुरु था और बृहस्पति देवों का वे दोनों अ-पने २ चेलों को विद्या पढ़ाते थे जब जिनका बल बुद्धि पराक्रम बढ़ता था उनका विजय होता था परन्तु देव विद्यादि में सदा श्रेष्ठ होते थे और हिमालय में देवों के राज्य स्थान थे इससे दैत्यों का अधिक बल न-हीं चलता था सो अब तक हिमालय देवलोक में कोई नहीं है किन्तु सब आर्यावर्त्तवासी हैं वे देवों का परीवार यही हैं आर्यावर्त्तादिक देशों में जितने उत्तम आचार वाले मनुष्य हैं वे देवों के परीवार हैं और जि-तने म्लेच्छादिक आचरण भी जो मनुष्य के मांस को खाते हैं वे राक्षस और दैत्यों के कुल के हैं सो महाभारतादिक इतिहासों से स्पष्ट-निश्चय होता है इसमें कुछ संदेह नहीं एक जयपुर में नाभा भाटोर जा-तिका था जिसका गुरु अग्रदास था सो उसको वनमें से लाकर शिष्य था उसका नाम नाभादास रक्खा था सो वैरागियों का जूठ खाता था औ-र जहां वैरागी लोग मुख हाथ धोते थे उसका जल पीता था सो वैरा-गियों के जूंठ खाने और जूंठ जल खाने पीने से सिद्ध होगया इस प्रमाण से आजतक वैरागी लोग परस्पर जूंठ खाते हैं क्योंकि जैसे नाभा सिद्ध होगया वैसे हम लोग भी सिद्ध होजायेंगे परन्तु आजतक कोई जूंठ के खाने और पीने से सिद्ध नहीं भया इससे यह भी निश्चित भया कि नाभा भी सिद्ध नहीं था उसने एक ग्रन्थ बनाया है उसका नाम भक्तमाल रक्खा है उसमें वैरागियों का नाम सम्प्रदाय रक्खा है सो भी गप्पों की कथा उसमें लि-खी है उसकी स्त्री का नाम सीता था सो उनके पास वैरागी दर्शनार्थ आय उनके खाने पीने के वास्ते सीता के पास कुछ नहीं था सो उसकी स्त्री के

पासकहा कि इनसाधुओंके खानेके वास्ते कुछ लेआना चाहिये. क्योंकि उसको कोई उधारमांगनेसे नहीं देताथा औरउसकीस्त्री सीतारूपवतीथी से एकदुकानदारके पासगई औरकहा कि हम को अन्न और घीदुमदेओ तबवैश्यने उसकोदेखकेकहाकि तूएकरातभर मेरेपास रहेतो तुझकोमैंदेऊं तबसीतानेकहाकि कुछ चिन्तान-हीं साधुओंकिसेवाके वास्ते मेराशरीरहै तबवैश्यनेअन्नादिकदि-ये औरउनवैरागियोंको भोजन उसने कराया फिर जबपहररात्रि गई तबपतिपासे कहाकिऐसी बातकहके मैंवहांजातीहूं तबतोपति-नेधन्यवाददिया कितूपवित्रसाधुओंकी सेवकहै परन्तु उसवक्त कु-छ २ वृष्टिहोतीथी तो सीताको कांधेपरलेजाके उसवनियेकेघरप-हुंचादियातब बनियेने कहाकि वृष्टिहोतीहै वृष्टिमेंतेरापग भी नहीं भीजाफिरतू कैसे आईतबसीताने कहाकितुझको इसबात का क्या प्रयोजन है तुझको जोकरनाहोय सोकरतबवैश्यने कहाकि तूस-चबोलसीताने कहाकि मेरापतिकांधेपर चढाके तेरे दुकानपैंपहु-चादिया तबतोवहवैश्य सीताके चरणमें गिरपड़ा और कहाकितू और तेरापतिधन्यहै क्योंकितुमने संतोंकेवास्ते अपनाशरीरभीच-ढादियाइत्यादि बातउनकीअधर्मयुक्त और झूंठहैक्योंकि यह श्रेष्ठ पुरुषोंका काम नहीं क्योंकिवेश्या और भडुओंकाकामकरैसोहीभ-क्तभगतकहाविनाचीजके खेतकरगया नामदेवकी पाषाणकीमूर्ति नेदूधपीलिया मीराबाईपाषाण की मूर्तिमें समागई औरकोईभग-तकेपासके नारायण कुत्ताबनकेरोटी उठाकेभागे और मीराविष पीनेसे भीनहींमरी इत्यादिकभगतमालकीबात झूंठहै और एकप-रिकाउनसाधुओंकी सेवाकरताथा क्योंकिचक्रांकितथेवह भीच-क्रांकितथा परन्तुवह परिकाउ डाकूपनेसे धनहरणकरकेसाधुओं-कोदेताथा सोएकदिनचोरी सेवाडाकूपनसे धननहींपाया फिरव-हांव्याकुलभया और घोड़े परचढके जहां तहां घूमताथा तोना-रायणएकधनाढ्यके वेषसेरथमेंबैठके परिकाउकोमिले सो भक्त-

रिकालने उनकोघेरलिया और कहाकि तुमको मारडालूंगानही
तो तुमसब कुछरखदेओ परन्तुउनकेरखनेमें कुछदेरभई तोझटप
रकालनेनारायणके अंगुलीमें सोनेकीअंगुठियांथीं सो अंगूठी सहित
अंगुलीको काटलईतबनारायण बड़े प्रसन्नभयेऔर दर्शनदियाकि
तूबड़ाभक्तहै देखनाचाहियेकिनारायणभीकैसेअन्यायकारीहैं डा-
कुओंके ऊपर कृपाकर देते हैं अर्थात् डांकू और चोरोंके संगीहैं
फिरवेचक्रांकितलोगनित्य उपदेशसबकरते हैं किचोरीकरके भीप-
दार्थलेआवै और नारायण तथावैष्णवोंकी सेवामेंलगावैतोभीव-
ह बड़ाभक्तहोता है और वैकुंठको जाताहै फिर वहपरीकालकोईव
निर्येकेजहाजपर बैठकेसमुन्द्रपार बनियोंके साथ चलागया वहां
बनियोंनेजहाजमें सुपारीभरीथी एकसुपारीका आधाखण्डकरि-
कालनेवहांगडंदिया और वैश्योंसे कहदिया किमैंआधीसुपा-
रीपारजाकेलेलेउंगा तबवैश्योंने कहाकिएकक्या दशतुमलेलेना
उसपरीकालने कहाकिनही मैंतो आधीहीलेऊंगा फिरजहाज पा-
रको आगया जबसुपारी जहाजसे उतारनेलगे तबपरिकालनेक-
हाकि आधीसुपारी हमकोदेदेओ तबवैश्यलोग सुपारीका आधा
खण्डढूंढ़नेलगेसोपरीकाल बड़ाक्रोधकरके सबसेकहनेलगाकिवै-
श्यकिक्याबातहीहैं क्योंकिदेखोहस्तपत्रमें आधी सुपारीमेरी लिखीहै
सोयदेते नहीं तोजहाजमनखमें चलता करनेलगाऔर लड़नेको तैयार
भयाफिरभाससाजी करके आधीसुपारी नावमेंसे पटवालिई उ-
नवैरागियोंकेलेखामें सदभनलगा दिया सो ऐसी परीकालकी च-
क्रांकितके संप्रदाय में बड़ी प्रतिष्ठा है सोचक्रांकितके मन्त्रार्थग्रंथ
में ऐसीबातलिखीहै सोजिसने संप्रदाईहैं वेअपने चेले का ऐसे २
उपदेशकरके और ऐसेग्रन्थोंको सुनाकेपापोंमें लगादेतेहैं फिरभ-
क्तमालामें एक कथालिखीहै कि एक साधुएक ब्राह्मण के घरमें
ठहराथा और ब्राह्मण उसकी सेवाकरताथा उसकीएककुमारीक-
न्याथी उससे वहसाधु मोहितहोगया सो उसकन्या को लेकेरात्रिमें

कुकर्म किया औररजाईके ऊपरदोनोंनंगेसोगयेऐसेजबउसकन्या का पिताप्रातः काल तबतकदोनोंको नंगे देखके उसनेचादरदोनों पर ओढादीई औरसिपाहियोंसे कहाकियह साधु भगनजाय फि-र वह बाहर चलागयातबतो दोनों उठबैठके देखा कियहकिसनेढांका सोकन्याने पहचानलिया किमेरे पिताकायह वस्त्र है फिर वह कन्या डरके भागगई भागके छिपगई औरसाधुभीवहांसे निकलके जानेलगा तब सिपाहियोंने उसको रोकलिया तबतो साधु बहुत डरा तब तक कन्याका पिता बाहरसे आयासोसाधु केपासआकेचरणागनमस्कारकिया किमेरा धन्यभाग्य है जोकिआपने मेरीकन्या-का ग्रहण किया इससे मेराभी उद्धारहोजायगासोआपआनन्दसेमेरे घरमें रहिये और कन्याको भी मैंने आपको समर्पणकरदियात ब साधुबड़ा प्रसन्नहोकेरहा और विषय भोगकरनेलगा इसकोविचारना चाहिये किबड़े अनर्थकीबातहै क्योंकि ऐसीकथा कोसुन के साधु और गृहस्थलोग भ्रष्ट होजातेहैं इसमेंकुछसंदेहनहीं फि-र भक्तमालमें एक कथालिखीहै कि एकभक्तथाउसकेघरमेंसाधुपा हुने आये फिर उनकी सेवाके वास्ते पिता पुत्रदोनों चोरीकरनेके वास्तेगये सो एकवनिये कीदुकान कीभीतमें सुरंगदेके पुत्र भीतर घुसा और पिताबाहरखड़ारहा सोभीतरसे चीजोंको अन्ननिका-लकेदेताथा औरवहलेताथा जबभीतर सेबाहर निकलनेलगा त-बतक दुकान वाले जागउठे सो उसकेपगतोभीतरथेऔरसिरबा-हर निकलाथा तबतक उसनेउसके पगपकड़लिये और सिरपकड़ लिया पिताने दोनोंतर्फ खींचनेलगे सोउसके पिताने विचाराकि याकि हम पकड़ेजायेंगे तो साधुओंकी सेवामें अन्तरहोगा सोपुत्र का सिरकाटके और चुरादिक पदार्थोंकोलेके भागगया तबतक अरुणय आये और बलकशरीर राजघरमेंलेगये और खोज होने-लगा कियह किसकाहै फिर वह अपनेघरमें चलागया और साधु ओंके वास्ते भोजन बनाया और उन कीपंक्तीभईउससमयमेंसाधु

ओंने पूछाकि कहांहै तुम्हारा लड़का उसको जल्दी बोला। ओंतबउ-सकेमाता और पिता बोलेकि न जानेकहां चलागया होगा आजायगा आप तबतक भोजनकीजिये तबसाधुओंनेकहाकिजबतक नआवेगा तबतकहमलोग भोजनकरेंगे अन्यथानहीं तब उसकी माताने रोकेकहा किवहतो मारागया तबसाधुओंने पूंछा कैसे मारा गया किहमारे घरमें आपके सत्कारकेहेतु पदार्थनहींथा इसलियेदोनों चोरी करनेको गयेथे वहांपर मारागया तबसाधुओंनेकहाकि उसका शरीर कहांहै तब उन्ने कहाकि सिरहमारेघरमेंहै औरशरीर राजघरमेंहै वेसाधुलोग राजघरमें जाके शरीरले आये शरीर औरसिर कासन्धान करकेबीचमें रखदियाफिरवेसाधू नाचने-कूदने औरगाने लगे फिरवहजी उठा और साधुओंनेआनन्दसेभोजनकिया औरउनसे कहा साधुओंने किम बड़े भक्तहोऔरस्वर्गमें तुम्हारा वासहोगा इसमें विचारना चाहिये किसाधुओंकीआज्ञा होना और चोरीका करना फिरनरकमेंनजाना किन्तु स्वर्गमेंजाना यहबड़ी मिथ्याकथाहै ऐसी कथाओंसे उनकेलोगसबभ्रष्टबुद्धिहोजातेहैं ऐसीर कथासबभ्रष्ट भक्तमालमेंलिखीहैं फिरभी लोगों-को ऐसी मूर्खताहै किसुनतेहैं औरकहतेहैं शिवपुराणमेंत्रयोदशीप-दोषव्रत जोकोईकरै वेनरकमें नजावें और देवी भागवता-दिकोंमेंलिखाहै नवरात्र काव्रत करै वेनरकमेंनजायगे तथा बहुत पुराणादिकोंमेंलिखाहै किचतुर्थी गणेशजीका एकादशी विष्णु-का द्वादशीवामनका चतुर्दशीनृसिंह और अनन्तका अमावस्या-पितृओंका पौर्णमासी चन्द्रमा को मानना इनवारोंसे और पुराणान्त-र्गत व्रतकथाओंसे यहआशाकि किसीतिथिमें भोजननकरना औरजलभीनपीना और जोकोईखाता वा पीता वहनरकमेंजायगा इस में ये कहते हैं कि जिसका विवाह उसकोगीत इसमें ऐसीकथाभीलिखी धर्मशास्त्र उनसे पूछना चाहियेकि जिसका विवाह होताहै उस के गीतगाये जातेहैं परन्तु पहिलेजिनके विवाहहुयेथे और जिनके

होने वालेहैं उनकास्वप्न भी नहीं होता किंचित् [illegible] वाल्य
से जिनके विवाह भये और जिनके होंगे उनको सीखो नहीं
करावें इससे ऐसे २ मूर्खोंके [illegible] कुलनहीं शोभा ऐसे २ कामों
को होनेवाला लिये हैंकि शीतलाने जगत्माता शीतलाने जगत्पिता शी
तलोदेव जगद्धात्री शीतला येन गोपितः एक विस्फोटरोग है उसका
नाम शीतला रक्खा यादृशं शीतला देवी तादृशो वाहनः खरः शीत
लाअष्टमी को गधेको पूजा करते हैं और हनूमानका रूपधान के वानर
को पूजा करते हैं भैरव का वाहन कुत्ता उसका भी पूजा करते हैं तथा पारा—
सपिप्पलादिक इन्तुलस्यादिक औषधी द्रव्य और कुशादिक घास
पित्तलादिक धातु चन्दनादिक काष्ठ, पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, सूर्य,
और विद्युत्कर्कचाचार्य [illegible] पूजा करते हैं इन को कुछ ज्ञान [illegible]
कभी नहीं होसक्ता जबतक इन पाखण्डोंको आपलोग त्यागी लोग न
होंगे तबतक इनका अच्छा कुछ नहीं होसक्ता फिर एक [illegible]
पाषाण और तुलसीका [illegible] विवाह करते हैं तथा [illegible]
कुवादिकोंका विवाह करते हैं और नाना प्रकारकी मूर्तियां बनाके मं—
दिरों में रखते हैं इनके नाम [illegible] नारायण और लक्ष्मी
दुर्गा काली भैरव, बटुक [illegible] [illegible] और वा—
मन [illegible] विश्वनाथ गणेश और [illegible] इत्यादिक रखलिये
हैं फिर इनके पुजारी बहुत दरिद्र दुःखलेते हैं और सब संसारसे
धनलेने के हेतु उपदेश करते हैं कि आओ यजमान धनचढ़ाओ दे—
वताओं को नहीं तो तुमको दर्शन का फल न होगा आओ नपाओ
ठाकुरजी के हेतु [illegible] तथा राजभोग के वास्ते देओ
और [illegible] तथा महादेव के वास्ते
मंदिर बनवाओ और खूब [illegible] लगाओ इनका कहते हैं कि वे—
[illegible] और [illegible] तथा पुजारी लोग आर्यावर्त के नाश के
वास्ते कहां से आगये और कैसा इस देश का अभाग्य और पाप था
कि ऐसे २ पाखण्ड इस देश में चल गये फिर इनको कभी नहीं भा—

थी कि अपने गुरुओं का उपहास करते हैं कि यह हमारी राधा है इत्यादि
के नाम लेलेके दर्शन कराते हैं इसमें बड़ा अपराध है परन्तु समझते
नहीं देखना चाहिये कि कृष्ण तो धर्मात्मा थे उनके ऊपर झूठ कलङ्क
भागवत ने लिखा है फिर वैसी लीला को रासमण्डल बनाके करते
हैं उसमें किसी लड़के को कृष्ण बनाते हैं किसी को राधा और गोपियां
बना लेते हैं तथा श्रीरामचन्द्र और रावणादिक लड़कों को बना के ली-
ला करते हैं सो केवल बड़े लोगों का उपहास करना है और कुछ
नहीं क्योंकि श्रीकृष्ण और रामादिकों के जो सत्यभाषणादिक व्यवहार
तथा राजनीति और यथावत् पालना और जितेन्द्रियादिक सब वि-
द्याओं का पढ़ना इन सब व्यवहारों का आचरण तो कुछ नहीं करते
किन्तु केवल लड़कों के खेल तथा चोरी को प्रसिद्ध करते हैं अपने कुग
ति के वास्ते दशसूनासमं चक्रं दशचक्रसमो ध्वजः दशध्वजसमो वे-
शो दशवेशसमो नृपः ॥ यह मनु का श्लोक है इसका यह अभिप्राय है कि
सूना अर्थात् जो दश हत्या के तुल्य जीवों को पीड़ा और हनन चक्र
से होता है सो तेली आदि के व्यवहार से जीवों को दशगुण पीड़ा हो
कर नाश होता है इससे दशगुण ध्वजी दारू के निकालने वाले के व्यव
हार से सौ गुण हत्या होती है तथा इससे दशगुण हत्या वेश में होती है अ-
र्थात् वेश किसको कहते हैं कि किसी का स्वरूप बनाना और नकल कर
ना अर्थात् मूर्त्तिपूजन रामलीला और रास भण्डवादिक जितने-
व्यवहार हैं वे सब वेश पद से लिये जाते हैं क्योंकि इनका वेषव्यवहार ही कि-
या जाता है इससे वेश व्यवहार हत्या का अपराध है तथा जो राजा न्या-
य से पालन नहीं करता और अन्याय करता है वह दश हजार हत्या का
फल पाता है इससे ये व्यवहार त्याग करने चाहिये तथा देखना भी सज्जनों को न
चाहिये और इन सब व्यवहारों को छोड़ना चाहिये और अच्छे व्यव-
हारों को करना चाहिये ऐसी इस देश में बहुत ढिठाई है कि कोई ऐ-
सा कहता है मारण मोहन उच्चाटन वशीकरण और विद्वेषणादिक
मैं जानता हूं इनसे पूछना चाहिये कि तूं जीवन मरण देके भी करा-

सकता है वा नहीं सो कोई देवयोगसे पर आजाय वा कपट करके दि-
खादिये के धरदाजाते हैं फिर कहते हैं कि मेरा पुरश्चरण सिद्ध हो
गया यह बात सब झूठ है कोई रोगी होता है उसको बतलाता है कि
भूत चढ़गया है फिर दूसरा बतलाता है कि इसके ऊपर शनैश्चरा-
दिक ग्रह चढ़े हैं तीसरा कहता है किसी देवता का दोष है चौथा कह-
ता है कि किसी का शाप लगा है ये सब बात मिथ्या हैं कोई कहता है कि
मैं रसायन बनाता हूं और दूसरा कहता है कि मैं पारे की भस्म बना-
ता हूं उसको कोई खालेतो बुड्ढे का जवान होजाता है यह भी मि-
थ्या ही जानना और बहुत से पाखण्डी लोग बहुत पुरुष और स्त्रियों
से कहते हैं कि जाओ तुमको पुत्र होजायगा सो उसको बन्ध्या होती ही
नहीं है जो किसी को पुत्र होजाता है तब वह पाखण्डी कहता है कि दे-
खो मेरे वरसे पुत्र होगया और सो भी कहता है कि मेरे वरसे शुभ हो-
गया वह झूठ और उसका पापी भी बकते रहते हैं कि बाबाजी के वरसे
मुझको पुत्र भया उनकी बात सुनके बहुत मूर्ख लोग मोहित होके
बाबाजी की पूजा में लगजाते हैं फिर वह पाखण्डी धनवालों के घर २ अ-
नर्थ करते हैं यह सब बात झूठ है मुण्डिये और गुसाईं इन दोनों से धूर्त
लोग कहते हैं कि तुम्हारा विजय होगा सो दोनों का जो परस्पर लड़ना था-
तो जिसका विजय होता है उससे धूर्त कहते हैं कि हमारे पुर-
श्चरण और जपसे विजय भया है अन्यथा कभी न होता फिर बहुत
बुद्धिहीन पुरुष इन बातों से भी भ्रमजाया करते हैं कोई कहता है कि जो
कुछ होता है सो ईश्वर की इच्छा से ही होता है जैसा चाहता है वैसा
करालेता है और किसी के कुछ करने से होता नहीं सबको नचावै राम
गोसाईं ऐसे २ झूठ वचन बनारखे हैं इनसे पूछना चाहिये कि जो
वह मिथ्याभाषण चोरी परस्त्रीगमनादिक करता है तो वह बहुत बु-
राई वह करता है ईश्वर का अच्छा ही होसकता कोई कहता है कि जो कुछ
होता है सो भाग्य से ही होता है इनसे पूछना चाहिये कि तुम व्यवहा-
र क्यों करते हो सो पुरुषार्थ में ही सदा चित्त देना चाहिये अन्य-

न नहीं बहुतेरे बालकों और स्त्रियों को बहकाते हैं कि तेरे नाम
ता नहीं तुम चलना ऐसा कहते हैं कि यह माता पिता तो झूठे हैं तुम
हमारा ओ नारायण के शरण और एक रुद्राक्ष आदि का मूड लेता है
और चेला करके पश्चात् देते हैं उनका परमेश्वर की भक्ति में नहीं हो-
ता क्योंकि गुरु के तो नव जो कुछ किया है और चुद्र होती फिर घर
बार को छोड़ देते हैं और माता पिता की सेवा भी छोड़ देते हैं फिर इधी
उधर और मंदिरों के बनाके बेगार ही के जाल में फस जाते हैं
उनमें एक कुलाचार ऐसे कि कुल जो कोई निज और माता पिता आदि के पांव
छोड़ के अपना गुरु करते हैं कि वे [illegible] नहीं हैं ठीक है कि इस से ब-
ध कोई संग का पड़ता था मत [illegible] और जब का आ-
श्रम है तब नहीं मिलता था सो आर्यावर्त में अन्धकार फैला है निरय
भोग लगा मिलता है और नित्य नवे जन ऐसा सुख छोड़ कर भी [illegible]-
अपना [illegible] है नहीं देखिये कि एक गवैया
कोई मंदिर में चढ़ाता है [illegible] प्रसाद देते हैं कभी नहीं
देते हैं परन्तु इन लोगों ने [illegible] कि सौ [illegible]
और [illegible] इन मंदिरों के [illegible] दर्शनों में तथा तीर्थ में जो-
जाई [illegible] तो भी ऐसा लाभ नहीं होगा
क्योंकि [illegible] पदार्थों की
प्राप्ति [illegible] संग्रह पुराणादिकों की कथा
और चेलों के मुड़ने से इसे [illegible] हम लोग इस आनन्द
को छोड़ने वाले हैं [illegible] जान लिया है कि जब तक
मत रहेगा और बुद्धियुक्त नहीं होंगे तब तक हम लोग कभी नहीं छो-
ड़ेंगे [illegible] और बुद्धि आर्यावर्त में होगी फि-
र तुम्हारी और तुम्हारे पाखण्डों की [illegible] हो जांयें-
गे तब ही [illegible] तुम लोग भी छोड़ देओगे ऐसे २ मिथ्या मत
चलाये हैं कि [illegible] मुद्रा को पहरने से योगी और मुक्ति
होती है सो इनके मत में मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ जो आचार्य

भयेहैं उनने वह मन्त्रजाप उनका शिवका मन्त्रहै और लिङ्गमा-
नतेहैं नमःशिवाय उनका मन्त्रहै और अपने मतका लिङ्गकण्ठमेंभी
बांधलियाहै और मन्दिर हठप्रदीपिका गोरक्षशतकादिक
बनालिये हैं फिरकहते हैं ऐसाग्रन्थमहादेवनेबनाये है उनका मत-
भी वाममार्गियोंकी नाईहै क्योंकिजैसे वाममार्गी लोग श्मशानमें
पुरश्चरणकर्त्ते हैं तथामनुष्यकेपात्र खाने पीनेकेवास्ते रखतेहैं त-
थारजस्वलास्त्रीका वस्त्रशिखाबालोंमें बांधरखतेहैं इससे अपनेको
धन्यमानतेहैं और ऐसे २ पदार्थ मानलेते हैं रजस्वलाश्चित्तपुष्प-
स्तत्पुष्पावतीसुदर्थ काशीव्यभिचारिणी ब्रह्मास्यात्पुष्पवतीशुक्लः
केवलमूत्रावर्ष कारिणी इत्यादिकवचनोंमे वे ऐसा मानते हैं कि इ-
न स्त्रियोंके साथ समागम करने से इनतीर्थों का फलप्राप्त होता है
फिरवैसे २ श्लोककरते हैं किशक्तौपिबतिरौ क्षिरस्यपतितं पुनः
भिन्नायोनिशिका पुनर्पुनर्दिविनाश रहता है मद्यपीनेवाले का उ-
सकेघरमें जोपुरुषनिर्भय और निर्लज्ज होके मद्यपीताहै फिरवे-
श्याकेघरमेंजाके उससे समागमकरें और वहींरहकर उस का म-
हसिद्ध और मद्यपीर रखतेहैं और श्मशानादिक आकाशोंकों
करके तववहशिवहोताहै इनमेंदेखः पदार्थ करते हैं ॥ पाशबद्धोभवे
ज्जीवः पाशमुक्तःसदाशिवः अर्थात जिनकेलभिमानादिकपापकर्मे
हैं उनके करनेमेंलज्जादिक बन्धनकर्त्ताहैं तबतकजीवहैं जबनि
र्लज्जादिक दोषोंसेयुक्त होताहै तबसदाशिवहोजाताहै देखना चा
हियेकि यह कैसीमिथ्याज्ञान उनकोहै फिरउनमें मद्यपानमेंभी-
वैष्णवहै मांसकाभीशुद्धि मद्यपानमेंभवतीपरु भैरवीकानाम-
चतुर्थी औरमैथुनकानामपंचमी जबदेखाएसमेंहीनामकत्ते हैं किजैसा-
कालीर्थ औरपांचेः इसवास्ते इनकोऐसेनाम रखलियेहैं किकोईभी
हमकोजाने और जिसने वाममार्गीहैं उनकोमौजभैरव भैरवआदि औ-
रभगवतीपांच नामरखलिये हैं स्त्रियोंकेनाम भगवती देवीदुर्गाका-
ली इत्यादिकरखलियेहैं और आगमकैथलमें कहाहै उनकानाम-

गु करदेनागुदड़ और विमुखादिक नामरख लियेहैं जो केवलमिथ्या
चालइनकाहै इसको अज्ञानलोग कभीनमानें और जो कानफटेना
थोंका व्यवहार है क्योंकि वेभी श्मशान में रहते हैं मनुष्योंका कपाल
रखते हैं वाममार्गियोंमें वे मिलते हैं इत्यादिक बहुत नष्टव्यवहार-
आर्यावर्त में चलजानेसे देशकामी नष्टव्यवहार बहुतहोगयाऔरसब
देशखराबहोगया परन्तु आजकाल अंगरेजोंके राज्यसे कुछ२ सुध-
रना और सुखभयाहै जोअबअच्छे २ ब्रह्मचर्याश्रमादिकव्यवहार
वेदादिक विद्या और पाखण्ड पाषाणपूजनादिकोंका त्यागकरैंतो
इनको बहुतसुखहोजाय क्योंकि राज्यका आजकालबहुतसुखहै अ-
पनेपथमें जोजैसाचाहै वैसाकरै और नाना प्रकारकेपुस्तकभीय-
न्त्रालयोंके स्थापनेसे सुगमतासे मिलतेहैं अच्छे २ मार्गशुद्धबनग-
येहैं तथा [illegible] और दरिद्र की भी [illegible] राजघरमेंसुनी जातीहै कोई
किसीका [illegible] पदार्थ नहीं [illegible] अनेकप्रकारकी [illegible]
[illegible] और सभीभी हैं उन
[illegible] होतीहै और [illegible] भी-
[illegible] होतीहै किसीका [illegible] करने
नहीं होता जिसमें जिसको खुशी होय उसको वहकरै अच्छी [illegible]
से अत्यन्त देशदेशमनुष्योंकी वृद्धिभईहै और पृथिवीभी खेतआदि
कोंसेबहुतहोगई है इत्यादिक नहीं [illegible] लड़ाई बखेड़ा गदरकुछ इ
सबकनहीं होतेहैं औरव्यवस्था राज्यकी [illegible] सबप्रकारसे अच्छी ब
नीहै परन्तु कितनीबात हमको अपनीबुद्धिसे अच्छीमालूमनहींदे-
तीहै उनकोंप्रकाशकर्ता हैं जानतेहैं बुद्धिमान् हैं उनको इन बातों
मेंगुणसमझा होगा परन्तुमेरीबुद्धिमें गुणइन बातोंमें नहीं देखप
ड़तेहैं इससे इनबातोंको मैं लिखताहूं एकतोयहबात है किजोनओ
रपीनसेडीसे जो [illegible] लियाजाताहै यह मुझको अच्छा नहीं मालू-
मदेता क्योंकिनोनकेविना दरिद्रकाभी निर्वाह नहीं होता किन्तु--
सबकोनोनका आवश्यकहोता है औरयेमजूरी मेहनत सेजैसे तैसे

निर्वाहकरते हैं उनके ऊपरभी यहचौगुन कादम्बरीतुल्य रखताहै इससे
दरिद्रोंको क्लेशपहुंचताहै इससे ऐसा होय कि मद्य अफीम गांजा-
भांग इनके ऊपर चौगुना करस्थापन होयतो अच्छीबातहैक्योंकि
नशा आदिका छूटनाही अच्छाहै और जो मद्यादिक बिलकुल छूट-
जांय तो मनुष्योंका बड़ाभाग्यहै क्योंकिनशासे किसीको कुछउपका
र नहीं होता परन्तु रोग निवृत्तिके वास्ते औषधार्थतो मद्यादिको
की प्रवृत्ति रखनाचाहिये क्योंकि बहुतसे ऐसेरोगहैं किजिनकेमद्या
दिकही निवृत्तिकारक औषधहैं सो वैद्यकशास्त्र कीरीतिसे उनरो-
गोंकी निवृत्तिहोसक्तीहै तो उनको ग्रहण करें जबतकरोगनछूटेकि-
रोगके छूटनेसे पीछे मद्यादिकोंकोकभीग्रहणनकरें क्योंकिजित-
नेनशाकरनेवाले पदार्थ हैं वेमनुष्यादिकोंके नाशकहैं इससेइनके
ऊपरही करलगाना चाहिये और लवणादिकोंके ऊपर न चाहिये
पौनरोटीसेभी गरीबलोगोंको बहुत क्लेशहोताहै क्योंकिगरीबलो-
ग कहींसे घासछेदन करकेलेआवेंगा लकड़ीकाभार उनके ऊपर
कौड़ियोंके लगनेसे उनको अवश्यक्लेश होता होगा इससे पौनरोटी
काजो करस्थापनकरना सोभी हमारीसमझसे अच्छा नहीं तथा
चोरडाकू परस्त्रीगामी औरजूआकेकरनेवाले इनकेऊपर ऐसाद-
ण्डहोना चाहिये कि जिसकोदेख राज्यके सबलोगोंको भयहो-
जाय और उनकामोंकोछोड़दें क्योंकि जितने अनर्थहोते हैंवेसबद-
ण्डसेंहीहोतेहैं सोजैसा मनुस्मृति राजधर्ममें दण्ड लिखाहै वैसाही
करनाचाहिये जबकोई चोरीकरै तदनन्तर निश्चयकरके कि इस
ने अवश्यचोरीकिईहै इसमें कुछभी नहिं तोउसकाचिह्न राजाबना
रक्खे उसको अग्निमें तपाके ललाटके भौंकेबीचमें लगादेकुछदेर
भी उसके गदहे औरऊंटपैचढ़ाके नगर फेरीमें बजारमें जूतियां
भी लगवाइये और थुकवाकरै फिर उसकेकुछधनदण्डकेअथवा
कुछ दिन जहलखाना रक्खे वहांभूखेपने पहरतक खानेकोदे
औरराततभर पिसवाई नपीसेतोपहरभी उसको जूतेदे और फिर-

सहैं अकठिनकाम उससे करावे जबतक वह निर्बल नहोजाय परन्तु ऐसा बहुत दिनतक रखे जिससे कि मरनजाय फिर उसको दोतीनदि-नतक भिक्षा करावें कि मुझभाई नेंमनुष्यहोके ऐसाबुरा कामकिया कि जिसके ऊपर ऐसा दण्ड हुआ इसको और मेरा दण्ड देखके नष्टहृद-में दुःखभया और आपभी आदमी होके व्यवहार करना फिरऐ-साकाम कभी नकरना चाहिये अब ऐसे कामकरनाचाहिये जिससे राजकर्म और सभामें तथाप्रजामें दुष्टलोगोंकी प्रतिष्ठा होय और आपलोगोंके ऊपर ऐसाकठिन जोदंड दियागया सो केवल आप लोगोंके ऊपरनहीं किन्तुसबसंसारके ऊपर यह दंड भया है जिससे इसदंडकोदेख वासुनके सबलोग भयकरें और फिर ऐसा काम कोईनकरें ऐसे शिक्षा जितने बुरे कर्म करने वालेहैं उनको दण्डके पीछे अवश्यकरनी चाहिये क्योंकि दंड जाके सहायउसको स्मरणरहे और दूसरों का निश्चयभी नबनजाय इसवास्ते शिक्षाअवश्यकरनाचा-हिये केवल शिक्षा मात्रसे वा चरणपर्यन्त दंडसे दोनों सुधर नहीं सकते कि-न्तु दोनोंसे मनुष्यसुधार सकते हैं फिरभी जो चोरी करे तो उसका हा-थ काटडालना चाहिये फिरभी चक्रपर्यन्त उसको मुरदेवाल से मारडालना चाहिये किसी दिन उसकी आंखें निकालडालें किसी दिनकान किसीदिननाक और सबजगह घुमाना चाहिये जिससे कोईसबदेखें फिर बहुत मनुष्योंके सामने उसको कुत्तोंसेचिथवाडाले ऐसादंड एकपुरुषकोहोगातो उसके राजभरमें कोई चोरीकी इ-च्छाभीनकरेगा और राजाभी इनके प्रबन्धमें बड़ाआनन्दहोगा नहींतो बड़े प्रबन्धमेंक्लेश होते हैं सामान्य दंडसे वे कभीसुधे होंगे नहीं डाकुओंकोभी चोर कीनांईं दंड देनाचाहिये और जुआकर नेवालोंको एक बार करनेसेही मुड़वाडाल जैसाकीचोरीकालि-खा गयाहै परस्त्रीगमनादिक सब करके फिरकरनेसे चिथवाडालना चा-हिये क्योंकि चोरीपरस्त्रीगमन और जितने बुरे कर्महैं वे जुआरीसे ही होतेहैं इससे उनकोसहाय करने वालेकोभी ऐसादंड देनाचा-

लिये क्योंकि जिनने लड़ाईदंगा चोरी परस्त्रीगमनादिक इनमें ही अत्यन्त होते हैं इससे इनके ऊपर राजा दण्ड देनेमें कुछ थोड़ा भी आलस्य न करै महाभारतमें एक दृष्टान्त लिखा है कि सोने चांदी और अच्छे २ पदार्थ धरे हैं उनको कोई न स्पर्श करै ऐसा किया जाता है और मकानोंके जंगला जालियों की कुलुफ कभी नहीं लगाते और रात दिन कोई किसी का पदार्थ न उठावे सब जान जाके रखा जाता है धर्मात्मा इन वास्ते ऐसा उग्रदण्ड चाहिये कि सब मनुष्य न्यायमें रहें और अन्यायसे कोई नहीं जब स्त्री वा पुरुष व्यभिचार करें अर्थात् परपुरुषसे स्त्री गमन करै परस्त्रीसे पुरुष जब उनका ठीक २ निश्चय हो जाय तब स्त्रीके ललाटमें अर्थात् भौंके बीचमें पुरुष के लिङ्गेन्द्रियका चिन्ह लोहेका अग्निमें तपाके लगादे तथा पुरुषके ललाटमें स्त्रीके इन्द्रियका चिन्ह लगादे फिर जिसको सब देखा करें फिर उनको भी खूब फजीहत करें और कुछ धन दण्ड भी करें दोनोंको इसी प्रकार से निकाल दें और सबको फिर भी देखाने और ऐसा कारकरें फिर बहुत स्त्रियोंके सामने उस स्त्रीको कुत्तोंसे नुचवा डालें और पुरुषको बहुत पुरुषोंके सामने लोहेके तख्त को अग्निसे तपाके सुलादे उसके ऊपर फिर उसको ऊपर घुमावें उसी पलँगके ऊपर जलजा भस्म हो जाय फिर कोई पुरुष व्यभिचार कभी न करेगा ऐसा दण्ड देखनेसे हुआ है और सरकार का कानून बना है और बहुत सा कागजों पर धन बढ़ा दिया है इससे गरीब लोगोंको बहुत क्लेश पहुंचता है सो पश्चात् शास्त्रोंके करनी उचित नहीं क्योंकि इसके होनेसे बहुत गरीब लोग दुःखपायके मर रहते हैं फकीरीमें सिखाय नहीं है कुछ काम होती नहीं इस कागजोंके ऊपर जो बहुत धन लगाता है सो मुआफी अच्छा नाकुछ व नहीं है तो इसको छोड़नेसेही प्रजामें आनन्द होता है क्योंकि थानेदारोंके आगे भी कोई मन्द देखि सकता है न्यायकर्ता तो होवें फिर वास्ते अपने भी कोई भी भूठा व काम लेते हैं यहांतक किसको खाने को देते और भूठ गवाही इत्यादि बहुत देखाते हैं जो जैसा लगाई

मेंदण्डलिखाहै वैसाहीदण्डदेवेंतो स्वार्थीपनेके लोभसे भ्रष्टहोनेवाले-
को कोई तैयार नहींहोय अर्थात् अन्यायकरनेवाले नहोने पावेंगे इ-
स इसकायहअभिप्रायहै कि जबपहलेनिश्चयहोजाय कि इनलोगोंका स-
म्बन्धहै तबउसकोभी दण्डदेनेकेलिये ऐसाकहनेवाले अर्थात् नाना
प्रकारकेअन्यायकाभोग उसकोअवश्यहोय क्योंकि राजा भयसे
न्यायकरताहै इसीप्रकार उसकोदण्ड दीजियेगा चाहिये और जि-
तने अमात्य विचारपति राजघरमेंहोवें उनकोऊपरभीकुछदण्ड उप-
स्थितरखनीचाहिये क्योंकि येभी अत्यन्तउत्कृष्टके विचारमेंतत्पर
होके न्यायहीकरनेलगें देखनाचाहियेकि एककेयहांअर्जी पड़ी-
था उसकेऊपर विचारपतिने विचारकरकेअपनीबुद्धि और कानून
कीरीतिसे एककीजीतकिई औरदूसरेकापराजय जिसका पराज-
य भयाउसने उसकेऊपर जोहाकिमहोताहै उसकेपास फिर अपी-
लकरी सोभायः जिसकाप्रथम विजयभयाथा उसकोदूसरे स्थान में
पराजय होताहै औरजिसका पराजयहोता है उसका विजय फिर
ऐसेहीं अबतकधननहींचुकता होतौभाजबतक विलायत तक लड़ते
होचलेजाते हैं प्रायः यहीअलोग इस पापसे इसके मारे बिगड़जाते
हैं इससे क्याचाहियेकि विचारकरनेवालोंके ऊपरभी अवश्यदण्ड-
व्यवस्थाहोनीचाहिये जिससे अत्यन्तविचारकरके न्यायही करें ऐसा
आश्चर्यनकरें किजैसाहमारीबुद्धिमें आया वैसाकरदिया तुम को
इच्छाहोयतो तुमजाको अपीलकरदेओ ऐसी बातोंसे विचारपति
भीआलस्यमेंआजाते हैं औरविचारपतिको अत्यन्तपरीक्षा करनी
चाहिये कि अधर्मसेडरनेहोय औरविद्याबुद्धिसेयुक्तहोय काम क्रो-
ध लोभ मोहभय शोकादिकदोषोंसेअलगहोय और अन्तर्यामी जो
सबका परमेश्वर उससेभीडरनेवालाहोय और से नहीं लोभसपात
कभीनकरें किसीप्रकारसे तबउसराजाकीप्रजाको सुखहोसकता है
अन्यथानहीं और पुलिसका जोदरजाहै उसमें अत्यन्तश्रद्ध पुरुषों
कोरखनाचाहिये क्योंकिप्रथमव्यवस्थापकका यहीहै इससे ही आगे

प्रायः सब विवादके व्यवहार चलते हैं इसप्रकारमें नीपक्षपातसे अ-
नर्थ लिखा पढ़ा जायगा सो आगे भी अन्यथा पाप लिखा पढ़ा जायगा
और अन्यथा व्यवहारमें प्रायः होजायगा इससे पुलीस दंड अत्यन्त श्रे-
ष्ठ पुरुषोंको रखना चाहिये अथवा पहिले जैसे चौकीदार रहते थे
वैसे एक २ रखना था उससे बहुधा अन्याय नहीं होता था कुछ तो पुलिस
का प्रबन्ध भया है सबसे बहुधा अन्यथा व्यवहार ही सुननेमें आता है
और गाय बैल भैंसी बकरी और भेडी आदिक मारे जाते हैं इससे प्र-
जाको बहुतही अपराध होता है और अनेक पदार्थों की हानि भी होती
है क्योंकि एक गाय दस १० सेर दूध देती है कोई ८ सेर कोई ६ सेर पांच ५ से
र और दो २ सेर एक उनके पक्षमें ६ सेर नित्य दूध दिया जाय कोई
दस १० मास तक दूध देती है कोई ८ मास तक उसका मध्य आ-
ठ मासका लिया जाता है सो एक मास भर में सवाचार मन दूध हो-
ता है उसमें चावल डालके चीनी भी डालदेंगे सो पुरुष तृप्त होसके
हैं जो ऐसे ही पीवें तो ८० पुरुष तृप्त होजांयगे और ८०० वा ३४०
पुरुष तृप्त हो सकते हैं कोई गाय १४ दफे बियाती है कोई इससे उप-
रांत ने १२ वक्त बियाती सो ९६०० से पुरुष तृप्त हो सकते हैं फिर
उसके बछड़े और बछिया होंगे उनसे बहुत हल और गाय बछड़ों की प-
रम्परासे लाखों मनुष्योंका पालन हो सकता है उसको मारके मां-
ससे ८० पुरुष तृप्त हो सकते हैं फिर दूध और पशुओंकी उत्पत्तिका मूल
ही नष्ट हो जाता है जो बैल आदिका वध न करें पांच इन्द्रियोंसे आगेको अब
४० से भी नहीं आता और कुछ गांव और नगरके पास पशुओंके चर-
नेके वास्ते उन लोगोंको भूमि रखनी चाहिये जिसमें कि पशु चरैं औ-
र उनके घी दुग्ध आदिकसे मनुष्य शरीरकी पुष्टि होती है वैसी दूसरे अन्नादि-
कोंसे नहीं होती और बुद्धि भी नहीं बढ़ती इससे राजाको यह प्रबन्ध अव-
श्य करना चाहिये कि जिन पशुओंसे मनुष्यके व्यवहार सिद्ध होते हैं
और उपकार होता है उनको भी न मारें और ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये
जिससे सब मनुष्योंको सुख होवे और प्रजास्थ पुरुषोंको भी करना

जिनकी सोराजाके प्रजाजिनसे प्रसन्नरहें और प्रजासेराजा प्रसन्न-
रहे यही धर्मकरनी सबको उचितहै देखनाचाहियेकि महाभार-
तमेंसगरराजाकी एककथालिखीहै इस का एकपुत्र असमंजसनाम
था उसको अत्यन्त शिक्षाकिईगईपरन्तु उसनेअच्छा आचारव्यवि-
चारग्रहणनहीकिई और प्रमादमेंहीचित्तदेताथा सो उसको युवाव-
स्थाभीहोगई परन्तु उसको शिक्षा कुछनलगी बालकिकर्मेंसेपुरु-
षोंके उसकेऊपर प्रसन्ननहीभई फिर उसका पिताभीउसकाहि-
[illegible] जानकेलिये गयाथा [illegible] बाल-
[illegible] २ २ [illegible] २ [illegible] और [illegible]
[illegible] बालकदाइ [illegible] उसको [illegible]
[illegible] दिया [illegible] प्रजा [illegible]
[illegible] बालकको [illegible] जल [illegible]
[illegible] और-
[illegible] उसकेपिताके पासगया और
कहाकि तुमारे बालककी [illegible] राजाकेपुत्रने [illegible] उनके
[illegible] और [illegible] उसको देखके
फिर उस बालको [illegible] की [illegible]
[illegible] उनकोआतेहुए मैं देख
के [illegible] और [illegible] कि [illegible]
[illegible] उसका [illegible] कि
[illegible] कहतेथेकि [illegible] कि
[illegible] आपके जैसेराजा [illegible] है [illegible]
[illegible] और [illegible]
[illegible] फिरराजानेपुत्रकि [illegible]
[illegible] और [illegible]
[illegible] और [illegible]
[illegible] २ [illegible] देखोको [illegible]

जब निकल गया तब राजा और ओरधों से इसी प्रकार स्वस्थ बालक होगया फिर सभा के बीच में राजकुमार को मारन दिया और जितने राजकुमार नि- काले थे वे भी उसी प्रकार राजा ने सिपाहियों को आज्ञा दिई कि अ- समंजा [illegible] लेआओ सिपाही लोग गये और देखे ही उसको [illegible] असमंजा को [illegible] २ [illegible] और [illegible] दे- कर दिये राजा ने पुत्र को [illegible] ५ [illegible] इसके [illegible] जाने से प्रसन्न होके [illegible] कहा कि अब क्या दुःख वा सुख होता है परन्तु [illegible] प्रतिमिला सो मैं साथ ही रहूंगा पृथक नहीं [illegible] असमंजा से कहा कि तेरा कुछ [illegible] अच्छा था किन्तु [illegible] यह मरजाता तो तुम को बुरे इस [illegible] चोर की नाईं [illegible] प- रन्तु [illegible] सो तू कभी [illegible] नगर में अथवा मनुष्यों के पास खड़ा रहा था जो तो तुम को चोर की नाईं मारवाते [illegible] तू ऐसे [illegible] काम [illegible] हाथ सिपाहियों से कुछ देदिया कि जाओ तुम [illegible] इनदोनों को [illegible] दिये [illegible] न धन दिये किन्तु जैसे सभा से दोनों खड़े थे वैसे ही छोड़ आये फिर [illegible] और [illegible] अच्छी [illegible] अपना पर- तही बालक रक्खा और शिक्षा भी किई [illegible] भगवान ऋषियों के पास पुत्र को भी रक्खा [illegible] और [illegible] कहा कि म- हाराज यह आपका ही बालक है [illegible] इसको [illegible] बहुत [illegible] रक्खा फिर इसको अच्छी प्रका- र से शिक्षा किई [illegible] यह [illegible] फिर [illegible] [illegible] और ऋषि लोगों ने उस बालक के यथावत् संस्कार किये [illegible] और सब प्रकार की शिक्षा भी किई और उसने यथावत् ग्रहण किई जब वह १६ वर्ष का होगया तब उसको लेके सगर राजा के पास [illegible] ऋषि लोग गये और कहा कि यह आप का पौत्र है इसकी परी- क्षा कीजिये [illegible] परीक्षा किई और [illegible] श्रेष्ठ गुण-

थोंनेभी सामर्थ्यगुणऔरविद्यामें योग्यहोंइसराज्यसमर्थ पुरुषोंनेराजासेकहाकि असमर्थ जो आपका पौत्र सोराजाहोनेके योग्यहै तब राजाने कहाकि सबबुद्धिमानप्रजास्थश्रेष्ठपुरुष जनकी प्रसन्नता औरसम्मतिहोयतो इसका राज्याभिषेकहोजाय फिर सब श्रेष्ठलोगोंने सम्मतिदिई औरउसका राज्याभिषेकभीहोगयाक्योंकि सगरराजा अत्यन्तवृद्धहोगयेथे राज्यकार्यमेंबहुत परिश्रमपड़ताथा सोसब अधिकार उसकेऊपर देदिये परन्तु अपनेभी जितना होसकताथा उतनाकर्त्तेथे राजा ऐसाहीहोनाचाहिये कि एकभरत राजाथाजिसकेनामसेइसदेशका भरतखण्डनाम रक्खा गयाहै उसकेपीनवपुत्रथेसो २५ वर्षकेऊपरसब होगयेथेपरन्तुमूर्ख औरप्रमादीथे राजानेऔर प्रजास्थपुरुषोंने विचारकियाकि इनमेंसे एक भीराजाहोनेके योग्यनहींसो भरतराजाने इश्तिहार करके पुरुषऔर स्त्रीलोगोंको बोलाया जोशिष्टराजाऔरप्रजास्थथे सोएक मैदानमें समाजस्थान बनाया उसकेबीचमें एकमंचानभीगाड़दिया सोसबलोग एक दिनइकट्ठेभयेपरन्तु किसीको विदितनथाकिराजाक्याकरेगा और क्याकहेगा फिरमंचान के ऊपर राजा चढ़केवचनसे कहाकि जिनराजा अथवाप्रजास्थ स्त्रीलोगोंका पुत्र इस प्रकारका मूर्खहोय उसकाऐसाही दण्डदेनाउचितहै जोकि इसप्रकार अपने पुत्रोंकोदेंगे सोअब सबसज्जन लोगइस नीतिको मानें और करें फिर मंचानसे उतरे और नवपुत्रभीपासमें खड़े थे सबसभाजनाके देखतेहुये औरउनकी माताभी सोउनके सामनेखड्ग हाथमेंलेके नवोंका सिरकाटके औरमंचानके ऊपरधरदिये फिरभी सबसेकहाकि जोकिसीकापुत्रऐसादुष्टहोय उसको ऐसाही दण्डदेनाचाहिये क्योंकि जोहम इनका सिरनकाटते तो ये हमारे पीछेआपसमें लड़के राज्यका नाशकरतेऔरधर्मकी मर्यादाकोतोड़डालते इससे राजपुत्र वा प्रजास्थभीश्रेष्ठ जनालोग उनको ऐसाहीकरना उचितहै अन्यथाराज्यधन औरधर्मसब नष्ट हो–

जायगे इसमें कुछ संदेह नहीं। देखना चाहिये कि आर्य्यावर्त्तदेशमें ऐसे २ राजा और प्रजास्थ हुए होते थे सो इसवक्त आर्य्यावर्त्त देशमें ऐसे भ्रष्टाचार होगये हैं कि जिनकी संख्या भी नहीं होसक्ती है सारे इस भूगोलमें देश कोई नहीं ऐसा भ्रष्टाचार भी किसी देशमें नहीं था परन्तु इसवक्त पाषाणादिक मूर्तिपूजनादिक पाखण्डोंसे चक्रांकितादिक संप्रदायोंके वादविवादों से भागवतादिग्रन्थों के प्रचारसे ब्रह्मचर्य्याश्रम और विद्याके छोड़नेसे देश ऐसा बिगड़ा है कि भूगोलमें किसी देशका नहीं जैसी कि दुर्दशा महाभारतके युद्धके पीछे आर्य्यावर्त्तदेशकी भई है सो आजकाल अङ्ग्रेजराज्यसे कुछ २ सुख आर्य्यावर्त्त देशमें भयाहै जो इसवक्त वेदादिक पढ़नेमें ब्रह्मचर्य्याश्रम चालीस वर्षतक करें कन्या और बालक स्वयम्वरविवाह और विद्वान होवें इनमत मतान्तरोंके वादविवाद आग्रहोंको छोड़के सत्यधर्म और परमेश्वरकी उपासनामें तत्पर होवैं तो इसदेश की उन्नति और सुख होसक्ता है अन्यथा नहीं क्योंकि विना श्रेष्ठ व्यवहार विद्यादिक गुणोंसे कुछ नहीं होता आजकाल जो कोई राजा जमींदार धनाढ्य होता है उनके पास अनेक मतमतान्तर के मूर्ख और खुशामदी लोग बहुत रहते हैं वे बुद्धि धन और धर्म नष्ट करदेते हैं इससे सज्जनलोग इन बातोंको विचारके समझलें और करनेके व्यवहारों को करें अन्यथा नहीं एक ब्रह्मसमाज मतचला है वे ऐसा मानते

हैं निराकार ईश्वर सृष्टिकर्त्ता है अर्थात् जीवादिक जगत् २ नित्य उत्पन्न करताहै जीवपदार्थ ईश्वरसे भिन्न और चेतनविशिष्ट असंख्य ईश्वरकर्त्ता है जबतक शरीर धारणकर्त्ता है तबतक शरीरसे शरीरधारण करताहै और चेतनाशक्ति जो है सो अहंकार सहित जब शरीर छूटता है तब केवलचेतन और मनआदिक पदार्थ रहते हैं फिर जन्म दूसरे नहीं होता किन्तु पापोंका भोग पश्चात्तापसे करलेताहै ऐसेही ज्ञान से अनन्त उन्नतिको प्राप्त होताहै यह बात उनकी युक्ति और विचार से विरुद्ध है क्योंकि जो निराकार निरंजन सृष्टिईश्वरकर्त्ता तो सूर्य चन्द्र विद्या-पु

दिकपदार्थोंकीभीसृष्टिनईर देखने मेंआतीजैसेपृथिव्यादिकोंकीसृ-
ष्टिनईर देखने मेंनहीआती ऐसेजीवकी सृष्टीभीईश्वरनेनहीं की-
कीहै सोकेवल कल्पनामात्रसे ऐसाकथनवेलोगकहतेहैं किन्तु
सिद्धान्त प्रमाणयुक्तनहीहै इससेईश्वरमें निरवयवत्वादिका विरोध
आवेगा औरसर्व शक्तिमत्त्वादिकगुणभीईश्वरमेंनहीं रहेंगे क्योंकि
जैसेजीव आपसेशिल्पविद्यासे पदार्थोंकी रचनाकर्ताहै वैसाईश्वर
भी होजायगा इसप्रेयहबात सज्जनोंको माननेके योग्य नहीं और
एकजन्मवादभीहै सोभी विचारविरुद्धहै क्योंकि अनेकजन्महोते हैं
सोप्रथमपूर्वार्द्धमें विचार कियाहै वहीदेखलेना औरपश्चात्तापसेपा-
पोंकी निवृत्तमानना यहभीयुक्तिविरुद्धहै सोप्रथम लिखदियाहै कि
पश्चात्तापभी होताहै सो कियेभयेपापोंका निवर्त्तकनहीहोताकि-
न्तु आगेकर्त्तव्य पापोंका निवर्त्तकहोताहै विनाशरीरसेपापपुण्यों
काफलभोग कभीनहीं होसका और विना शरीरके जीवरहताही
नहीं जोपहलेपश्चात्तापसे पापोंकाफल जीवपोंका छोड़िया देवे
तो न्याय और जीवोंकेसाथ पापभीरियुक्त कियेथे उनकाभी प-
श्चात्तापकरणहोना और जोस्मरणहोगातो फिर भीओर मोहके हो
नेसेवही अपनेपुत्र स्त्रियादिकसंबन्धियों के शाखआत्मा सोभी
आनानहीं इससे यहबातभी प्रत्यक्षप्रमाणविरुद्ध है और यज्ञोपवीत
की जोसत्यव्यवस्था शास्त्रकीरीतिसे उसकाछेदनकरताहै सोसत्य
सुखोंका अनुपकारकाकर्महै यहतृतीयसमुल्लासमें विस्तारसेलिख
दियाहै वहीदेखलेना यज्ञोपवीत केवलविद्यादिक गुणोंका और
अधिकार कालिन्हहै उसकातोडनानाहराहे इससे भी अत्यन्तमनु
ष्योंका उपकार नहीं होता किन्तु विद्यादिक गुणोंमेंवर्णाश्रम का
स्थापनकरना शास्त्रकी रीतिसे इससे ही मनुष्योंका उपकारहोसक्ता
है संसारव्यवहारकी रीतिसे नहीं ब्राह्मणादिकवर्णवाचक जोशब्द
हैं उनकोजातिवाचक मानकेलोगजातमें निषेधकरते हैं सोकेवलउन
कोभ्रमहै किन्तु शास्त्रकीरीतिसे मनुष्यादिक जातिवाचकशब्द हैं

जो मनुष्य शूद्रादिकको पकाना लेईनहीं करना यो मनुष्या-
धिक शब्दआनिवार्चकशास्त्रमेंलिखेहैं सोसत्यहीहै और खानेपीने से
धर्मकिसीका बढ़तानहीं और नकिसीकाघटता इसमेंभी अत्यन्त
आग्रह करना किसीके साथखाना वाकिसीके साथनहीं खाना
ही वर्तमान होना यहभी अनुचितबात है किन्तु नष्टभ्रष्टसंस्कार ही
न पदार्थोंकेखाने औरपीनेसे मनुष्य का अनुपकारहोताहै अन्यत्र
नहीं और धार्मिक ब्रह्मवादिकोंसेमेला करना इसमेंभी हमको अत्यन्त
आग्रह मालूम नहीं होता क्योंकि इसमें मनुष्यकी बुद्धिभ्रष्ट होजाती
है और धनभी अत्यन्त खर्च होताहै केवल अंग्रेजी पढनेहीसे
लोकव्यवहार यहभी अच्छी बात बनतीनहीं है किन्तु सबप्रकारकीपु-
स्तक पढ़ना चाहिये परन्तु जबतक वेदादिक सनातन सत्य संस्कृतपु-
स्तकोंको न पढेंगे तबतक परमेश्वर धर्म अधर्म कर्त्तव्य और अकर्त्त-
व्यविषयोंको यथावत् नहींजानेंगे इससे सब पुरुषार्थसे इन वेदादि-
कोंको पढ़ना और पढाना चाहिये इससे सबविघ्न नष्ट होजायेंगे अन्यथा
नहीं और इसको ऐसा मालूम होताहै किथोड़ेही दिनोंसे ब्राह्म स-
माजकेलोग भी चलगयेहैं और उनका चित्तभी परस्पर प्रसन्न-
होहै किन्तु ईर्षाही इनको दूसरे की होतीहै सोईसे वैरागियादिकों-
में अनेकभेदोंके होनेसे अनेक प्रमाद और विरुद्धव्यवहार होगयेहैं ऐ-
सा इनकाभी कुछकालमें होजायगा क्योंकि विरोधसेही विरुद्धव्यव-
हार मनुष्योंके होतेहैं अन्यथा नहीं जो वेदादिक सत्यशास्त्रोंको अ-
र्थसहित पढ़ें तो इनका व्याख्यान सनातनरीतिसे अर्थसहित पढ़ें तो अत्यन्त उ-
पकार होजाय अन्यथा नहीं तो आगे व्यवहार होजायगा ईसा
मूसा महम्मद नानक चैतन्य इत्यादिकोंकोही साधु मानना और जै-
नियों पर्यन्त किसी ब्रह्मर्षि और मुनियोंको नहीं गिनना यह
भी उनकी भूल है आर्यावर्त में परमेश्वर की कृपा से आदि वे सज्जन-
को अच्छी है इसके आगे जैनमतके विषय में लिखा जायगा ॥

इतिश्री मद्दयानन्द सरस्वति कृते स

स्यार्थप्रकाशसुभाषाविरचितेएकादशः समुल्लासः सम्पूर्णः ॥ ११ ॥

अथजैनमतविषयंव्याख्यास्यामः ॥ सब सम्प्रदायोंसे जैनकामत-
प्रथमचलाहै इसको साढेतीन हजार वर्षअनुमानसे भयेहैं सोइ-
नके २४ तिर्थङ्कर अर्थात् आचार्य भये हैं जैनेन्द्र पार्श्वनाथऋ-
षभदेव गौतम और वीरादिक इनके नामहैं इन्होंनेअहिंसापरमध-
र्ममानाहै इसविषयमें वेऐसा कहतेहैं कि एकबिन्दुजलकेअग्रभाग
कामन्न केकणमें असंख्यातजीवहैं उनजीवोंके पांचआत्मागनेहैं एक
बिन्दु और एककणकेभीतर ब्रह्माण्डमें नसमावैं इतनेहैं इसकेमुखके
ऊपर कपड़ा बांधरखतेहैं उसको बहुत मानतेहैं औरसब पदार्थों
को शुद्ध रखतेहैं और ईश्वरको नहींमानते ऐसाकहतेहैं किजगत्
स्वभावसे सनातनहै इसका कर्ताकोईनहीं जबजीवकर्मबन्धनसेछू-
टजाताहै और सिद्धहोताहै तब उसका नाम केवलीरखतेहैं और
उसीको ईश्वरमानतेहैं अनादिईश्वर कोईनहींहै किन्तु तपोबलसे
जीवईश्वरस्वरूपहोजाताहै जगत् काकर्ताकोईनहीं जगत् अनादिहैजै-
से सत्कृत्य पापाचारिक पर्वत नदीआदिकोंके आपसेआपही होजा-
तेहैं ऐसे पृथिव्यादिक भूतभीआपसे आपबन जातेहैं परमाणुका
नाम पुद्गलकहतेहैं सो पृथिव्यादिकोंके पुद्गल मानतेहैं जबअलग
होताहै तब पुद्गलपुद्गल छूटजातेहैं और जबवे मिलतेहैं तब पृथि-
व्यादिक स्थूलभूतबनजातेहैं और जीवकर्मयोगसे अपनाभ शरी-
र धारण करलेते हैं जैसाजोकर्म करताहै सो वैसाफलभोगता
है आकाशमें चौदह राज्यमानतेहैं उनके ऊपर जो पद्मशिला क-
राकोमोक्षस्थानमानतेहैं जब शुभ कर्मजीव करताहै तब उनकर्मोंके
वेगसे चौदह राज्योंको उल्लंघन करके पद्मशिलाके ऊपरविराज-
मानहोतेहैं चराचरको अपनी ज्ञानदृष्टिसे देखतेहैं फिर संसार
दुःख जन्ममरणमें नहींआते वही आनन्द करतेहैं ऐसीमुक्तिजैनलो-
ग मानतेहैं और ऐसाभी कहतेहैं किधर्मजोहै सोजैनकाहीहै और

[illegible] हैं तथा आप भी क्योंकि जो हिंसा करते हैं [illegible] [illegible] में पशु मारते हैं और ऐसी २ बातें कहते हैं कि यज्ञ में जो पशु [illegible] जाता है सो स्वर्ग को जाता है तो अपना पुत्र माता पिता का [illegible] स्वर्ग को जाने के वास्ते [illegible] २ श्लोक [illegible] बना रक्खे हैं [illegible] कर्त्तारो धूर्त्त [illegible] निशाचराः इस प्रकार भी माथे हैं कि ईश्वर [illegible] वेद में हैं वह धूर्तों की बनाई हैं जिसे [illegible] अर्थात् इस प्रकार करें तो स्वर्ग में जाय यह बात भा- [illegible] ने बना रक्खी है और जितना मांसभक्षण पशु मारने का विधि- है वेदों में [illegible] क्योंकि मांस भोजन राक्षसों का बड़ा [illegible] है [illegible] खाने पीने और जीविका के वास्ते लोगों ने बना- ई है और जैनमत ही [illegible] है और यही धर्म है इसके विना किसी को [illegible] नहीं हो सकता ऐसी २ बातें कहते हैं इस- से किसी जीव को पीड़ा देना सो तो [illegible] के किसी [illegible] [illegible] नहीं होता क्योंकि आप लोगों के मत में ही लिखा है कि [illegible] असंख्यात जीव हैं [illegible] भी [illegible] [illegible] फिर [illegible] अवश्य किया जाता है तथा भोजनादि- [illegible] और [illegible] की चेष्टा अवश्य की जाती है फिर तुम- [illegible] नहीं बना [illegible] जितने जीव [illegible] हैं उतने ब- चाते हैं जिनको हम लोग देखते हैं [illegible] उनको पीड़ा में हम लोगों [illegible] उत्तर ऐसा व्यवहार सब मनुष्यों का है [illegible] [illegible] भी [illegible] पशुओं को बचाते हैं वैसे तुम लोग भी [illegible] [illegible] नहीं है [illegible] मनु- ष्यादिकों को नहीं बचाते हो फिर तुम्हारी अहिंसा कहां रही [illegible] मनुष्यादिकों को ज्ञान है ज्ञान से [illegible] हैं इससे उनको पीड़ा होने में कुछ [illegible] [illegible] जीव [illegible] [illegible] [illegible] इस कहने से तुम लोगों का [illegible] है क्योंकि [illegible]-

दयालुओंको पीड़ा देना और ज्ञानहीनपशुओंको पीड़ा न देना यह दया-तविचारशून्यपुरुषोंकीहै क्योंकि जितने प्राणिदेहधारीहैं उनमें से मनुष्य अत्यन्तश्रेष्ठ है सो मनुष्योंका उपकारकरना और पीड़ाका नकरना सबको आवश्यकहै हिंसानाम है वैरका सो योगशास्त्रव्यासजीके भाष्यमेंलिखाहै सर्वथासर्वदा सर्वभूतेष्वनभिद्रोहः अहिंसा यह अहिंसाधर्म कालक्षणहै इसकायह अभिप्रायहै कि सब प्रकारसे सबकालमें सबभूतोंमें अनभिद्रोह अर्थात् वैरका जोत्याग सो कहाताहै अहिंसासो आपलोग अपने संप्रदायमेंतोप्रीति करते हो और अन्यसंप्रदायोंमें द्वेष तथा वेदादिकसत्यशास्त्र तथा ईश्वर पर्यन्त आपलोगोंको वैरहै औरद्वेषहै फिर अहिंसाधर्म आप लोगों का कहनेमात्रहै अपनेसंप्रदायोंके पुस्तकतकभी अन्यपुरुषोंके पास प्रकाशित नहींकरते हो यह भी आपलोगोंमेंहिंसासिद्धहै ईश्वर को आपलोगनहीं मानतेहैं यह आपलोगोंकी बड़ीभूलहै और इस भांतिसे जगत्की उत्पत्तिकाभनना यहभी तुमलोगोंकीभूलहीहै इसका उत्तर ईश्वर और जगत्की उत्पत्तिके विषयमेंदेखलेना प्रथम जीवका होना और साधनोंकाकरना पश्चात् बहसिद्धहोना भलाजीवादिक जगत्बिन कर्तासे उत्पन्न होनहीं सकता और अत्यन्त जगत्में नियमोंके जगत्में देखनेसे सनातन जगत्कानियन्ता ईश्वरअवश्य है फिरउसकोईश्वर नहींमानना और साधनोंसे सिद्धजोअनादि-सीकोभी ईश्वरमानना यहबात आपलोगोंकी बड़ीभूलहै आपसेआपजीवशरीरधारण करलेते हैं तो शरीर धारणमेंजीव स्वतन्त्रहुए फिरछोड़नेमें क्यों होतेहैं क्योंकि स्वाधीनतासे शरीर धारण करलेते हैं फिरकभी उसशरीरको जीव छोड़ताहीनहींजो आपकहें कि कर्मोंके प्रभावसे शरीरका होना और छोड़नाभी होताहै तो पापोंके फलजीवकभीनहींग्रहणकरें क्योंकि दुःखकी इच्छाकिसीकोनहीं होतीसदा सुखकी इच्छाहीरहतीहै इसलिये न्यायकारी ईश्वर कर्मफलकी व्यवस्थाकाकरने वाला नहोगा तो पदपातकर्मोंकीव्यवस्था नहोगी

आकाशमें चौदहराजू तथा सर्वशिलामुक्तिका स्थान मानना यह प्रत्यक्षादि औरयुक्तिसेविरुद्ध है केवल कपोलकल्पनाहीहै और उसके ऊपरवैठकेचन्द्राकार का देखना और कर्मवेगसे वहांचला जा- नायहभीबात आपलोगोंकीअसत्यहै यज्ञों के विषयमें आपकुतर्क करते हैं सोपदार्थविद्याकेनहींहोने से क्योंकिघृतदुग्ध और मांसादि कोभीयथावत् गुणजानने औरयज्ञकाउपकारकि पशुओं को मार- नेमेंथोड़ासादुःखहोताहै परन्तुयज्ञमें चराचर का अत्यन्त उपका- र होताहै इनकोनहींजानने सेऔरभीवेद विषयमें तर्क करते वेदों का यथावत्अर्थकेनहीं जाननेसेऐसीबात तुम लोग कहतेहो कि धूर्त भाण्डऔर निशाचरोंनेलिखाहै यहबातकेवल आपने अज्ञान औ- र संप्रदायोंकेदुराग्रहसेकहतेहो औरवेदजोहैं सोसबकेवास्ते हित- कारीहैं किसीसंप्रदायकाग्रन्थ वेदनहींहै किन्तु केवलपदार्थ विद्या औरसबमनुष्योंके हितकेवास्ते वेदप्रवृत्तहैं पक्षपातउनमें कुछ न- हीं इनबातोंकोजानतेतो वेदोंकात्याग औरखण्डन कभी न करते सोवेदविषयमें सबलिखदियाहै वहींदेखलेना और यज्ञमें पशु को मारनेसेस्वर्गमेंजाताहै यहबातकिसीशास्त्रके मतसे हम कहें होगी ऐसीबात वेदमेंकहींनहींलिखी जीवोंकेविषयमें ऐसा कहते हैं कि जीवजितनेशरीरधारीहैं उनके पांच भेद हैं एक इन्द्रियद्वीइन्द्रियत्री न्द्रिय चतुरिन्द्रिय औरपञ्चेन्द्रियजवृक्षमें एकइन्द्रियमानते हैं अर्थात् वृक्षादिकोंमें सोयहबात अर्थोंकीविचारशून्यहै क्योंकि इन्द्रिय सू- क्ष्मकेहोनेसे कभीनहींदेखपड़ती परन्तुइन्द्रियका कार्यदेखनेसेअ- नुमानहोताहै किइन्द्रियअवश्यहै सोजितनेवृक्षादिकोंके बीजहैं उ- नकोपृथिवीमेंगड़कोदे हैं तब अंकुर ऊपर आताहै और मूल नीचे जाताहै जोनेत्रेन्द्रिय उनकोनहींहोता तो ऊपरनीचेको कैसे देखता इसकारणसेनिश्चितजानाजाता है किनेत्रेन्द्रिय वृक्षलतादिकों में भी है तथावहुतलताहोतीहैं सोवृक्षऔर भित्ती के ऊपर चढ़ जाती है जोनेत्रेन्द्रियनहोता तोउसकोकैसेदेखता तथास्पर्शेन्द्रियतो वे भी

मानतेहैं जीभइन्द्रियभी वृक्षादिकोंमेंहै क्योंकि मधुर जलसे आम्रा-
दिकोंमें जितनेहरसहोते हैं उनमेंखाराजलदेनेसे सूख जाते हैं जोय
इन्द्रियनहोतातो स्वादखारेका मीठे का कैसे जानते तथा श्रो-
त्रेन्द्रियभीवृक्षादिकोंमें है क्योंकिजैसे कोई मनुष्य सोताहोय उसको
अत्यन्तशब्दकरनेसे सुनलेताहै तथातोपआदिकशब्दसेभीवृक्षों में
कम्पहोताहै जोश्रोत्रेन्द्रियनहोतातो कम्पक्योंहोता क्योंकि अक-
स्मात् भयङ्करशब्दकेसुननेसे मनुष्य पशुपक्षी अधिककम्पजातेहैं वै-
सेवृक्षादिकभीकम्पजाते हैं जोकहैंकिवायुकेकम्पसेवृक्ष संचेष्ट हो
जातीहै अच्छाजोमनुष्यादिकोंकोभी वायुकीचेष्टासे शब्दसुनपड़-
ताहै इसमेंवृक्षादिकोंमेंभी श्रोत्रेन्द्रियहैतथा नासिका इन्द्रियभी है
क्योंकिवृक्षादिकोरोगधूपकेदेनेसेसूखजाता हैजोनासिकेन्द्रियन हो-
तातोगन्धका ग्रहण कैसेकरता इससेनासिकाइन्द्रियभीवृक्षादिकोंमें
है तथात्वचान्द्रियभीहै क्योंकि कुमोदिनि कमलकुञ्जपाश्री अर्था-
तछुईमुईओषधि औरसूर्यमुखीआदिकपुष्पोंमें औरशीतलता उष्ण
वृक्षादिकोंमेंभी जानपड़ते हैं क्योंकिशीततथा अत्यन्तउष्णतासेवृ-
क्षादिककुम्हलाजाते हैं और सूखभीजाते हैं इससे त्वचाइन्द्रियोंका
कर्मदेखनेसेतत्त्व इन्द्रियवृक्षादिकोंमेंअवश्य मानना चाहिये यह
भ्रमजैनसम्प्रदायवालोंको स्थूलगोलकइन्द्रियोंके नहीं देखनेसे हु-
आहै सोइससे जैनलोग इन्द्रियोंकोनहीं मानसकते परन्तु न्यायद्वारा
सबबुद्धिमानलोगवृक्षादिकोंमेंभी इन्द्रिय जानते हैं इसमें कुछसंदे-
हनहीं औरजहांजीवहोगा वहांइन्द्रियअवश्यहोगाक्योंकि इन स-
ब शक्तियोंकाजोसंघात इसीकोजीवकहतेहैं जहांजीवहोगा वहां इ-
न्द्रियांअवश्यहोंगी जैनोंकाऐसाभीकहनाहै कि तालाबबावली कु-
आनहींबनवाना क्योंकिउनमें बहुत जीव मरतेहैं जैसेतालाबकर-
वाने से भैंसीघुसमेंबैठगीउसकेऊपर मेंढाबैठगा उसको कौआ ले-
आयगाऔरमारभीडालेगा उसकापापतालावबनाने वालेको हो-
गाक्योंकियदितालावनबनातातो यहहत्यान होती इसमें क्या कुछ

नहीं लगता क्योंकि उस तालाब के जल से असंख्य जीवों की रक्षा होती
उसका पुण्य कहां जायगा सो पाप के वास्ते तालाब कोई नहीं बनाता
किन्तु जीवों के सुख के वास्ते बनाते हैं इसलिये पाप नहीं हो सकता परन्तु
जिस देश में जल नहीं मिलता होय उस देश में बनाने से पुण्य होता
है जिस देश में बहुत जल मिलता होवे उस देश में तालाबादिकों का
बनाना व्यर्थ है और बड़े २ मंदिर और बड़े २ घर बनाते हैं उनमें
क्या जीव नहीं मरते होंगे सो जैन लोग भी मन्दिरादिकों में मिथ्या
लगा देते हैं जिनसे कुछ संसार का उपकार नहीं होता और जो उप-
कार की बात है उसमें दोष लगाते हैं फिर कहते हैं कि जैन का धर्म श्रे-
ष्ठ है और इसके बिना मुक्ति भी किसी को नहीं होती सो यह बात उन-
की मिथ्या है क्योंकि कर्म से बंध और ऐसे कर्मों से मुक्ति भी नहीं होस-
की मुक्ति तो मुक्ति के कर्मों से सर्वत्र होती है अन्यथा नहीं जिनका मूर्त्ति
पूजन चलाई सो जैनों ने ही चलाई है यह भी अनुपकार का कर्म है इससे
कुछ उपकार नहीं संसार में किन्तु अनुपकार के जो जैनों को बड़ा भ्र-
म लग गया है जो कोई कुछ पुण्य किया चाहता है पत्थर के मन्दिर-
ही बनाता है और प्रकार का दान पुण्य नहीं करते हैं उनमें जैनमा-
र्गों भी एक प्रकार नाना प्रकार के हैं और एक पन्थी होते हैं उनको श्रावक कह-
ते हैं दूसरा होता है दिगम्बर जिसको ढूंढिये और श्रावक कहते हैं उ-
नमें से ढूंढिये जो मूर्त्ति पूजन को नहीं मानते और जो मानते हैं
उनमें एक जो मुख्य होता है उसका ऐसा नियम होता है कि इतना
धन जब सेवक लोग देवें तब उसके दर्शन को जाय और मुनि दिगम्बर होते
हैं वे भी उनके नगर में जब जाते हैं तब आगे २ थालियां बजाते चले जाते
हैं और उनके सामने नहीं कोई वस्त्र पहिरे हुए भी उसकी सेवा अ-
र्थात् जल तक भी नहीं देते यह उनका पक्षपात से अनर्थ है किन्तु जो
श्रेष्ठ होय उसी की सेवा करनी चाहिये दूसरी कभी नहीं यह सब पा-
खण्डियों के वास्ते उचित है कोई दिगम्बर होते हैं उनके केशों में जूं इत्यादि जी-
वों को भी नहीं निकालते और स्नान नहीं करते किन्तु उनका

साधुजब आताहै तबजैनीलोग उसकीदाढी मोंछऔर शिरकेबा-
लसबनोंचलेतेहैं जो उसवक्त वहशरीरकम्पावै अथवा नेत्रसेजल
गिरावै तब सबकहतेहैं कि यह साधुनहींभयाहैक्योंकि इसकोश-
रीर के ऊपरमोहहै विचार करना चाहिये कि ऐसी २ पीडाओंर
आतुओंको दुःखदेना और उनके हृदयमें दयाकालेशभीनहींआ-
ना यह उनकीबात बहुत मिथ्याहै क्योंकि बालों के नोंचनेसेकुछ
नहींहोता जबतक काम क्रोधलोभमोह भय शोकादिक दोषहृद-
यसे नहींजो येजायगे यह ऊपरका सबढोंगहै उनमेंजितने आ-
चार्यभयेहैं उनके बनाये ग्रन्थोंको वेदमानतेहैं सो अठारहग्रन्थरे-
हैं तथा महाभारत रामायणपुराण स्मृतियांभी उनलोगोंने अ-
पने मतके अनुकूलग्रन्थबनालियेहैं अन्यभगवतीगीता ज्ञानदरि-
आदिकभी ग्रन्थ नानाप्रकारके बनालियेहैं बहुत संस्कृत में ग्रन्थहैं
और बहुत प्राकृतभाषामें रचलियेहैं उनमें अपने संप्रदायकी पुष्टि
और अन्यसंप्रदायोंका खण्डन कपोलकल्पनासे अनेकप्रकारलि-
खा है जैसे कि जैन मार्ग सनातन है प्रथम सबसंसार जैनमा-
र्गमेंथा परन्तु कुबुद्धियोंसे जैनमार्गको छोडदियाहै सोयही महा-
हाअन्यायहै क्योंकिजैन मार्गकोछोडना किसीको उचित नहींऐसीर
कथा अपनेग्रन्थोंमें जैनोंनेलिखीहै सोसब संप्रदायवाले अपनीर
कथा ऐसी हीलिखते हैं और कहतेहैं इसमें भाव अपने मतलब के
लिये बातेंमिथ्या २ बनालीहैं हैं चार्वाकभीबहुतसीबातें कहीहैं
रणोद्गारः । भस्मीभूतस्यदेहस्य पुनरागमनंकुतः ।। यावज्जीवेत्सु-
खंजीवे दृणंकृत्वाघृतंपिबेत् । अग्निहोत्रं त्रयोवेदा त्रिदण्डं भस्मगु-
ण्ठनम् ।। बुद्धिपौरुषहीनानां जीविकेतिबृहस्पतिः । अग्निरुष्णोज-
लंशीतं शीतस्पर्शस्तथानिलः ।। केनेदंचित्रितंतस्मात्स्वभावात्तद्व्य
वस्थितिः । नस्वर्गोनापवर्गोवा नैवात्मा पारलौकिकः । नैववर्णाश्र
मादीनां क्रियाश्चफलदायकाः । अग्निहोत्रं त्रयोवेदा स्त्रिदण्डं भ-
स्मगुण्ठनम् ।। बुद्धिपौरुषहीनानां जीविकाधातृनिर्मिता । पशुश्

न्विहतः स्वयं अपोविशेषेण विश्यति ॥ इत्यदितंयुक्तमानेन सन्न-
स्मात्रर्हैस्तते । मूलानन्वनिर्मितुना श्रद्धेवत्रापि कारणम् ॥ मन्त्र
आमिदर्शतूना व्यर्थमारेव कल्पनम् । स्वर्गः स्थितावर्णतुत्र गच्छ
मुस्तत्रदानतः ॥ अस्मदस्योपरिकथाना मम्कदस्याच्छीवते । यदि-
गच्छत्परंलोकं देहादेवविनिर्गतः ॥ कस्माद्भूयश्च यापाति बन्धुस्ने-
हसमाकुलः । मनयजीवनोपायो ब्राह्मणैर्विहितस्त्विह ॥ मृतानां
मेतकार्याणि नत्वन्यद्विद्यतेक्वचित् । त्रयोवेदस्यकर्तारो भण्डधूर्त-
निशाचराः ॥ जर्फरीतुर्फरीत्यादि पण्डितानां वचःस्मृतम् । अश्व-
स्यात्रहिशिश्नन्तु पत्नीग्राह्यंप्रकीर्त्तितम् ॥ भण्डैस्तद्वत्परंचैव ग्रा-
ह्यजातंप्रकीर्त्तितम् । मांसानां खादनंतद्वन्निशाचरसमीरितम् ॥
इत्यादिक श्लोक जैनोंने बनारक्खेहैं और अर्थ तथा कामहीको पुरु-
षार्थ मानतेहैं लोक सिद्ध जोराजाहै परमेश्वर और ईश्वरसिद्धि पृ-
थवी जल अग्नि वायु इन केसंयोगसे चेतन उत्पन्न होताहै इन्हींमेंही
नहो जाताहै और चेतनपृथक पदार्थ नहीं ऐसे व प्राकृत दृष्टान्तदे
कहतेहैं कि जैसे ... जो चार भूतोंकेयोगसेचेतनउत्प-
न्नहोजाताहै परन्तु कोई चारभूतोंको मिलाके चेतन देखलावे सो
कभीनहीं होसकता इन स्वभावसे जगतकी उत्पत्तिवादिक काद-
म्बर ईश्वर और सृष्टिके विषयमें लिखाहै वहां देखलेना भूते-
भ्योमूर्च्छितमिव चैतन्यम् इत्यादिक गौतममुनिजीके विषेभू-
त नास्तिकोंके मतदेखलेवें कदापि तर्क ... जातेहैं और ...
नहीं होसकताहै जैसे पृथिव्यादिक भूतोंसे कानु पाषाणादिक अ-
जनादिक स्वभावसेकर्त्ता केबिना उत्पन्न होतेहैं वैसे मनुष्यादिक
भी स्वभावसे उत्पन्नहोतेहैं नपूर्वापर जन्मनकर्म और नजन्म संस्-
कार किन्तु जैसे जलमेंफेन तरंग और बुद्बुदादिक अपने आपसे
उत्पन्नहोतेहैं वैसे भूतोंसे शरीरभी उत्पन्न होताहै उसमें जीवभी
स्वभावसे उत्पन्नहोताहै उत्तर यहअयुक्त है क्योंकि जैसे शरी-
रकी उत्पत्ति कर्म संस्कारके बिना सिद्ध नहीं होती है वैसे वायु आदिक-

की उत्पत्ति सिद्धकरो बालुकादिकोंके पृथिव्यादिकमें उत्पत्ति निमित्त और कारणहै वैसे पृथिव्यादिक स्थूलभूतोंका कारणभीसूक्ष्मभा-नना होगा ऐसे अनवस्थादोषभी आजायगा औरसाध्यसमहेत्वाभा सकेनाई यहकथनहोगा और इससे देहोत्पत्तिमें निमित्तान्तरअ-वश्यतुमको मानना चाहिये जोउत्पत्ति निमित्तवान्माता पित्रोः३ गो० यह नास्तिकका अपने पक्षकासमाधानहै किशरीरकी उत्प-त्ति कानिमित्त माता और पिताहैं तिनसेकि शरीर उत्पन्नहोता है और बालुकादिक निर्बीजउत्पन्न होतेहैं इससे साध्यसम दोषइ मारे पक्षमे नहीआता क्योंकि माता पिता खानापीना कर्तेहैं उ-ससे वीर्य बीजशरीर का होमयाभा उत्तर प्राप्तौचानियमात्४गो० ऐसातुम मतकहो क्योंकि इसका नियमनहीं माता और पिताका संयोगहोता है और वीर्यभीहोताहै तोभीसर्वत्र पुत्रोत्पत्तिनहीदे-खनेमेआती इससे यहजो आपका कहानियमसो भङ्गहोगया इत्या दिकनास्तिक केखण्डनमें न्याय दर्शनमें लिखाहै जोदेखाचाहे सो देखले दूसरे नास्तिकका ऐसामतहै कि अभावाद्भावोत्पत्तिर्नानुप मृद्यप्रादुर्भावात् ५ गो० अभाव अर्थात्असत्व सेजगत् कीउत्पत्ति होतीहै क्योंकि जैसेबीजका नाशकरके अङ्कुर उत्पन्न होताहै वैसे जगत् की उत्पत्तिहोतीहै उत्तर व्याघातादप्रयोगः ६गो० यहतु-माराकहना अयुक्तहै क्योंकि व्याघातकहोनेसे जिसका खंडनहो-ताहै बीजकेऊपर भागको वह नकहनहींहोता औरजो अङ्कुरउत्प-न्नहोताहै उसका मर्दनतहीहोता इससे यहकहना आपका मिथ्या है औरनास्तिक काभत ऐसा है ईश्वरःकारणं पुरुषकर्माफल्य-दर्शनात् ७ गो० जीवजितना कर्मकर्ताहै उसका फल ईश्वर देता है जो ईश्वरकर्मफल नदेतातोकर्म काफलकभीनहोता क्योंकि जि सकर्मका फल ईश्वर देताहै उसकातो होताहै और जिस का नही देता उसकानही होता इससे ईश्वर कर्मका फलदेनेमें कारणहै उ-त्तर पुरुषकर्माभावेफलानिष्पत्तेः ८गो० जोकर्म फलदेनेमें ईश्व-

र कारणहोता तो पुरुषकर्मकरते तो भी ईश्वर फलदेता सो बि-
नाकर्म करनेसे जीव कोफलनहीं देता इससे ऐसाजानाजाता है कि
जो जीव कर्म जैसाकरताहै वैसाफल आपही प्राप्तहोता है इससे ऐ-
सा कहना व्यर्थहै फिरभीनह अपनेपक्षको स्थापनकरने केवास्तेक-
हताहै कि तत्कारितत्वादहेतुः ६ जीव ईश्वर ही कर्मका फल
औरकर्मकरानेमें कारणहै जैसा कर्मकराताहै वैसा जीवकर्त्ता है
अन्यथानहीं उत्तर जोईश्वरकराता तोपापक्योंकराता और ईश्व-
रके सत्यसंकल्पके होनेसे जोजीव जैसाचाहता वैसाही होजाता
और ईश्वर पापकर्मकराके फिर जीवकोदण्डदेता तो ईश्वरकोभी
जोदण्डकाचिन्ह अपराधहोता उसअपराधका फलजो दुःख सो ईश्व-
रकोभीहोनाचाहिये और केवल अन्यायी कपटी और पापोंके करा-
नेसे पापीहोजाता इससे ऐसा कभी कहनाचाहिये कि ईश्वर करा-
ताहै चौथे नास्तिकका ऐसा मत है कि अनिमित्ततो भावोत्प-
त्तिः कण्टकतैक्ष्ण्यादिदर्शनात् १० सो० निमित्तके विनापदार्थों
की उत्पत्तिहोती है क्योंकि देखते कांटेहोतेहैं वेभीनिमित्तकेविना
ही तीक्ष्णहोते हैं फलोंकी भीचिकनई रंगधातुओंके विचित्र
पाषाणोंको चिकनता जैसे निमित्त देखनेमेंआतीहै वैसे ही नास्त्य-
र्थिक संसारकी उत्पत्तिकर्त्ता केविनाहोती है इसका क्याकोईनहीं
उत्तर अनिमित्त अनिमित्तत्वान्नानिमित्ततः ११ सो० बिननि-
मित्तके सृष्टिहोती है ऐसामतकहो क्योंकि जिसके जो उत्पन्न होता
है वही उसका निमित्तहै इसप्रकार पृथिव्यादिक उनके निमित्त-
जानना चाहिये वैसेही पृथिव्यादिककी उत्पत्तिकर्त्तानिमित्तपरमेश्वर
हीहै इससे तुम्हारा कहनामिथ्याहै पांचवें नास्तिकका ऐसा म-
तहै कि सर्वमनित्य मुत्पत्तिविनाशधर्मकत्वात् १२ सो० सबजगत्
अनित्यहै क्योंकि सबकीउत्पत्ति और विनाशदेखनेमें आताहै जो
उत्पत्तिधर्मवाला है सो अनुत्पन्न नहींहोता जो अविनाशधर्मवा-
लाहै सो विनाशी कभीनहींहोता आकाशादिभूत शरीर पर्यन्त

कथन कि जितना जगत् है और बुद्ध्यादि सूक्ष्म जितना जगत् है सो सब अनित्य ही अनन्ताचार्य्येण उक्तं नानित्यता नित्यस्यात् १३ गो० सब अनित्य नहीं है क्योंकि सब की अनित्यता जो नित्य होगी तो उस के नित्य होने से सब अनित्य नहीं भया और जो अनित्यता अनित्य होगी तो उस के अनित्य होने से सब जगत् नित्य भया इस से सब अनित्य है ऐसा तो आपका कहना भी अयुक्त है फिर भी वह अपने मत को स्थापन करनेलगा तदनित्यत्वमग्नेर्दाह्यं विनाश्यानु विनाशवत् १४ गो० यह जो उनने अनित्यता जगत् की कही सो भी अनित्य है क्योंकि जैसे अग्नि काष्ठादिक का नाश करके अपने भी नष्ट हो जाता है वैसे जगत् को अनित्य करके आप भी अनित्यता नष्ट हो जाती है उत्तर नित्यस्याप्रत्याख्यानं यथोपलब्धिव्यवस्थानात् १५ गो० नित्य का प्रत्याख्यान अर्थात् निषेध कभी नहीं हो सकता क्योंकि जिसकी उपलब्धि होती है और जो कारण स्थित पदार्थ हैं उसकी अनित्यता नहीं हो सकती सो नित्य है प्रमाणों से और जो अनित्य सो नित्य २ ही होता है और अनित्य २ ही होता है क्योंकि परम सूक्ष्म कारण जो सो अनित्य कभी नहीं हो सकता और नित्य के गुण हैं तथा जो संयोग से उत्पन्न होता है और संयुक्त के गुण ये सब अनित्य हैं नित्य कभी नहीं हो सकते क्योंकि पृथक् पदार्थों का संयोग होता है वे फिर भी पृथक् हो जाते हैं इसमें कुछ संदेह नहीं अन्यदा नास्तिक यह है कि अर्वं नित्यं पंचभूतनित्यत्वात् १६ गो० जितना आकाशादिक पंच जगत् है जो कुछ इन्द्रियों से स्थूल वा सूक्ष्म जान पड़ता है सो सब नित्य हो हैं पांच भूतों के नित्य होने से क्योंकि पांच भूत नित्य हैं उनसे उत्पन्न भया जो जगत् सो भी नित्य ही होगा उत्तर नोत्पत्तिविनाशकारणोपलब्धेः १७ गो० जिसका उत्पत्ति कारण देख पड़ता है और विनाश कारण वह नित्य कभी नहीं हो सकता इत्यादिक सब अनन्तामत भी नहीं लिये हैं और इसके आगे नास्तिक कहता है कि सर्वं पृथक् भावलक्षणपृथक्त्वात् १८ गो० सब पदार्थ अलग पृथ-

क् २ ही हैं क्योंकि घटपटादिक पदार्थोंकेपृथक् २ चिन्हदेखपड़ते हैं इस्से सबवस्तु पृथक् २ ही हैं एकभी वस्तु नहीं उत्तर नानेकलक्षणैरेक भावानिष्पत्तेः १९ गो० यहबात आपकी अयुक्तहै क्योंकि घड़े में गंधादिक गुण हैं और मुख छिद्र घड़े के अवयव भी अनेक प-पदार्थों से एक पदार्थ युक्त प्रत्यक्ष देखपड़ताहै इस्सेसबपदार्थपृ-थक् २ हैं ऐसाजो कहनासो आप का व्यर्थहै जानना चाहिये कि का मतयह है किसर्वमभावोभावेष्वितरेतराभावसिद्धेः २० गो० या-वत् जगतहै सोसब अभावही है क्योंकिघड़े मेंवस्त्रका अभाव और वस्त्रमें घड़ेकाअभाव तथा गायमेंघोड़ेका औरघोड़ेमेंगाय का अ-भावहै इस्से सबअभावहीहै उत्तर नस्वभावसिद्धेर्भावानाम् २१ गो० सब अभावनहीहै क्योंकि अपनेमें अपना अभाव कभी नहीं होता जैसे घड़ेमेंघड़े का और घोड़े मेंघोड़े का अभाव नहीं होता है और जो अभावहोता तो उसकीप्राप्तिऔर उस्से व्यवहारसि-द्धिकभी नहीहोती इस्सेसबअभावहैं ऐसाजोकहनासोव्यर्थहैक्यों-कि आपहीअभावहो फिर आपकहते और सुनते हो सो कैसेबन ता सो कभीनहीबनता ऐसे २ बहुतप्रकार विवादोंकेकरनेवालेना-स्तिक गिनेजातेहैं सोजैनसंप्रदाय में अथवाकिसी संप्रदायमेंऐसा-मतवाला पुरुषहोयउसको नास्तिक ही जानलेना जैनलोगोंमें अ-नेकप्रकारकेवादहैंवेसबमिथ्याही सज्जनों को मानना चाहिये ए-कान्तकीपक्षी अपनेशिष्यकोयकहैं यहबातप्रसिद्धहैकिआर्हतसंप्रदा-यवालोंके सोईपरमेश्वरहै यहभीबातउनकीमिथ्या है क्योंकिअनु-ष्यकभीपरमेश्वरनहींहोसक्ताहै धर्मकोबडानसमझनाऔरअर्थत-था कामकोहीबड़ासमझनायहभी उनकीबातमिथ्याहै इत्यादिक बहुतउनकेमतमेंमिथ्या २ कल्पनाहैंउनको सज्जनलोगकभीनमानें

इति श्री मद्दयानन्द सरस्वतीस्वामि कृते सत्यार्थ प्रकाशे सुभाषा विरचिते द्वादशः समुल्लासः संपूर्णः ॥ १२ ॥

गुरु विरजानन्द दण्डी
सत्यार्थ पुस्तकालय
पु परिग्रहण क्रमांक ...
दयानन्द परिषद् ...